आपातकाल से लेकर उदारीकरण के बाद तक करीब चार दशकों में फैली एक ऐसी दस्तावेजी और करुण महागाथा जिसमें किसान-जीवन अपनी सम्पूर्णता में सामने आता है।

अगम बहै दरियाव

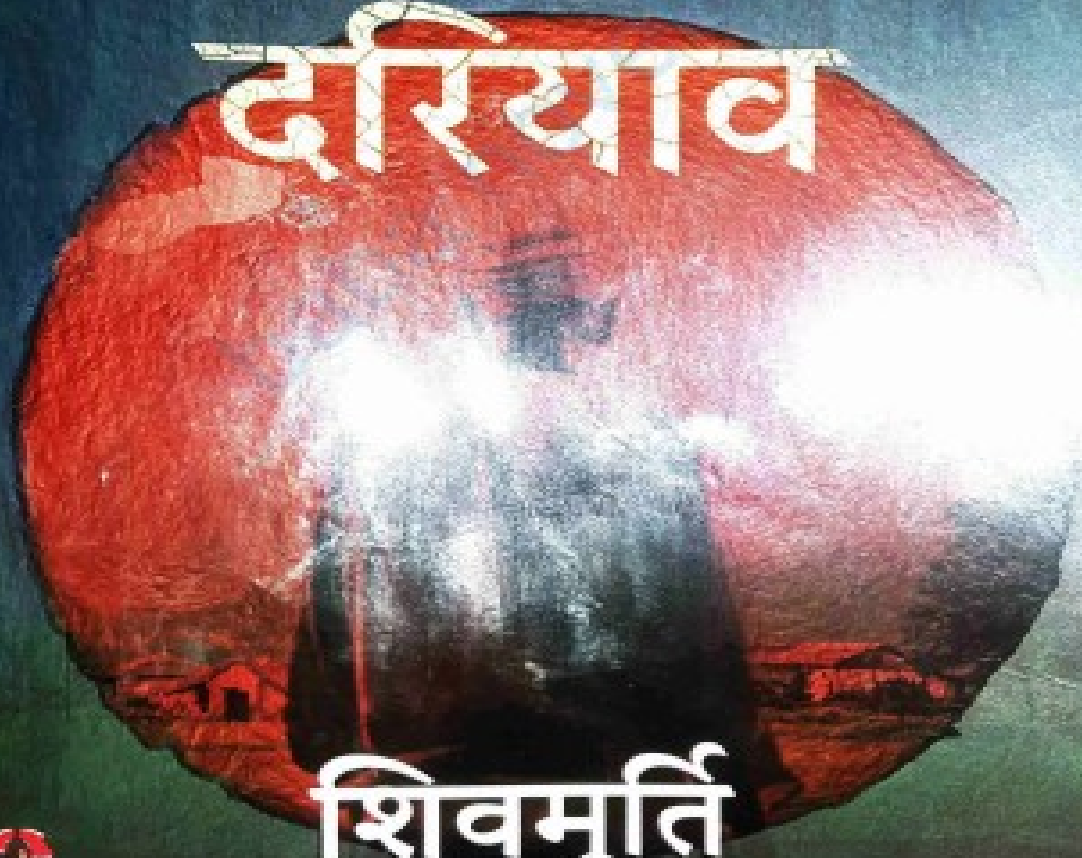

शिवमूर्ति

अगम बहै दरियाव

आपातकाल से लेकर उदारीकरण के बाद तक करीब चार दशकों में फैली एक ऐसी दस्तावेजी और करुण महागाथा जिसमें किसान-जीवन अपनी सम्पूर्णता में सामने आता है।

शिवमूर्ति

राजकमल पेपरबैक्श

अपनी दुनिया के ऊसर-जंगल,
नदी-ताल, खेत-खलिहान,
पशु-पक्षी और लोग-लुगाइयों को
तथा उस कालखंड को
जिसकी दुनिया से मेरी निर्मिति हुई

कथाक्रम

11 फौरन से पेश्तर दफा हो जा

52 दहपेल का झुनझुना

72 दुख की गठरी उठावा , परमेसरी

104 प्यारी कंगाल किसको समझती है तू

138 बलम बिन गुइयाँ नैन तलफैं हो

163 मुल्जिम खुराक लेने से मुनकिर हैं

182 लूट और फूट का मुकम्मल इन्तजाम : वर्णवाद

216 कुछ भी हो, रहेगा तो चमार ही

242 नेल्सन मंडेला कौन जाति हैं

263 सूरदास को पंचर बनाने का लोन

287 हम लड़ि लड़ि भाय बिलाइ गए

313 मोरी बारी उमर मोहें लागे शरम

336 ये बहुजन की जय भीम बोली

359 थाना मा बैठे दुःशासन

399 न दारू पिया, न जुआ खेला

434 बलमा दुई होइ गए रे

466 was shot multiple times

510 देसवा होइ गवा सुखारी हम भिखारी रह गये

526 पास लाखों-करोड़ों का जर माल था

555 कहाँ रहती है सरकार

583 अनारा की पुकार

585 रात नफरत की काली खतम जल्द हो

589 आभार

फौरन से पेश्तर दफा हो जा

पूरे महीने जेठ तपा और आषाढ़ ने उसका भी कान काट दिया। लू के बवंडर धरती-आसमान एक करते रहे। बरसती आग में परिंदे उड़ना भूल गए। नीम के पेड़ से चिपकी चुहचुइया लगातार कई दिनों तक क्री-ई-ई... की तीखी झनकार से वातावरण में बेचैनी भरने के बाद जब खोखली होकर गिर पड़ी तब पाँच-छह दिन पहले आषाढ़ की पहली बारिश हुई और हुई तो ऐसी हुई कि रात-भर में सारे ताल-तिराई भर गए। प्यास से बेहाल धरती के कलेजे में ठंडक पहुँची।

आज भी संतोखी की नींद बादलों की गड़गड़ाहट से ही टूटी। वे आँख मींजते हुए उठे। उजाला हो गया था और पूरब के आसमान से काले-भूरे बादलों के पहाड़ उमड़ते-घुमड़ते चढ़े आ रहे थे। मन्द-मन्द बहती पुरवा में मिट्टी की सोंधी गन्ध समाई हुई थी।

बादल इतने नीचे आ गए थे कि लगता था पहाड़ी के जंगल से निकले आ रहे हैं। चील का एक जोड़ा बादलों को छूता हुआ पंख फैलाए तैर रहा था। मोर प्या-ओं... प्या-ओं... करते खेतों में उतर आए थे और जगह-जगह पंख फैलाए नाच रहे थे। तीतरों की टिलो-टिलो से दिशाएँ गूँज रही थीं। बादलों के घटाटोप से फिर अँधेरा छाने लगा। कौवे, किलहँटी, पपीहे, पेंड़की और तोते शोर मचाते हुए इधर-से-उधर उड़ने लगे।

संतोखी ने लम्बी साँस खींचकर मिट्टी की गन्ध को फेफड़ों में भरा और बादलों के बीच बनने-मिटनेवाली आकृतियों का सन्धान करने लगे ! इसमें उन्हें बचपन से मजा आता है। सूँड़ उठाकर दौड़ता आ रहा हाथी रूप बदलकर कूबड़वाला ऊंट बन जाता है। धुआँ उगलता रेल का इंजन भैंसा बन जाता है।

भैंसे की याद आते ही संतोखी को अपनी दादी की याद आ गई। मरने के पहले इन बादलों में उन्हें भैंसे पर चढ़कर आते यमराज दिखने लगे थे। वे अचानक चिल्लातीं- आइ गवा रे जमरजवा। अब परान बचब मुश्किल।

चारपाई से उतरकर जंभाई लेते हुए उन्होंने दूर तक नजर दौड़ाई। खेतों में लोग ही लोग थे।

लोग और उनके रात-दिन के साथी बैल! कोई जुताई कर रहा था। कोई भेंड़ बाँध रहा था। कोई खाद डाल रहा था। उन्होंने भी शाम को सोचा था कि सबेरे चार बजे उठेंगे और जजमानी में निकलने के पहले बीस-पचीस खेप खाद खेत में डाल देंगे। क्या पता था कि यह पुरवा पोर-पोर में इतना आलस भर देगी कि...

पहली खेप लेकर वे खेत पर पहुँचे तो देखा, दो जोड़ी बैल उनका खेत जोत रहे हैं। संतोखी ने पहचाना- छत्रधारी सिंह के हलवाहे थे। संतोखी ने सोचा कि भूल से ऐसा हुआ होगा। संतोखी के खेत के दो तरफ छत्रधारी के ही खेत थे। उन्होंने अगले हलवाले महादेव के पास पहुँचकर पूछा- "मेरा खेत क्यों जोत रहे हो महादेव?"

"लम्मरदार ने हुकुम दिया है।"

संतोखी की धुकधुकी तेज होने लगी। किसी का खेत जोतने का मतलब हुआ खेत पर कब्जा करना। लेकिन क्यों? छत्रधारी से उनका कोई झगड़ा या बिगाड़ तो है नहीं! उन्होंने खाद का झौवा खेत में पटका और बैलों के आगे आकर दोनों हाथ उठाकर चीखे- "रोको। रुक जाओ।"

बैल रुक गए। पेशाब करने लगे।

महादेव पास आकर संतोखी को समझाने लगे "रोकने से क्या होगा भाई? जोत ही तो रहे हैं, लेकर भाग तो जा नहीं रहे हैं। जाकर लम्मरदार से समझ लीजिए कि क्या मामला है?"

संतोखी थोड़ी देर तक दुविधा में बैलों के आगे खड़े रहे। फिर छत्रधारी के घर की ओर लपके। किसी अनहोनी की आशंका से उनका मुँह सूखने लगा।

छत्रधारी सिंह घर से सटी अपनी फुलवारी में फूल तोड़ रहे थे। संतोखी समझ गए कि पूजा पर बैठने वाले हैं। बैठ गए मतलब दो-ढाई घंटे से पहले बात नहीं हो पाएगी। लपककर सामने पहुँचे। हाथ जोड़कर पूछा- "मेरा खेत क्यों जोतवा रहे हैं राजा?"

"अब तुम्हारा कहाँ रहा संतोखी?" आवाज एकदम शान्त थी।

"हम समझे नहीं राजा।"

"तुम्हारे बाप हमें बैनामा लिख गए हैं।"

"वे तो मर चुके हैं।"

"मरने के पहले ही लिखा। मरने के बाद थोड़े। तुम्हें नहीं बताया कभी?"

संतोखी पल-भर उनका मुँह ताकते रहे फिर बोले-"मुझसे कोई भूल-चूक हुई हो तो दस जूता मार लीजिए सरकार लेकिन इतना बड़ा दंड मत दीजिए। तीन पीढ़ी से आपकी सेवा कर रहे हैं। हमारे बाप खेत कैसे बेच देंगे? कुल उतना ही तो खेत है हमारे पास।"

"अरे भाई, कर्ज नहीं चुका सके तो सोचा कि मरने के पहले खेत लिखकर ही उऋण हो जाएँ। खुद आकर बोले कि चलिए लिख दें। मैं थोड़े गया था उन्हें बुलाने।"

"कर्ज कैसा मालिक?"

"कर्ज भी तुम्हें नहीं बताया! पन्द्रह-सोलह साल हो गए। मेरे बाबूजी के साथ हरिद्वार नहाने गए थे तो वहाँ मन्दिर में दान करने के लिए बाबूजी से पचास रुपये उधार लिये थे। इतने दिन बीत गए लौटाने की नौबत आई नहीं। मूल-सूद जोड़कर तीन हजार से ऊपर पहुँच गया था। फिर आठ-नौ साल पहले जब मैं बाबूजी का पिंडदान करने 'गया जी' गया था तो भी वे मेरे साथ गए थे। वहाँ बोले कि कुछ पैसा उधार दे दीजिए तो मैं भी अपने पुरखों का तर्पण कर दूँ। तब मैंने सौ रुपये दिए थे। वह भी बढ़कर हजार से ऊपर हो गया। कर्ज और मर्ज तो रात-दिन के हिसाब से बढ़ता है। वापसी की कोई राह नहीं सूझी तो खेत लिख दिए।"

"लेकिन मालिक वे तो आपके बाबूजी और आपके हुकुम से साथ में गए थे। आप लोगों की सेवा-टहल करने, नहलाने-धुलाने, मालिस करने, बनाने-खिलाने, जूठे बर्तन और गीली धोती धोने, सामान ढोने के लिए। उनकी खर्चा, खोराकी, किराया, भाड़ा तो आप लोगों के ही जिम्मे था।"

"उसकी रकम हम कहाँ जोड़ रहे हैं। लेकिन जो उधार लिया था उसकी देनदारी तो बनती है।"

"यह सब झूठ है मालिक। इतना अन्याय मत कीजिए। आपकी परजा हूँ। एक-दो घर तो डाइन भी छोड़ देती है। मुझसे लड़ाई करके आप ही की मरजाद घटेगी।"

"लड़ाई? तू लड़ाई करेगा मुझसे?"

"आपसे नहीं राजा, अन्याय से लडूंगा। लडूंगा नहीं तो दुनिया को कौन-सा मुँह दिखाऊँगा?"

छत्रधारी की तिलमिलाहट उनके चेहरे पर उतर आई। मुँह लाल हो गया। दाँत पीसकर बोले-"तेरी इतनी मजाल? जिसके पेशाब से इलाके में चिराग जलता है उससे लड़ाई करके तू पार पा जाएगा?"

"मेरे घर का चिराग किसी के पेशाब से नहीं इराक के तेल से जलता है ठाकुर। ... और पार पाऊँगा कि डूब जाऊँगा इसे समय बताएगा।"

कुछ पल दोनों लोग एक-दूसरे को घूरते रहे फिर छत्रधारी पूजा-घर में घुस गए। संतोखी को लगा कि दुनिया घूम रही है। ताव में आकर वे कुछ भी कह दें लेकिन दुनिया जानती है कि छत्रधारी छत्रधारी हैं।

कदम मन-मन भर के हो गए थे, जिन्हें एक-एक कर उठाते हुए वे पगडंडी पकड़कर चले आ रहे थे तो देखा, थोड़ी दूर, मेंड़ पर खड़े बोधा भाई काँख में छाता दबाए,

हाथ में लाठी लिये भैंस चरा रहे हैं। बोधा भाई दो टूक बोलने वाले आदमी हैं। किसी से दबते नहीं हैं। इस समय तो जो मिल जाए उसी का कन्धा पकड़कर रोने का मन कर रहा है।

संतोखी बोधा भाई की ओर मुड़ गए। कुछ दूर थे तभी दोनों हाथ जोड़कर सिर झुकाया-" राम राम भइया।"

"राम राम संतोखी भैया। इधर कहाँ से?"

"क्या बताएँ भइया। हमको तो नाग ने डस लिया। उधर देखिए- छत्रधारी हमारे खेत पर कब्जा कर रहे हैं। मेरे खेत में उन्हीं के हल चल रहे हैं। मैं पूछने गया था कि मेरे साथ ऐसा क्यों कर रहे हैं?"

संतोखी ने सारी बातचीत दोहराई।

"उन्होंने वही किया जो अब तक करते आ रहे हैं। किसी का खेत कर्ज की एवज में हड़पा, किसी का रेहन की एवज में। फर्जी दस्तावेज तैयार करने और जाली दस्तखत बनाने में उनको कितनी देर लगती है? तलाशी हो जाए तो पचासों साल पहले के हाकिमों की मुहरें और स्टाम्प पेपर उनके घर से बरामद हो जाएँगे। लेकिन उन्होंने तुम्हारे साथ ऐसा घात क्यों किया! अकेले यही ऐसे शख्स होंगे जिनकी दाढ़ी आप आज तक बिना नागा हफ्ते में दो दिन बनाते आ रहे हैं। उससे भी पहले आपके बाप उनके बाप की बनाते रहे। आपके साथ ऐसी घटियारी कर डाले!"

"अब क्या करूँ, कुछ समझ में नहीं आ रहा है।"

"ताकतवर होते तो कहता कि उनको जोतने-बोने दीजिए, फसल पक जाए तो काटकर अपने खलिहान में ढो लाइए। लेकिन आप यह भी नहीं कर पाएँगे। थाने पर जाने से भी क्या होगा? वे बैनामे और खारिज दाखिल के कागज पेश कर देंगे। पुलिस के हाथ बंध जाएँगे। सिविल मामले में पुलिस को कोई पावर थोड़े है दखलंदाजी का।"

"तो संतोख करके घर बैठ जाएँ?"

"घर न बैठिए। कानूनी लड़ाई लड़िए लेकिन यह जान लीजिए कि मगरमच्छ के जबड़े में फंस चुके हैं। उस आदमी ने सारे प्वाइंट मजबूत कर लिये होंगे। लम्बी लड़ाई लड़नी पड़ेगी।"

"लहूँगा। लडूंगा नहीं तो क्या मुँह छिपाकर बैठ जाऊँगा? बस आप राह सुझाइए कि करना क्या होगा? मेरी बाँह गह लीजिए।"

"आपकी बाँह गहने में बहुत खतरा है। आपके साथ घूमते देख लिया तो छत्रधारी खुली दुश्मनी मान लेंगे। वैसे भी मैं उन्हें फूटी आँखों नहीं सुहाता। पिचाली आदमी हैं। उनसे दुश्मनी मुझे महँगी पड़ जाएगी।"

अगम बहै दरियाव

कहने को तो कह गए लेकिन फिर मन-ही-मन पछताने लगे कि यह क्या कह दिया। दुखी आदमी को और दुखी कर दिया। उनकी भैंसें चरते-चरते आगे निकल गई थीं। वे मेंड़ पकड़कर आगे बढ़ने लगे। संतोखी भी उनके पीछे-पीछे चले। बड़ी देर तक कोई कुछ नहीं बोला, फिर संतोखी ने ही मौन भंग

किया-" इस गाँव में अगर आप ही हमारा साथ नहीं देंगे तो कौन देगा? मैं मंझधार में डूब जाऊँगा। मुझे उबारिए। मुझे हिम्मत दीजिए।"

बोधा भाई मन-ही-मन सोच रहे थे- 'छत्रधारी ठाकुर हैं। वे दिल से कभी भी मेरे जैसे पिछड़ी जाति के आदमी के सच्चे दोस्त नहीं बन सकते। मुँह से चाहे जितना मीठा बोलें, मन में तोले-भर की गाँठ हमेशा रहेगी। संतोखी के साथ खड़े होने पर दुनिया कम-से-कम यह तो कहेगी कि सच्चे का साथ दिया। मर्द मरै नाम का, नामर्द मरै रोटी का ... और हमें साथ भी क्या देना है। एक-दो बार तहसील-कचहरी जाना होगा। फिर तो सारी राह उन्हें खुद ही सूझ जाएगी।'

उन्होंने पीछे मुड़कर पूछा- "क्या ऐसा हो सकता है कि कभी धोखे से छत्रधारी तुम्हारे बाप को पकड़कर तहसील ले गए हों और अँगूठा लगवा लिये हों?"

"ऐसा नहीं हो सकता। साल भर से ज्यादा उनको मरे हो गए और मरने के छह महीना पहले से चारपाई से लग गए थे।"

"कल तहसील चलिए। रेकार्ड का मुआयना करने पर सही बात का पता लगेगा।"

अगले पूरे दिन तहसील और रजिस्ट्री ऑफिस में भटकने और रेकॉर्ड का मुआयना करने के बाद पता चला कि चौबीस मई दिन बृहस्पतिवार को रजिस्ट्री हुई है। यानी चौदह महीना पहले।

.... मैं रमेसर सुत दुखी साकिन... अपने पूरे होश-हवास में, बिना किसी जोर-दबाव के अपनी जमीन गाटा नम्बर 327 रकबा सत्रह बिस्वा तीन धूर सिरीमती मनराज कुंवरि जौजे छत्रधारी सिंह को मुबलिग सात हजार दो सौ रुपये में, जिसका आधा तीन हजार छह सौ होता है... रकम पूरी वसूल पाया।

शाम को बोधा भाई संतोखी को लेकर अपने परिचित वकील चन्द्रिका बाबू के घर गए। सारी बात सुनकर चन्द्रिका बाबू ने पूछा- "तुम्हारे बाप दस्तखत करते थे या अँगूठा लगाते थे?"

"अँगूठा लगाते थे?"

"कैसे साबित किया जाएगा कि बैनामे पर लगा अँगूठा रमेसर का नहीं है? कोई ऐसा डाक्यूमेंटरी प्रूफ, माने दस्तावेजी सबूत पेश करना होगा, जिससे तुम्हारे बाप की अँगूठा निशानी प्रमाणित होती हो। उसी के आधार पर बैनामे में लगे अँगूठा निशान को चैलेंज किया जाएगा।

15

पोस्ट ऑफिस या बैंक की पासबुक हो जिसमें उनका अँगूठा निशान लगा हो?"

संतोखी ने इनकार में सिर हिलाया।

" किसी बैनामे में कभी गवाह बने हों?

" किसी के जमानतदार बने हों?

" कभी कोटेदार की दुकान पर चीनी-राशन या किरासन लेने गए हों? वहाँ से भी अँगूठे के निशान का मिलान एक्सपर्ट के पास भेजकर कराया जा सकता है।"

हर सम्भावना के जवाब में इनकार।

"आपके बाप मरे किस तारीख को?"

"यह भी नहीं याद। साल-भर से ज्यादा मरे हुए हो गए। इतना याद है कि जिस दिन मरे उस दिन शनिवार था।"

"मरने की तारीख पता होना तो जरूरी है। अगर बैनामे की तारीख से पहले मर गए हों तब तो बहुत अच्छा। मरने का दस्तावेजी सबूत जुटाइए। अगर गाँव के परिवार रजिस्टर में मरने की तारीख का इन्दराज हुआ हो तो उसकी नकल लीजिए। न हुआ हो तो करवाइए। अपने गाँव के पंचायत मंत्री से मिलिए।"

"मेरे गाँव में तो कोई पंचायत मंत्री ही नहीं है।"

"होगा। हो सकता है चार-पाँच गाँव के लिए एक ही आदमी हो। परिवार रजिस्टर रखने की नई नियमावली लागू हो गई है। पता करिए।... दो मुकदमे दायर करने होंगे। एक तो बैनामा मंसूखी का... जमीन का रकबा कितना है?"

"सत्रह बिस्वा तीन धूर।"

"इसकी मालियत बनेगी छह-सात हजार, तो यह मुंसिफ कोर्ट में दायर होगा। पचीस हजार तक की पावर मुंसिफ कोर्ट को है।... दूसरा मुकदमा तहसीलदार की कोर्ट में दायर होगा। दाखिल खारिज हो चुका है तो वाद दायरा। रिकाल एप्लिकेशन देनी होगी। दोनों मुकदमे एक साथ चलेंगे।"

बोधा भाई बोले-"जो भी करना है, आपको ही करना है। बहुत सीधे और गरीब आदमी हैं। बहुत घबराए हुए हैं।"

"खसरा खतौनी की नकल लाइए। बैनामे की नकल लाइए। यहाँ तहसीलदार की कोर्ट में तो मैं ही दाखिल कर दूँगा। मुंसिफी के लिए जिले का कोई वकील कर लेना।"

वकील साहेब का मुंशी अन्दर से तीन कप चाय ले आया। बोधा भाई को अच्छा लगा। इसका मतलब कि पुरानी पहचान भूले नहीं हैं वकील साहब।

संतोखी का मन चाय पीने में नहीं लग रहा था। गरम चाय पीने से उनकी जीभ जल जाती है।

अगम बहै दरियाव

वे उसे फूंक-फूंक कर ठंडी कर रहे थे। देर तक झिझकने के बाद उन्होंने पूछा-"मुकदमे का फैसला कितने दिन में होगा?"

वकील साहब ने सिर उठाकर संतोखी की ओर देखा लेकिन कुछ बोलने के बजाय चाय का घूँट लेने लगे।

बोधा भाई बोले-"खिलाफ पार्टी बहुत सरहंग है वकील साहेब। कैसे पार लगेगा?"

"चाहे जितनी सरहंग हो," वकील साहब की आवाज गम्भीर हो गई, "कानून भी तो कोई चीज है... कानून बाघ को बिल्ली बना देता है। आप बस गवाही-सबूत जुटाकर लाइए, फीस जमा करिए, बाकी हम पर छोड़िए।"

वकील के घर से निकले तो दोनों लोग इसी चिन्ता में थे कि सबूत कहाँ से लाएँगे। संतोखी को इस बात की झेंप थी कि साल-भर पहले मरने वाले बाप के मरने की तारीख तक याद नहीं थी। आज तक कभी किसी के मरने की तारीख की जरूरत ही नहीं पड़ी।

शाम को पत्नी ने बहुत आग्रह किया कि एक रोटी खा लें लेकिन भूख एकदम रूठ गई थी। बड़ी बेचैनी थी। थोड़ी देर लेटते फिर उठकर बैठ जाते। अँधेरे को घूरने लगते। चित्त एक जगह स्थिर ही नहीं हो रहा था। आखिर रात के पिछले पहर अचानक याद आया कि जिस दिन उनके बाप मरे उसी दिन भूसी भगत के बेटे का विवाह था। जब वे दाह-संस्कार के लिए भूसी के पास लकड़ी माँगने गए थे तो बारात की तैयारी हो रही थी। नगाड़ा बज रहा था। मरने की खबर पाकर भूसी ने नगाड़े का बजना बन्द करवाया था। यह भी याद आया कि भूसी की पत्नी ने भूसी को मना किया था कि विवाह जैसे शुभ कार्य के लिए रखी गई लकड़ी दाह-संस्कार जैसे अशुभ कार्य के लिए मत दीजिए। लेकिन भूसी नहीं माने। बोले, जितना शुभ कार्य विवाह है उतना ही शुभ कार्य दाह-संस्कार भी है और आम की लकड़ी का एक मोटा बोटा दे दिया था। भूसी भगत को अपने बेटे के विवाह की तारीख जरूर याद होगी।

वे भूसी के दरवाजे पर पहुँचे तो अभी ठीक से उजाला भी नहीं हुआ था। पता चला कि भूसी पास के गाँव में अपनी भेड़ों के साथ हैं। रात में भेड़ें खेत में ही बैठाई जाती थीं। वहाँ पहुँचे तो भूसी भेड़ी का दूध गारते (दुहते) हुए मिले। संतोखी को देखकर चौक-" इतने सबेरे? खैरियत तो है?"

"खैरियत ही तो नहीं है भइया। छत्रधारी सिंह ने भारी मुसीबत में डाल दिया। मेरे इकलौते खेत का बैनामा अपने नाम करा लिया। परसों खेत पर कब्जा भी कर लिया।"

17

भूसी पल-भर उनका मुँह ताकते रहे फिर बोले- "इतनी ज्यादती! क्या करेंगे इतनी जगह-जमीन हड़पकर? लगता है साथ ले जाने का इन्तजाम कर लिये हैं।" दूध का बर्तन रखकर भूसी ने हाथ धोया फिर संतोखी के पास आकर पूछा- "मुझसे कुछ काम? रुपया-पैसा?"

"रुपया-पैसा अभी नहीं चाहिए भइया। जरूरत पड़ी तो आपके ही पास आएँगे। आज तो यह पूछने आए हैं कि पिछले साल आपके बेटे का विवाह किस तारीख को था? वही मेरे बाप के मरने की भी तारीख है। आपको याद होगा, भौजी के मना करने के बावजूद आपने दाह-संस्कार के लिए आम का एक बोटा दिया था।"

भूसी थोड़ी देर सोचते रहे फिर बोले- "याद है। तिलक पन्द्रह मई दिन सोमवार को थी। उस दिन अक्खातीज (अक्षय तृतीया) थी और विवाह बीस मई को था। दिन था शनिवार और तिथि थी अष्टमी।"

"बस भइया, बस।" संतोखी ने हाथ जोड़ लिया-" इसी तारीख की जरूरत थी। बहुत अच्छा हुआ कि आपको याद रह गई।"

बोधा भाई ने सुना तो खुश हो गए। बोले- "बड़े काम की बात पता लग गई। इसका मतलब रमेसर दादा के मरने के चार दिन बाद रजिस्ट्री हुई है। साफ है कि रजिस्ट्री फर्जी है। लेकिन इसे साबित कैसे करोगे? कोर्ट को तो सबूत चाहिए कि तुम्हारे बाप रजिस्ट्री से चार दिन पहले मर चुके थे। अब पता करो कि पंचायत मंत्री ने मृतक रजिस्टर में रमेसर के मरने की कौन-सी तारीख दर्ज की है। दर्ज भी की है या नहीं? नहीं की तो करवाओ और गलत दर्ज की हो तो सही कराओ। उसकी नकल लो।"

बोधा भाई को एक और प्वाइंट सूझा। बोले- "तुम फिर भूसी के पास जाओ। उनसे बचन ले लो समय आने पर कोर्ट में गवाही दें कि उनके बेटे का विवाह बीस मई को था और उसी दिन रमेसर मरे थे। उन्होंने दाह-संस्कार के लिए आम का बोटा दिया था।"

"लेकिन छत्रधारी के खिलाफ वे गवाही क्यों देंगे? कोई भी नहीं देगा। जबान खाली जाएगी।"

"ऐसा नहीं है। भूसी दूसरी मिट्टी से बने हैं। उनके अन्दर दया-मया ज्यादा है। जानते हो, वे मधु नहीं खाते। कहते हैं कि आदमी कितना जालिम है जो मधुमक्खी जैसे नन्हे प्राणी का न सिर्फ मेहनत से जुटाया गया भोजन छीन लेता है, बल्कि उनके अंडे-बच्चों को भी जलाकर मार देता है। अगर तुम्हारी चिरौरी-बिनती से वे पसीज गए, हामी भर ली तो समझो काम फतेह।"

संतोखी उलटे पाँव भूसी के घर पहुँचे।

भूसी नहा-धोकर नीम के पेड़ पर जल चढ़ा रहे थे। उन्होंने इशारे से पूछा-" अब कैसे?"

"भइया, आप ही मेरी विपत्ति में मददगार हो सकते हैं। हम छत्रधारी के खिलाफ मुकदमा दायर कर रहे हैं। बैनामे की तारीख चौबीस मई है जबकि मेरे बाप आपके बेटे के विवाह वाले दिन बीस मई को ही मर गए थे। यानी बैनामे के चार दिन पहले। हम चाहते हैं कि जब जरूरत पड़े तो कोर्ट में चलकर आप यही कह दें कि रमेसर बीस मई को मरे थे। आपने दाह-संस्कार के लिए लकड़ी दी थी।"

भूसी थोड़ी देर खड़े सोचते रहे फिर बोले- "बात तो सही कह रहे हो पर तुम तो जानते हो, भेड़ें लेकर रोज मुझे सौ लोगों की मेंड़ से होकर गुजरना पड़ता है। जानवर हैं, कभी कुछ नुकसान भी कर देते हैं। मेरे गवाही देते ही सारी ठाकुर बिरादरी मुझसे बैर ठान लेगी। मेरी भेड़ों का रास्ता बन्द हो जाएगा।"

संतोखी का मुँह लटक गया लेकिन सोचा कि एक कोशिश और करके देख लें। बोले-"लेकिन मैं और किसके पास जाऊँ भइया? मेरे बाप की मौत के मामले में केवल आप ही गवाह हो सकते हैं।"

भूसी नीम के पेड़ के नीचे खड़े-खड़े सोचते रहे। जल चढ़ाने से खाली हुआ लोटा उनके हाथ में था और धोती का आधा हिस्सा उनके कन्धे से झूल रहा था।

"बड़ा उपकार होगा भइया।" संतोखी हाथ जोड़कर भूसी के सामने आ गए- "मेरे मुकदमे में जान पड़ जाएगी। मैं दुनिया में रह जाऊँगा।"

भूसी मूर्ति की तरह निश्चल थे।

"सच ही बोलना है भइया। झूठ तो बोलना नहीं है।" संतोखी की आवाज में दीनता थी।

"सच बोलने में ही तो सारी आफत है संतोखी।" भूसी के मुँह से ये शब्द अटक-अटक कर निकले। वे थोड़ी देर खड़े सोचते रहे। संतोखी को इन्तजार का एक-एक पल एक युग के बराबर लग रहा था। अन्ततः सिर उठाया भूसी ने और निश्चय के स्वर में बोले- "लेकिन, जाओ, मैं दूँगा गवाही।"

छत्रधारी सिंह महाराणा प्रताप को अपना आदर्श मानते हैं। अपनी बैठक में उन्होंने महाराणा प्रताप की एक बड़ी सी फोटो फ्रेम में मढ़ाकर टाँग रखी है।

19

हाथ में लम्बा भाला, कमर में तलवार, पीठ पर ढाल, चौड़ा चेहरा, लम्बी-घनी ऐंठी हुई मूँछें। चेतक पर सवार।

सामने की दीवार पर उन्होंने घोड़े पर सवार, हाथ में तलवार लहराते अपनी एक फोटो भी लगा रखी है। जब लगभग सारे राजपूत राजा मुगल शासन के सामने नतमस्तक हो गए थे, अकेले महाराणा प्रताप थे जिन्होंने राजपूतों का मान-सम्मान कायम रखा। उन्हें बहुत अफसोस है कि वे महाराणा प्रताप के समय में नहीं पैदा हुए। होते तो लड़कर उन्हें उनका राज्य वापस दिलाकर मानते। नौजवानी में वे घोड़े पर चलते थे। उन्होंने भी अपने बादामी रंग के घोड़े का नाम चेतक रखा था। पहले इलाके में शादी-ब्याह या भोज-भात होता था तो घुड़दौड़ होती थी। हाथ में पानी भरा गिलास लेकर छत्रधारी दौड़ते हुए घोड़े की पीठ पर खड़े हो जाते थे और घोड़े की चाल इतनी सम रहती थी कि एक बूँद भी पानी नहीं छलकता था। चेतक मरा तो छत्रधारी सिंह ने घर के बगल में ही उसकी पक्की कब्र बनवाई।

छत्रधारी सिंह ने अपने पक्के एकमंजिले मकान का नाम 'इन्द्राणी महल' रखा है। इंदिरा उनकी पत्नी का नाम है। वे समझती हैं कि यह उनके नाम पर रखा गया है लेकिन छत्रधारी कांग्रेस पार्टी के सपोर्टर हैं और बाहर के लोग मानते हैं कि यह उनकी नेता के नाम पर रखा गया है।

फर्जी दस्तावेज तैयार करने के लिए छत्रधारी सिंह पूरे इलाके में मशहूर हैं। बनारस जिले में कोई औरत है जो किसी भी हाकिम की फर्जी दस्तखत बनाने में माहिर है। बस एक बार उसको असली दस्तखत दिखा-भर दीजिए। यहाँ उस औरत का पता सिर्फ छत्रधारी सिंह को मालूम है। उसके पास जाते समय किसी को साथ नहीं ले जाते। उनके पास फर्जी दस्तावेज तैयार कराने वालों का जमघट लगता है। जाने कहाँ-कहाँ से लोग आते हैं। रात में बैठक का दरवाजा बन्द करके गैस बत्ती की रोशनी में सारी कार्यवाही होती है। रेहननामे, बैनामे, इकरारनामे और वसीयत के कागज तैयार किए जाते हैं।

नया स्टाम्प पेपर पुराना दिखने लगे, इसके लिए उसका 'स्मोक ट्रीटमेंट' किया जाता है। साल-भर पुराना कागज स्मोक ट्रीटमेंट के बाद पचीस साल पुराना दिखने लगता है।

एक बार तो कोर्ट में सबूत दाखिल करने के लिए इतना कम समय था कि आलू की मोहर बनाकर लगाना पड़ा। पर अभी तक एक बार छोड़कर कभी फँसने की नौबत नहीं आई। उस बार भी मामला बिगड़ा फर्जी मोहर बनाने वाले की नादानी से। उसने मोहर में डेप्युटी Deputy को डिपुटी Diputy लिख दिया था। लेकिन जेल जाने से उस मामले में भी बच गए थे।

छत्रधारी सिंह खुद के क्षत्रिय कुल में पैदा होने पर गर्व करते हैं।

अगम बहै दरियाव

उनका कहना है कि ऊँची जाति में पैदा हुआ हूँ तो तुम्हें मुझको सम्मान देना ही पड़ेगा। अगर निचली पिछड़ी जातियों को सम्मान की इतनी ही भूख थी तो वे भी ऊँची जाति में पैदा हो जाते। किसने रोका था?

छत्रधारी सिंह बचपन से दबंग रहे हैं। एक बार किसी के खेत में चोरी से गन्ना तोड़ने के लिए घुसे। तब तक खेत के मालिक ने आकर पकड़ लिया।

"अब पता चला कि कौन रोज-रोज मेरा गन्ना चुराता है।"

"मैं कोई कंगाल का बेटा हूँ जो गन्ने की चोरी करूँगा।"

"तो मेरे खेत में क्यों घुसे?"

"घुसा था टट्टी करने।"

"कहाँ किया है टट्टी? दिखाओ।"

कहाँ दिखावें? टट्टी किए हों तब तो दिखायें।

उन्होंने इधर-उधर खोजकर एक पुरानी सूखी टट्टी दिखाया-"यह रही।"

"यह तो सूखी है।"

"मैं ठाकुर हूँ। चाहे मैं ओद हगूँ या झूर।

खेत के मालिक ने भविष्यवाणी की कि यह लड़का बहुत आगे जाएगा।
छत्रधारी सिंह का मानना है कि मत्स्य-न्याय ही प्राकृतिक है। कमजोर हमेशा बलवानों का आहार बनता है। ठाकुर न पूजा-पाठ, कथा-भागवत बाँचकर ब्राह्मण की तरह आजीविका प्राप्त कर सकता है, न वैश्य की तरह व्यापार करके। खेती में हाड़तोड़ मेहनत करके आजीविका कमाना भी उसके वश में नहीं है।

नाम में 'सिंह' लगाने का क्या मतलब? सिंह तो पशु है। कोई आदमी होकर अपने नाम के साथ पशु का नाम क्यों नत्थी करता है? इसका मतलब कि हम शिकार करके खाने में विश्वास करते हैं। शेर भी सबसे कमजोर शिकार पर हमला करता है। जिसमें ताकत भी कम लगे और प्रत्याक्रमण का खतरा भी कम रहे। संतोखी के खेत के बैनामे से हुई बदनामी को छत्रधारी बदनामी नहीं मानते। अखाड़े में प्रतिद्वंद्वी की पीठ लगाने के लिए पहलवान कल, बल, छल तीनों का सहारा लेते हैं। सिर्फ देह की ताकत से कुश्ती नहीं जीती जाती। एहसानमन्द होना अच्छी बात है लेकिन कभी-कभी एहसानफरामोश होना वक्त की जरूरत बन जाता है।

कहते हैं-

ठग, ठाकुर औ बीग, सोनार।
धाए धूपे करें अहार।

अर्थात ठग, ठाकुर, भेड़िया और सोनार दौड़-धूप कर ही अपना आहार प्राप्त करते हैं।

21

इन चारों की सफलता में छल का योगदान होता है। इसमें धर्म-अधर्म विचारणीय नहीं होता। उद्देश्य होता है लक्ष्य की प्राप्ति। महाभारत क्या है? अधर्म के सहारे धर्म की स्थापना की गाथा। कृष्ण ने द्रोण को, भीष्म को, कर्ण को अधर्म से ही तो मरवाया। जुए में अपनी पत्नी को हार जाने वाला धर्मराज कहा गया। पांडव पांडु के पुत्र तो थे नहीं। फिर उनका उत्तराधिकार का हक कैसे बन सकता था? लेकिन

कृष्ण ने लड़ाकर दिलाया। उसी तरह हमने दाँव लगाया है। जीते तो ठीक, हारे तो ठीक। कर्मण्येवाधिकारस्ते...। इसमें नेकनामी बदनामी सोचने का क्या मतलब?

गाँव का नाम बनकट है जो कल्याणी नदी के किनारे बसा है। कल्याणी की धारा पश्चिम से आती है और गाँव के उत्तर से निकलती है। थोड़ा आगे बढ़कर पूरब की पहाड़ी से टकराती है और दक्षिणमुखी हो जाती है। पूरब से दक्षिण की ओर मुड़ने से जो आकृति बनती है उससे लगता है कि कल्याणी ने इस गाँव को गोद ले लिया है। थोड़ा आगे बढ़ने के बाद पहाड़ी का दक्षिणी छोर पकड़कर यह फिर पूरब की ओर बढ़ जाती है।

जंगली पेड़ों और झाड़ियों से भरी यह पहाड़ी पूरब की ओर कुछ दूर जाकर जमीन में समा जाती है।

लम्बे समय तक हुए पत्थरों के अवैध खनन ने इस पहाड़ी के चेहरे पर चेचक के दाग जैसे गड्ढे बना दिए। पहले उत्तर की तरफ फैली इसकी ढलान और तलहटी में हिरनों के झुंड चरा करते थे। अन्धाधुंध शिकार के कारण अब वे विलुप्त हो गए हैं। अब इसमें जंगली सूअर, नीलगाय, साही, गीदड़, लोमड़ी और खरगोश बसते हैं। कभी-कभार किसी बछड़े या भेड़ को अजगर पकड़ लेता है तो उसकी मौजूदगी भी दर्ज हो जाती है।

कल्याणी की बालू गुलाबी रंग की और मोटे दाने वाली होती है। अब पहाड़ी के पत्थरों के साथ-साथ कल्याणी के बालू की खुदाई पर भी रोक है। पत्थर की खुदाई तो रुक गई है लेकिन बालू की खुदाई चोरी-छिपे बलुआ घाट के आसपास से अभी भी होती है। ज्यादातर रात में, ट्रैक्टर या ट्रक की रोशनी में।

जैसे आज कल्याणी के पूर्वी घाट की पहाड़ी पर जंगल है उसी तरह पश्चिम की घाटी में भी था।

घाटी की जमीन समतल थी और कल्याणी उसे हर साल मिट्टी लाकर उपजाऊ बनाती रहती थी। फिर कुछ लोग कहीं से बहते-बिलाते आए। जंगल काटकर बस्ती बनाई, खेत बनाए और बस गए। आते रहे, बसते रहे। वन को काटकर बनाई गई बस्ती का नाम पड़ा बनकट। दो ब्राह्मण परिवार आए और बस्ती के उत्तर, थोड़ी दूर पर बस गए। इस टोले का नाम पड़ा बनकट खुर्द या बभनान। माठा बाबा को 'बनकट' नाम बिलकुल पसन्द नहीं। कहते हैं- जैसे जाहिल-जंगली लोगों का गाँव, किसी को बताते हुए झेंप लगती है। पता नहीं क्यों आजा-पुरखा लोगों ने यह नाम रखा।

पक्की सड़क और मुख्य गाँव के बीच पुरातन धार्मिक स्थल भी हैं। उत्तर तरफ महामाई की चौरी और दक्षिण तरफ मठिया का स्तूप। चौरी बरगद और पाकड़ के पुराने विशालकाय पेड़ों के बीच में है। इन पेड़ों पर सावन में झूले पड़ते हैं और औरतें तीज-त्योहार पर महामाई को लपसी, सोहारी या टिकरी चढ़ाती हैं। मठिया का स्तूप कब किसने बनवाया इसकी जानकारी नहीं है। तंत्र पूजा करने वाले, मंत्र सिद्ध करने वाले यदा-कदा रात में स्तूप पर अंडे फोड़ जाते हैं या सिन्दूर लगा जाते हैं।

स्तूप बाँस और बबूल के जंगल से घिरा हुआ है। महामाई और स्तूप में बसे देव के कोप के डर से दोनों स्थलों को मिलाने वाली पट्टी का जंगल आज भी कटने से काफी कुछ बचा रह गया है। महामाई से सटा हुआ ही पक्की सड़क के किनारे चिखुरी साह का बनवाया हुआ पक्का सागर है।

गाँव वालों को पहाड़ी के जंगल में जाने की जरूरत कम ही पड़ती है। किसी जड़ी-बूटी के लिए, जलौनी लकड़ी के लिए या घास के लिए। कभी-कभी भूसी चौधरी को फारेस्ट गार्ड की मेहरबानी से इसमें अपनी भेड़ चराने का मौका मिल जाता है।

कल्याणी पार करके पहाड़ी के जंगल में जाने के लिए आज भी कोई पुल नहीं है। एक छोटी डोंगी घाट पर खूँटे से बंधी रहती है। आइए, डोंगी लेकर पार जाइए और दूसरे किनारे के खूंटे से बाँधकर चले जाइए। यही व्यवस्था इस गाँव के लिए पूर्वी घाट पर और यही दक्षिण के गाँवों के लिए बलुआ घाट पर। डोंगी की जरूरत भी बरसात के दिनों में ही पड़ती है जब कल्याणी की धारा गहरी और चौड़ी हो जाती है। बाकी दिनों में पानी उथला हो जाता है तब लोग इसे पैदल पार करते हैं।

पक्की सड़क गाँव के बीचोबीच से उत्तर-दक्षिण जाती है और रेलवे लाइन इसी के समानान्तर गाँव के पश्चिम से। आजकल इस सड़क की मशहूरी 'राम वनगमन पथ' के रूप में है। पश्चिम से एक नहर भी आती है जो गाँव के दक्षिण से होती हुई नदी के समानान्तर पूरब की ओर बहती है।

नहर से दक्षिण सड़क पर बाजार है। रेलवे लाइन के पश्चिम आम और महुए का बहुत बड़ा बाग है जिसे बड़की बगिया कहा जाता है। इसी बाग में हर वर्ष छत्रधारी सिंह, नागपंचमी के दिन कुश्ती और लम्बी कूद की प्रतियोगिता करवाते हैं।

गाँव के पश्चिम से लेकर रेलवे लाइन के उस पार तक बड़ैला ताल है। पहले इसका विशाल आकार इसके नाम को सार्थक करता था। उन्नीस सौ सोलह में इसके बीचोबीच से रेलवे लाइन गुजरी जिसने इसे दो हिस्सों में बाँटकर इसकी महिमा घटा दी। ताल के दक्षिण-पूरब के हिस्से में सिंघाड़ा होता है और बाकी में श्वेत कमल खिलते हैं। रेलवे लाइन के पश्चिमी हिस्से में नरई होती है। जिस साल बरसात कम होती है उस साल ताल के किनारे के खेतों में पिछैती किस्म का धान लगाया जाता है जिसे जड़हन कहते हैं।

एक-दो अपवाद छोड़ दें तो प्रति परिवार खेती की जमीन बहुत कम है। ठाकुरों-ब्राह्मणों के पास तीन-चार एकड़ से पाँच-छह एकड़ तक। मध्यवर्ती जातियों के पास एक-डेढ़ एकड़ से ढाई-तीन एकड़ तक। अपवाद के रूप में छत्रधारी सिंह और उनके भाई तिलकधारी उर्फ करिया सिंह हैं जिनके पास पन्द्रह एकड़ और दस एकड़ जमीन है। इसका कारण यह है कि छत्रधारी के पिता ने भी छीन-झपट कर अपनी खेती में विस्तार किया और छत्रधारी सिंह ने भी। पारस सिंह के पूर्वज तिहता रहे हैं यानी मौजे की कुल जमीन के एक-तिहाई के मालिक। और पारस सिंह अपने पिता के एकमात्र उत्तराधिकरी। लेकिन अब उनके पास केवल आठ एकड़ के करीब जमीन बची है, बाकी शराब का रूप धरकर पेट में चली गई। जमीन के खंड-खंड होते चले जाने का कारण हर बीस-पच्चीस वर्ष में पिता की मृत्यु के बाद बेटों के मध्य जमीन का बँटना है। एक पिता के चार बेटे हो गए तो हर एक के पास एक ही पीढ़ी में जमीन घटकर एक-चौथाई हो गई।

बनिया परिवार गाँव में पहले एक ही था। उसी से चौदह घर हुए। गाँव में रहना उनके लिए दिनोदिन कठिन होता गया। ठाकुर टोले के जवान हो रहे लड़कों में से दो-चार हमेशा उदंड निकलते। वे अपने नाम में 'सम्राट' या 'टाइगर' लगाते। पैंट की जेब में कड़कड़ाकर खुलने वाला रामपुरी चाकू रखते। कोई-कोई देशी कट्टा रखता। सौदा उधार खरीदकर भूल जाते और फिर उधार लेने पहुँच जाते। पैसा माँगने पर मारपीट पर आमादा हो जाते। तगादे से शाम के झुटपुटे में वापस लौटता कोई सेठ महामाई के जंगल में लुट जाता। ये लड़के चार-पाँच साल तक तपते, जब तक पुलिस की पिटाई से ठंडे न पड़ जाते या कलकत्ता, बम्बई न भाग जाते। इस बीच नई पीढ़ी जवान होकर उनकी जगह ले लेती।

कुछ इनसे त्रस्त होकर और कुछ व्यापार की नई सम्भावनाओं की तलाश में कुछ लोग गाँव के घर में ताला लगाकर बाजार में रहने लगे हैं और कुछ जाने की सोच रहे हैं।

दलित बस्ती बड़ैला ताल के दक्षिणी भीटे पर बसी है। पहले इसकी झाड़ियों के बीच लोमड़ी, खरगोश और नेवले बिल बनाकर रहते थे। शाम को सियारों का झुंड जंगल से निकलकर भीटे पर जुटता और 'हुआँ हुआँ' का सामूहिक उद्घोष करने के बाद जिस गन्ने-मक्के या फूट के खेत को निशाना बनाना तय होता उस पर धावा बोलता। तब इस भीटे को सियरहवा भीटा कहते थे। वैसे तो सियार हमेशा जोड़े में रहते थे पर कभी-कभी खासकर जाड़े के महीने में जब धूप खिली हो, कोई अकेला सियार किसी लोमड़ी से छूट लेने की कोशिश करते देखा जा सकता था। तब लोमड़ी के नखरे देखने लायक होते थे।

रेलवे लाइन आने पर तब के सियारों को शायद काले-कलूटे इंजन का विकराल रूप, उसकी धमक और सीटी की कर्कश आवाज रास नहीं आई। उन्होंने भीटे का त्याग कर दिया। तब इस पर दलित जातियों ने कब्जा करना शुरू किया। वे इधर-उधर से आकर बसने लगे। टोले का नाम पड़ा सियरहवा टोला। अब रहते तो दलित हैं लेकिन नाम सियारों का ही चल रहा है।

दलित परिवार लगभग पूरी तरह भूमिहीन हैं। सरकार ने समय-समय पर उन्हें जिस जमीन का पट्टा दिया उस पर कभी उनका कब्जा नहीं हो पाया। वे मजदूरी करते हैं या बटाई पर खेती करते हैं।

अपवाद छोड़ दें तो यहाँ सबल मानी जाने वाली जातियों के नाम में 'राम' आगे-आगे चलते हैं यथा रामप्रताप, रामकुमार, रामबहोर, रामअधार, रामबरन, रामकरन, रामजियावन, रामलुटावन, रामचरन, रामबचन आदि और दलित समुदाय के नाम में 'राम' पीछे से सहारा देते हैं। यथा तुलसीराम, सीताराम, कोदईराम, भगेलूराम, जीतनराम, गनपतराम, विदेशीराम, परदेसीराम आदि। अभिवादन के लिए ब्राह्मणों को पैलगी के अलावा सारे समाज में 'राम-राम', 'सीता-राम', 'जै राम' प्रचलित था। अब नमस्ते, नमस्कार, जब-तब जय भीम, नमो बुद्धाय, राधे-राधे, जय श्रीकृष्ण जैसे सम्बोधन भी प्रचलन में आ गए हैं। गाँव के नामों में परिवर्तन करने की आकांक्षा भी इधर सिर उठाती दिख रही है। पड़ोसी गाँव का एक समुदाय अपने गाँव का नाम अब भी पहले से प्रचलित गनीपुर बनाए रखना चाहता है तो दूसरे समुदाय के कुछ लोग इसे 'ज्ञानीपुर' कर देना चाहते हैं।

गाँव में चकबन्दी हो रही है।

चकबन्दी का समय दबंगों और दलालों के लिए चाँदी काटने का समय होता है। उनकी खेती का रकबा और रुतबा ड्योढ़ा हो जाता है। जबकि एक बड़ी आबादी के लिए यह महामारी जैसा होता है। अपने और पराए दोनों से लड़नां पड़ता है। अपनों से अपने हक-हिस्से के लिए और परायों से उनकी उपजाऊ जमीन हड़पने या अपनी बचाने के लिए। खसरा खतौनी के पेट से इतने सन्दर्भ निकल आते हैं कि भाई-भाई का दुश्मन बन जाता है। तय करना मुश्किल हो जाता है कि कौन अपने बाप का असल बेटा है और कौन दोगला?

चकबन्दी का दल बाजार में भोला बनिया के मकान में डेरा डाले है। उसी में ऊपर आवास और नीचे दफ्तर। कुल बारह-तेरह लोग। रामनाथ कुशवाहा ने सुन रखा है कि चकबन्दी वाले जीते-जी खाल खींचते हैं। इन लोगों से शुरू से ही रब्त-जब्त बनी रहे इसलिए अपने दूर के रिश्तेदार लड़के को इन लोगों के साथ लगा दिया है। वह खाना बनाने, कपड़ा-बर्तन धुलने से लेकर तेल मालिश तक का काम करता है। इनके लिए रोज सुबह-शाम अपने खेत से मुफ्त सब्जी देते हैं। बीच-बीच में खुद भी साहेब सलामत करने के लिए हाजिर होते रहते हैं।

एक दिन शाम को लड़का सब्जी लेने आया तो जो बताया उससे रामनाथ बेचैन हो गए। एसौओ और कानूनगो के बीच होने वाली बातचीत का जो अंश उसने सुना उससे जाहिर होता था कि उनके खानदान का चक उनकी मूल जोत से दूर फेंका जा रहा है।

रामनाथ कुशवाहा का परिवार गाँव के खाते-पीते किसानों में माना जाता है। कभी उनके परिवार के पास गोंषड़ की सोलह आने मालियत वाली आठ बीघे जमीन थी। परिवार बढ़ा और बँटा, एक से पाँच घर हुए तो हरेक के हिस्से में कमोबेश डेढ़ बीघा आया। लेकिन उसी में पूरा परिवार रात-दिन डटा रहता है। साल-भर में सब्जी-भाजी की तीन-चार फसल लेता है। बाजार में सब्जी की स्थायी दुकान है इसलिए गुजर-बसर हो जाती है। किसी से कर्जा-ऋण लेने की नौबत नहीं आती। यही परसन्तापियों की नजर में खटकता है।

कई दिन सुबह-शाम चकबन्दी ऑफिस का चक्कर लगाने के बाद भी रामनाथ जान नहीं सके कि उनके साथ क्या होने वाला है। परिवार भले बँट गया

है लेकिन बाहरी मामलों के लिए अब भी रामनाथ ही सबके अगुआ हैं। काम बिगड़ा तो अपयश उन्हीं के मत्थे आएगा। पर्चा कट जाने के बाद पता चला तो क्या फायदा।

रामनाथ ने एक बकरा पाला है। मांसाहारी नहीं हैं, सिर्फ शौक के लिए। चितकबरे रंग का, बड़े-बड़े कान वाला जमुनापारी। उसका नाम चित्तू रखा है। खूब मोटाया हुआ है। रामनाथ ने उसके गले में घूँघर पहना दिया है। उनके आगे-पीछे दौड़ता है तो घूँघर की आवाज बहुत कर्णप्रिय लगती है। वह दोनों पैर उठाकर रामनाथ से सींग लड़ाने का खेल खेलता है तो मन मुदित हो जाता है। उसका एक ही काम है, जरूरतमन्द बकरियों का गर्भाधान। उसे इसी काम से फुरसत नहीं मिलती।

रामनाथ को पता है कि छत्रधारी अपने ताल से अक्सर चकबन्दी दल के लिए मछलियाँ भेजवाते हैं। खासकर एसीओ साहब मीट-मछली के शौकीन हैं। रामनाथ को सबसे ज्यादा खतरा छत्रधारी सिंह की तरफ से ही लगता है। इसकी काट चित्तू ही हो सकता है लेकिन वह उन्हें प्राणों से ज्यादा प्रिय है। क्या करे क्या न करे? बहुत सोच-विचार के बाद एक शाम चित्तू का पगहा पकड़कर वे एसीओ के सामने हाजिर हुए और हाथ जोड़कर बोले-"साहब, आपके लिए यह बकरा लाए हैं। घर का पला हुआ बकरा है, समझिए मेरे बेटे के समान है। आप लोग इसे मारकर खा लें और हमारे खानदान का चक हमारी मूल जोत पर ही रहने दें। कहीं दूर फेंक देंगे तो हमारा सब्जी-भाजी का पुश्तैनी रोजगार छिन जाएगा।"

पाँच बज रहे थे। भीड़-भाड़ नहीं थी। एसीओ साहब कुछ देर तक बारी-बारी उन्हें और चित्तू को देखते रहे, फिर कहा- "उधर पेड़ से बाँध दो।"

रामनाथ चित्तू को पेड़ से बाँधकर लौटने लगे तो एसीओ ने कहा- "इसका तेल-मसाला कौन देगा? दो किलो प्याज, एक किलो सरसों का तेल और गरम मसाला भी दे जाओ।"

घंटे-भर बाद रामनाथ तेल-मसाला लेकर पहुँचे तो उनकी आहट पाकर चित्तू की चिल्लाहट तेज हो गई। वे उसके पास जाकर उसका माथा सहलाते हुए समझाने लगे-"थोड़ी देर और भूख-प्यास सँभालो बाबू। अभी घंटे-दो घंटे में पशु योनि से मुक्त हो जाओगे।"

चित्तू समझ रहा था कि मालिक उसे लेने आए हैं। वे मुड़कर जाने लगे तो वह आर्त स्वर में और तेज-तेज अल्लाने लगा। रामनाथ अपने कानों में उँगली डालकर भागे।

लेकिन घर पहुंचने के बाद भी चित्तू की चीखें उसका पीछा करती रहीं।

27

सारी रात करती रही। पौ फटने के बाद वे पता नहीं क्यों फिर उसी जगह पहुँचे जहाँ चित्तू को बाँध गए थे। वहाँ चित्तू की लेंड़ी बिखरी पड़ी थी। थोड़ी दूर की जमीन उसके पेशाब से गीली और हल्की पीली थी। उसका पगहा थोड़ी दूर पर पड़ा था। रामनाथ ने पगहे को उठा लिया। सूँघा और माथे से लगा लिया। आश्वस्त हुए कि शैतान ने उनकी भेंट कबूल कर ली। अब उनका चक बिगड़ने से बच जाएगा।

माठा बाबा कितना पढ़े हैं यह तो कोई नहीं जानता लेकिन यह सभी जानते हैं कि बाबा वेद पढ़ने काशी गए थे। उनके मुँह से सुनी गई धार्मिक कहानियों और श्लोकों के आधार पर इलाका उनको विद्वान मानता है। बाबा को बचपन से माठा बहुत प्रिय है। तब हर घर में दुधारू जानवर होते थे। बाबा खेलते-खेलते जिसके भी दरवाजे जाते, दूध, दही या माठा पीने का आग्रह किया जाता। बाबा केवल माठा स्वीकार करते। इस इलाके में युवा ब्राह्मण को भी सम्मान देने के लिए बाबा कहा जाता है। धीरे-धीरे वे माठा बाबा के नाम से मशहूर हो गए। उम्र के आधार पर बाबा कहे जाने के पात्र तो बाद में हुए। उनके पिता उनसे कहते कि भाग्यशाली हो कि सर्वोत्तम देश आर्यावर्त की सर्वोत्तम जाति 'ब्राह्मण' के कुल में पैदा हुए हो। साथ ही गौरांग और सुदर्शन कायाधारी भी हो। यह दोनों भी बहुत बड़ी सम्पत्ति हैं। त्रिपुंड लगाकर जिस समाज में पहुँच जाओगे सम्मानित आसन मिलेगा। सत्यवादी

बनो और चरित्र-बल पैदा करो। माठा बाबा ने प्रतिज्ञा की कि वे हरिश्चन्द्र की तरह सत्यवादी और जबान के पक्के बनेंगे।

लेकिन झटका भी घर से ही लगा। पन्द्रहवें वर्ष में प्रवेश करते ही पिता ने विवाह तय कर दिया। जनेऊ और तिलक एक दिन के अन्तर पर रखा गया। जनेऊ के समय कौपीन लँगोटी पहनाई गई और मंत्रोच्चार के बीच पुरोहित ने कहा, "लाठी लेकर दो कदम चलो और बोलो- 'मैं विद्याध्ययन के लिए काशी जा रहा हूँ।'"

बाबा ने आदेश का पालन किया।

"कहो, 'पचीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा।'"

बाबा चुप।

"बोलो।"

"लेकिन कल ही तो मेरा तिलक है और एक महीने बाद शादी।"

"उससे क्या? यह जनेऊ की परिपाटी है।"

"वेदमंत्रों की गवाही में झूठ बोलने के लिए क्यों बाध्य कर रहे हैं? या तो ब्रह्मचारी रहने की प्रतिज्ञा कराइए या विवाह करिए। दोनों कैसे निभेगा?"

उनके पिता आए। डाँटा "ज्यादा काबिल मत बनो। जैसा कहा जा रहा है वैसा करो।

उन्होंने प्रतिज्ञा दोहरा दी।

पत्नी ब्याह कर आई। बाबा ने पहली ही रात में उन्हें बता दिया कि मुझे पचीस वर्ष की उम्र तक ब्रह्मचारी रहना है। प्रतिज्ञा करा दी गई है।

फिर पढ़ने के लिए काशी भी गए। डेढ़-दो साल वहाँ रहे। कहाँ रहे, क्या पढ़े यह तो किसी को पता नहीं। बहू के मायके से दबाव पड़ने पर पिता उन्हें खोज-मनाकर वापस लाए।

उस जमाने में बाबा को दहेज में साइकिल मिली थी लेकिन बाबा कभी साइकिल चलाना नहीं सीख पाए। उन्होंने दालान की दीवार में सिर की ऊँचाई पर डेढ़ हाथ के अन्तर पर दाएँ-बाएँ दो मजबूत खुटियाँ गाड़ों और साइकिल को उन्हीं पर टाँग दिया। महीने में एक बार कन्धे पर लादकर नदी तक ले जाते और धो-पोंछ कर वापस लाकर फिर खूँटी पर टाँग देते। ससुराल की निशानी थी इसलिए बेच भी नहीं सकते थे। बड़े होकर बेटे ने उसे चलाना चाहा तो वह अचल हो चुकी थी।

पचीस वर्ष की उम्र प्राप्त होने के बाद बाबा ने पत्नी के नजदीक जाना चाहा तो वह अड़ गई। बोली, मैं भी पचीस की होने तक ब्रह्मचारिणी रहूँगी। इस तरह बाबा को सत्ताईस वर्ष तक ब्रह्मचारी रहना पड़ा। उसके दो वर्ष बाद उनके माता-पिता ने पोते का मुँह देखा।

गाँव की औरतों का विश्वास है कि माठा बाबा के पास दैवी सिद्धियाँ हैं। बोधा बहू को माठा बाबा अपने गोरे रंग, दोहरी काया, चाँदी जैसे चमकते बाल, खटपट करते खड़ाऊँ, सफेद वस्त्र और हाथ उठाकर आशीर्वाद देने की मुद्रा से देवपुरुष लगते हैं। वे तीज-त्योहार पर बेटे के हाथों कभी पाव-आध पाव घी, कभी दही, कभी दूध उनके घर भेजवाती रहती हैं। घर के सामने से गुजरते हैं तो बिना माठा पिलाए जाने नहीं देतीं। वे अक्सर उन्हें अपनी भैंस का टोना झारने के लिए बुलाती हैं। कोई टोनही औरत टोना लगा देती है तो भैंस का दूध घट जाता है। बाबा मंत्रावेषित सरसों उसके ऊपर फेंकते हैं तो टोना झर जाता है। दूध बढ़ जाता है।

बाबा पत्तरा देखकर गाँव की औरतों को व्रत-त्योहार की जानकारी देते हैं। गाँव की गृहिणियों की स्थायी विपत्ति का एक कारण होता है कैड़ौर (उपलों के स्तूप) में चूहों का लगना। बरसात में जब सारा जलावन भीगा रहता है तो

कोठरी में रखे यही उपले चूल्हे के काम आते हैं। चूहे लग गए तो उपलों को कुतरकर मिट्टी कर देते हैं। बाबा उपलों को कोठरी में रखने के लिए ऐसी साइत (शुभ मुहूर्त) बताते हैं जिससे इनमें चूहे न लगें।

बोधा भाई के पास एक बैल था जो बहुत जूमता था। खड़े-खड़े पागुर करता रहता और जूमता रहता। बोधा बहू को किसी ने बताया कि बैल के जूमने से दोख होता है। उन्होंने बाबा को बुलाकर बैल को झरवाया।

एक पड़ोसन ने सुना तो कहा- "बाबा, मेरा आदमी भी बहुत जूमता है। बस जूमता ही है, बाकी... तो क्या बताएँ!" कहकर हँसने लगी।

बाबा जान गए कि मजाक कर रही है। बोले- "जिस समय जूम रहा हो उसी समय झराओ तभी फलेगा।"

पड़ोसिन हँसते हुए पिछड़ गई-" आप तो मजाक करते हैं बाबा।"

एक बार दलित टोले की इमरती ने खेतों के बीच पगडंडी पर बाबा की राह रोककर कहा- "बाबा, चार दिन से पानी बरस रहा है। कहीं मजदूरी करने नहीं जा सके। बच्चे उपवास कर रहे हैं। दस रुपया दीजिए तो बाजार से राशन लाएँ।"

बाबा अचकचाए तो हँसते हुए बोली- "दीजिए नहीं तो अभी गोहार लगा दूँगी कि बाबा मुझे अरहर के खेत में घसीटे लिये जा रहे हैं।"

बाबा भी हँसने लगे। बोले, "जब घसीटने लायक थे तब तो कभी तुमने याद नहीं दिलाया, आज जले पर नमक छिड़क रही हो!"

और बंडी की जेब से दस रुपये का नोट निकालकर दे दिया।

लोगों को विश्वास है कि बाबा बरहे का पानी बाँध सकते हैं, लगी हुई आग को फैलने से रोक सकते हैं। किसी की कोख बाँध सकते हैं और बंधी हुई कोख खोल सकते हैं। नंगे होकर जाड़े की रात में पियरा परोर दें तो फसल में चूहों का प्रकोप बन्द हो जाता है। मारण मंत्र का जाप करना निषिद्ध मानते हैं क्योंकि जाप करने वाले को भी हत्या का पाप लगता है पर कोई भारी खर्च करने को तैयार हो तो कर सकते हैं।

बनिया टोले की औरतें उनसे अक्सर कोई न कोई अनुष्ठान कराती रहती हैं। वहाँ दक्षिणा भी अच्छी मिलती है।

दलित टोले की औरतें बाबा को पैलगी तो करती हैं लेकिन किसी काम से बुलीं नहीं। शायद बाबा भी उनके घर न जाना चाहें।

दलित टोले के लड़के कहते हैं- हमारे बाबा दूसरे हैं। नीला कोट पहनने और लाल टाई लगाने वाले।

अपनी जवानी में बाबा ने अपनी रोजी भी अनोखी ढूँढ़ी। प्रयागराज से पिपिया

अगम बहै दरियाव

में गंगाजल भरकर रेल से दक्षिण भारत की ओर निकल जाते। वहाँ किराए पर एक हाथी लेते। उसके हौदे पर एक टोंटीदार ड्रम में पानी भरकर बाँधते। ड्रम में अपनी पिपिया से थोड़ा गंगाजल मिलाकर बाँटने निकल पड़ते। दक्षिण के लोगों को घर बैठे गंगाजल मिल जाता, उनके लिए इससे ज्यादा खुशी की बात क्या हो सकती थी। मरणासन्न बुजुर्ग के मुँह में दो बूँद गंगाजल टपकाना तो सबसे बड़ा पुण्य का काम है श्यामरंग जजमानों के बीच गौरांग, त्रिपुंडधारी श्वेत वस्त्रावृत ऋषि की उपस्थिति ! दक्षिण भारत के लोग कितने श्रद्धावान होते हैं यह कोई बताने की बात है! उस पर काशी, अयोध्या या प्रयाग से आया ब्राह्मण! इतनी आवभगत होती, इतना चढ़ावा चढ़ता कि हर पन्द्रहवें दिन मनीऑर्डर आता। इतना बड़ा पक्का मकान उसी की देन है। गाँव में सबसे पहला पक्का मकान नर्तकी कलाधरी ने बनवाया था, दूसरा माठा बाबा ने। छत्रधारी का इन्द्राणी महल तो बहुत बाद का है। उम्र बढ़ने के बाद दक्षिण की यात्रा बन्द कर दी। पर अब भी उधर की याद आती है तो बाबा भावुक हो जाते हैं। भक्त तो उधर ही बसते हैं, इधर तो ठग और पापी रहते हैं।

आज आइए सुनते हैं माथा बाबा की गृहस्थी वाली कहानी। जब माथा बाबा चरणामृत बनाने के लिए गाय का दूध लेने बोधा भाई के दरवाजे पर पहुँचे, तो तीन-चार बच्चे माथा लेने पहले ही आ चुके थे। घर के अंदर से मीठी मंथन की आवाज़ आ रही थी।

थी-घलर... घलर... घलर।

माठा बाबा ने देखा कि बोधा जुआठ लेकर बैलों के आगे खड़े हैं तो आवाज लगाते-लगाते रुक गए। बोधा के जाने तक इन्तजार कर लेना ठीक रहेगा। उनकी गैरहाजिरी में बोधा बहू के हाथ अधिक उदार हो जाते हैं।

वे बोधा भाई की ओर बढ़ गए।

जवान बैल तो जुआठ देखकर खुद ही खड़ा होकर नधने के लिए तैयार हो गया, बूढ़े मकरे को उठाने के लिए वे टिटकारने लगे।

मकरा उठने के लिए तैयार नहीं था।

"अब यह बूढ़ा हो गया बोधा। हड्डियाँ निकल आई हैं।"

"इतना बूढ़ा भी नहीं है बाबा। हड्डियाँ तो इसलिए निकल आई हैं कि ससुरे को मूत पीने की लत लग गई है।"

"कुछ भी हो, अब इसको पेंशन दे दो।"

"बाबा, किसान और बैल की किस्मत में मरने के दिन तक खटना लिखा रहता है। भगवान ही इनको पेंशन देते हैं, अपने पास बुलाकर।"

31

... लेकिन चित्तू का बलिदान व्यर्थ गया।

पर्चा मिला तो रामनाथ को पता चला कि उनके पूरे खानदान का चक धनहर की निचली जमीन पर फेंक दिया गया। रामनाथ ने चकबन्दी अधिकारी के समक्ष आपत्ति दायर की। आज उसी की सुनवाई हो रही है।

रामनाथ को लगता है कि उनका वकील ढंग से उनका पक्ष नहीं रख पाया। कहीं विपक्षी के हाथों बिक तो नहीं गया? वे हाथ जोड़कर कहते हैं-"हुजूर, लगता है हमारे वकील साहब फाइल पढ़कर नहीं आए हैं। इजाजत हो तो अपनी मुसीबत मैं खुद अर्ज करूँ।"

"हाँ-हाँ बोलो।" काला कोट पहने अकड़े बैठे अफसर ने कहा।

"हुजूर, मैं जाति का कोइरी हूँ। पाँच घरों के हमारे खानदान में हरेक के पास कमोबेश डेढ़ बीघा खेत है। दो-चार बिस्वा छोड़कर सारी जमीन गोंयड़ की, सोलह आने मालियत वाली उँचास है और हमारे घर के पास है। उसी में साग-भाजी उगाकर हम अपना परिवार पालते आए हैं। कायदन हमें हमारी मूल जोत से हटाया नहीं जा सकता लेकिन हम सबको चार आने मालियत वाली धनहर की निचली जमीन पर फेंक दिया गया है जहाँ चार महीने पानी भरा रहता है और अगहनी धान की सिर्फ एक फसल होती है। बाढ़ आ जाए तो वह भी डूब जाती है। हमारे साथ भारी जुल्म हुआ है। हमें इस जुल्म से बचाया जाए। हमारा चक हमारी मूल जोत पर दिया जाए नहीं तो फाँसी लगाने के अलावा हमारे पास दूसरा कोई चारा नहीं है।"

बात पूरी करने के पहले ही बूढ़े रामनाथ के होंठ थरथराने लगे।

इजलास में सन्नाटा छा गया।

जब तक रामनाथ बोलते रहे, अफसर मुँह में कलम दबाए उनकी बात सुनता रहा, फिर बोला- "ठीक है, जाओ।"

लेकिन रामनाथ यह भी जानते थे कि सिर्फ मुसीबत गा देने से कुछ नहीं होने वाला। छत्रधारी उनकी छाती पर कुंडली मारकर बैठ चुके हैं।

रात में पाँचों परिवार इकट्ठा बैठे। सोच-विचार के बाद तय हुआ कि एक मोटी रकम सीओ साहब को देना जरूरी है।

अगली शाम अपने क्वार्टर पर हाजिर रामनाथ को सीओ साहब ने आश्वस्त

किया-"देखो दादा, ईमानदार तो नहीं हूँ। रोज ही घूस लेता हूँ, लेकिन इतना बेगैरत भी नहीं हूँ कि मुर्दे के शरीर से कफन खींच लूँ। तुम्हारे साथ अन्याय हुआ है। मैं तुम्हें न्याय दूँगा और बिना कुछ लिये दिये दूँगा। जाओ।"

घर लौटते रामनाथ एक पल खुश होते और अगले ही पल सशंकित हो जाते। अब तक तो वे यही देखते आ रहे हैं कि अफसर घूस भी खा जाते हैं और मनमाफिक काम भी नहीं करते। बिना लिये दिये कैसे कर देगा? ऐसा तो नहीं कि छत्रधारी ने इसे भी पूज लिया हो!

वे चलते-चलते पीछे मुड़े। चार कदम चले, रुके, फिर पीछे मुड़े। दो बार ऐसा हुआ। कहाँ जाएँ? क्या करें?

छत्रधारी भी परेशान हैं। हरामजादा सिफारिश न माने लेकिन घूस खाने को भी तैयार नहीं है। सारे रास्ते बन्द पाकर वे माठा बाबा की शरण में जाते हैं। उन्हें माठा बाबा की बुद्धि पर भरोसा है। उन्हें विश्वास है कि वे कोई न कोई रास्ता निकाल लेंगे। पहले भी माठा बाबा की बुद्धि ने उन्हें फतेह दिलाई है।

लालटेन के मन्द प्रकाश में चारपाई पर दोनों लोग आमने-सामने मुँह करके बैठे हैं। बाबा मुँड़वारी और छत्रधारी गोड़वारी। छत्रधारी जानते हैं कि महाभारत की लड़ाई में अर्जुन जब कृष्ण से सहायता माँगने गए तो उनकी गोड़वारी बैठे थे।

सारी बात सुनकर बाबा उन्हें समझाने की कोशिश करते हैं- "यह तो कोइरी लोगों का पेट काटने के बराबर होगा। कहा गया है कि मूँड भले काट लीजिए लेकिन पेट मत काटिये। साग-सब्जी उगाकर किसी तरह गुजर-बसर कर रहे हैं। जमीन घर के पास है तो रखवाली कर लेते हैं। जंगली सूअर और नीलगाय से बचा लेते हैं। धनहर वाली जमीन में फेंकना तो उन्हें भूखों मारना हुआ।"

"धनहर में भी तो उनके थोड़े-बहुत खेत हैं ही।"

"कितने हैं, पेट काटकर किसी ने चार-छह बिस्वा खरीद लिया तो उसी की आड़ में उन लोगों को सोलह आने मालियत से चवन्नी की मालियत पर ढकेल देंगे? नीचे वालों से नहीं तो ऊपर वाले से तो डरिए।"

"कोई नीचे-ऊपर नहीं। जो कमजोर वह नीचे। जो सहजोर वह ऊपर।"

"यह भी सोचिए कि आप अपनी अठन्नी वाली मालियत से उठकर सोलह आने मालियत पर आ रहे हैं तो आपकी जमीन भी तो घटकर आधी हो रही है। उगाना आपको धान, गेहूँ ही है। सड़क के किनारे आने से फसल का नुकसान होगा सो अलग। फायदा क्या हुआ?"

फायदा तो छत्रधारी जैसे बनिया बुद्धि के लोग ही जानते हैं। समय आ रहा है कि सड़क के किनारे की जमीन फुट के रेट से बिकेगी। दस गुने बीस गुने महँगे रेट से।

33

बाबा एक बार फिर समझाते हैं- "कोइरी लोगों को कमजोर मत समझिए। वे लड़कर ले लेंगे। यहाँ से नहीं तो ऊपरी अदालत से। आप पचा नहीं पाएँगे।"

"आप दिलाइए। मैं पचा लूँगा।"

"ठीक है। उस अधिकारी का नाम-पता दीजिए। साथ में किराया-भाड़ा और अँचला-कमंडल-खड़ाऊँ का खर्च। कोशिश करते हैं।"

बैताली पांडे की नौटंकी कंपनी में शामिल हो गए।

एस् कई साल से, जब से पाँड़े ने नौटंकी कम्पनी खोली, उनकी नजर बैताली पर थी। कई बार उन्होंने जंगल में उसका आलाप सुना था। कई बार वे खुद चलकर बैताली के पास आए लेकिन बैताली तैयार नहीं हुआ।

तैयार इसलिए नहीं हुआ कि वह जन्मजात बैताल है। बचपन से लेकर आज तक उसने कभी किसी की हलवाही-चरवाही या मजदूरी नहीं की। उसकी माँ को इस गाँव के कालू हरिजन उढ़ारकर लाए तो

साथ में दो साल का बैताली भी था। नए पिता ही नहीं, माँ और बाद में पैदा हुए सौतेले भाई-बहनों से भी उसकी दूरी बनी रही। उसकी माँ ने उसे स्कूल भेजा लेकिन एक ही बार मार पड़ी तो गिट्टी से मास्टर का सिर फोड़कर वहाँ से भी भाग आया।

बचपन से उसका ज्यादा समय जंगल में ही बीतता रहा है। पहले उसके हाथ में गुलेल रहती थी। बाद में भाला भी जुड़ गया। तीतर, बटेर, साही और खरगोश का शिकार करना और मधु निकालकर बेचना ही उसका रोजगार रहा है। उसके भाले का निशाना इतना पक्का है कि छलाँग लगाते खरगोश पर दस-बारह गज दूर से फेंके गए भाले का निशाना कभी खाली नहीं जाता। मधुमक्खियों के डंक से बचने के लिए उसने सुतली के बारीक बाध से ऐसा जालीदार लबादा बना रखा है जिसको ओढ़ लेने से डंक शरीर तक पहुँच ही नहीं पाता।

लम्बी-चौड़ी गठी हुई देह, चौड़े चेहरे और ऊँची नाक के नीचे की घनी-लम्बी मूँछें उसके चेहरे को रोबीला बनाती हैं। उसकी इन्हीं मूँछों, आवाज में बिजली-सी कड़क और जंगल में एकाध बार सुने गए उसके सुरीले आलाप पर रीझकर ही पाँड़े उसे अपनी नौटंकी कम्पनी में भर्ती करने के लिए पीछे पड़े।

अगम बहै दरियाव

बैताली ने साफ इनकार कर दिया- "मैं बानर, भालू और भिश्ती, राक्षस का 'पाट' करने के लिए नहीं बना। बादशाह की जिन्दगी जीता हूँ बादशाह जैसा 'पाट' ही करूँगा। देना हो तो बताओ?"

मान गए पौड़े-" तुम्हें राजा, डाकू, हवलदार, सेनापति जैसे रोल ही देंगे। चलो।" जिस गूलर के पेड़ पर दस हाथ दूर से भाला फेंककर वह निशाना लगाने का अभ्यास किया करता था उसी गूलर के नीचे बैठकर एक-एक अच्छर जोड़कर वह अपने डायलॉग याद करता है।

कभी-कभी कोई ऊटपटाँग शब्द उसका पैर छान लेता है। आज वह 'फौरन से पेश्तर दफा हो जा' का मतलब समझने की कोशिश में पसीने-पसीने हो रहा है।

माठा बाबा को बिलकुल अच्छा अच्छा नहीं लग रहा है कि वह गरीबों का गला काटने के लिए चकबन्दी अधिकारी के घर जाएँ। लेकिन छत्रधारी की बात... आगे-पीछे की बहुत सारी बातें सोचनी पड़ती हैं।

आखिरकार एक दिन शुभ साइत विचार कर निकलते हैं।

चकबन्दी अधिकारी के गाँव के प्रवेश मार्ग पर एक भुजइन लाई भून रही थी। सहसा उसके कानों में आवाज पड़ी- 'सेत्तााराम बच्चा।' भुजइन ने नजर उठाकर देखा तो तेज से उसकी आँखें चुधिया गईं।

गेरुआ वस्त्र, सफेद-लम्बी दाढ़ी-मूँछ, जटाजूट, माथे पर त्रिपुंड, गौरवर्ण, मझोला कद, मध्यवय दोहरा शरीर, रतनारी आँखें, गले में रुद्राक्ष की माला, पैर में खड़ाऊँ, कन्धे पर जोगियों जैसा झोला, दाएँ हाथ में कमंडल! भुजइन ने दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम किया और पुआल की गोल आसनी बैठने के लिए आगे करते हुए बोली- "बैठिए बाबा। हाथ खाली होने दीजिए।" भुजइन भिक्षा देने लगी तो बाबा ने इशारे से मना करते हुए चार आने का सत्तू खरीदा। इस बीच उसे ध्यान से देखते हुए बोले-"तुम्हारा माथा देखकर पता चलता है कि तुम जिसके साथ नेकी करती हो वही बदी देता है।"

"क्या करें बाबा। मेरी तकदीर ही फूटी है।"

"तुम मन की बहुत निश्छल हो और लोग इसी का फायदा उठाकर तुम्हें ठग लेते हैं।"

"एकदम सही बाबा। जो भी मिले ठगने वाले ही मिले। एकदम कच्ची उम्र की थी तब से ठगी जा रही हूँ।"

बाबा को इस संवाद में उम्मीद की झलक मिली लेकिन मन को बलात् अपने उद्देश्य पर केन्द्रित करते हुए झोली से एक पुड़िया निकाली और उसे देते हुए बोले-" इसको तावीज में भरवाकर पहन लेना। कल्याण होगा।"

फिर पूछा- "यह सामने पक्का मकान किसका है?"

"परधान जी का।"

"और वह दूसरा?"

"चकबन्दी के साहेब का।"

"धन-धान्य, बाल-बच्चों से सुखी लगते हैं।"

"सुखी तो थे बाबा लेकिन भगवान से इनका सुख देखा नहीं गया। पिछले साल आठ साल का इकलौता बेटा इसी तालाब में डूबकर मर गया। पता ही नहीं चला कि घर से इतनी दूर तालाब तक कैसे पहुँचा? कैसे डूबा? अब तीन बेटियाँ ही रह गईं।"

चलने के पहले बाबा पैसा देने लगे लेकिन भुजइन ने हाथ जोड़ लिये-"नहीं बाबा। बड़े भाग से घर बैठे पुन्न लेने का मौका मिला।"

सूर्यास्त हो रहा था, जब सीओ साहब के दुआर पर जाकर बाबा ने हुंकार लगाई-'अ-ल-ख नि-रं-ज-न।'

सीओ साहब की पत्नी तुलसी के चौरे पर शाम का दीया जलाकर लौट रही थीं। बाबा को देखकर उनकी आँखें उत्सुकता, सम्मान और संकोच से उठीं और झुक गईं। हाथ जुड़ गए। बाबा ने दाएँ हाथ के कमंडल को बाएँ हाथ में लिया और दाहिने हाथ को आशीर्वाद की मुद्रा में उठाकर कहा-"पुत्रवती भव। बेटा आएगा।"

सीओ साहब की पत्नी की आँखों में आँसू उमड़ आए। कंठ अवरुद्ध हो गया। संयत हुईं तो कहा-" आए तो थे बाबा। धोखा देकर भाग गए।" कहकर फफक पड़ीं।

"मालूम है, मालूम है। खुद नहीं भागा। भगाया गया। लेकिन उसी कोख से फिर अवतार लेना चाहता है। जरा हथेली फैलाओ।"

खुली हथेली पर भभूत रखते हुए बाबा ने कहा- "मुट्ठी बन्द कर लो।"

बाबा ने मंत्र पढ़कर आकाश की ओर तीन बार फूंक मारी फिर कहा-"मुट्ठी खोलो।"

खुली मुट्ठी में गुलाब की पंखुड़ी निकली। सीओ बहू आश्चर्यचकित।

बाबा ने कहा- "खुल गई कोख। गुलाब जैसी आभा वाला बेटा आएगा। नाम रखना अलख निरंजन। अब चलता हूँ।"

अगम बहै दरियाव

खड़ाऊँ की खटर-पटर।

सीओ बहू आतुर होकर बोलीं-" रुकिए बाबा। कुछ जलपान करके जाइए।"

"अभी नहीं। अलख निरंजन की बरही में आऊँगा तब जलपान करूँगा।"

"बाबा रुक जाइए। मैं अम्मा को बुलाती हूँ।"

बढ़ते कदम रुक गए। बहू ने पास की चौकी को झाड़कर उस पर चादर बिछाई और बाबा को बैठाकर अन्दर गई। सास को सारी बात बताई। बूढ़ी हाथ जोड़े हुए निकली और बाबा के चरणों में झुक गई।

उठी तो आँचल के टॉक में बँधे रुपये खोलकर बाबा की ओर बढ़ाए।

"सोना-चाँदी, रुपये-पैसे, धन-दौलत का दान नहीं लेते माताराम।"

"तो क्या सेवा करें बाबा? आपने इतना बड़ा वरदान दिया है।"

"सेवा करना चाहती हो तो मेरे भक्त का कष्ट दूर करवाओ। मेरे एक भक्त पर तुम्हारा सीओ बेटा कुपित है। उसका अनिष्ट करना चाहता चाहता है। अपने बेटे से कहकर उसका संकट टालो।"

"जरूर कहेंगे बाबा। क्यों नहीं कहेंगे।"

बाबा ने अँचले की लम्बी जेब से एक पुर्जी निकालकर बूढ़ी के हाथों में पकड़ाई-" इसमें सब कुछ लिखा है। इन्हीं नम्बरों पर मेरे भक्त का चक बैठवाना है।"

बूढ़ी ने सिर झुकाकर दोनों हाथों में पुर्जी को रोपा।

"अब मुझे एक सीधा (चावल-दाल-नमक) देकर विदा करिए। इतना ही मैं किसी गृहस्थ से ग्रहण करता हूँ।"

बूढ़ी ने बहू को सीधा लाने का संकेत किया। फिर बाबा से बोली-"आज की रात यहीं बिताइए बाबा। अँधेरा हो रहा है।"

"नहीं माताराम। हम बस्ती में रात्रि-विश्राम नहीं कर सकते। करतल भोजन तरुतल वास। बर्तन में भोजन भी नहीं करते। हथेली पर रखकर भोजन करते हैं और पेड़ के नीचे रात्रि निवास करते हैं।

"...और सुनो माताराम। अगर मेरे भक्त का काम न हो पाए तो ये चूड़ियाँ रख लीजिए। डेढ़ साल बाद बहू के काम आएँगी।"

बूढ़ी ने देखा। चाँदी की दो चूड़ियाँ।

सिहर गई बूढ़ी- 'हे भगवान! पोते की बरही पर आने के लिए भी कहा और चाँदी की चूड़ी भी दे दिये।' बूड़ी का मुँह सूख गया।

बहू की थाली का सीधा झोली में रोपकर बाबा ने अलख जगाई- "कल्याण हो। बरही में आऊँगा।"

दोनों स्त्रियाँ बाबा को अँधेरे में विलीन होते देखती रहीं फिर एक-दूसरे को

देखा। बहू की आँखों में उम्मीद और चमक थी लेकिन सास का मुँह उतरा हुआ था।

"क्या हुआ अम्मा?"

"कुछ नहीं।" बूड़ी ने मन की बात छिपा ली।

बहू रसोई में घुसी तो बूढ़ी दालान में लेटे पति के पास गईं। फुसफुसाईं-"सुनते हो जी, एक बाबा जी आए थे। बता रहे थे कि चन्दू फिर अपनी माँ की कोख से पैदा होना चाहता है। कहकर गए हैं कि वे पोते की बरही के समय फिर आएँगे।"

बुढ़ऊ मुस्कराए। पूछा- "कितना ठगकर ले गया?"

"एक पैसा नहीं। बहुत मनुहार करने पर बोले कि भिक्षा या दान करना ही चाहती हो तो अपने बेटे से कहकर मेरे एक भक्त का संकट दूर करा दो। यही मेरी भिक्षा है।"

"संकट क्या है?"

"इस पुर्जी में सब लिखा है।" बूढ़ी ने पुर्जी पकड़ाई-" बाबा के भक्त का चक सही करवाना है।"

"नो, नो। मैं बेटे के सरकारी काम में दखलंदाजी नहीं कर सकता।"

"करना पड़ेगा। बात ही कुछ ऐसी है। पोता होने का आशीर्वाद देने के साथ-साथ वे बहू के लिए दो चाँदी की चूड़ियाँ भी दे गए हैं। मतलब नहीं समझे? चाँदी की चूड़ियाँ किसी औरत को कब पहनाई जाती है? जब दूसरी चूड़ियाँ तोड़नी पड़ती हैं। अब भी नहीं समझे? अगर बाबा के भक्त का काम नहीं हुआ तो... यह पुर्जी सँभालकर और सबेरा होते ही बेटे के पास रवाना हो जाइए।"

संतोखी को पंचायत मंत्री के कमरे पर हमेशा ताला ही लटकता मिला पर अन्ततः एक बार भेंट हो गई।

संतोखी के हाथ में घी की मटकी देखकर उसने आवाज में नरमी लाकर कहा- "मामला पुराना हो गया। अब यह मेरे हाथ से निकल गया, अब एस.डी. एम. साहब के आफिस में जाकर दरखास्त दें। वहाँ से लौटकर मेरे पास आएगी तब मैं रिपोर्ट लगा दूँगा।"

संतोखी एस.डी.एम. आफिस के बड़े बाबू से मिले। उन्हें दरखास्त दी। बड़े बाबू ने वापस करते हुए कहा-"प्रोफार्मा में भरकर लाओ।"

प्रोफार्मा में भरकर ले गए तो कहा-"एफिडेविट के साथ ले आओ।"

संतोखी ने एफिडेविट का मजमून पता किया। टाइप कराया। नोटरी कराया। ले जाकर बड़े बाबू को दिया और पूछा- "कब तक मिल जाएगा?"

"अभी देते देर नहीं हुई, जल्दी मच गई। फाइल जाँच में जाएगी, रिपोर्ट लगेगी, आर्डर होगा तभी तो मिलेगा। पता लगाते रहना।"

संतोखी पता लगाते रहे। कब फाइल ब्लॉक में गई? कब ए.डी.ओ. की रिपोर्ट लगी? कब एस.डी.एम. के ऑर्डर हुए? वे निरन्तर आवाजाही करते रहे। दरखास्त आगे बढ़ती रही। काम हफ्ते-भर का था लेकिन सवा साल लग गए।

यही क्या कम है कि हो गया, न होता तो क्या कर लेते!

गवाह तो उनके हाथ में पहले से ही था। अब सबूत भी आ गया। संतोखी ने संतोष की साँस ली।

जिस साल बोधा भाई आठवीं में थे उसी जेठ में फेल हो गए। साल फागुन में उनका गौना आया और

उनके बाप लाठी उठाकर मारने दौड़े-"सरऊ, कौन पढ़ाई पढ़ रहे थे?" पड़ोसी ने हँसते हुए कहा- "कौन-कौन पढ़ाई पढ़े बेचारा? बित्ता-भर की पोथी पलटे कि नौ गज की साड़ी?"

बोधा के बाप ने लाठी फेंक दी।

बोधा का बस्ता खूँटी पर टँग गया।

जब यह किस्सा लिखा जा रहा है तो उनका विद्रोही नाम स्वीकृत हो चुका है। छोटे थे तो बुधई कहकर पुकारे जाते थे। स्कूल में नाम लिखाया गया था-'रामबोध'। अब सिर्फ छत्रधारी खुन्नस में कभी-कभी 'बुधइया' कहते हैं लेकिन सामने नहीं। आमने-सामने पड़ने से दोनों लोग बचते हैं। बोधा भाई को बचपन से फरवाही नाच देखने का शौक चढ़ा। फरवाह की नीली जाँघिया, उसमें गुँथे पचासों घुँघरुओं की रुनझुन, दोनों कन्धों से एड़ी तक लटकते नीले पट्टे, नर्तक की गठी हुई थिरकती युवा देहयष्टि और बाँसुरी की लम्बी मीठी तान उन्हें मुग्ध कर देती थी। बाप के लाख मना करने के बावजूद वे नाच देखने दूर-दूर तक चले जाते और लौटने पर बाप की मार खाते। उन्हें सैकड़ों लोकगीत याद हो गए। गाय-गोरू चराने जाते तो

नाचने-गाने का अभ्यास करते। उस समय उनके इलाके में कन्हई फरवाह का बड़ा नाम था। वे कन्हई की तरह नाम कमाने की तमन्ना रखते थे।

गौना आए साल-भर ही हुआ था। उनकी पत्नी मायके गई तो वहाँ हैजा फैला और उनकी पत्नी को लील गया। पढ़ाई छूट ही गई थी। अब बोधा भाई पूरी तरह नाच को समर्पित हो गए।

तब यही सोचते थे कि जब तक जिएँगे, नाचते-गाते रहेंगे। जितना अच्छा नाचते-गाते और लीला करते थे उतनी ही अच्छी बाँसुरी बजाते थे। उनके नगाड़े की टंकार सुनकर दर्शकों का मेला लग जाता था। महफिल लूट लेते थे। अब तक कन्हई फरवाह का 'नखरा' इलाके में मशहूर था। बोधा भाई उनसे भी आगे निकले जा रहे थे। जनता उन्हें दूसरा कन्हई कहने लगी थी। चार-पाँच साल इलाके में धूम मचाए रहे लेकिन जब दिलजानी को भगाकर लाए तो दिलजानी के दोनों भाई उनकी जान के पीछे पड़ गए। छिपना पड़ा। दिलजानी को लेकर परदेस भाग गए। साल-भर अज्ञातवास में रहे। बच्चा पेट में आया तो वापस लौटे।

जान तो बच गई लेकिन नाचना छूट गया। अब गुजारा कैसे हो? खेती बहुत कम थी। परदेस जाकर कमाने के अलावा और कोई चारा नहीं था। बाप से किराया माँग नहीं सकते थे। बाप की चोरी-चोरी घर का गल्ला बेचने के लिए पत्नी को विश्वास में लेना चाहा तो वे सिरे से इस योजना की विरोधी हो गईं।

एक बार दिलजानी ने अपनी भाभी को कहते सुना था- 'परदेसी का मिलना कोई मिलना नहीं होता। साल-दो साल में दस-पाँच दिन की छुट्टी पर आते हैं तो अकुताए रहते हैं। सँभाल नहीं पाते। छुआते ही चू जाते हैं। अभी उन्होंने आदमी का कौन-सा सुख जाना है!'

रात में बोधा भाई की देह में तेल मालिश करते हुए वे कातर स्वर में बोलीं-" इस घर में न सास है, न ननद, न देवरानी, न जेठानी। अपने अधपगले बाप के भरोसे छोड़कर जा रहे हो। दरद उठेगा तो वही दौड़कर सहारा देंगे क्या? ऐसे समय में तो गौरैया का मरद भी खाना-पीना बिसार कर घोंसला बनाने के लिए दौड़-दौड़ कर तिनका जुटाता है। एक आप हैं कि मझधार में छोड़कर... आप ही तो गाते थे-

जेठवा न सामी छाया बखरिया
अदरा न बोया धान
चढ़त जवनिया भग्या परदेसवा
तीनों तरक गई मारि

यानी हे स्वामी अगर आपने बरसात आने के पहले जेठ के महीने में अपना घर नहीं छा लिया,

अगम बहै दरियाव

आद्रा नक्षत्र में धान नहीं बो दिया और चढ़ती जवानी में (पत्नी को छोड़कर) परदेस भाग गए तो समझिए कि आपने तीनों मौके (तरक) खो दिए। ये तीनों अवसर खोने वाले दुनिया के सबसे बड़े अभागे माने जाते हैं।"

सही कहा- रहने को घर नहीं, खाने को अन्न नहीं और साथ सोने को जोरू नहीं। अभागा और किसे कहेंगे?

उनके गुरु कन्हई फरवाह एक गीत गाते थे-

अंखिया कै कजरा मांग कै सेनुरा
जाई के जमुनवा मा धोई डरबई
चली जब्या विदेसवा त रोई मारबई

नायिका कहती है कि अगर आप विदेश गए तो मैं रो-रोकर मर जाऊँगी। जमुना जी में जाकर आँख का काजल और माँग का सिन्दूर धो डालूँगी यानी खुद को विधवा मान लूँगी।

श्रोताओं में उपस्थित आधी से ज्यादा स्त्रियों के पति परदेस गए होते थे। इस गीत का इन विरहिणी स्त्रियों पर ऐसा असर होता कि उनके आँसू रोके न रुकते। उनकी सामूहिक सिसकी से वातावरण बोझिल हो जाता।

रात में बोधा बहू ने बोधा भाई को एक पल के लिए भी अपने से अलग नहीं किया। हाथ-पाँव से उन्हें लपेटे रहीं।

बोधा भाई भी भावुक हो गए। बोले-"तब गुजारा कैसे होगा?"

उत्तर में बोधा बहू ने नाक की कील और कान की तरकी निकालकर उनके हाथ पर रख दीं। बोलीं-"बाप के घर से भागकर आए इसलिए न मायके से कोई गहना मिला न ससुराल से कोई चढ़ावा चढ़ने की नौबत आई। यही दोनों गहने मेरे पास हैं। इन्हें बेचकर पाँड़े बाबा के मेला जाइए और अच्छा 'लच्छन' देखकर तीन-चार पैड़िया लाइए। साल-भर तक खिला-पिलाकर उन्हें पठिया बना लूँगी। खूँटा सह गया तो तीन-चार साल में दुख-दलिद्दर दूर हो जाएगा।"

तबसे बोधा भाई दूध के धन्धे में उतरे।

बोधा भाई क्या, सच पूछिए तो बोधा बहू उतरीं। चारा, पानी, गोबर, कंडा, साफ-सफाई, दुहना-बिलोना सब तो वही करती थीं। बोधा भाई का काम तो बाजार तक दूध पहुँचाना भर था।

बहुत हिम्मती जनाना हैं बोधा बहू। लम्बी-चौड़ी कद-काठी वाली देह,

दूध-घी में कितनी सीझी हुई है यह उनके कल्ले ही बता देते हैं। घूँघट उठाने की जरूरत नहीं। भैंस के पीछे भागने पर आमादा, मस्ताए भैंसे का पगहा इन्हीं कल्लों से खींच लेती हैं तो भैंसे को मुड़ जाना पड़ता है। इनके दोनों बड़े भाई अपने इलाके के नामी चोर थे। वैसे चोर नहीं, फसल चोर। बोधा बहू के मायके में खेत बहुत कम थे। भयानक गरीबी थी। ज्यादातर घरों में रबी में पैदा अनाज धान की फसल

पककर घर आने के पहले ही खत्म हो जाता था। फाके की नौबत आ जाती थी। बोधा बहू के दोनों भाई दिन के समय इलाके में घूम-घूम कर धान की ऐसी फसल का सन्धान करते थे जो पकने-पकने को हो और अपने गाँव से दूर भी हो। रात में हँसिया, रस्सी लेकर उसे काटने निकलते। तब बोधा बहू भी मरदाने कपड़े पहनकर भाइयों के साथ जातीं। पहर रात रहते तीनों लोग तीन बोझ धान लाकर आँगन में पटक देते। आदमी का पेट भी भरता जानवर का भी।

सत्रह साल की उम्र में तो भाग ही आई, उसके पहले जब सिर्फ सोलह साल की थीं तो उन्हें देखकर एक लड़का गाने लगता-

तोर कजरवा दिलजानी गजब करें।

उन्होंने एक बार बरजा, दो बार बरजा, नहीं माना तो एक दिन गली में उठाकर ऐसा पटका कि...

ससुराल में भी उनका लोहा सारा गाँव मानता है। अपने सामने किसी को सेंटती नहीं। बोधा भाई से ज्यादा धाक बोधा बहू की है। गाँव के लोग तो इसे मानते ही थे, अब सरकारी हाकिम-हुक्काम भी मानने लगे हैं।

उस दिन जैसे ही बोधा भाई बाजार में दूध देकर लौटे, उनके पीछे-पीछे एक जीप आई। जीप में बैठे-बैठे ही नायब साहब बोले- "रामबोध जी, आपके लिए खुशखबरी है। जिले में सबसे बड़ी गोभी पैदा करने के लिए आपको प्रथम पुरस्कार दिया जाना है। ढूँढ़ा गया तो तहसील में आपका इंट्री फार्म ही नहीं मिला। तहसीलदार साहब ने कहा कि आप खुद जाइए और रामबोध जी को लाकर फार्म दाखिल कराइए। चलिए तैयार हो जाइए। आज ही आखिरी तारीख है।"

खुश हो गए बोधा भाई। उनका गाँव गोभी पैदा करने के लिए इलाके में सरनाम है। पिछले जाड़े में उनका गोभी का एक फूल तौलने पर सवा आठ किलो का हुआ था। अब जाकर इनाम की घोषणा हुई। वे तो यह बात भूल ही गए थे। बोधा बहू भी खुश हो गईं। उन्होंने न-न करने के बावजूद नायब के साथ-साथ लेखपाल और ड्राइवर को भी गाढ़े दही का सिखरन पिलाया। बोधा भाई ने नायब के बच्चों के चूसने के लिए जीप में आठ-दस गन्ने रख दिए।

जीप बाजार में पहुँचकर रुकी तो पटरी पर खड़ा चपरासी भी आकर जीप में बैठा। चपरासी बिरादरी का था और परिचित था। बोधा भाई ने आँखों-आँखों में उसका स्वागत किया लेकिन चपरासी की आँखों में हमेशा झलकने वाला स्वागत भाव आज नदारद था। थोड़ी देर में उसने अपने जूते से बोधा भाई के जूते को दबाया और अपनी दोनों हथेलियाँ जीप के फर्श के पाय धोती की आड़ में ले जाकर एक तर्जनी पर दूसरी को चाकू की तरह रगड़ा।

बाप रे! इतना बड़ा धोखा? बोधा भाई की समझ में नहीं आया कि क्या करें? चलती जीप से कूद जाएँ?

खोपड़ी में सन्न-सन्न की आवाज होने लगी। थोड़ी देर में अगला बाजार आया। बोधा भाई ने प्रेमपूर्वक आग्रह किया" साहेब, एक-एक पान हो जाए मेरी तरफ से।"

"नहीं, देर हो जाएगी।"

"साहेब, आप हमें इतना मान-सम्मान दे रहे हैं तो क्या मुझे एक बीड़ा पान खिलाने का मौका भी नहीं देंगे?... मैं बीड़ी भी खरीद लूँगा। देर से अमल लगी है।"

जीप से उतरते ही बोधा भाई की घबराहट गुस्से में बदल गई। नायब के बगल आकर कहा-"भलमनसी इसी में है कि चुपचाप चले जाइए। उल्लू समझते ही? सरकारी आदमी न होते तो ऐसा पटक-पटक कर धीता कि पैंट पिछवाड़े से पीली हो जाती।"

नायब साहब चुपचाप शिकार को हाथ से निकलते देखते रहे। वे जानते थे कि चारों लोग मिलकर भी बोधा भाई पर काबू नहीं पा सकते। अब रुके हुए इंक्रीमेंट का क्या होगा?

बोधा भाई यह तो देख रहे थे कि छत्रधारी ब्लॉक और तहसील के स्टाफ के खखैरख्वाह बने हुए हैं। अपने भट्ठे के मुंशी गजाधर और हलवाहे महादेव को प्रेरक बनाकर या उनसे मुखबिरी करवाकर गाँव के लोगों को नसबन्दी के लिए पकड़वा रहे हैं। लेकिन सीधे-सीधे उनके ऊपर जाल डलवा देंगे, यह नहीं सोचा था।

बोधा भाई के सही-सलामत बचकर निकल आने पर बोधा बहू उनके ऊपर नए सिरे से रीझीं। तृप्ति और प्रशंसा की नजरों से उनके नंगे बदन को बार-बार निहारा और सहलाया।

कोई भी सही-सही नहीं जानता था कि नसबन्दी होने के बाद क्या-क्या होगा और क्या-क्या नहीं होगा। कोई कहता कि सूखे की बीमारी पकड़ लेती है। कोई कहता कि आदमी औरत के काम का नहीं रह जाता।

"बताइए भला, भगवान की दी हुई शौक मौज की चीज में भी आफत!"

"तभी ती इसका नाम आफत काल है। आफत में जैसे भी हो जान बचाइए।"

43

बोधा बहू ने इस आफत से बचने का नायाब रास्ता निकाला। उन्होंने बोधा भाई की चारपाई कोठे पर चढ़वा दी। वहीं खाना, वहीं सोना। बेटे की कसम धरा दी कि जब तक यह आँधी-तूफान खतम नहीं हो जाता वे देहरी के बाहर कदम नहीं रखेंगे। दिशा-मैदान के लिए बड़े सबेरे मुँह अँधेरे और शाम को एक घंटा रात बीतने के बाद कोठरी का ताला खोलती थीं।

जिसको इस इलाके के बखरी कहे जाने वाले घरों की बनावट की जानकारी न हो वह एक बार घर में घुस भी जाए तो खोज न सके।

पड़ोस तक के लोग पता नहीं लगा पाए कि बोधा भाई अचानक कहाँ अन्तर्धान हो गए।

दलसिंगार के आँगन से उसकी औरत झनाका के रोने की आवाज आ रही है। रोने की, डाँटने की और सरापने की।

पास-पड़ोस की औरतें जुट आई हैं। आँगन में दस-दस रुपये के पाँच-छह नोट बिखरे हैं। एक कंबल पड़ा है। झनाका सिंगारे के बाल पकड़कर झिंझोड़ते हुए पूछ रही हैं-"तेरे मुँह से बोल नहीं फूटा कि अभी हमारे कोई बाल-बच्चा नहीं है। घर में ही बड़का पहलवान बना फिरता है रे मौगड़ा।"

सिंगारे के बाल छोड़कर वह अपनी छाती पीटने लगती है-" अब हमारा 'बंस' कैसे चलेगा रे रमवा? मरद रहते बाँझिन बनकर जिन्दगी काटनी पड़ेगी? जहर खा लूँ कि फाँसी लगा लूँ?"

सिंगारे सबेरे वाली गाड़ी से दूध पहुँचाने शहर गए थे। वापसी में बेटिकट पकड़ लिये गए। बेटिकट तो रोज ही चलते थे। टीटी से सामना हो जाता था तो दो गुना किराया दे देते थे। लेकिन इस बार मजिस्ट्रेट चेकिंग थी। पचीस लोग पकड़े गए। पुलिस ने सबको घेरकर बस में बैठाया और सीधे अस्पताल ले गई। शाम तक सबकी नसबन्दी कर दी गई। आज तीसरे दिन लौटे हैं।

सिंगारे अभी मुश्किल से बीस-इक्कीस साल के हैं। बाँके-साँवले जवान हैं। वास्तव में जिस दल में रहते हैं उसके श्रृंगार बनकर रहते हैं। दो साल पहले गौना आया। झनाका कमासुत और तेज औरत थीं। गौने में मायके से भैंस लेकर आई थीं। एक गाय भी खरीदी और दूध के कारोबार की शुरुआत कर दी। ठीक-

अगम बहै दरियाव

ठाक कमा-खा रहे थे कि यह विपत्ति फट पड़ी। अब इसमें कोई क्या कहकर तसल्ली दे?

खबर सिंगारे की ससुराल तक पहुँची। सिंगारे का साला बहन की विदाई कराने आ गया। बोला- "माँ ने कहा है, मेरी बेटी का अकेले रो-रोकर बुरा हाल होगा। कुछ दिन यहाँ अपनों के बीच रहेगी तो मन पोढ़ा करने की ताकत मिलेगी।"

भेजने के साथ सिंगारे ने ताकीद की "दस-पन्द्रह दिन में भाई के साथ लौट आना। मैं अकेले क्या-क्या करूँगा? गाय-भैंस सँभालूँगा कि खेती-बारी? रोटी बनानी आती नहीं। खिचड़ी कितने दिन खाऊँगा?"

इस घटना से ऐसी दहशत फैली कि लोगों ने कहीं आना-जाना बन्द कर दिया। तब केस पकड़ने के लिए गाँवों में जीप घूमने लगी। जैसे जंगली जानवरों के शिकार के लिए हाँका लगाया जा रहा हो। लोग भागकर गन्ने और अरहर के खेतों में छिपते। नदी पार करके जंगल में चले जाते। जाड़े की रात, आसमान से टप-टप टपकती ओस और कोहरे की बूँदें। ओढ़ने के लिए किसी के पास फटा-पुराना कंबल, किसी के पास वह भी नहीं। रात दस बजे के बाद ही वे ठिठुरते-काँपते घर लौटते। सबेरे फिर भागकर खेत और जंगल की शरण। काम-धाम सब ठप्प। कुछ के गन्ने खेत में ही खड़े रह गए। पेराई नहीं कर पाए। कुछ सिंचाई नहीं कर पाए।

कोठे पर छिपकर अज्ञातवास की अवधि काटते बोधा भाई आकाश-पाताल का चिन्तन कर रहे थे। दूध से धन तो पैदा किया जा सकता है लेकिन मान-सम्मान? ब्राह्मण, ठाकुर, कायस्थ और बनिया को बहुत कुछ मान-सम्मान और हैसियत उनकी जाति के कारण मिल जाती है लेकिन ऊँची जाति का बनना तो अपने हाथ में है नहीं। कोई ऐसा कानून होता कि सरकारी खजाने में रुपया जमा करके ऊँची जाति की सनद मिल जाती तो दूध-घी का पैसा काम आ सकता था। जो थोड़ा-बहुत सम्मान मिलता है, वह कद-काठी और लाठी के जोर से मिलता है। सम्मान पाने का एक रास्ता पढ़ाई थी लेकिन पढ़ने के समय पर बाप ने गौना ला दिया। पढ़ाई भी गई। पोशाक से भी इज्जत मिलती है। धोती-कुर्ता तो वे कहीं आने-जाने पर पहनते ही हैं। सोच रहे हैं कि एक काली जाकिट खरीद लें। कहीं आना-जाना हो तो दाढ़ी बनाकर जाएँ। मुश्किल यह है कि उन्हें अपने हाथ से दाढ़ी बनाना आता नहीं और संतोखी हफ्ते-हफ्ते पर बनाने आते हैं।

वे कोठे पर रहते-रहते ऊब गए हैं। कभी-कभी किचकिचाते हैं कि इस तरह डरकर छिपे रहने से अच्छा है कि लाठी लेकर पकड़ने वालों पर पिल पड़ें। जो होगा देखा जाएगा। जेल-हवालात भी तो मर्दों के लिए ही बनी है।

45

बोधा बहू बहुत चिरौरी-विनती करके उनका गुस्सा शान्त करती हैं। कभी-कभी हँसते हुए कहती हैं- अब हमेशा इसी तरह ताले में बन्द करके रखूँगी। जितना संग-साथ हम लोगों का इन दिनों रहा उतना तो जब से ससुराल आए तब से अब तक नहीं रहा। बाद के दिनों में तनिक लजाते हुए पड़ोसिनों से बतातीं कि उनका छोटा बेटा बुल्लू उसी दौरान उनकी कोख में आया था।

"माठा चाही ये मलकिन।" दहबंगा ने खाली भदेली का पेंदा बजाकर आवाज लगाई। बोधा बहू आवाज से ही दहबंगा को पहचान गईं। जल्दी-जल्दी कोठे से उतरकर बाहर आईं।

दहबंगा आवाज धीमी करके बोली- "वे लोग मेरे आदमी के पीछे भी पड़े हैं। दो बार तहसील का चपरासी पूछने आ चुका है। पहले तो ऐसा कभी नहीं सुना। नस काटकर उन्हें क्या मिल जाएगा?"

बोधा बहू बोलीं-"सारे साहब-सूबा हम लोगों को राँड़ करने पर उतारू हैं। कहते हैं रानी का हुकुम है।"

"क्यों है रानी का हुकुम? भगवान ने उनका शौक-मौज हर लिया तो उनसे हमारा भी शौक-मौज नहीं देखा जा रहा है। कभी-कभी मन करता है कि जो हमें राँड़ बनाने पर तुले हैं उन्हें पकड़कर बधिया कर डालें। जैसे बछड़े को बधिया करते हैं लोड़े से कूँच-कूँच कर।"

खुश हो गईं बोधा बहू। जैसे उनके मन की बात कह दी गई हो। ऐसा हो जाए तब तो रोज-रोज का गरह कट जाए। फिर चाहे जेल ही काटना पड़े।

फिर दोनों औरतों में खुसुर-फुसुर हुई।

तीन-चार दिन बाद जब गाँव में हल्ला हुआ कि पकड़ वाली जीप गाँव में घुसी है तो बोधा बहू घास की खाँची लिये दहबंगा के घर के सामने से गुजर रही थीं। शोर सुनकर दहबंगा भी भीतर से निकली। दोनों की आँखें चार हुईं। दहबंगा ने आवाज देकर अपनी जेठानी और कुछ अन्य औरतों को बुला लिया। बोधा बहू ने घास की खाँची एक तरफ पटकी और गली के नुक्कड़ पर सबने मिलकर जीप को घेर लिया। नायब आगे बाएँ किनारे ही बैठा था। बीस-पचीस दिन पहले उसी को बोधा बहू ने दही का गाढ़ा सिखरन पिलाया था। बोधा बहू ने एक झटके में उसे नीचे खींचा और उसका पोता पकड़कर दोनों हाथों से ऐंठते हुए दहाड़ीं-"तुम दुनिया की नसबन्दी करते घूम रहे हो। आज हम तुम्हारी कर देते हैं।"

वह चिल्लाया- "बाप रे! प्राण निकल जाएगा। रहम-रहम!"

"फिर दिखाई पड़ोगे गाँव में?"

"नईऽईऽईऽ।"

अगम बहै दरियाव

नायब लड़खड़ाकर नीचे गिरा। बोधा बहू उसके ऊपर। दहबंगा ने गली में भागते कानूनगो को दौड़ाकर पकड़ा और तीन-चार औरतें उससे जूझ गईं। वह पैर झटककर दाँव काटकर किसी तरह खुद को छुड़ाकर भागा। उसका कोट दहबंगा के हाथ में रह गया। चपरासी, ड्राइवर और दोनों सिपाही पहले ही भागकर छत्रधारी सिंह के दालान में छुप गए थे। अन्दर से सिटकिनी बन्द कर ली थी।

तीन घंटे बाद फोर्स आई तब वे छत्रधारी के दालान से बाहर निकले। कानूनगो भागते-भागते जाकर मदरहवा गाँव में छिपा था। नायब को अस्पताल में होश आया।

दूसरे दिन अखबार में प्रमुखता से खबर छपी थी-

बनकट गाँव की औरतों ने घेरकर कर दी नायब तहसीलदार की नसबन्दी।

पुलिस कई दिन तक दहबंगा के पति शेरू और उसके जेठ विक्रम की तलाश में घूमती रही। उसे क्या पता कि दोनों उसी रात सूरत भाग गए हैं।

जो लोग 'रंकेडीह' गाँव की बहादुरी का बखान करते हैं- चलिगै रंकेडीह मा गोली। जनता खेली खून की होली... वह तो इसके बाद की घटना है। शुरुआत इसी गाँव की औरतों ने की थी।

बोधा बहू एक बार उस नायब की जनाना से मिलना चाहती हैं। जानना चाहती यक कुछ बचा रह गया कि... हैं कि नायब के पास उस बेचारी के काम लायक

"उस बेचारी का क्या दोष!"

इस साल जेठ के दशहरे के दिन दलित जातियों ने इलाके की महापंचायत करके तय किया है कि अब वे सात पाव या दो सेर की मजदूरी पर काम नहीं करेंगे। तीन किलो मजदूरी चाहिए।

देश में सेर-पसेरी-मन की जगह किलो-कुंटल आए जमाना हो गया लेकिन इस इलाके के गाँवों में अभी भी सेर-पसेरी के बटखरे चल रहे हैं। यहाँ पसेरी माने सात पाव।

दो अहम फैसले और लिये गए। न अब कोई दलित किसी के घूरे की खाद अपने सिर पर ढोएगा, न चमड़े की एवज में मरे हुए जानवर उठाएगा। जानवर उठाने के लिए नगद भुगतान करना होगा।

न बातचीत न चिरौरी-विनती! एकतरफा फैसला सुना दिया! बाद के दोनों फैसलों के बारे में तो बाद में सोचा जाएगा लेकिन खेत में काम न करने का फैसला! अचानक, जब आषाढ़ सिर पर चढ़ आया है। तीन किलो मजदूरी देने का सवाल ही नहीं है। जो आज तक नहीं हुआ वह अब कैसे हो जाएगा? तो क्या खेत परती रह जाएँगे? परती रह गए तो खाएँगे क्या? मजदूर हों चाहे किसान। पिछड़ी मेहनतकश जातियों के किसान तो ज्यादा चिन्तित नहीं हैं। वे औरतों-बच्चों के साथ खेती के काम में जुटते हैं। मजदूरी देकर काम कराने के बजाय एक-दूसरे के काम में हाथ बंटा लेते हैं। उनको मजदूरों की जरूरत साल में चार-छह दिन ही पड़ती है। खासकर धान की लगवाही में। लेकिन सवर्ण किसानों का तो सारा काम ही मजदूरों के भरोसे रहता है। उनके घर की औरतें कभी खेत तक गईं नहीं। अपने और पराए खेत की पहचान तक नहीं कर सकतीं। उनके बच्चों को काम करने की आदत नहीं। वे खुद हल जोत नहीं सकते। दोख लगेगा। अचानक यह विपत्ति!

अचानक तो नहीं कह सकते। इसकी आहट तो लम्बे समय से सुनाई पड़ रही थी। खेतिहर मजदूरों का दर्द उनके गीतों में मुखर होता रहा है-

बाबू का बुखार हलवाई की बेटी और बहन को एक साथ दो अंजुरी में गुजारा करने के लिए भर देता है? इस शहर में दलितों पर अत्याचार होता है।

पिछली रात पानी बरसना शुरू हुआ तो दोपहर तक बरसता ही रहा। खेत, बाग, ताल, तिराई भर गए। खुद हल जोतने वाले हल-बैल लेकर निकल पड़े। जिनके लिए खुद हल की मुठिया थामने की मनाही है वे हलवाहों का इन्तजार करने लगे। उन्हें मनाने-धमकाने लगे। इतनी जल्दी दबाव में आना भी ठीक नहीं। एक बार दबा ले गए तो हर साल बढ़ाकर माँगेंगे।

दो दिन गुजर गए। खेत का पानी सूख गया तो क्या होगा? धमकाने से वश में नहीं आ रहे हैं तो मनाओ। अपनी गरज है।

हलवाहे को बुलाने के लिए दलित टोले में खुद चलकर जाना अच्छा नहीं माना जाता। अपने दरवाजे से ही जोर से आवाज दे देना काफी है। लेकिन आवाज का जवाब मिले तब न। बेचैन होकर पारस सिंह अपने हलवाहे झूरी के दुआर पर पहुँचते हैं। झूरी झोंपड़ी के बाहर चारपाई पर नंगे बदन बैठे हैं। पारस सिंह को देखकर खड़े हो जाते हैं। राम-राम करते हैं। उनके बैठने के लिए अँगोछे से नंगी चारपाई को झाड़ते हैं। पारस सिंह बैठते तो नहीं लेकिन आवाज में मिठास और अपनापन

घोलकर कहते हैं-"का हो काका। भूखों मारोगे क्या? हल नाधने क्यों नहीं आए?"

"आएँगे क्यों नहीं राजा? लेकिन तभी तो आएँगे जब भूखों मरने से बचेंगे। सात पाव की मजूरी में पेट नहीं भरता।"

"उतनी ही मजूरी में तुम्हारे बाप-दादा गुजर-बसर कर गए। क्या वे सब भूखों मर गए?"

"वे एक जून खाकर अपने दिन काट गए राजा। अब के बच्चे दोनों जून रोटी माँगते हैं।"

झूरी पैंतीस-छत्तीस साल से पारस सिंह की हलवाही कर रहे हैं। पारस के पिता के जमाने से। तब पाँच-छह साल के पारस हल जोतते झूरी के कन्धे पर बैठने की जिद करते थे। कन्धे पर बैठकर, हाथ में पैना लेकर बैलों को हाँकने का खेल खेलते थे।

पारस सिंह की समझ में नहीं आ रहा है कि झूरी को कैसे मनाएँ? अन्ततः झूरी का हाथ पकड़कर उन्हें जमीन पर बैठाते हैं और उनके सामने बैठकर फुसफुसाते हैं-"देखो काका। हमें अकेले फैसला लेना होता तो आज से ही बढ़ा देते लेकिन सारे गाँव की मरजी के बाहर नहीं जा सकते। आप रात में आकर मन-दो मन धान बखार से ढो लाइए। तीन किलो के हिसाब से काट लीजिएगा। बस किसी से कहिएगा नहीं।"

"यही तो नहीं हो सकता राजा। जो आपकी मजबूरी है वही हमारी है। आप दो किलो ही दीजिए, लेकिन चार आदमी के सामने कह दीजिए कि तीन किलो दे रहे हैं।"

कुछ देर तक दोनों तरफ मौन पसरा रहा।

"जिद मत करिए काका। खेत परती पड़े रह गए तो क्या हम खाएँगे क्या तुम खाओगे।"

"यही तो तय करना मुश्किल है राजा कि कौन जिद कर रहा है।"

"बाप-दादा के जमाने से चले आ रहे रिश्ते पर एक किलो धान के लिए पानी मत फेरो।"

"यही तो मेरा भी कहना है बाबू।"

सब अपनी-अपनी झोंपड़ी से झाँकते हुए झूरी और पारस सिंह के बीच होने वाली बातचीत सुनने की कोशिश कर रहे हैं। सबको डर है कि झूरी पंचायत के फैसले के खिलाफ न चले जाएँ। पारस सिंह के जाते ही सारा टोला आकर झूरी को घेर लेता है।

पारस सिंह भी अपने टोले में घिर गए हैं-कर आए सरेंडर? हो गई धोती

वीली? क्या जरूरत थी उन ससुरों के टोले में जाने की? बिरादरी की हेठी करा दिए। यह इलाका हमारा अभयारण्य है। यहाँ हमारा हुकुम चलता आया है। ब्रिटिश राज तक में चला है तो अब ए ससुरे पिद्दी हमें चैलेंज करेंगे? ये दर-हरामी हैं। इन्हें दाने-दाने को मोहताज करना पड़ेगा।

"ऐसा नहीं है पारस सिंह कि हमारे भीतर दया-माया नहीं है। लेकिन मामला जिन्दा रहने का है। जैसे बछड़े के हिस्से का दूध दुह लेना हमारी मजबूरी है वैसे ही मजदूरों का पेट काटना भी मजबूरी है। गाँव का जीवन-संघर्ष दो पहलवानों की कुश्ती जैसा है। जो पहलवान नीचे पड़ गया वह तब तक ऊपर नहीं आ सकता जब तक ऊपर वाले पहलवान की पकड़ ढीली नहीं पड़ जाती। ढीली पड़ते ही नीचे वाला उसे पलटकर उसकी छाती पर सवार हो जाएगा। दलितों को हम इसीलिए दबाए रखने को मजबूर हैं कि वे हमारी छाती पर सवार न हो जाएँ। जिन्दा रहने भर को ही मजदूरी देना भी उन्हें दबाए रहने का एक दाँव है।"

"लेकिन यह तो अन्याय हुआ। हमें उनके साथ कम-से-कम ऐसा व्यवहार तो करना चाहिए जैसा अपने बैलों के साथ करते हैं। उन्हें काबू में रखने के लिए उनकी नाक में नथ पहनाते हैं। लेकिन उन्हें भरपेट खिलाते भी हैं। उन्हें मोटा-ताजा देखकर खुश होते हैं।"

"तो जाकर पहनाइए नथ। बिना मोटाए ही काबू के बाहर हो रहे हैं।"

"यही नीति ठीक रहेगी। इतना दीजिए कि मरें भी न और मोटाएँ भी न।"

अपने दालान में आकर पारस सिंह पीना शुरू करते हैं। देर तक पीते रहते हैं। सोते हैं तो सपना देखते हैं कि उनके खेतों में छाती बराबर घास उग आई है। सुबह उठकर बासी मुँह फिर दो पेग लगाते हैं और लाठी लेकर झूरी के घर की ओर चल पड़ते हैं। आधे रास्ते आकर ठिठकते हैं। कुछ सोचते हैं और वापस लौट पड़ते हैं। लेकिन दो-चार कदम चलकर फिर मुड़ते हैं।

झूरी अपनी झोंपड़ी के सामने जमीन पर कथरी बिछाये अभी भी सोए पड़े हैं। पारस लाठी के हुरे से झूरी के पेट में कोंचते हुए कहते हैं-"सरऊ अभी तक सो रहे हो? बहुत मोटाई छाई है?"

झूरी हड़बड़ाकर उठते हैं।

"तुरन्त चलो। टट्टी-पेशाब जाने की मोहलत नहीं मिलेगी।"

झूरी पारस के बात करने के तेवर से नहीं, दारू के झोंके से आतंकित होते हैं।

"आपकी जबान काटना हमें अच्छा नहीं लग रहा है मालिक लेकिन मजबूर..."

"जबान! तू पारस सिंह लम्मरदार की जबान काटेगा रे...?" जोर से चीखते हैं- "मैं गाँव का तिहता हूँ और तू साले छत्रधारी को ही ठाकुर समझता है जो

अगम बहै दरियाव

नाऊ-धोबी और रंडी की जगह-जमीन और लेई-पूँजी हड़पकर जमींदार बना है। जबान काटा तो मूँड़ काट लूँगा।"

पारस सिंह लाठी के हूरे का निशाना झूरी के मुँह में लगाने की कोशिश कर रहे हैं लेकिन हाथ काँपने से लाठी का हूरा दाएँ-बाएँ हो जा रहा है।

सारा टोला इकट्ठा हो रहा है। बाप की उमर के आदमी के साथ ऐसी बदसलूकी! लेकिन ठाकुर-ठकार का मामला है। किसी की कुछ बोलने की हिम्मत नहीं पड़ रही है।

झूरी के दोनों जवान बेटे विक्रम और शेरू झोंपड़ी में सो रहे थे। सूरत की साड़ी फैक्टरी में काम करते हैं। गाँव में नसबन्दी का आतंक शुरू हुआ तो दोनों अपने काका परमेसरी के पास भाग गए थे। हफ्ते भर पहले आए हैं। गाली-गलौज सुनकर उनकी पत्नियों ने उन्हें जगा दिया। गुस्से से उनके नथुने फूल रहे हैं।

झूरी बात को सँभालना चाहते हैं। कहते हैं-" आप घर पहुँचिए मालिक। मैं खुद उधर आ रहा हूँ।"

"इधर-उधर क्या होता है मादरचो...। चूतिया समझता है? उठ।"

पारस सिंह झूरी की बाँह पकड़कर घसीटने का प्रयास करते हैं और असफल होकर लात से मारने लगते हैं।

बहनचो... बेटीचो... नमकहराम।

"मारो साले को," विक्रम शेरू को ललकारता है।

एक अद्धा आकर पारस सिंह की खोपड़ी में लगा। वे लहराकर गिर पड़े और गिरने के साथ विक्रम और शेरू की लाठियाँ उन्हें सनई की तरह पीटने लगीं।

पाँच मिनट के अन्दर पारस सिंह पिचके कनस्तर की तरह जमीन से चिपक गए। उनके आगे के ऊपर वाले दाँत बाहर निकल आए थे और ताजी खिली धूप में चमक रहे थे। खूनोखून! जीभ थोड़ी-सी बाहर निकल आई थी।

यह क्या हुआ? पूरे टोले पर आतंक छा गया। भागो! भागो!!

जब तक गाँव से ठाकुरों का रेला हरहराता हुआ पहुँचता टोले के औरत, मर्द, बूढ़े, बच्चे नदी-पार भाग गए। केवल झूरी पारस सिंह के सिरहाने सिर झुकाए बैठे थे। उनके मुँह से रह-रह कर निकलता-'मालिक। मालिक।'

भीड़ ने उन्हें दो-चार लात दो-चार डंडे जड़े।

आवाज आई-"फूँक दो। फूंक दो।"

भीड़ उन्हें घसीटकर उनकी झोंपड़ी में फेंकती है और बाहर से टटरा बन्द करके आग लगा देती है।

फिर टोले की हर झोंपड़ी में आग लगाने की शुरुआत होती है।

भीड़ का एक हिस्सा जंगल की ओर लपकता है-" पकड़ो सालों को। भागकर कहाँ जाएँगे?"

जंगल की ओर लपकते लोहा तिवारी मना रहे हैं 'हे भगवान, उन्हें और किसी से मतलब नहीं। बस जुगनी उनके हाथ लग जाए।'

हाँड़ी की तरह टूट-फूट गए पिता के चेहरे पर हाथ फेरते हुए पारस सिंह का बेटा रो रहा है-"बाबू यहाँ आना नहीं चाहते थे। एक बार आधे रास्ते से लौट पड़े थे। उनकी मौत ही उन्हें यहाँ खींच लाई।"

दहपेल का झुनझुना

भूसी भगत संतोखी के मुकदमे में गवाही देने जा रहे हैं। कन्धे पर लाठी, लाठी में टँगा लोटा-डोरी। सिर पर अँगोछा, पैर में पनही। सड़क की पटरी पकड़े चले जा रहे हैं। मुँह अँधेरे निकले हैं और दस बजे तक नायब की इजलास पर पहुँचकर ही दम लेंगे। गाँव से तहसील तक की करीब बीस किलोमीटर की दूरी वे चार-साढ़े चार घंटे में नाप लेते हैं। रास्ते में किसी कुएँ पर रुकते हैं। लोटा-डोरी से पानी भरकर हाथ-पैर और मुँह धोते हैं। जी-भर पानी पीते हैं। खैनी मलकर खाते हैं। और फिर चल पड़ते हैं।

आज चौथी बार जा रहे हैं।

पहली बार गवाही की तारीख आई तो संतोखी उन्हें शाम को बता गए। पर सबेरे भी उनका मन नहीं माना। याद दिलाने के लिए सूरज निकलने के पहले-पहले पहुँच गए। देखा, भूसी लोटा-डोरी लाठी में लटकाए चलने के लिए तैयार हैं।

"इतनी जल्दी क्यों तैयार हो गए? नहा-खा लीजिए। नौ-साढ़े नौ बजे टेम्पो पकड़ा जाएगा।"

भूसी ने स्पष्ट किया- "हम गवाही देने जरूर चलेंगे संतोखी लेकिन आपके किराए-भाड़े से नहीं। अपने पैरों से चलकर।"

"यह क्या कह रहे हैं?"

संतोखी ने अभी तक यही देखा है कि मुवक्किल अपने साथ अपने किराए-भाड़े से गवाह को कचहरी ले जाता है। राह में चाय-पानी पिलाता है। दोपहर में मनपसन्द खाना खिलाता है और शाम को घर तक पहुँचाता है। ऐसे कितने पेशेवर गवाहों के किस्से सुने गए हैं जिनकी एक ही दिन में तीन-तीन गवाहियाँ लगी रहती

हैं। वे किसी मुवक्किल से पाव-भर पेड़ा खाते हैं, किसी से आधा किलो लड्डू। शाम को पीने के लिए देशी का पौवा और तीनों से अलग-अलग किराया। यहाँ ये पैदल चलने की जिद कर रहे हैं।

संतोखी ने समझाने की कोशिश की-" इस उमर में इतनी दूर पैदल? थकान...।" "कैसी थकान? रात-दिन साँस लेते हैं तो क्या थकान लगती है? हम तो सारी जिन्दगी जाड़ा, गर्मी, बरसात दिन-रात भेड़ों के पीछे चलते ही रहते हैं। चलना हमारे लिए साँस लेने जैसा है।"

बड़ी देर बाद संतोखी उन्हें मना पाए कि इस बार उनके साथ टेम्पो से चलकर नायब की इजलास देख लें। आज गवाही गुजर गई तो बात खतम। न गुजरी तो संतोखी अगली बार उन्हें टेम्पो से ले चलने की जिद नहीं करेंगे।

तहसील कम्पाउंड में बरगद का एक पुराना छतनार पेड़ है। बीघे-भर में अपना डाल-पात फैलाए। इसके नीचे एक हिस्से में वकीलों के तख्त पड़े हैं और दूसरा हिस्सा 'पुकार' का इन्तजार करते मुवक्किलों से आबाद रहता है। यहाँ कान की गूँजी निकालने वालों, आँख का माड़ा निकालने वालों और मालिश करने वालों की आवाज गूँजती रहती है। भूसी वहीं एक पत्थर से टेक लगाकर बैठते हैं और पैर फैलाकर शरीर को ढीला छोड़ देते हैं। थोड़ी देर बाद संतोखी भी वहीं पहुँचते हैं। यह जगह नायब की इजलास के सामने पड़ती है। 'पुकार' यहाँ तक साफ सुनाई पड़ती है। अभी नायब साहब की कुर्सी खाली है।

भूसी जेब से गँजही चिलम और मूँज के पुराने बाध की गाँठ निकालते हैं। दूसरी जेब से तम्बाकू की थैली निकालते हैं। तम्बाकू चिलम में रखकर मुँह से लगाते हैं तो संतोखी माचिस की तीली से मूँज की गाँठ में आग लगाकर चिलम के ऊपर रख देते हैं। भूसी तीन-चार लम्बे कस खींचकर आग की लपट निकाल देते हैं-लप्प-लप्प। दोनों लोग बारी-बारी इत्मीनान से पीते हैं, फिर राख उलटकर भूसी चिलम जेब में डाल लेते हैं।

संतोखी फिर नायब कोर्ट की ओर जाते हैं। हाकिम की कुर्सी अभी भी खाली है। पता लगता है कि किसी जाँच में गए हैं। कभी भी आ सकते हैं।

वे लौट आते हैं। तय होता है कि तब तक पेट-पूजा ही कर ली जाए। संतोखी झोले से सत्तू की पोटली और नमक की पुड़िया निकालते हैं। भूसी अपना अँगोछा गीला करके निचोड़ते हैं और दोनों हाथों के बीच फैला देते हैं। अँगोछे में नमक और सत्तू मिलाकर डालने के बाद संतोखी थोड़ा-थोड़ा पानी डालते हैं और भूसी उसे सानते रहते हैं। अँगोछे में सत्तू सानने में एक ही बात की सावधानी रखनी पड़ती है कि पानी इतना ज्यादा न पड़ जाए कि सत्तू गीला होकर अँगोछे से चूने

लगे। दोनों लोगों को अँगोछे में सत्तू सानने का अभ्यास है। भुजइन की दुकान से थाली लीजिए तो दस पैसे किराया देना पड़ेगा। पत्तल भी लीजिए तो दस पैसे लगेंगे। इसलिए अँगोछे से ही थाली का काम ले लेते हैं।

भूसी भगत बाहर किसी का बनाया खाना नहीं खाते। होटल में खाने की तो सोच भी नहीं सकते। इसलिए उन्होंने खुद सत्तू साना। सानकर उसके दो गोले बनाए। एक संतोखी के लिए, दूसरा अपने लिए। संतोखी ने झोले से दो हरी मिर्च निकालीं। एक भूसी भगत के गोले में खाँसी दूसरी अपने। फिर एक प्याज निकालकर घुटने और हथेली के बीच दबाकर दो हिस्से किए। एक भूसी के गोले में खोंसा दूसरा अपने। फिर एक छोटी शीशी निकाली। ढक्कन खोला तो चारों तरफ सिरके की महक फैल गई। गोले के ऊपरी हिस्से में छोटी कटोरी जैसे गड्ढे बनाए गए। उनमें थोड़ा-थोड़ा सिरका उड़ेला गया। यह रहा करपात्री इन्तजाम। थाली-कटोरे की जरूरत नहीं। लगे बाबा जी का भोग। सिरका मिल जाने से मामला और गैठ गया।

सत्तू खाकर और अँगोछा धोकर दोनों लोग अपने-अपने झोले सिरहाने रखकर लेट गए। जल्दी ही भूसी की नाक बजने लगी। संतोखी थोड़ी-थोड़ी देर बाद सिर उठाकर देख लेते हैं कि पुकार शुरू हो गई या नहीं।

लेटे-लेटे दोपहरी ढल गई तो संतोखी उठकर फिर नायब की इजलास की ओर गए। पता चला कि साहब जाँच में नहीं, अपने घर गए हैं।

पेशकार ने कहा- "जाओ। दस-पन्द्रह दिन बाद आकर तारीख नोट कर लेना।"

"अरे साहब, फिर मत दौड़ाइए। आज ही कोई तारीख बता दीजिए।"

"अपने मन से कौन सी तारीख दे दूँ। साहब लौटेंगे तो उनसे पूछकर 'जनरल डेट' लगाई जाएगी। आकर पता कर लेना।"

संतोखी भूसी के पास आकर बोले-"चलो भइया। साहब लौटे ही नहीं।"

"कहाँ गए हैं?"

"उनकी बिटिया राँड़ हो गई है। मैयत में गए हैं।"

भूसी संतोखी के उतरे हुए चेहरे को देखते हुए बोले-" इनकी बिटिया-दामाद को कुछ नहीं होगा भइया। दुनिया की सारी आफत-विपत भगवान ने हमीं लोगों के हिस्से में डाल रखी है।"

भूसी चलते-चलते याद करते हैं- इस बार तो साहब ही नहीं बैठे। पिछली बार आए थे तो किसी की मौत होने के कारण कचहरी बन्द हो गई थी। उसके पहले वकीलों और कर्मचारियों में मारपीट हो जाने के चलते हड़ताल हो गई थी। उसके पहले...

भूसी की समझ में यह नहीं आता कि इतने दिन बीत गए, हाकिम उनके लिए

अगम बहै दरियाव

पाँच मिनट का समय क्यों नहीं निकाल पा रहे हैं? इतना ही तो पूछना है कि क्या तुम्हारे बेटे के विवाह और संतोखी के बाप के मरने की तारीख एक ही थी? मैं कह दूँगा-जी हजूर। वे पूछेंगे- कौन सी

तारीख थी? तुम्हें तारीख कैसे याद है? मैं कह दूँगा बीस मई की तारीख थी। मैंने उनके दाह-संस्कार के लिए लकड़ी दिया था, इसलिए याद है। बस, इतनी जरा-सी बात के लिए इतनी बार दौड़-दौड़कर आना पड़ रहा है।

पुलिस दोपहर में पहुँची। पहली गिरफ्तारी झूरी की

झूरी जले नहीं थे। छप्पर उठाकर पिछवाड़े कूद गए थे और कीचड़ में बेहोश पड़े थे।

रात में एक कम्पनी पीएसी आ गई।

अनाज से भरे घड़े गर्मी पाकर फट गए हैं। अधजला अनाज जमीन पर बिखरा है। उसमें से अभी भी धुआँ निकल रहा है। जली हुई झोंपड़ियों के बीच एकाध अधजली लकड़ी अभी भी सुलग रही है। नंगी दीवारें काली पड़ गई हैं। गाय और भैंस खूँटा उखाड़कर भाग गईं लेकिन चार बकरियाँ और एक पैड़िया खूँटे पर बँधी-बँधी मर गईं। उनकी लाश फूलने लगी है। कपड़े-लत्ते, कथरी-गुदरी, सूप-दौरी राख हो गए। छप्पर में खोंसे कागज-पत्तर और रुपये भी। बर्तन काले और टेढ़े-मेढ़े हो गए।

ठाकुरों की आपात बैठक हुई। तय हुआ कि दलित टोले के सारे आदमियों के खिलाफ नामजद रिपोर्ट की जाए। सबको जेटो। बारह-तेरह साल के बच्चों तक को। सैंपोले हैं। आज नहीं तो कल डसेंगे।

आसपास के गाँवों के सवर्ण मुँह बिचका रहे हैं- कितने शर्म की बात है कि एक ठाकुर को उसी के गाँव के दलितों ने पीट-पीटकर मार डाला और दलित जिन्दा बचे हुए हैं। बड़ी किरकिरी हो रही है। दलितों का नरसंहार तो सुना था। होता ही रहता है, लेकिन ठाकुर का संहार!

आगजनी के लिए किसी के खिलाफ मुकदमा दर्ज नहीं हुआ है। किसी झोंपड़ी के अन्दर जलते चूल्हे से उड़ी चिनगारी ने छप्पर पकड़ लिया होगा। पारस सिंह के बेटे की ओर से दर्ज रिपोर्ट के आधार पर टोले के बारह लोग पकड़कर जेल भेजे

गए हैं। झूरी की बिरादरी के खुद झूरी, उनके दोनों बेटे विक्रम और शेरू, उनके दोनों पोते बदरी और तूफानी। उनका भतीजा बिरजू और जगेसर तथा झगरू की बिरादरी के झगरू, कोदई, संपत, बिपत और पहाड़ी।

डरकर भागे दलितों को प्रशासन जंगल से खोज-खोज कर टोले में ला रहा है। झोंपड़ी बनाने के लिए सहायता की घोषणा हुई है। राशन बाँटा जा रहा है। लेने वाले ही नहीं रहेंगे तो सहायता दी किसे जाएगी?

जंजाली बहुरूपिया है। गाँव में बहुत कम रहता है। कभी साधू बनकर, कभी काली माई बनकर भीख माँगता है। पाँड़े की नौटंकी कम्पनी में गुजरिया का पार्ट करता है। बैताली भी पाँड़े की कम्पनी में नाचता है। घटना की पिछली रात ये दोनों गाँव से दस कोस दूर नाचने गए थे।

पूरी ठकुरैया चाहती थी कि बैताली को हर हालत में जेल भेजा जाए और हाथ-पैर तुड़वाने के बाद भेजा जाए क्योंकि वह किसी को सेंटता नहीं... लेकिन पाँड़े ने सट्टा दिखाकर और गवाही दिलाकर दोनों का चालान होने से बचा लिया। अच्छा पैसा खर्च किया। दोनों जेल चले जाते तो पाँड़े की कम्पनी ही लँगड़ी हो जाती।

गजाधर के छोटे भाइयों, दुलारे और कुमारे, का नाम खुद छत्रधारी ने तफ्तीश के दौरान निकलवा दिया। दोनों की ओर से दो-दो हजार रुपये थाने पर जन्माष्टमी का चन्दा दिलवाया। खुद ही दिया जिसे दोनों की मजूरी से काट लेंगे। दोनों ने पूरे सीजन भट्ठे पर पथाई करके पैसा पटाने का वचन दिया है।

सवर्णों के खेतों में धान की रोपाई नहीं हो पाई। परती पड़े हैं। ऊँची-ऊँची घास उग आई है।

मुकदमे की पैरवी कौन करेगा? सब तो अन्दर हैं। चिट्ठी लिखकर झूरी के छोटे भाई, परमेसरी, को सूरत से बुलाया गया है।

झूरी के खानदान की औरतों ने तय किया है कि चाहे जितनी मजदूरी दें, वे ठाकुरों-बाभनों के खेत में मजदूरी करने नहीं जाएँगी। बाकी बिरादरी के लोग तीन किलो देंगे तो जाएँगी। वे बाजार चली जाती हैं। गल्ला व्यापारियों की दुकान पर अनाज साफ करने, झाड़ने-पछोरने का काम मिल जाता है। उनकी औरतों की तेलमालिश का काम मिल जाता है। हफ्ते में दो दिन बरदाही बाजार लगता है। गाय, बैलों

के खाने के लिए घास छीलकर बेच आती हैं। वहाँ से गोबर उठा लाती हैं। उसके उपले-कंडे पाथकर बेच देती हैं। सुतली खरीद लाती हैं और उसका बाध कातकर बेच देती हैं। एक राह बन्द होती है तो दूसरी राह खुल जाती है।

परमेसरी कहते हैं कि सरकार उनको दलित कहती है, कहे। जिसको दलित कहलाने में फायदा दिखता हो, कहलाए। लेकिन वे खुद को दलित नहीं मानते।

अगम बहै दरियाव

"हमारी बिरादरी में राजा-महाराजा हुए हैं। हम झुक नहीं सकते। ठन गई तो ठन गई। दूसरी जगह खटकर खा लेंगे। उनके दरवाजे ताजिन्दगी नहीं जाएँगे। जिनके बाप-दादा सवर्णों की पनही उठाते आ रहे हैं वे जाकर उठावें।"

सबसे पहले छत्रधारी सिंह तीन किलो मजदूरी देने को राजी हुए। उन्होंने अपने भट्ठे के मुंशी गजाधर को मिलाकर टोले की चमार बिरादरी की स्त्रियों को काम करने के लिए राजी कर लिया। क्वार-कार्तिक तक इलाके में तीन किलो मजदूरी आम हो गई।

लोग कहते हैं-"पारस सिंह गए लेकिन मजदूरों की मजदूरी बढ़वाकर गए।"

संतोखी जानते थे कि तहसील और कलेक्टरी में महीने-डेढ महीने लम्बी तारीख पड़ती है। पेशकार ने भी दस-पन्द्रह दिन बाद आकर पता करने के लिए कहा था।

लेकिन संतोखी से रहा नहीं गया। वे सातवें दिन ही पहुँच गए। पेशकार थोड़ी देर तक उनकी अनदेखी करता रहा फिर उठकर कहीं चला गया। लौटा तो संतोखी को फिर सामने खड़ा पाया। उसने केस डायरी चेक करके बताया- "तुम्हारा केस पिछली तारीख में ही एक्सपार्टी डिसाइड हो गया। तुम हाजिर क्यों नहीं हुए?"

"क्या कहते हैं साहब। मैं तो उस दिन शाम तक साहब के इन्तजार में अपने गवाह के साथ यहीं बैठा था। साहब इजलास पर बैठे ही नहीं।"

"बड़े बेवकूफ हो। बैठे नहीं तो फैसला कैसे कर दिए? भागो बाहर।" पेशकार ने गुस्से से आँखें तरेरीं।

"क्यों आँख में धूल झोंक रहे हो बाबू ? सरकारी आदमी हो। कुछ तो शरम-लिहाज करो।"

पेशकार फिर उठकर कहीं चला गया।

संतोखी की आँखें डबडबा गईं। लगा पूरी दुनिया घूम रही है। शाम तक वे कई बार पेशकार के सामने हाजिर हुए और पेशकार हर बार उनसे आँखें चुराता और डाँटकर भगाता रहा।

सड़क के किनारे टाइप मशीन लेकर बैठे अर्जीनवीस ने संतोखी की बात सुनकर कहा-" या तो तुम्हारे विपक्षी ने फैसला खरीद लिया या किसी मंत्री, विधायक से तगड़ा दबाव डलवा दिया।"

"कल मैं सीधे साहब से जाकर पूहूँगा कि मेरे साथ ऐसा अन्याय क्यों किया?"

वह हँसने लगा। कहा-" पूछना है तो यह पूछो कि कितने में बिके? रेट का खुलासा हो जाएगा तो दूसरों के काम आएगा।"

संतोखी अपने वकील से मिले। बताया कि अँधेर हो गया। हमने चार बार गवाह पेश किया। कभी गवाही नहीं ली गई। तारीख-दर-तारीख टलती रही और आखिर में गैरहाजिर हाकिम ने मुझे ही गैरहाजिर दिखाकर मुकदमा खारिज कर दिया।

वकील साहब के चेहरे पर कोई दुख, गुस्सा या आश्चर्य नहीं प्रकट हुआ। उन्होंने तसल्ली देने के लिए इतना ही कहा-"यह कचहरी है संतोखी। थाना-कचहरी में कुछ भी हो सकता है। यहाँ तो मरे हुए लोग आकर गवाही दे जाते हैं। इतना बिलबिलाने की जरूरत नहीं है। फैसले की नकल ली जाएगी। अदम पैरवी में खारिज हुआ है। रेस्टोरेशन की दरखास्त पड़ेगी। नकल की फीस मुंशी को देकर जाइएगा।"

"तीन साल का दौड़ना बेकार गया। फिर वही गीत गाना पड़ेगा।"

"फिर गाने का मौका दिया जाएगा, यही क्या कम है।"

"नहीं वकील साहब। यह नायब अन्यायी है। इससे न्याय की उम्मीद नहीं। अब सीधे डिप्टी साहेब की इजलास पर अपील करिए। लरिका हाकिम हैं। घूसखोर नहीं होंगे।"

"काफी कुछ पता करके आए हो, लेकिन उससे कोई काम नहीं बनेगा। एक्सपार्टी फैसले की अपील रिमांड होकर सुनवाई के लिए फिर उसी कोर्ट में लौट आएगी।"

महुए की सूखी पत्तियाँ बटोरकर वे गड़ही के किनारे मछलियाँ भून रहे थे। दलित बस्ती के छोटे-बड़े आठ-दस लड़के-लड़कियाँ। सात-आठ साल से लेकर साल-डेढ़ साल तक के दिगम्बर। बड़े भाई-बहनों के टेंट पर लदे नंगे-अधनंगे काले कीचड़ पुते शरीर। चमकते दाँत। कमर में काले धागे की करधन। चीकट बालों में बँधे बदरंग रिबन। घिसे फ्रॉक, फटे जाँघिए। आग के चारों ओर गोल घेरा बनाए।

उतरते अगहन की साँझ में बढ़ती ठंड से बच्चों के हाथ-पैर के रोएँ खड़े हो गए हैं। रोयों में चिपके सूखे कीचड़ के झुनझुने हिल रहे हैं।

भुनती हुई मछलियाँ सूँ-सूँ कर रही हैं। इनका अगुआ आठ साल का कलुआ

अगम बहै दरियाव

धुँआती पत्तियों में फूंक मार रहा है। बच्चों से थोड़ा पीछे हटकर कुत्ते बैठे हैं- अगले पैरों पर थूथन टेके। आँख-कान सतर्क। कभी-कभी उनमें से कोई बेचैन होकर उठता है। कूँ-कूँ करके घेरे का एक चक्कर लगाता है और घेरे के और नजदीक आकर बैठ जाता है। महुए की सबसे निचली डाल पर इधर से उधर फुदकते हुए भुनती मछलियों पर नजर जमाए काँ-काँ करते कौए की ओर से भी ये सतर्क हैं। ये आश्वस्त हैं कि इन्हें भी शिकार में हिस्सेदार माना जाएगा।

यह इन बच्चों की दिन-भर की कमाई है। गड़ही के घुटने भर पानी में ये दोपहर से पहले उतरे। गीली मिट्टी की मेंड़ बनाकर गड़ही के पानी को चार हिस्सों में बाँटा। चुल्लू-चुल्लू उलीचकर एक-एक हिस्से को सुखाया। सेतु-बन्ध और समुद्र-मंथन साथ-साथ। तब हाथ आईं चार-चार, छह-छह अंगुल की डेढ़-दो किलो खपटी, डिड़ई, सौरी, सहरी और चेल्हवा। छटपटाती-उछलती मछलियों को पटक-पटक कर शान्त करना। कुत्तों की सतर्क रखवाली के बावजूद झपट्टा मारकर दो मछलियाँ चील ले उड़ी।

नन्हा मुनुआ अधीर होकर रोने लगता है। वह भी दोपहर तक पानी उलीचने और शाम तक पाती बटोरने में शामिल था लेकिन अभी तक उसके हिस्से में एक भी मछली नहीं आई। पूरी तरह लुट गया वह तो।

अचानक उसकी नजर सड़क की ओर से आती बड़ी बहन जुगनी पर पड़ती है। वह दौड़ पड़ता है। जुगनी नन्हे भाई को गोद में उठा लेती है। दिदिया की कोंछ में यह क्या है? शकरकंदी! खुश हो गया मुनुवा। अभी दम-भर में खाँची-भर पाती जुटाता है। भुनी हुई शकरकंदी से ज्यादा मीठी कोई चीज हो सकती है दुनिया में?

सूरज डूबने के साथ टोले में जिन्दगी लौट रही है। कूटने-पीसने की आवाज आने लगी है। चूल्हों से धुआँ उठने लगा है।

संतोखी आज फिर खुश हैं।

बैनामा मंसूखी के लिए उन्होंने जो मुकदमा मुंसिफ कोर्ट में दायर किया है उसमें प्रतिपक्षी पर नोटिस की तामीली हो गई। कोर्ट इसका प्रयास पिछले तीन वर्ष से कर रहा था।

नोटिस तामीली के लिए कानून में पुख्ता इन्तजाम किया गया है। पत्रवाहक नोटिस लेकर प्राप्तकर्ता के दिए गए पते पर जाता है। प्रतिपक्षी नोटिस लेने का इच्छुक नहीं होता। वह मुकदमे की कार्यवाही यथासम्भव लटकाना चाहता है इसलिए सामने नहीं आता। कहला देता है कि प्राप्तकर्ता कहीं गए हैं, पता नहीं कब आएँगे। कभी-कभी स्वयं ही प्रकट होकर पत्रवाहक को 'खुश' कर देता है और कहता है, रिपोर्ट लगाकर वापस कर दो-नहीं मिले।

पत्रवाहक 'नहीं मिले' की रिपोर्ट लगाकर नोटिस वापस कर देता है। दो-चार महीने बाद वह फिर नोटिस लेकर आता है। अगर उसके बार-बार अथक प्रयास के बावजूद नोटिस तामील नहीं हो पाती तो कोर्ट पंजीकृत डाक से नोटिस भेजता है। डाकिए को बताया जाता है कि प्राप्तकर्ता बाहर गए हैं। डाकिया दो-दो दिन के अन्तराल पर हफ्ते भर लिफाफे पर रिपोर्ट लगाता है- 'घर वालों ने बताया कि बाहर गए हैं' और रजिस्ट्री वापस कर देता है। तब कोर्ट नोटिस को अखबार में गजट करने की कार्यवाही करता है। गजट में दी गई तारीख पर तामीली मान ली जाती है। संतोखी इस बात से खुश हैं कि दायर करने के तीन साल बाद उनका मुकदमा गजट की कार्यवाही तक पहुँच गया। अब छत्रधारी सिंह को अपना जवाब लगाना पड़ेगा।

संतोखी को अनुभवी लोगों ने बताया है कि जवाब लगाने की कार्यवाही भी सालों टलती है। टालने के जाने कितने बहाने हैं। जवाब लगाने के लिए सीपीसी में अभी तक कोई समय-सीमा निर्धारित नहीं की गई है।

"लेकिन जब नोटिस तामीली जैसा कठिन काम हो गया तो जवाब देने से कितने दिन भागेंगे छत्रधारी? ज्यादा से ज्यादा साल-दो साल। उसके बाद गवाही और फैसला। बस गवाही होने तक भूसी की जिन्दगी कायम रहे, यही भगवान से मनाते हैं।"

पहले जब-जब तारीख आगे बढ़ती थी, संतोखी अन्दर से बेचैन हो जाते थे। मुकदमा एक कदम भी आगे नहीं बढ़ता और तारीख पर तारीख। छत्रधारी सालों-साल उनके खेत की फसल काट रहे हैं और उनके हिस्से आता है वकील, पेशकार का मेहनताना देना और तारीख नोट करना। लेकिन धीरे-धीरे समझ में आ गया है कि छटपटाने से कुछ नहीं होगा। मन को समझाते रहते हैं। धीरज धरना सीख रहे हैं।

धीरे-धीरे, धीरे-धीरे, सब कुछ धीरे-धीरे होता है।

लेकिन धीरज कब तक !

अगम बहै दरियाव

दोपहर बारह बजे तक कोहरा छँट जाता है और गुनगुनी धूप खिल जाती है। तब टोले की औरतें मैदान में उपले पाथने के लिए जुटती हैं। गोबर पर पड़ती हथेली की थप-थप के साथ देश-दुनिया का हाल-हवाल ।

आज हाल-हवाल लेने-देने के लिए उनके बीच माठा बाबा पहुँच गए हैं। बता रहे हैं कि आखिर इंदिरा जी ने उनकी सलाह मान ली।

"सबको बधिया कराने की सलाह आप ने ही उनको दी थी क्या बाबा?" "नहीं रे, मैंने चिट्ठी लिखकर कहा कि नसबन्दी फौरन बन्द कराइए वरना चीन से फिर लड़ाई हुई तो लड़ने के लिए कोई मर्द न मिलेगा। वे फौरन समझ गईं। तुरन्त बन्द कराया। अब तो चुनाव का ऐलान भी कर दिया। गाय-बछड़े का निशान याद कर लो सब लोग।"

माठा बाबा को कांग्रेस के पक्ष में जनमत जुटाने का काम मिला है लेकिन औरतें उनकी बात सुनने को तैयार नहीं।

"तो क्या फिर उनको जिताएँ ताकि जिनकी कटने से बच गई है, उनकी भी कट जाए।"

"एक बार बेटे की वजह से चूक हो गई। अट्ठाईस साल का लड़का लड़कपन कर गया। अब उन्होंने बेटे को डाँटकर घर बैठा दिया है।"

माठा बाबा इंदिरा जी की तुलना सीताजी से करते हैं- "दोनों का दुख एक समान है। सीताजी को बचपन में माँ का सुख नहीं मिला। जवानी में जंगल-जंगल भटकना पड़ा, और पति सुख का समय आया तो फिर बनवास। बुढ़ापे में बेटे भी उन्हें जंगल में मरने के लिए अकेली छोड़कर अयोध्या लौट गए। कैसी हृदयविदारक मौत हुई। अपनी इंदिरा जी का भी वही हाल है। बचपन में माँ मर गईं। जवानी में

पति से अलगाव हो गया। ग्रह-नक्षत्र की मानें तो पुत्र सुख में भी बाधा दिख रही है इसलिए पुरानी बातें भूलकर दुखियारी का साथ दीजिए। औरत का दुख औरत से ज्यादा दूसरा कौन समझेगा?"

"चुप रहौ बाबा। जाने कितनी औरतों की मांग सूनी करवा डालीं औ कहते हो कि..."

"मांग सूनी होने का मतलब पता है?"

"खूब पता है। जब नीचे से ही कट गई तो ऊपर सिन्दूर लगाने से क्या होगा? चलौ माठा पियौ औ घर जाओ। अबकी मोहर 'चक्रहलधर' पर लगेगी।"

61

पिछड़ी और दलित जातियों तथा मुसलमानों की कांग्रेस से नाराजगी तो बहुत थी लेकिन उनका गुस्सा अब तक अन्दर अन्दर ही धधक रहा था। चुनाव की घोषणा ने उसे मुखर कर दिया। बोधा भाई का गाँव दिल्ली के राजकुमार के संसदीय क्षेत्र में पड़ता था। ठकुरैया और बभनौटी कांग्रेस के पक्ष में दिख रही थी लेकिन जब जनता पार्टी का टिकट ठाकुर उम्मीदवार को मिल गया तो सारे ठाकुर जनता पार्टी में आ गए। बोधा भाई ने भी एक लम्बा हरा बाँस काटकर उसमें 'चक्रहलधर' के निशान वाला झंडा फहराया और नीम के पेड़ से ऊँचाई पर बाँधकर अपना पक्ष जाहिर कर दिया। हम जनता और हमारी पार्टी 'जनता पार्टी'। अधिकांश पिछड़े और दलित बिना बुलाए उनके समर्थन में आ गए। उनके या जनता पार्टी के समर्थन में नहीं बल्कि कांग्रेस के विरोध में।

दिल्ली के राजकुमार ही नहीं, सूबे में कांग्रेस के सारे उम्मीदवार हार गए। तीन महीने बाद ही विधान सभा का चुनाव आया। इसमें कांग्रेस के उम्मीदवार स्थानीय राजकुमार थे और जनता पार्टी का टिकट बोधा भाई की जाति के नेता को मिला। एक दिन जनता पार्टी के उम्मीदवार दलबल के साथ बोधा भाई के घर आए। उन्होंने बोधा भाई को खींचकर गले लगाया और कहा-" आप लोगों के भरोसे ही तो टिकट मिला है। जाति-भाई की मदद जाति-भाई नहीं करेगा तो कौन करेगा? अब चुनाव तक मेरे प्रचार में साथ रहिए।"

बोधा भाई उसी दिन से चुनाव प्रचार में लग गए।

बहुत दिनों के बाद पोलिंग से एक दिन पहले नहर में पानी आया था। जेठ तप रहा था। बोधा भाई की ईख पानी के बिना सूख रही थी। पोलिंग के दिन सुबह-सुबह उठकर बोधा भाई ने नहर का पानी

अपनी ईख के खेत में मोड़ दिया और तय किया कि बारह बजे तक ईख सींच उठेगी तब नहा-धोकर धोती-कुर्ता पहनकर वोट डालने जाएँगे। लेकिन दस बजे के लगभग उधर से गुजर रहे एक पड़ोसी ने बताया कि दोनों राजकुमार दलबल के साथ बूथ कैप्चरिंग करने पहुँचने वाले हैं।

बोधा भाई को झटका लगा। उनकी पार्टी के साथ उनकी जाति के उम्मीदवार की इज्जत दाँव पर थी। वे तुरन्त कन्धे पर फावड़ा रखे पोलिंग बूथ की ओर लपके। पैर घुटने तक कीचड़ में लिपटे थे। शरीर पर कपड़े के नाम पर केवल पटरे का जाँघिया था। वे पोलिंग बूथ के सामने पहुँचे ही थे कि कई गाड़ियों का काफिला आकर रुका। दिल्ली के राजकुमार, स्थानीय राजकुमार, पुलिस की गाड़ियाँ, पत्रकारों की गाड़ियाँ। आगे-आगे दोनों राजकुमार, पीछे-पीछे अन्य लोग। सब पोलिंग बूथ की ओर बढ़े।

अगम बहै दरियाव

बोधा भाई पर जैसे पहलवान बीर बाबा की सवारी आ गई। वे आगे बढ़ते दिल्ली के राजकुमार के सामने पहुँचकर चिल्लाए- "खबरदार, आप अन्दर नहीं घुस सकते। केवल उम्मीदवार के अन्दर जाने का कानून है।"

एक सुरक्षा गार्ड ने दौड़कर बोधा भाई से फावड़ा छीना और उन्हें पीछे खींच लिया। पल-भर में बोधा भाई खाकी वर्दी से घिर गए।

दिल्ली के राजकुमार रुक गए। सब रुक गए। दिल्ली के राजकुमार थोड़ा-सा दाहिने चलकर नीम की छाया में आ गए। स्थानीय राजकुमार भी उनके पास आ गए।

"कौन हो तुम? पुलिस का बड़ा अफसर गुर्राया।"

"मैं 'जनता' की जीभ हूँ।" बोधा भाई ने बुलंद आवाज में कहा-"पटरे की जाँघिया पहने कन्धे पर फावड़ा रखकर सीधे खेत से बूथ पर आए इस काले-कलूटे आदमी की जीभ से जनता बोल रही है।"

"बाकी जनता गूँगी है क्या?"

"जनता ने अपनी जीभ मुझे दे दी है।" बोधा भाई ने अपनी जीभ निकालकर ऊपर-नीचे घुमाई- "हम बूथ कैप्चरिंग नहीं होने देंगे।"

"हम माने कौन-कौन?"

"हम माने हम। अकेले दम।" बोधा भाई ने अपने सीने पर मुक्का मारा।

एक दारोगा अफसर के कान में फुसफुसाया- "सर, इस इलाके में 'हम' को मैं की तरह प्रयोग करते हैं।"

अब तक दिल्ली वाले राजकुमार के पीछे-पीछे पूरा काफिला गाड़ियों की ओर चल पड़ा था। काफिला चला गया। पुलिस की एक जीप रुक गई।

"फावड़ा लेकर बूथ पर क्यों आए? पता नहीं कि बूथ पर हथियार लेकर आना कानूनन जुर्म है।" पुलिस इन्सपेक्टर गुर्राया।

"यह हथियार नहीं औजार है। किसान का 'सिंबल' है। जैसे सरकार का सिंबल लाल-नीली बत्ती है। पुलिस का सिंबल खाकी वर्दी है। वकील का सिंबल काला कोट है।"

"बहुत बोलते हो। और कोई तो नहीं बोल रहा है।"

"सबकी कट गई है। मेरी बच गई है।"

"चलो, गाड़ी में बैठो।" इन्सपेक्टर बोधा भाई की बाँह पकड़कर खींचने लगा। बोधा भाई ने उसका हाथ झटक दिया।

"पहले वोट डालूँगा फिर जहाँ ले चलोगे, चलूँगा। किसी के बाप से डरता हूँ क्या?"

बोधा भाई मुड़कर बूथ के अन्दर जाने लगे।

63

वोट डालकर बाहर आए तो पुलिस की जीप जा चुकी थी। उन्हें अन्दर से ताकत महसूस हुई। दूर पड़ा फावड़ा उठाकर कन्धे पर रखा और खेत की राह पकड़ी। थोड़ी दूर चलने के बाद गला खखारा और कान में उँगली डालकर गाने लगे-

अबकी सन् सतहत्तर बारी सैंया जाळ्या बोट मा हारी रोवैं कंगरेसियन की नारी घरे दुखड़वा नाऽऽऽ

सबेरे अखबारों में बोधा भाई की बहादुरी का समाचार फोटो सहित छपा- 'किसान ने बूथ कैप्चरिंग का प्रयास विफल किया'।

एक दिन में जाने कहाँ-कहाँ तक मशहूर हो गए बोधा भाई। पार्टी के जिलाध्यक्ष ने उनकी पीठ ठोंकी और उनका हाथ ऊपर उठाकर सबसे परिचय कराया- "देखिए, यही हैं बोधा भाई। डंके की चोट पर किसी ने मर्दानगी दिखाई तो बोधा भाई ने। यह हैं असल विद्रोही। आज से इनका तखल्लुस हुआ विद्रोही। कैसा रहेगा?"

सबने एक स्वर से समर्थन किया। बोधा भाई ने सिर झुकाकर स्वीकार किया। जीतने के बाद एक दिन विधायक जी चार-पाँच गाड़ियों में समर्थकों के साथ उनके दरवाजे पर धन्यवाद देने आए। बोधा बहू बताती हैं कि उस दिन उन्होंने दस कम सौ कप चाय पिलाई थी। कुम्हार के घर से सौ कुल्हड़ खरीदकर मँगवाई थीं। उनमें से दस बचे।

सबने कहा कि अब उन्हें गाँव की परधानी अपने कब्जे में कर लेना चाहिए। वे डंके की चोट पर जीतेंगे। छत्रधारी सिंह परधानी में बहुत आग मूते इस बार। इनके चलते सारा गाँव जाड़े में गन्ने, अरहर के खेतों और जंगल में लुकाता फिरा। जैसे सारे देश में जनता का राज आया वैसे ही गाँव में भी आना चाहिए।

"जो पंचों का हुकुम।" बोधा भाई उर्फ विद्रोही जी ने दोनों हाथ जोड़कर आसमान की ओर उठाए।

बाद में विद्रोही जी ने बहुत याद करने की कोशिश की लेकिन याद नहीं आया कि किसने उनसे कहा था- 'यदि इस बार कांग्रेस की सरकार बनी होती तो तुम्हारा इनकाउंटर पक्का था।'

अगम बहै दरियाव

आज दक्खिन टोले के लोग मुलाकात के लिए जेल जा रहे हैं। आठ महीने से ज्यादा हो रहे हैं टोले के लोगों को जेल गए। पहले तो उम्मीद थी कि दो-चार महीने में जमानत हो जाएगी। छूटकर आ जाएँगे। मुकदमा चलता रहेगा। लेकिन जमानत का खर्चा ही नहीं जुट पाया। वकील की फीस, जामिनदार तैयार करना। कचहरी का चक्कर।

मर्द के नाम पर टोले में सत्तर साल के परमेसरी बैताली और महीने में बीस दिन गाँव के बाहर घूमता रहने वाला जंजाली ही बचे हैं।

जमानत न होने का मतलब है कि अब या तो बरी होकर जेल से बाहर आ सकते हैं या सजा काटकर।

जंजाली ने इतना जिम्मा लिया है कि वह सबको ले चलकर मुलाकात करा लाएगा। यह भी बता दिया है कि लाई-चना, गुड़, अचार, बीड़ी, तम्बाकू, खैनी, घी वगैरह दे सकती हो अपने कैदी को। प्याज-मिर्चा वगैरह भी। बस गाँजा, भाँग, शराब, अफीम वगैरह नहीं। जो देना चाहो, पहले से इन्तजाम कर लो।

अपने परानी से कौन नहीं मिलना चाहेगा? पता नहीं भरपेट खाना मिल रहा है कि नहीं? मारे-पीटे तो नहीं जा रहे होंगे! सुनते हैं चक्की पीसनी पड़ती है। सही खबर तो मिलने पर ही पता चलेगी। लेकिन डर भी लगता है कि मिलने गए और हमें भी पकड़कर अन्दर कर दिया तब क्या होगा? यहाँ बाल-बच्चे, बिना दाना-पानी के मर जाएँगे।

जंजाली कई दिन से इन औरतों का भय दूर करने की कोशिश कर रहा है-जो भी मारपीट होती है, थाने में होती है। चालान होने से पहले। चक्की पीसना पुरानी बात हो गई। अब बिजली से अनाज पिसता है। खाने-पीने का सुख घर से ज्यादा। पता है, आठ-आठ रोटियाँ मिलती हैं खाने को।

सबका मुँह अचरज से खुल जाता है।

"और ज्वार-बाजरे की नहीं। गेहूँ की नरम नरम, गरम-गरम।"

"और सुनो। अभी जाड़े की बदरी-बूंदी में पूरे टोले ने चूते छप्पर के नीचे बिना ओढ़ना-बिछौना के ठंड से काँपते दिन काटा है। वहाँ सीमेंट का पक्का छह फुटा चबूतरा रहता है सोने को। कीचड़-काँदो वहाँ कहाँ रहेगा? पूरी बैरक की फर्श पक्की। और ओढ़ने के लिए दो-दो कंबल। मोटे इतने जैसे गलैचा। गरम इतने कि माघ में भी पसीना छूटे।"

परमेसरी बोले- "यहाँ पूरे टोले में चार-छह कंबल निकल आवै तो धन्नि भाग। नसबन्दी कराने वालों को जो कंबल मिले थे, वही काम आ रहे हैं।"

"अभी पता लगाया जाए तो टोले में दो-चार तवे, दो-चार थाली फूटी मिल

जाएँगी। वहाँ जाते ही चमाचम थाली-कटोरी-गिलास मिल जाता है। जेल में ही अस्पताल है। डाक्टर-कम्पाउंडर मुस्तैद। बीमार पड़ो तो चट भरती हो जाओ। खाने में इसपेसल डाइट मिलने लगेगी- दूध, अंडा, फल, डबलरोटी, लोहे की गोली।"

"डबल रोटी क्या?"

"डबल रोटी माने 'डबल फूली हुई'... क्या स्वाद होता है! एक बार मैंने स्टेशन पर खाया था।"

लोहे की गोली? औरतों की समझ में नहीं आता। लोहे की गोली क्यों खाएगा कोई? और खा लिया तो पचाएगा कैसे?

खैर, जंजाली की बात का विश्वास करना पड़ेगा। वह खुद दो बार जेल जा चुका है। जंजाली कहता है कि उसको जेल भेजने वाला कौन पैदा हुआ है! दोनों बार अपनी मर्जी से जेल गया है। जाड़े के मौसम में। बेटिकट रेल यात्रा में चालान कराकर। बाकी समय चाहे जहाँ रहो लेकिन जाड़े में जेल चले जाओ। डाक्टर को दस रुपये देकर स्पेशल डाइट लिखवा लो।

"एक गजब की बात बताएँ? जेल में कई पक्कों से मेरी जान-पहचान हो गई है। बता रहे थे कि राजस्थान का कोई इलाका है जहाँ की भीख माँगने वाली औरतों को जब गर्भ रह जाता है तो वे छोटी-मोटी चोरी-चकारी करके जेल चली जाती हैं। जेल में उन्हें इसपेसल डाइट मिलती है और वहीं अस्पताल में नर्स-दाई बच्चा पैदा करवाती हैं। अपने टोले में तो रमझरिया की दादी ही दाई-नर्स सब कुछ है। पेट गूँथ डालती है। जियो या मरो तुम्हारी किस्मत।... एक वे औरतें हैं, कितनी दिमागदार और एक तुम लोग हो कि मुलाकाती बनकर चलने में भी डर के मारे पसीना छूट रहा है।"

"लेकिन सुनते हैं कि बीच-बीच में पगली घंटी बजाकर कंबल ओढ़ाकर पिटाई करते हैं।"

"पगली घंटी? घंटी भी पागल हो जाती है जेल में!"

औरतें हँसती हैं।

"पगली घंटी बजती है जब कोई भागने की कोशिश करता है। मारपीट भी उसके साथ होती है जो झगड़ा-बदमाशी करता है। कायदे से रहने पर जेल में ही लोग हवलदार-जमादार तक बन जाते हैं।"

"तब लोग जेल जाने से इतना डरते क्यों हैं?"

"बेकार डरते हैं। अरे जेल जाने से वे डरें जो महलों में रहते हैं। दूध-मलाई, मिठाई-रबड़ी चाभते हैं। मोटरगाड़ी पर चलते हैं। सूट-बूट पहनते हैं। पिक्चर-सिनेमा देखते हैं। जिनको खाने के लिए रोज मुर्गा, पीने के लिए दारू और सोने के लिए

मेहरारू चाहिए। हम क्यों डरें? बस एक ही बन्धन है कि घर नहीं आ सकते।"

"घर?" परमेसरी बोल पड़े- "यह घर है कि नरक कुंड। मेरा मतलब जेल के मुकाबले, जहाँ आठ-आठ रोटियाँ हैं। पक्की फर्श है, कंबल है, अस्पताल है। वह तो हम लोगों जैसे अतातपंखी गरीबों के लिए सोझै बैकुंठ है। बैकुंठ तो उनको मिलता है जो बहुत पुन्य का काम करते हैं।"

"बस यह है कि बाहर कोई बन्धन नहीं है। कहीं भी आने-जाने के लिए सुतंत्र हो।"

"यहाँ हम लोग सुतंत्र हैं भूख और बीमारी से मरने के लिए। जाड़े में बोरा ओढ़कर रात काटने के लिए। दबंगों की गाली खाने और आँसू पीने के लिए। कोई पूछने नहीं आता कि पेट में अन्न का दाना पड़े कितने दिन हो गए।"

"और वहाँ सुबह पाँच बजे ही पचासा लगाकर जगाया जाता है। मतलब पचास बार घंटा बजाया जाता है। चाहे जितनी गहरी नींद हो, टूट जाएगी। जैसे ही दिशा-मैदान से फारिग हुए नाश्ते के लिए चना बँटने लगता है। नौ बजते ही चाय। ग्यारह बजे फिर पचासा। खाने की छुट्टी। और सुनो। जो मेहनत करोगे उसकी मजदूरी मिलेगी। यहाँ मजदूरी माँगने पर ही तो जेल जाना पड़ा न! वहाँ बिना

माँगे मिलती है। दरी, गलैचा, टाट, नेवाड़, चटाई-कपड़ा बुनो तो उसकी मजदूरी तुम्हारी पासबुक में जमा होती रहेगी। छूटो तो दो-चार हजार पासबुक में लेकर निकलो।"

आखिर औरतों में मुलाकात करने की हिम्मत आई।

"सब लोग चलो। एक कैदी से तीन लोग मिल सकते हैं। अपने बारह कैदी हैं। ... इतना सबेरे निकलो कि नौ-साढ़े नौ तक जेल के फाटक तक पहुँच जाएँ। ग्यारह बजे के बाद पर्ची नहीं लगती।"

आठ औरतें, जुगनी, मुनवा, सितिया और दो गोद के बच्चे। कुल बारह कैदी हैं और जंजाली व परमेसरी को लेकर पन्द्रह मुलाकाती। बूढ़ियाँ और गेनवा टोले में ही रह गईं। गेनवा को अपनी बकरी के खाने-पीने के इन्तजाम के लिए और टोले की रखवाली के लिए छोड़ दिया गया। उसकी माँ तो जा ही रही है। बिपत और पहाड़ी की औरतें सगी बहनें हैं। वे मायके गई हैं। चनरी की बिदाई हो गई है। आठ-दस साल वाले चारों लड़के नहीं जा रहे हैं। उन्हें रबी की कटी फसल वाले खेतों में बाल बीननी है। बाल से दाना निकालकर बेचना है और उससे चाकू खरीदना है। चारों चाकू की बहुत जरूरत महसूस कर रहे हैं। बाल बीनने के बाद मछली मारने के लिए नदी में कटिया लगाना है। मिलने जाने से क्या होगा?

इतना ऊँचा फाटक पहली बार देखा टोले की औरतों ने। मुनवा की जिज्ञासा शान्त नहीं हो रही है। वह जानना चाहता है कि क्या जैसे तोते को पिंजड़े में बन्द

किया जाता है, उसी तरह उसके पापा भी बन्द होंगे?

गेट के बाहर एक लाइन में खड़े हुए सारे मुलाकाती।

पहले औरतें फिर आदमी।

जेल का एक सिपाही एक मोटे कुर्ताधारी मुलाकाती को समझा रहा था-लाई-चना तो जरूर ले लीजिए। असमय में भूख लगने पर यही काम आता है। सुर्ती खाते हों तो वह भी।

कुर्ताधारी ने अपने लड़के को मोटरसाइकिल से दौड़ाया दौड़कर पाँच-छह पुड़िया सुर्ती ले आ।

एक औरत का नम्बर नहीं लग पाया। बारह कोस दूर देहात से तीन सवारियाँ बदलकर पहुँची थी। देर हो गई। वह सिपाही से चिरौरी कर रही थी। सिपाही झिड़क रहा था। आखिर थोड़ी देर बाद दस रुपया लेकर सिपाही ने उसका नम्बर भी लगवा दिया।

फाटक खुला। मुलाकाती अन्दर जाने लगे।

माँ की उँगली पकड़कर चल रही शेरू की बेटी सितिया पूछती है-" अम्मा, अब हम पापा से मिलने चल रहे हैं?"

दहबंगा अचकचाई हुई है। कहती है-"चुप रहो, नहीं तो सिपाही पकड़ लेगा।"

जेल के साथियों ने समझाया था- दिल को कड़ा करके मुलाकात करने जाओ। हँसने-मुस्कराने की कोशिश करना। रो पड़े तो घरवालों का दिल छोटा हो जाएगा। लेकिन आमना-सामना हुआ तो दोनों ओर से आँसुओं की बरसात होने लगी। देर तक कोई बात नहीं। सिर्फ औरतों की सिसकियाँ।

तूफानी बाद में आया। माँ के नजदीक आते हुए शरमा रहा है। दहबंगा उसे कलेजे से लगा लेती है।

ज्वार थमा तो शेरू ने बेटी को गोद में उठा लिया और एक हाथ में बिस्कुट और दूसरे में टाफी का पैकेट पकड़ा दिया। बेटी खुशी से झूम उठी।

"यह कहाँ मिला?"

"सब मिलता है। अन्दर कैंटीन है।"

कहने के साथ दहबंगा का हाथ पकड़कर उसकी मुट्ठी में पचास-पचास के दो नोट दबा दिए।

सारी औरतों को यह देखकर राहत हुई कि उनके आदमी खुश और तंदुरुस्त लग रहे हैं।

थोड़ी देर बाद जगेसर की औरत ने शंका-निवारण करना चाहा- "मारते-पीटते भी हैं अन्दर?"

"बस एक बार एक डंडा।" मुस्कराया जगेसर- "आने पर काम मिला था गायों को चारा देने का। भूसे का बोरा उठा ही रहे थे कि पीछे से एक 'पक्का' आया। बोला, जल्दी उठा बे साले। और तड़ से चूतड़ पर एक डंडा मार दिया। बहुत खला। अभी तक कभी बाप ने भी डंडा नहीं मारा था। लेकिन बाद में तो वह पक्का दोस्त बन गया। कालीचरन नाम है। बिरादरी का ही है। वह भी कतल करके आया है। खूनी कतली की यहाँ बड़ी इज्जत है। कोई आँख नहीं दिखा सकता।"

झगरू ने बताया- " पक्के साले महाहरामी। अन्दर जाते ही 'नंगाझोरी' तलाशी लिये। धोती खोलकर फेंक दिया और जाँधिए के नाड़े में छिपाकर रखा दस रुपये का नोट निकाल लिया।"

विक्रम ने जुगनी को देखा तो उसे लगा आठ महीने में ही बेटी सयानी हो गई है। उसके अन्दर डर की लहर दौड़ी। पत्नी से वे पूछा-"ठाकुरों पूछा- "ठाकुरों के लड़के टोले में ऊधम मचाने आते होंगे?"

"शुरू में एक-दो बार आए। हमने मिलकर चहेंटा तो भाग खड़े हुए। अब नहीं आते।"

"देखना जुगनी की माँ। अब तुम्हीं इसकी माँ हो तुम्हीं बाप। सयानी होती बेटी को सँभालकर रखना और आते अगहन गौना देकर विदा कर देना। जुग-जमाना बहुत खराब है। मैं कुछ रुपयों का जुगाड़ यहाँ से कर दूँगा।"

"आप हमारी चिन्ता करके अपनी देह न गलाइएगा। हमारी बेटी बहुत समझदार है। कोई आँख दिखाएगा तो उसकी आँख निकाल लेगी।"

बिरजू ने चार महीने की बेटी को गोद में उठाकर चूमा तो वह मुस्कराने लगी। बिरजू जेल में आया तो यह माँ के पेट में थी। बिरजू बहू बोलीं- "पहचान ले। बप्पा हैं।"

तूफानी ने सबसे पहले अपनी माँ से अपने पिल्ले झबुआ के बारे में पूछा। वह जेल आया तो झबुआ चार महीने का था। ठीक से आँख भी नहीं खुली थी जब उसे माठा बाबा के दालान से जाड़े में चुराकर लाया था।

"टोला छोड़कर चला गया कि अभी है?"

"चला तो गया लेकिन कभी-कभी चक्कर लगा जाता है।"

"मैंने दो बार उसे सपने में देखा माई। बहुत दुबराया हुआ था। आए तो उसे कुछ खाने को दे दिया करो।"

"अपना ही पेट पालना भारू है। कुत्ते को कहाँ से खिलाएँगे बेटा।"

तूफानी उदास हो गया।

69

बेटी को वापस पत्नी की गोद में देते हुए बिरजू ने कौशल से पत्नी की दूध भरी दाहिनी छाती को दबा दिया। आँसू से डबडबाई आँखों वाली पत्नी के होंठों पर झीनी मुस्कराहट उभर आई।

मुनवा बाप की गोद से उतरने को तैयार ही नहीं।

"मैं बप्पा के साथ रहूँगा।"

उसे फुसलाया गया-बप्पा ढेर सारा बिस्कुट और केला खरीदकर शाम को घर आएँगे।

दोनों तरफ से कुछ न कुछ दिया गया। कुछ न कुछ लिया गया। चलो अब। समय खतम।

फिर आँसुओं की बरसात। मुड़-मुड़कर देखते वापस होते मुलाकाती। फाटक के अन्दर से विदा देतीं कई जोड़ी आँखें। पूछ नहीं सकते कि फिर कब आना होगा। होगा कि नहीं?

होली बीत गई। चैत भी आधा बीत गया। झनाका गई तो मायके से लौटने का नाम नहीं ले रही है। मटर और सरसों तो दलसिंगार ने अकेले काटा। आलू भी अकेले खोदा। अब गेहूँ भी काटने लायक हो गया है। उसे समझना चाहिए कि अपनी गृहस्थी बिगड़ गई तो मायका कितना काम आएगा?

कभी-कभी दलसिंगार को उस पर तेज गुस्सा आता है- अब आई तो उससे डंडे से बात करेंगे।

नहीं रहा गया तो एक दिन पड़ोसी के जिम्मे गाय-भैंस छोड़कर वे ससुराल गए।

पता लगा कि वह किसी रिश्तेदारी में न्योता खाने गई है। सास ने कहा- " वापस आते ही भेज देंगे।"

लेकिन दलसिंगार की समझ में यह नहीं आया कि दोपहर में खाना खिलाते समय सास ने उनकी दाल में घी क्यों नहीं डाला? बिना घी की दाल उन्हें एकदम बेस्वाद लगती है। पन्द्रह दिन और बीत गए। झनाका नहीं लौटीं। दलसिंगार का गुस्सा काबू के बाहर हो गया। तय किया कि इस बार वे उसका झोंटा पकड़कर घसीटते हुए लाएँगे।

लेकिन इस बीच खबर मिली कि झनाका की बिदाई कहीं और कर दी गई है।

अगम बहै दरियाव

दलसिंगार जैसे पेड़ से गिरे। जो मिलता उसी को पकड़कर रोने लगते। सभी समझाते कि यह दुख एक-दो दिन रोने से नहीं चुकने वाला।

दलसिंगार को पक्का यकीन था कि वह अपने मन से नहीं गई होगी। जा ही नहीं सकती। उसे जबरदस्ती भेजा गया होगा। वह इतनी सीधी है कि इनकार नहीं कर पाई होगी। मिलने का मौका लगने की देर है। देखते ही न दौड़ी चली आए तो कहना।

लेकिन उसकी नई ससुराल का पता लगाने में दलसिंगार को डेढ़ साल लग गए। आज वे झनाका से मिलने उसकी नई ससुराल आए हैं।

दलसिंगार का परिचय और मंशा जानकर वहाँ झमेला खड़ा हो गया। झनाका का नया पति मारपीट पर उतारू हो गया।

"तुम होते कौन हो उससे मिलने वाले? अब वह मेरी घरवाली है। क्यों मिले तुमसे? भागो यहाँ से।"

वार नहीं लेकिन दलसिंगार बिना मिले लौटने को तैयार नहीं हैं- "एक बार मिला दीजिए, बस, हम लौट जाएँगे।"

दोपहर से शाम हो गई। न झनाका की झलक मिली न दलसिंगार ने दुआर छोड़ा। अँधेरा होने पर दो लोग दलसिंगार को जबरदस्ती खींचकर नीम के पेड़ तक ढकेल आए। दलसिंगार वहीं बैठ गए। बिना कुछ खाए-पिये पड़े हैं। झनाका सोच रही है कि अपने घर में होते तो खाने के लिए अब तक महाभारत मचा देते।

आधी रात के बाद भादों की झड़ी शुरू हो जाती है। झनाका का मन बार-बार पसीज रहा है-भीग रहे होंगे। वह कसमसाती है।

"क्या हुआ रे? फिर पुराने भतार के साथ सोने की अमल लगी है क्या?"

वह कुछ बोलती नहीं। कुनमुनाते बेटे के मुँह में छाती लगा देती है।

सबेरे देखती है- दलसिंगार नीम के पेड़ से पीठ टिकाए ऊँघ रहे हैं।

वह पति से कहती है-" इतना जिद ठाने हैं तो मिल ही आती हूँ।"

छह-सात महीने के बेटे को गोद में लेकर झनाका आती है। दलसिंगार उठकर खड़े हो गए हैं। बोलना-चालना कुछ नहीं। बस, एकटक देख रहे हैं।

"क्या हालचाल है?"

"हालचाल तो देख ही रही हो।"

देख तो रही थी। देह खंखड़ हो गई थी। आँखें भैंस गई थीं।

दोनों लोगों की समझ में नहीं आ रहा था कि आगे क्या बात की जाए।

"कोइली पँड़वा बियाई कि पैड़िया?"

"कोइली को बेच दिए। सबको बेच दिए। बस दोनों बैल बचे हैं।"

फिर अबोला।

"मैं तुम्हारे गहने लेकर नहीं आई। चारों थान काँड़ी के डेढ़ हाथ नीचे गड़े हैं। खोदकर सँभाल लेना।"

थोड़ी चुप्पी के बाद-"उस दिन धान बेचने से जो चालीस रुपये मिले थे उसे एक कपड़े में लपेटकर ओसारे की छाजन में खोंस दिया है। निकाल लेना। बिंदा ओझा की मलकिन एक किलो घी उधार ले गई थीं। उसका पैसा माँग लेना।"

"तुम क्या सोचती हो कि मैं रुपये-पैसे का हिसाब लेने आया हूँ। मन तुम्हारे ऊपर टँगा था तो देखने चला आया।"

गोद का बच्चा दूध पीने के लिए उतावला हो रहा था। बीच-बीच में रोना शुरू कर देता था।

"इसका क्या नाम रखा?"

"दहपेल।" तनिक हँसकर झनाका ने बताया।

दहपेल के गाल में उँगली धँसाते हुए दलसिंगार बोले-"बहुत सुन्दर है।"

आते समय पता नहीं क्या सोचकर वे बाजार से एक झुनझुना खरीद लाए थे। जेब से निकालकर उन्होंने उसे दो बार बजाया और बच्चे के हाथ में पकड़ा दिया।

"अब जाइए। यहाँ के लोग बहुत गुस्सैल हैं। अपने खाने-पीने का ध्यान रखना। समझ लेना कि बस इतने दिन का ही साथ बदा था।"

कहने के साथ झनाका मुड़कर चल पड़ीं। दहपेलवा झुनझुना बजाते हुए मुड़-मुड़कर देख रहा था।

दुख की गठरी उठावा , परमेसरी

अभी मुँह अँधेरा ही था कि परमेसरी माथे पर चोट खाकर उठ बैठे। कथरी के ऊपर हाथ फैलाकर टटोला। देशी आँवले के आकार के ओले। छप्पर के फूस को छेदते हुए बिस्तर पर गिर रहे थे।

परमेसरी ने बाहर झाँका। सफेद ओलों से धरती पटी जा रही थी।

आज पानी बरसने का आठवाँ दिन था। तेज हवा और पानी। बादल जमीन के इतने नजदीक आकर बरस रहे थे जैसे आषाढ़ के बादल हों। बिजली एक तरफ से कड़कड़ाती हुई दूसरी तरफ गुजर जाती।

जाड़े में इतनी बरसात!

अगम बहै दरियाव

झोंपड़ी के एक कोने में बकरी बँधी थी। उसके पेशाब और लेंड़ी से कोना गीला हो गया था। पेशाब की गंध पूरी झोंपड़ी में भरी थी। बकरी के दोनों मेमने रह-रह कर उसका दूध पीते और उनके धक्के से बकरी के पिछले पैर हवा में उछल जाते। ओलावृष्टि बन्द हुई तो परमेसरी बाहर निकले। बच्चे शोर कर रहे थे- "दासू का छप्पर सड़क की ओर भागा जा रहा है।"

अरे, छप्पर के कोई हाथ-पाँव हैं जो भागा जा रहा है?

देखा-छप्पर के अन्दर साँड़ घुसा हुआ था। ओले पड़ने लगे तो चोटिल होने से बचने के लिए सिर झुकाकर घुस गया होगा। लेकिन छप्पर की ऊँचाई इतनी कम है कि वह साँड़ की पीठ पर टिक गया है। अब साँड़ बाहर निकलना चाहता है तो उसके साथ छप्पर भी चल रहा है।

परमेसरी दिशा-मैदान के लिए जाने लगे तो लग्गी साथ लेते गए। बकरी के खाने के लिए महुए की पाती लेते आएँगे।

थोड़ी देर में फिर झड़ी शुरू हो गई।

औरतें तो मुँहअँधेरे ही निपट आती हैं। लड़के-लड़कियाँ बोरा ओढ़कर या भीगते हुए जा रहे हैं। बूढ़े भीग गए तो निमोनिया पकड़ लेगा। पूरे टोले में बाँस का एक ही छाता है, ढाक के पत्तों की छाजन वाला। बूढ़े उसी को लेकर बारी-बारी जा रहे हैं। यह ऐसी जरूरत है जिसे बहुत देर तक रोक नहीं सकते।

माघ-पूस का जाड़ा खेतिहर मजदूरों के लिए काल बनकर आता है। कटाई-बोवाई का काम कार्तिक अगहन तक समाप्त हो जाता है। केवल सिंचाई करना बाकी रहता है। जाड़े में बरसात हो गई तो सिंचाई का काम भी खतम। जहाँ किसान भगवान से पानी बरसाने की मनौती करता है, वहीं मजदूर न बरसाने की चिरौरी करता है। पानी नहीं बरसेगा तभी तो सिंचाई के लिए मजदूरों की जरूरत पड़ेगी। दलित टोला रोज कमाकर खाने वाला टोला। दो-चार दिन से ज्यादा राशन किसी के पास नहीं। वर्षा-बूँदी में मजदूरी बन्द तो खाएँ क्या?

कलुआ की दादी बताती हैं- माघ के आखिरी और फागुन के शुरुआती छह दिन मिलाकर बारह दिन का 'चमरबरहा' लगता है। इसमें थोड़ी-बहुत बरसात हर साल होती है। किसान इस बरसात को सोने की बरसात कहते हैं लेकिन इस बार तो 'चमरबरहा' लगने के कई रोज पहले से ही बरसने लगा। ठंड बढ़ गई है। पुरानी कथरी से कितना जाड़ा कटेगा? बगल की झोंपड़ी से रिरियाती हुई बूढ़ी की आवाज आती है- "सर्दी हाड़ छेद रही है रे बहुरिया। तप्ते में कहीं से लाकर कुछ डालती क्यों नहीं?"

"क्या डालूँ? अपना हाथ-पाँव डाल दूँ? सारा जलावन तो भीग गया।"

भीगने के डर से घर में बैठे रह गए तो बच्चों के मुँह में क्या डालेंगे? तीन औरतें बोरा ओढ़कर बाजार जाने के लिए निकलीं। शायद कोई काम मिल जाए या उधार ही।

दोपहर बाद फिर बरसात रुकी तो परमेसरी की बूढ़ी बोली-"जाकर कहीं से मन-दो मन अनाज कर्ज ले आइए। नहीं तो पूरा टोला उपवास करेगा। छोटे बच्चों का रोना नहीं सुना जा रहा।"

"किसके घर जाएँ? बड़ी बखरी वालों (सवर्णों) से तो रार ही ठनी है।"

काफी सोच-विचार के बाद वे एक मैली चादर लेकर भूसी चौधरी के घर की ओर चले।

बाप रे, गेहूँ की फसल तो एकदम लोट गई है। अरहर और सरसों की शाखाएँ कतरकर जमीन पर बिछ गई हैं। एकदम बूँची। मटर, टमाटर, बैगन और फूलगोभी का सत्यानाश हो गया है। ओले की चोट से कटकर गिरी हरी पत्तियों से बाग पट गया है। ठंड से भीगे काँपते बन्दर डालों पर पीठ से पीठ सटाए बैठे किंकिया रहे हैं। जगह-जगह मरी हुई गौरैया, किलहटी, तोते और पंडुक उलटे पड़े हैं। एक कौआ भी। भीगे टूटे-अधटूटे डैने। फैले छितरे पंख। खुली आँखें, बन्द चोंच। एक लोमड़ पूँछ अन्दर दबाए एक मरे हुए लाल महोख को नोचकर खा रहा था। उसका बच्चा काँपते हुए भी एक पंडुक की लाश से खेल रहा था। मुँह में भरता। झटककर दूर फेंकता। फिर दौड़कर पंजों से दबोच लेता। लोमड़ रह-रह कर उस पर गुर्रा रहा था कि ससुर, पेट नहीं भर लेता, खिलवाड़ सूझ रहा है।

भूसी चौधरी ओसारे में तप्ता तापते हुए पगहा बर रहे थे। परमेसरी कीचड़ सने टायर के चप्पल दरवाजे के बाहर उतारकर घुसे, 'राम-राम' किया और बैठकर हाथ सेंकने लगे।

"क्या हाल है परमेसरी?"

"क्या हाल बताएँ, चौधरी! बहुतै खराब है। आजा-पुरखा कहते आए हैं कि भादों में सुग्गा उपवास करते हैं, माघ में मजूर। उस पर यह आठ रोज की बदरी-बरसात। मजूरी-धतूरी एकदम ठप्प। दोनों जून उपवास हो रहा है।"

"अब तो सभी का उपवास होगा परमेसरी। सारी फसल चौपट हो गई।"

बात कट गई। अब कहाँ से शुरू करें परमेसरी। थोड़ी देर चुप्पी रही फिर भूसी ने पूछा- "अभी किसी की भी जमानत नहीं हुई?"

"खर्चा-बर्चा ही नहीं जुटा सके चौधरी। सारे कमाने वाले तो अन्दर हैं।"

थोड़ी देर की चुप्पी के बाद फिर परमेसरी ने हिम्मत की- " भइया हमारा पूरा टोला दो दिन से उपवास कर रहा है। छोटे बच्चों का रोना कलेजा फाड़ रहा है।

अगम बहै दरियाव

ठाकुरों-बाधनों के घर माँगने जा नहीं सकते। माँगें भी तो मिलेगा नहीं। आपके पास बहुत आशा लेकर आए हैं। आप उबार लेंगे तो जी जाएँगे। दो-तीन मन धान मिल जाए तो जान बच जाए। चैत में सवाई के साथ लौटा देंगे।"

"चैत में कहीं से खजाना मिल जाएगा क्या?"

"तो क्या सब दिन ऐसे ही रहेगा भड्या?"

भूसी चुपचाप रस्सी बरते रहे। परमेसरी रह-रहकर तसे में फूंक मारते रहे।

"जाओ, मलकिन से मिल लो। जो दे सकें ले जाओ।" फिर कुछ जोर से बोले-"सुनती हो, परमेसरी आए हैं।"

चौधराइन सरिया में जानवरों के नीचे का कीचड़ सुखाने के लिए पइया, पुआल डाल रही थीं। परमेसरी पैलगी करके बोले- "कुछ मदद के लिए आए हैं भौजी। बाल-बच्चों का उपवास हो रहा है।"

तभी पीछे से किसी के हँसने की आवाज आई" अरे होने दे उपवास। पेट में गर्मी बढ़ जाती है तो उपवास बहुत 'फैदा' करता है। तुम लोगों के तो दिमाग तक गर्मी चढ़ी हुई है।"

लोहा तिवारी थे। काला छाता लगाए, लाठी लिये खेतों की ओर जा रहे थे।

"आप तिवारी को समझा रहे होंगे कि अगर पूरी दुनिया नष्ट हो जाए तो आप हमेशा के लिए बिना पत्नी और बच्चों के अकेले राज करेंगे।

"सारे, बड़ी लम्बी जीभ हो गई है तेरी। मेरे मेहरारू नहीं है तो क्या? मैंने तेरी बहन-बेटी कभी रगड़ी हो तो बोल।"

"जब से उपधिया से तेवारी बने हो, तुम्हारा बरम्ह तेज ज्यादा उधिरा गया है लेकिन इतना जानि लेव कि बहिन बिटिया रगड़ने का जमाना चला गया। जो ऐसा सोचेगा वह खुद रगड़ जाएगा।"

पचास-साठ साल से भी ज्यादा हुए होंगे जब दो घर 'उपाध्याय' इस गाँव में आकर बसे थे और खुद को 'तिवारी' कहने लगे थे। परमेसरी उसी ओर इशारा कर रहे हैं। तेवारी ने इस इशारे को जान-बूझकर अनसुना किया।

"हम तो भगवान से बीसो 'नह' जोरि के मनावत हैं कि ऐसे ही दस दिन और झड़ी लगाए रहो ताकि चमार-पासी सारेन की गर्मी निकल जाए।"

"भगवानौ तोहरै सुनिहैं। हमार थोरै सुनिहैं।"

"क्या तुम्हें लगता है कि भगवान अंधे हैं? वो अपनी आँखों में देखकर बकवास कर रहे हैं। न पूजा, न आशीर्वाद। तो क्या होगा?"

"तू आपन आसिरबाद अपने पल्ले रखौ तिवारी। बिना पैलगी के ही इतना आसिरबाद दै डारे। अबहीं पैलगी खातिर मरते हो।"

"अरे आओ तेवारी, हाथ सेंकि लेव।" भूसी ने आवाज लगाई। तेवारी उधर बढ़ गए। पैलगी का आसिरबाद दिया और खुश हुए। पैर का तलुआ सेंकते हुए बोले- "इसको कुछ देना नहीं चौधरी। उपवास तौ ई सारे अपनी करनी से कर रहे हैं। आखिर तीन किलो मजूरी ले मरे।"

"क्या गलत किए तेवारी? आप उनको सात-आठ पाव धान की मजूरी देते रहे। उसको कूटने पर पाँच पाव चावल निकलता है। उससे कितने लोगों का पेट भरेगा? नोन-तेल, दाल-दलहन, कपड़ा लत्ता और दवाई दरमस की तो बात ही छोड़ दीजिए। मजूरी तो कम थी ही।"

"आखिर वही मजूरी तो इनके बाप-दादों, आजा-पुरखों तक को मिलती आई थी। उनका काम कैसे चलता था? क्या वे सब बिना खाए मर गए?"

"तेवारी, तब मर्द-मेहरारू, बाल-बच्चे सब अपना पेट लेकर दिन-भर खटते रहते थे। पढ़ाई-लिखाई तो छोड़िए, कपड़े-लत्ते तक की कोई नहीं सोच पाता था। अब वे भी चाहते हैं कि उनके बच्चे चार अच्छर पढ़ें। आखिर पैदा तो उन्हीं के जाँगर से होता है। तब मजूरी माँगने को गलत कैसे कहोगे?"

"जाँगर तो सबसे ज्यादा बैलों का लगता है चौधरी। आपसे भेंट हो जाए तो बैल भी पैदावार में अपना हिस्सा माँगने लगें। कहो, खाने के लिए भूसे की बजाय गेहूँ की रोटी और धान का भात माँगने लगें।"

हँसने लगे चौधरी।

"इन लोगों को आप अभी बैल ही मान रहे हैं। अब तो आदमी मान लीजिए।"

तिवारी को शायद अच्छा नहीं लगा। उठ गए।

परमेसरी चौधराइन के पीछे-पीछे बखार के पास तक गए। धान निकालकर तौला। एक मन।

"इतना ही दे पाएँगे भगत। अपना भी साल-भर का इन्तजाम देखना है। आप तो हमारे घर आ गए। हम किसके घर माँगने जाएँगे?"

टोले में पहुँचते-पहुँचते शाम हो गई। परमेसरी ने हर घर को बराबर-बराबर धान बाँट दिया। आज का काम चले। कल की कल देखी जाएगी। मुरझाये चेहरे खिल गए। हर झोंपड़ी से धान कूटने की आवाज आने लगी। चूल्हे से धुआँ उठने लगा। भात पकने की महक हवा में तैरने लगी। सबसे पहले थूथन हवा में उठाकर कुत्तों ने सूँघा। पूँछ हिलाते झोंपड़ियों के द्वार तक आए और लद्द से बैठ गए।

शाम से बूँदा-बाँदी फिर शुरू हुई।

आधी रात के करीब टोले के चार लड़के बोरा ओढ़कर सिंवार की ओर निकले। आठ-नौ साल के चोर। खुरपा-कुदाल-बोरी लेकर। सबने देखा, समझा, लेकिन

अगम बहै दरियाव

टाल गए। दिन-भर के उपवास के बाद शाम को दो-दो कौर भात मिला है। किस मुँह से पूछें कि कहाँ जा रहे हो?

फिर जुगनी और गेनवा निकलीं। गेनवा की माँ ने मना किया- "मत जा रे बेटी। वे लोग जल्लाद हैं। पकड़ पाए तो जान निकाल लेंगे।"

"इस समय आधी रात को बरसते पानी और ठंड में कौन खेत में बैठा होगा काकी?" जुगनी ने प्रतिवाद किया-"घर में बैठकर परान कैसे बचेंगे?"

लोहा तिवारी दस बजे रात तक काला छाता लगाए अपने खेत की मेंड़ पर बैठे भगवान से मना रहे थे कि जुगनी को उनके खेत में मटर की चोरी करने भेज दें। उसकी सूरत उनकी नजर में गड़ी है। वे तो खुद चाहते हैं कि उसकी झोंपड़ी राशन-पानी से भर दें लेकिन... वे देर तक जुगनी से होने वाले संवाद की कल्पना करते रहे। उसका दूध दुहते रहे। अभी तो बच्ची ही है। पहले उसकी इच्छा पूरी करेंगे फिर अपनी।

अगर पट उस दिन दसौंधी हँसते हुए कह रहे थे- "अगर पट नहीं रही तो पटको।"

लोहा ने शान्त स्वर में समझाया था- "पटने और पटकने में जमीन-आसमान का फर्क होता है दसौंधी। पटना माने बार-बार। पटकना माने एक बार। बदनामी अलग। ऐसे मामले में धीरज से काम बनता है। अकुताने से नहीं।"

लेकिन नहीं बना काम। आधी रात होने को आई तो निराश होकर लौट पड़े लोहा।

घंटे-भर में दोनों लौट आईं। एक-एक कहुना मटर का जेंगर और चार-चार गन्ने लेकर। भीगती-काँपतीं। करीब दो घंटे बाद लड़कों की गोल लौटी। आलू, शकरकंदी, गोभी, मटर और गन्ना लेकर। कीचड़ से लथपथ।

- अरे आग जला रे माई। चाहे मँड़हे की थूनी ही आग में डाल दे। ठंड कलेजे में घुस गई है। हाथ-पैर एकदम सुन्न।

सारी चीजें रातों-रात बँट गईं। मगर खबरदार जो सबेरे किसी की झोंपड़ी में गोभी, मटर या गन्ने का कोई चिह्न मिला। छिलका, पत्ते, जेंगर, खोइया सुबह होने से पहले ले जाकर नदी में फेंक आना होगा।

सबेरे नौ बजे के करीब पानी बन्द हुआ तो रात के चोर नदी में कटिया लगाने निकल गए। नन्हा मुनुवा भी उनके पीछे-पीछे। थोड़ी देर में पप्पू सिंह की अगुआई में ठकुराने के चार-पाँच लड़के टोले में आए।

आते ही लगे गाली देने-कौन साला रात में मेरी शकरकंदी खोद लाया रे? बिस्वा भर आलू। बोझ भर गन्ना। पाँच बिस्वा मटर। बाप की जागीर समझ लिया है हरामजादो। निकलो बाहर। गाँड़ में डंडा डाल देंगे।

उन लोगों ने एक-एक झोंपड़ी में झाँका। न मटर का एक छिलका, न गन्ने की एक खोइया। - कहाँ घुसेड़ लिया ससुरों ने।

77

जुगनी को बाल्टी भरकर आते देखा तो वे फिर फूहड-फूहड़ गालियाँ देने लगे।

जुगनी गुर्राई- "रास्ते में खड़े होकर किसे गरियाते हो? जिसको चुराते पकड़ा हो उसके सामने जाकर गरियाओ।"

"चोप्प। चली जाओ छिनरौ नहीं तो यह डंडा देख रही हो कितना मोटा है। नीचे से डालेंगे तो मुँह से निकलेगा।" पप्पू दहाड़ा। बाकी लड़के हँसने लगे।

"मोटा-पतला ले जाकर अपनी बहिन को दिखा। उसके पास डालने की जगह नहीं है क्या? सारा गाँव डाल-डाल कर थक गया। तेरी ही कसर रह गई है।"

जुगनी ने बाल्टी नीचे रख दी और दोनों हाथ कमर पर रखकर मुकाबले के लिए तैयार हो गई।

बहन का प्रसंग आने से पप्पू निष्प्रभ हो गया। नजर बचाकर आगे निकल गया। उसके पीछे सारे लड़के।

बूढ़ा परमेसरी बाहर निकल आया।

"कौन गरियाता है जी?"

"तेरे बाप हैं चोरकट साले। अँगरेजी है?" कहने के साथ सोलह-सत्रह साल के पप्पू ने लपककर पचहत्तर साल के परमेसरी की पीठ पर दनादन दो-तीन डंडे घपघपा दिए।

बूढ़ा बाँ-बाँ चिल्लाने लगा। झोंपड़ियों से पाँच-छह औरतें निकलीं और गारी- सराप देते हुए लड़कों की ओर बढ़ीं तो वे वापस भाग चले। जाते-जाते धमकाते गए-फिर जरा घुसकर देखना। पकड़ पाए तो ऐसा मारेंगे कि 'बिया' मारोगी।

बूढ़ा परमेसरी हाय-हाय करता उन्हें जाते देखता रहा।

चनरी की माँ ने अपने जलाने के लिए बूँदा-बाँदी के पहले कुछ उपले झोंपड़ी के कोने में रख लिये थे। तीन औरतें उपलों से भरी खाँची लेकर बाजार में बेचने निकलीं। बाकी चार उनके साथ। बनियों के घर कुछ न कुछ काम मिल ही जाएगा।

शाम होने के साथ बूँदा बाँदी फिर शुरू हुई।

एक भुनी शकरकंदी और कौर-भर साग की खिचड़ी खाकर परमेसरी दासू की टूटी झोंपड़ी में एक कथरी बिछाये और दूसरी को ओढ़े चारपाई पर अँधेरे में लेटे हैं। पतोहू सूअर का तेल गरम करके पीठ की चोट पर मालिश कर गई है। एक घूँट दारू और एक रोटी मिल गई होती तो ठंड से लड़ना आसान होता। वे कुछ देर तक हू-हू करके कराहते रहते हैं फिर सूअर के तेल की गर्मी से उनकी पलकें झपक जाती हैं।

क्या देखते हैं कि एक ताजी सिंकी, भाप से फूली हुई गर्म रोटी कटी पतंग की

अगम बहै दरियाव

तरह लहराती आसमान से उनकी ओर चली आ रही है। उसकी महक उनके नथुनों में समाने लगी है। वे एक झपट्टे में उसे पकड़ते हैं लेकिन भाप से हाथ जल जाता है और रोटी छूटकर पहिए की तरह दरवाजे की ओर लुढ़कने लगती है।

"ठहर बदमाश।" वे उसे पकड़ने के लिए लपकते हैं और लद्द से जमीन पर गिर पड़ते हैं।

थोड़ी देर तक अँधेरे में कुछ समझ नहीं पाते। फिर उठकर चारपाई पर आते हैं। जरा-सी चूक हो गई नहीं तो ताजा सिंकी रोटी का स्वाद मिल जाता। सपने में ही सही। लेटे-लेटे कोशिश करते हैं कि जितनी जल्दी हो सके फिर नींद आ जाए। फिर रोटी दिखे। लेकिन नहीं आती। निराश होकर उठ बैठते हैं।

कथरी ओढ़े आँखें बन्द किए दुखी मन कुछ देर बिसूरते हैं फिर गुनगुनाने लगते हैं-

दुखवा कै गठरी उठावा परमेसरी लाई चला धोबिया दुआर धोबिया सयांवा तू अस कुछ धौत्या की जगी जाती हमारो लीला

ऐ परमेसरी! अपने दुखों की गठरी उठाकर धोबी के दुआर पर ले चलो। ऐ सयाने धोबी भइया, तुम हमारे दुखों को कुछ इस तरह धो डालो कि हमारी तकदीर भी जग जाय।

जब जीप पक्की सड़क से भट्ठे की कच्ची लीक पर मुड़ी तो गजाधर तखत पर बैठे कल की पथेरी का हिसाब मिला रहे थे। एक नौजवान पथेरे ने चिल्लाकर आगाह किया- "गजाधर काका! कौनो साहेब आवत हैं।"

गजाधर जब तक सावधान हों, जीप भट्ठे पर पहुँच गई। वे कागज-पत्तर हाथ में लिये उठ खड़े हुए- भागें कि न भागें?

पहले बिक्रीकर विभाग की जीप ही भट्ठे पर आती थी। जाँच करने, कि भट्ठा कितने चक्कर चला? कितनी बिक्री हुई? बिक्री के अनुसार टैक्स जमा किया कि नहीं? वे हमेशा असली यानी एक नम्बर के बही-खातों की तलाश में रहते थे। तब

भट्ठे पर काम करने वाले हर आदमी को हिदायत रहती थी कि जीप देखते ही फौरन चिल्लाकर बताओ। मुंशी को हिदायत थी कि नगदी का झोला चाहे पकड़ जाय लेकिन खरीद-बिक्री और स्टॉक का असली हिसाब-किताब किसी भी दशा में उन लोगों के हाथ में नहीं पड़ना चाहिए। वरना इतना टैक्स लद जाएगा कि भट्ठा बैठ जाएगा।

तब जीप देखते ही मुंशी बही-बस्ता लेकर सरपट भागता था। अगर पीछा किया गया तो भले सब कुछ लेकर नदी-नाले में कूद जाओ। बह जाने दो, गल जाने दो लेकिन...। पकड़ में आ जाने पर कितने ही मुंशियों को भट्ठा मालिकों द्वारा पेड़ से बाँधकर मारने के किस्से इलाके में मशहूर हैं।

लेकिन तब केवल मुंशी को भागना पड़ता था और भागने के पहले कुछ सोचने की जरूरत नहीं पड़ती थी। फिर ईंट की सरकारी खरीद के लिए पी.डब्लू. डी. और सिंचाई विभाग के अधिकारियों और ठेकेदारों की गाड़ियाँ भी आने लगीं। तब पहचानकर तय करना पड़ता था कि आने वाले का स्वागत करना है या भागना है। फिर आफतकाल माने इमरजेंसी का जमाना आया। तब नसबन्दी की पकड़ के लिए ए.डी.ओ., बी.डी.ओ., तहसीलदार और डिप्टी साहबों की छापामारी शुरू हुई। भट्ठे के लेबर पथेरे आसान शिकार होते थे। तब न दिन देखना था, न रात। न बूढ़ा न जवान। सभी भागने लगे। जीप भट्ठे की ओर मुड़ी नहीं कि भागो।

फिर वे बातें, किस्सा-कहानी बन गईं। राज बदल गया। हाकिम बदल गए। अब यह जीप...।

जीप के पीछे से उतरने वाले चपरासी ने हाथ के इशारे से गजाधर को बुलाया। गजाधर ने हाथ के कागजों को पास खड़े एक नौजवान झोंकवा को पकड़ाया और कुछ खुसर-पुसर की। झोंकवा लपककर पास की झोंपड़ी में घुसा और एक मोटा लाल बस्ता लेकर पीछे पथेरों की खंती में उतरकर गायब हो गया।

जीप के पास आते हुए गजाधर को लगा कि वे इस चपरासी को कुछ-कुछ पहचान रहे हैं। तब तक जीप के आगे लगे बोर्ड पर नजर गई- तहसीलदार।

तब किस बात का डर! इमरजेंसी के दौरान खुद नायब और तहसीलदार मालिक के पास नसबन्दी का केस माँगने आते थे। ड्राइवर के बगल में बैठा अकेला आदमी कपड़े-लत्ते और चेहरे की चिकनाई से हाकिम जैसा लग रहा था। गजाधर ने उसे नमस्ते किया।

उसने बिना नमस्ते का जवाब दिए पूछा- "भट्ठा मालिक कहाँ हैं?"

"हुजूर, कोयला लाने गए हैं।"

"तुम कौन हो?"

"हुजूर, मुंशी हूँ।"

जीप के अन्दर से किसी ने हाकिम से कुछ कहा। तब हाकिम ने गजाधर से उसका नाम वल्दियत सकूनत पूछा। फिर कहा-" असली भट्ठा मालिक तो तुम्हीं हो।"

"काहे मजाक करते हैं हुजूर।" गजाधर ने फिर हाथ जोड़े।

"जब छत्रधारी नहीं हैं तब तो तुम्हीं मालिक हुए।" जीप के अन्दर बैठे आदमी ने बात सँभाली। गजाधर ने जीप के अन्दर बैठे व्यक्ति को झाँककर देखा। वह इलाके का अमीन था। कभी-कभी बाजार में वसूली के लिए बैठता था। मालिक एक-दो बार उसके पास चावल, दाल, मुर्गा वगैरह भेजवा चुके हैं।

उसी ने फिर कहा- "बाजार में डिप्टी साहब आए हैं। छत्रधारी को बुलाया है। वे नहीं हैं तो तुम्हीं चलकर सुन लो।"

"हुजूर, भट्ठे पर और कोई है नहीं।"

"सुनकर तुरन्त लौट आओ। दिन-भर थोड़े लगेगा।"

दुविधा में पड़े गजाधर के कन्धे पर हाथ रखकर चपरासी उन्हें जीप के पीछे ले गया। गजाधर सीट पर बीच में बैठ गए। उनके दोनों ओर दो लोग बैठे। जीप चल पड़ी।

पूरा बाजार पार हो गया पर जीप नहीं रुकी तो गजाधर घबराए- "हुजूर कहाँ ले चल रहे हैं। बाजार तो पीछे छूट गई।"

कोई कुछ नहीं बोला। गजाधर को लगा कि उनके साथ धोखा हुआ है। घबराए। मन में आया कि चलती गाड़ी से कूद पड़ें। लेकिन उनके हिलते ही उनके बगल बैठे दोनों लोगों ने उनके कन्धे दबा दिए।

क्यों पकड़े जा रहे हैं उसे? कहीं फिर तो जबरिया नसबन्दी नहीं शुरू हो गई? इमरजेंसी के दौरान छत्रधारी के इशारे पर खुद उसने कई लोगों को इसी तरह धोखे से हाकिमों की जीप पर बैठाया था। तब तहसील और ब्लॉक के कर्मचारी छत्रधारी की चिरौरी करते थे- "बाबू साहेब, कहीं से एक ठो केस दिलाइए। तनखाह रुक गई है।"

गजाधर ने बताया- "हुजूर, मेरी कई साल पहले कट चुकी है, चाहें तो निशान देख लें।"

कहने के साथ गजाधर धोती खोलने को उद्यत हुए। हँसते हुए अमीन बोला- "चलो वहीं डिप्टी साहेब को दिखाना।"

भट्ठे का पथेरा गजाधर बहू को बता गया कि गजाधर भइया को नसबन्दी वाले पकड़कर ले गए। गजाधर बहू घबरा गईं। मालिक बाहर गए हैं और टोले का कोई आदमी साथ नहीं देगा। उलटे सब हँस रहे होंगे कि अच्छा हुआ पकड़े गए।

81

सबका मानना है कि उस दौर में टोले के जितने लोगों की जबरिया नसबन्दी हुई थी, उनको पकड़वाने में गजाधर ने ही मुखबिरी की थी। बिरादरी वालों ने तो गजाधर का नाम ही रख दिया था भिभीखन। पियारे तो मुँह पर ही कहता- 'भिभीखन भइया, दो-चार कंबल तुम्हारे हाथ भी लगे कि सब छत्रधारी सिंह ही दबाकर बैठ गए। हो तो एकाध हमें भी दें। जाड़े में काम आएगा।'

बिना असली 'नस' काटे, पहुँच के बल पर फर्जी चीरा लगवाकर मालिक ने अस्पताल के रजिस्टर में नाम चढ़वा दिया था। रात को सोते समय इसकी चर्चा करके जंगू के बाबू कितना हँसते थे। उसके पेट में गुदगुदी लगा-लगा कर हँसाते थे- "देख लिया मेरी चालाकी।" अब सारी चालाकी पकड़ में आ जाएगी।

बहुत देर तक बिसूरने के बाद गजाधर बहू विद्रोही जी के घर जाती हैं। दूसरा है कौन जो आफत-विपत में किसी के साथ खड़ा हो।

विद्रोही जी उन्हें समझाते हैं कि जिस बात के लिए डर रही हो वैसी कोई बात अब नहीं है-"छत्रधारी को खोजते हुए हाकिम आया होगा। वे नहीं मिले तो गजाधर को ले गया। भट्ठे का टैक्स वगैरह बाकी होगा। छत्रधारी आकर छुड़ा लेंगे। जेल नहीं, तहसील की हवालात में ले गए होंगे। पता कर लेना, छत्रधारी नहीं लौटे रहेंगे तो मैं सबेरे तुम्हें ले चलकर गजाधर से भेंट करवा लाऊँगा।"

जीप सीधे हवालात के सामने रुकी। अमीन और चपरासी ने गजाधर के कन्धे दोनों तरफ से थामे। दूसरे चपरासी ने लोहे की सलाखों वाले फाटक का ताला खोला और गजाधर को अन्दर ठेलकर बन्द कर दिया। मक्खियों के रेले ने भनभनाकर उड़ते हुए गजाधर का स्वागत किया। गजाधर ने मुड़कर पुकारना चाहा-'हुजूर, बात तो सुनी जाय।' लेकिन आवाज उनके मुँह में ही रह गई। जीप आगे बढ़ रही थी।

बहुत नाम सुनते थे 'जेल-हवालात' का। आज वहीं पहुँच गए। गजाधर को लगा, वे रो पड़ेंगे। लगा, पेट से निकलकर ढेर सारा पित्त मुँह में आ जाएगा। चक्कर सा आ रहा है। कै होगी क्या? दोनों हाथों से सलाखों को पकड़कर उन्होंने माथे को सलाखों से टिका दिया। कुछ देर उसी तरह खड़े रहे फिर कमजोरी महसूस हुई तो बैठ गए। पूरे शरीर पर मक्खियाँ छोप उठी थीं लेकिन उन्हें इसका एहसास नहीं हो रहा था।

अगम बहै दरियाव

बड़ी देर बाद उन्होंने सिर उठाकर कोठरी पर एक नजर डाली। फर्श पर धूल ही धूल। एक तरफ पुआल बिछा था। कोठरी के बीचोबीच फर्श पर शायद गन्ने का रस गिरा होगा जिस पर मक्खियाँ भिनभिना रही थीं। पास में ही उबले हुए आलू के छिलकों की छोटी-सी ढेरी थी। दीवार और छत पर लटकते लम्बे काले जाले। ऊपर झरोखे का शीशा टूटा हुआ था। झरोखे में कबूतरों के जोड़े ने अपना घोंसला बनाया था। झरोखे के नीचे फर्श पर तिनके, पंख और कबूतरों की बीट गिरी हुई थी। बीट और पेशाब की मिली-जुली बदबू से साँस लेना मुश्किल हो रहा था। कमरे के दाहिने कोने पर दीवार और फर्श की सन्धि पर एक छेद था। इस कोने का उपयोग पेशाब करने के लिए किया जा रहा था। बदबू इसी कोने से उठ रही थी। गजाधर ने थोड़ा-सा पुआल झाड़कर गेट के सामने बिछाया और बदबू से बचने के लिए गेट की ओर मुँह करके बैठ गए। कबूतरों का जोड़ा अभी तक उन्हें चुपचाप देख रहा था। अब वह भी गुटरगू करने लगा।

सामने नीम के तने से पूँछ उछालती चट चट करती गिलहरी नीचे उतरकर जमीन से कुछ ढूँढ़कर खाती और ऊपर की डाल पर बैठा एक कौआ उस पर झपट्टा मारने के अन्दाज में उतरता तो चटचटाती हुई नीम के पेड़ पर चढ़ जाती। गजाधर बार-बार दुहराई जा रही यह क्रिया देखते रहे। फिर उनकी नजर कोठरी की सामने वाली दीवार पर गई। ईंट के टुकड़े या गेरू से कुछ लिखा हुआ था। पढ़ने के लिए वे उठकर पास गए। नरकबास में तीन दिन। फिर तीन को काटकर उसके आगे चार और चार को भी काटकर पाँच लिखा था। यानी उनकी तरह कोई और यहाँ पाँच दिन बन्द था।

उन्हें अपना सिर भारी होता लगा। जान गए कि यह बीड़ी की 'तलब' है। याद आने के साथ बेचैनी बढ़ने लगी। सामने सड़क पर इक्का-दुक्का पैदल जाने वाले दिखाई पड़ जाते थे। बीड़ी माँगने के लिए उन्होंने एक-दो बार आवाज लगाई-ए भइया। हे भाय ! पर आवाज देना निष्फल रहा। भूख और प्यास दोनों लग आई थीं। सबेरे एक लिट्टी खाकर एक लोटा पानी पी लिये थे। तब से मुँह में न एक दाना अन्न गया था न एक बूंद पानी। भूख-प्यास और बीड़ी की तलब भूलने के लिए वे दोनों पैर सिकोड़कर पुआल पर लेट गए और अँगोछा ओढ़ लिया। थोड़ी देर में आँख लग गई।

जगे तो अँधेरा हो गया था। मच्छरों की भनभनाहट बढ़ गई थी। वे कान में गा-गाकर काट रहे थे। बड़ी देर बाद एक हाथ में टॉर्च और दूसरे हाथ में एल्यूमीनियम का लोटा लेकर चपरासी आया। एक जेब से लाई-चने का लिफाफा और दूसरे से काँच का एक गिलास निकालकर गजाधर को पकड़ाते हुए बोला-

"तुम्हारे घर से कोई खोज-खबर लेने नहीं आया? अपने खाने-पीने का खर्चा भी सरकार के जिम्मे डालोगे? लोटा तो तुम्हें छुवा नहीं सकते। गिलास पकड़ो तो मैं ऊपर से पानी डाल दूँ, पी लो।"

वह जाने को मुड़ा तो गजाधर ने पूछा- "भइया हमें किस वजह से पकड़कर लाए हो? कब तक यहाँ बन्द रखोगे?"

"भट्ठे का बकाया नहीं जमा और किसलिए?"

"भट्ठा तो छत्रधारी का है। हम तो नौकर हैं।"

"कौन मालिक है, कौन नौकर है यह तो तुम्हीं दोनों लोग जानो।" चपरासी ने गोलमोल बात की। - "बाकी, छूटोगे तभी जब बकाया टैक्स जमा हो जाएगा।"

चपरासी जाने लगा तो गजाधर ने कहा- "भइया बीड़ी की तलब लगी है।"

"बीड़ी पीकर कहोगे झाड़े फिरना है।"

"फिरना तो है भइया। दोनों जून जाने की आदत है।"

"दोनों जून जाने का नियम नहीं है। सबेरे एक जून दिशा-मैदान के लिए निकाला जाएगा जब दो लोग मौके पर रहेंगे। अभी रात-भर दबाकर बैठे रहो।" कहने के साथ वह आगे बढ़ गया।

सबेरे पहर दिन चढ़े गजाधर ने सफेद कुर्ता-धोती पहने लहीम-सहीम छह फुटे विद्रोही जी को आते हुए दूर से देख लिया था। पीछे-पीछे जंगबहादुर की अम्मा थीं। उस समय तक गजाधर दिशा-मैदान से निबट चुके थे।

"इज्जत चली गई भइया।" गजाधर ने सलाखों के पीछे से विद्रोही जी की ओर देखते हुए कहा। कहने के साथ ही उनकी आँखें डबडबा गईं।

"कौनो मेहरारू हो का जो इज्जत चली जाएगी।"

गजाधर को सलाखों के पीछे बन्द देखकर गजाधर बहू रोने लगीं। उनकी कल्पना में था कि गजाधर को खूब मार पड़ी होगी। हाय-हाय करते पड़े होंगे। रोने के साथ वे गजाधर के शरीर के घावों को देख लेना चाहती थीं। घावों पर लेप करने के लिए वे एक शीशी में सरसों के तेल में हल्दी पकाकर लाई थीं। बोधा भाई शायद चपरासी को बोलते हुए आए थे। वह एक बाल्टी, मग और झाड़ू लेकर आ गया। हवालात का ताला खोलते हुए कहा- "सामने हैंडपम्प पर नहा सकते हो। बस भागने की मत सोचना।" गजाधर बाहर निकले तो विद्रोही जी ने गजाधर बहू से कहा कि पुआल एक कोने में करके कोठरी में झाड़ू लगा दें। गजाधर बहू कोठरी की सफाई में जुट गईं। झाड़ू लगाने और जाले साफ करने के बाद बाल्टी से पानी ढो-ढोकर पूरी कोठरी धो-पोंछकर साफ कर दी।"

नहा-धोकर कपड़े बदलकर गजाधर कोठरी के फर्श पर बैठकर घर से लाई

अगम बहै दरियाव

गई रोटी और कॉहड़े की सब्जी खाने लगे तो गजाधर बहू की आँखें तृप्त हुईं।

चपरासी भी खुश था। ऐसी पकड़ आती रहे जिसकी जनाना आकर हवालात की साफ-सफाई कर दे तो इससे अच्छा क्या है।

गजाधर ने देख लिया- छत्रधारी से कम रोबदाब नहीं है यहाँ विद्रोही भैया का। जो चपरासी शाम को दिशा-मैदान ले जाने के लिए तैयार नहीं था उसी ने विद्रोही जी के कहने से हैंडपम्प पर नहाने की छूट दे दी।

"चपरासी कह रहा था कि बकाया जमा होगा तब छोड़ेंगे। हमसे बकाया का क्या मतलब?"

"ऐसा नहीं है गजाधर। मैंने अमीन से आर.सी. लेकर पढ़ा है। उसमें 'राना ईंट भट्ठा' फर्म के मालिक का नाम गजाधर पुत्र परसादी दर्ज है। इसका मतलब छत्रधारी ने कागजों में भट्ठे का मालिकाना तुम्हारे नाम दर्ज कराया है। चार साल का बकाया छप्पन हजार रुपये।"

"ऐसा क्यों?"

"टैक्स नहीं जमा करना चाहते होंगे। बकाया निकलने पर मालिक के तौर पर तुम पकड़े जाओ वे बचे रहें, इसलिए। तुमको और सरकार, दोनों को धोखा देना चाहते होंगे।"

गजाधर की समझ में कुछ नहीं आया।

विद्रोही जी ने फिर समझाया- "छत्रधारी आवैं। बकाया जमा करें और तुम्हें छुड़ावैं। फिर किसी दिन सेलटैक्स के दफ्तर में जाकर सही बात का पता लगाओ। सिर्फ छत्रधारी की बात पर यकीन करके मत बैठ जाना। मामला गम्भीर है। बकाया नहीं जमा होगा तो तुम्हारे ही घर की कुर्की होगी।"

विद्रोही जी के जाने के घंटे भर बाद ही छत्रधारी सिंह आ गए। वे गजाधर के लिए नई धोती और गंजी लाए थे। उन्होंने हवालात के अन्दर एक चटाई के साथ नया घड़ा और गिलास रखवाया। सामने के ढाबा मालिक के पास छह वक्त के खाने का एडवांस जमा करके कह दिया कि सबेरे का चाय-नाश्ता और सुबह-शाम का खाना समय पर पहुँचाता रहे। नाई बुलाकर दाढ़ी-मूँछ बनवा दी और चपरासी से कह दिया कि सुबह-शाम दोनों टाइम समय से दिशा-मैदान कराता रहे। छह बंडल बीड़ी, सौ ग्राम खैनी, दो माचिस और एक चुनौटी गजाधर के हाथ पर रखकर कहा कि कहीं कुछ लिखा-पढ़ी की गड़बड़ी हुई होगी। एक-दो दिन में कागज-पत्तर दुरुस्त करवाकर बाहर ले चलेंगे।

गजाधर बहू से बोले-"तुम यहाँ क्यों दौड़ी आई? बुधइया के पास रोने-जाने की क्या जरूरत थी? हम लौटकर न आते क्या? घर चलो। शाम को बखरी पर

आकर महीने भर का राशन ले जाना। ये दो-तीन दिन में आएँगे। इसमें रोने-गाने की क्या बात?"

गजाधर का आठ साल का बेटा जंगू अपनी माँ के साथ मालिक के घर से गेहूँ-चावल की गठरी सिर पर लादकर लौटते हुए खुश है कि आज गेहूँ की रोटी खाने को मिलेगी। इससे भी ज्यादा इस बात से खुश है कि उसकी हमजोली शकुन्तला ने उसे बुलाकर तीन 'कम्पट' दिए। नारंगी रंग की खटमिट्ठी गोलियाँ। गजब का स्वाद है।

उसके बप्पा सरकार के घर में बन्द हैं। कहलाया है- बीस तक पहाड़ा पूरा याद कर लेना। लौटकर सुनूँगा।

वह मन-ही-मन पहाड़ा दोहराने लगा। कब तक पूरा याद होगा? कब लौटेंगे बप्पा? कल ही न लौट आवै !

विद्रोही जी बैलों को लेकर खेत की ओर निकलने ही वाले थे कि सन्देशवाहक ने बहन का सन्देश दिया- "तुरन्त आओ। छोटू को पुलिस पकड़ ले गई है। तुम्हारे जीजा दो दिन पहले बैल खरीदने निकले हैं।"

विद्रोही जी जाने की तैयारी करने लगे तो विद्रोही बहू को अच्छा नहीं लगा। पूरे गाँव की धान की बेरन पड़ गई। आज उनकी पड़ने वाली थी तो यह अड़ंगा !

विद्रोही जी ने उन्हें समझाया- "बहन की पुकार पर भाई दौड़कर नहीं जाएगा तो कौन जाएगा? नाते-रिश्तेदार और होते किस दिन के लिए हैं?"

क्या पता चालान हो जाए तो जमानत लेने की जरूरत पड़ सकती है, यह सोचकर खतौनी की नकल जेब में डाली। पत्नी से कहा कि सौ-पचास रुपये हों तो दे दो।

थाने पर पता चला कि बहन के गाँव के पाँच लड़कों को यूरिया खाद लूटने के आरोप में पकड़ा गया है। हीरा सेठ ने खाद लूटने की रिपोर्ट लिखाई है। जो खाद कल रात लड़के बाजार से खरीदकर लाए थे उसे भी पुलिस उठा लाई है।

लड़कों की लगातार माँग पर थोड़ी देर पहले उन्हें हथकड़ी पहनाकर बारी-बारी थाने के पीछे बोये गए मक्के के खेत में शौच करा दिया गया था। अब वे बाजार से लाया गया लाई-चना हवालात के फर्श पर बैठकर चबा रहे थे।

थाना इंचार्ज बारह बजे अपनी कुर्सी पर बैठा तो सब उसकी हुजूरी में पेश हुए।

अगम बहै दरियाव

इंचार्ज हड़काने लगा- "कैसे गार्जियन हैं आप लोग कि पढ़ाने-लिखाने की उम्र में बच्चों को लूटमार करना सिखा रहे हैं।"

"नहीं साहब, कुछ गलतफहमी हुई है। ए बच्चे बी.ए., एम.ए. कर रहे हैं। लूटमार क्यों करेंगे?"

"लूट का माल बरामद होने के बाद भी ऐसी बात? फिर ए यूरिया की बोरियाँ जो तुम लोगों के घर से बरामद हुई हैं, कैसे तुम लोगों के घर पहुँचीं?"

"बरामद होना सही है लेकिन लूटा जाना सही नहीं है।"

"आधी रात को पाँचों लड़के गिरोह बनाकर सेठ की गोदाम पर पहुँचे, यह सच है कि झूठ?"

"सच है, लेकिन..."

"जितना पूछा जाए उतना बताइए। गोदाम के बाहर खड़ी मेटाडोर के ड्राइवर से गाड़ी की चाभी छीनी, यह सच है कि झूठ? "

"छीनी साहब, लेकिन इसकी वजह..."

"वजह तो साफ है। चौकीदार को धमकाकर गोदाम खोलवाया कि नहीं? बीस बोरी यूरिया पल्लेदारों को धमकाकर मेटाडोर पर लादकर भागे कि नहीं? अभी तो दस बोरी ही बरामद हुआ है। बाकी दस किसको बेचा यह अभी पुलिसिया हाथ पड़ते ही बकुर देंगे।"

पुलिसिया हाथ की धमकी सुनकर जनार्दन मास्टर उबल पड़ते हैं। वे उत्तेजना से हकलाते हुए कहते हैं- "झूठ का पहाड़ मत खड़ा करिए दारोगा जी। यह यूरिया नगद खरीदी गई है। लुटेरा और ब्लैकिया तुम्हारा वह हीरा सेठ है। सारी दुनिया को पता है।"

"मुझे नहीं पता कि कौन ब्लैकिया है, कौन शरीफ।"

"हिस्सा मिलता है तो क्यों पता होगा। एक दूध के धुले तुम, एक दूध का धुला हिरवा। और हिरवा जिसको कह दे वही लुटेरा।"

"अरे, इतनी गर्मी चढ़ गई तेरी खोपड़ी में बुड्ढे," वह कुर्सी से उठकर खड़ा हो जाता है। थाने के क्वार्टरों से सात-आठ सिपाही बाहर निकल आए हैं। कोई लुंगी-बनियान में, कोई सिर्फ जाँघिये में, कोई शर्ट की बटन बन्द करते हुए। बात बिगड़ती देख बोड़ी पंडित बात का सूत्र अपने हाथ में ले लेते हैं- "मैं बताता हूँ दारोगा जी, क्या है असली बात।" वे थाना इंचार्ज के थोड़ा पास पहुँच जाते हैं-" इस समय खुले बाजार में खाद की कितनी किल्लत चल रही है यह किसी से छिपा नहीं है। दस दिन में धान की लगवाही शुरू होने वाली है। हीरा सेठ ही बाजार में अकेला खाद का लाइसेंसी है। वह सौ बोरी बाँटता है तो चार सौ ब्लैक करता है। कल खाद

बँटने की सूचना पर हमारे लड़के भी सबेरे सात बजे से उसकी गोदाम पर लाइन में लगे। पाँच बजे तक डेढ़-पौने दो सौ बोरियाँ ही बँट पाईं और बोला- अब कल बँटेगी।' पचास बोरी और बँट जाती तो हमारा भी नम्बर आ जाता। जो दो सिपाही खाद बँटवाने की ड्यूटी पर लगे थे वे दोपहर से ही गायब हो गए थे।"

थाना इंचार्ज को ध्यान से सुनते देखकर नरपत लम्बरदार बात का सिरा अपने हाथ में ले लेते हैं-" बाँटना बन्द होते ही सबकी समझ में आ गया कि अब हीरा सेठ का कल कभी नहीं आने वाला। बाकी बची बोरियाँ कहीं और ले जाकर ब्लैक में बेची जाएँगी। इसलिए हमारे लड़कों ने तय किया कि खाना-

पीना करके रात दस बजे से गोदाम पर पहरा दिया जाए ताकि बोरियाँ गायब न की जा सकें और सबेरे पाँच बजे से ही लाइन लगा ली जाए। ये लोग सामने की झाड़ियों में छिपकर बैठ गए।"

"और वही हुआ।" पूर्व ग्रामप्रधान जैकरन यादव बोल पड़ते हैं- "ठीक बारह बजे गोदाम का शटर खुला। मेटाडोर पहले ही गोदाम के सामने लाकर खड़ी की गई थी। गली के खम्भे पर लाइट जल रही थी। पल्लेदारों ने मेटाडोर में बोरियाँ लादनी शुरू कीं तो लड़के पहुँच गए। शोर मचाने लगे-'हीरा चोर बाहर आओ।' चौकीदार शटर गिराने लगा तो लड़कों ने उससे चाभी छीन ली। ड्राइवर मेटाडोर स्टार्ट करने लगा तो उससे मेटाडोर की चाभी छीन ली।"

"यही तो गलत किया। जब ब्लैक की आशंका थी तो पुलिस को विश्वास में लेते। वहीं बाजार में दो सिपाही गस्त करते हैं रात-भर। मौके पर पुलिस भी साथ रहती। थाने पर भी खबर हो जाती।"

"क्या बात करते हैं साहब। पुलिस को तो तब विश्वास में लेते जब पुलिस का विश्वास होता। आप क्या समझते हैं कि अगर आपके सिपाहियों को हमारी इस्कीम का पता चल जाता तो वे पहले हीरा सेठ को सावधान करते कि आपको सूचना देने आते?"

"तो मेटाडोर की चाभी छीनी और स्टार्ट करके भागे?"

"अरे, इनमें से तो किसी को मेटाडोर चलाना भी नहीं आता। भागते कैसे और क्यों? हुआ यह कि हल्ला-गुल्ला बढ़ गया तो आसपास के लोग आ गए। सेठ खुद आ गया। उसने लोगों को समझा दिया कि अहिबरनपुर के लफंगे हैं। बवाल करके फिरी में खाद लेना चाहते हैं। सब व्यापारी ही तो बसते हैं बाजार में। चोर-चोर मौसेरे भाई। सेठ का इशारा समझकर वे लड़कों को ही बुरा-भला कहते हुए लौट गए। लड़कों ने तो कालाबाजारी रोकने का काम किया जो पुलिस को करना चाहिए और आपने उलटे उन्हीं लड़कों को पकड़कर हवालात में डाल दिया।"

"तो आप लोगों के घर से बोरियाँ कैसे बरामद हुईं?"

"मैं बताता हूँ साहब। लड़के जोर देने लगे कि जितनी बोरियाँ बची हैं, इसी समय बाँटना शुरू करो। सेठ बोला- 'तुम लोगों को जितनी जरूरत हो ले जाओ। एक के बजाय दो बोरी ले जाओ। बाकी सबको

सबेरे बाँट देंगे।' लड़के मान गए। उनके पास एक-एक बोरी खरीदने भर के पैसे थे। एक लड़का गाँव आकर सबके घर से दूसरी बोरी का दाम ले गया। नगद दाम देकर खरीदे हैं साहब और अपनी-अपनी साइकिलों पर लादकर लाए हैं।"

"दाम देकर खरीदा है तो खरीद का कैश मेमो दिखाइए। हीरा सेठ ने तो दो बजे रात में यही तहरीर दी कि अहिबरनपुर के फलाँ फलाँ लड़के गैंग बनाकर आए। मेटाडोर के ड्राइवर और गोदाम के चौकीदार के हाथ-पैर बाँधे, गोदाम और मेटाडोर की चाभियाँ छीनीं और खाद लूटकर ले गए।"

"लड़कों ने बताया कि सेठ ने नाम वल्दियत और पता पूछकर अपनी डायरी में नोट किया था। कहा था कि सबेरे मुनीम आएगा तो पर्ची काटकर स्टॉक रजिस्टर में दर्ज करेगा। रात में न सेठ ने पर्ची काटी न उन लोगों ने पर्ची के लिए जोर डाला। दाम नकद दे ही चुके थे। पर्ची का क्या अचार डालना था!"

"यही तो पेच फँस रहा है। खरीदा है तो खरीदने का सबूत चाहिए। सेठ ने लूट का केस दर्ज कराया है। मौके पर माल बरामद हुआ है। सीधे-सीधे दफा 392/411 का केस बन गया है। खाद इसेंसियल कमोडिटी है।"

थानेदार कुर्सी से उठते हुए बोला- "इन लड़कों की क्राइम हिस्ट्री पुरानी है। सेठ ने लिखकर दिया है कि इन्हीं लड़कों ने पिछले साल भी उसकी दुकान पर बवाल किया था। सही है कि गलत?"

"अरे साहब, उसे बवाल कहेंगे? हाँ, शिकायत करने जरूर गए थे। हमारे लड़के ही नहीं, आसपास के गाँव के पचासों लोग। सेठ ने नकली डाई बेंची थी। बोरी में डाई के साथ उड़द के आकार के पत्थर के गोल दाने मिलाए गए थे। सबसे महँगी खाद होती है डाई। उसके बदले नगद खरीदकर हमने अपने खेत में पत्थर बोये थे। उपजाऊ करने की कौन कहे हमने अपने खेतों को पथरीला बना लिया उसकी मिलावटी खाद डालकर। उस समय सेठ के खिलाफ थाने पर भी शिकायत की गई थी। कृषि विभाग में भी लिखकर दिया गया। उस नकली खाद का नमूना लिया गया था। एक दिन अखबार में पढ़ा कि अभी लेबोरेटरी से उस नमूने की जाँच रिपोर्ट ही नहीं आई। मौके पर जो दो-चार गालियाँ और दो-चार थप्पड़ हीरा को पब्लिक से मिले वही उसकी सजा हुई।"

"एक बात बताइए, क्या हीरा सेठ ने अपने घर में खाद बनाने का कारखाना लगा रखा है? वह वही माल तो बेचेगा जो उसे फैक्टरी से मिलेगा। रात में वह

इसी बात का तो रोना रो रहा था कि गलत माल फैक्टरी वाले भेजते हैं और परेशान खुदरा व्यापारी होता है। सैम्पल खुदरा दुकान से भरा जाता है। एफ. आई. आर. खुदरा दुकानदार के खिलाफ लिखी जाती है। चोर खुदरा व्यापारी को कहा जाता है। गलती बड़ी मछलियाँ करती हैं, फँसाया छोटी मछलियों को जाता है।"

"लेकिन हम बड़ी मछलियाँ पकड़ने कहाँ जाएँ दारोगा जी। जिससे खरीदा है उसी को तो पकड़ेंगे।"

"बड़ी मछलियों को तुम तो क्या, कोई भी नहीं पकड़ सकता।" दारोगा आप्त वचन बोलने लगा- "अंग्रेज ठंडे मुल्क के रहने वाले थे। उन्होंने ठंडे दिमाग से जो कानून इंडिया के लिए बनाया वह इंडिया जैसे गरम मुल्क में उलटी तासीर देता है। यहाँ बड़ी मछलियाँ ऐसे कानून का जाल एक झटके में फाड़ती हैं और वापस पानी में कूद जाती हैं। फँसती हैं छोटी मछलियाँ। वे जाल में उलझकर रह जाती हैं। इन छोटी मछलियों का दुख मुझसे देखा नहीं जाता। अफसोस की बात यह है कि हमारे हलके में सब की सब छोटी मछलियाँ हैं। बड़ी मछलियाँ तो यहाँ सूँघने को भी नहीं मिलतीं।" दारोगा के स्वर में निर्वेद आ गया। बोला- "जाइए, जमानत का इन्तजाम करिए। सबेरे चालान कर दूँगा।"

सबका मन छोटा हो गया। बनिये ने कागज से मार दिया। फुसलाकर हरामजादे ने नाम-पता नोट कर लिया था।

तभी द्वारका यादव के एक परिचित पत्रकार की मोटरसाइकिल थाने के परिसर में घुसी। द्वारिका लपककर उसके पास गए और सारा घटनाक्रम बताकर कहा- "किसी तरह यहीं से मामला सलटा दीजिए भइया। जेल न जाना पड़े। एक लड़के का तो कल रेलवे का इम्तहान है। बड़ी तैयारी किया है बेचारे ने।"

पत्रकार ने तनिक हिचकिचाते हुए इंचार्ज के क्वार्टर का दरवाजा खटखटाया और भीतर प्रवेश कर गया। गया तो अन्दर का ही होकर रह गया। घंटे भर बाद निकला तो सबको फाटक के पास लाकर समझाने लगा-" आप लोगों का मामला टेढ़ा फँस गया है। हीरा सेठ को आप लोगों ने बाजार का मामूली बनिया समझ लिया। वह शराब माफिया अनन्तराम सेठ का समधी है। दारोगा अगर कुछ ले-देकर छोड़ देगा तो कल तक खुद उसी की रवानगी पुलिस लाइन के लिए हो जाएगी। आप तो जानते ही हैं कि पूरी सरकार ही शराब और खनन माफिया के चलाए चल रही है। जाइए, लड़कों के लिए खाना-पानी भेजवाइए। कल कोर्ट से छुड़ाइएगा।"

सबका मुँह लटक गया। एक मुट्ठी लाई के अलावा सबेरे से किसी के मुँह में कुछ गया नहीं था।

तय हुआ कि वकील की फीस तथा जमानतदारों के नाम-पते और प्रॉपर्टी के

सबूत लेकर वकील के घर कल नौ बजे हाजिर होना है। अगर वह किसी दूसरे केस में उलझ गया तो जमानत के पेपर तैयार होने में शाम हो जाएगी।

लेकिन सारी जल्दबाजी बेकार गई। थाने से एफ.आई.आर. की कॉपी ही एक बजे दिन में मिली, जब मुल्जिमों का चालान कटा। खसरा खतौनी की नकलें लेते-लेते दो बज गए।

सब वकील के पीछे-पीछे घूम रहे थे। सबका जोर था कि जैसे भी हो आज जमानत करा लेनी है। बच्चों को जेल जाने की नौबत नहीं आनी चाहिए। हमेशा के लिए दाग लग जाएगा।

पाँच बजे के करीब केस के सुनवाई पर आने की उम्मीद बनी तो वकील ने पूछा- "हर हाल में आज ही जमानत चाहिए?"

"बिलकुल। हर हाल में।"

"किसी भी कीमत पर?"

"क्या मतलब? कीमत तो हम दे ही चुके। पाँच हजार, एडवांस में।"

"अरे वह तो मेरी फीस हुई, मुकदमा दाखिल करने की, बहस करने की। लेकिन अगर विपक्ष के वकील ने बहस में कह दिया कि हुजूर, ए पुराने क्रिमिनल लगते हैं। जमानत पर विचार करने के पहले थाने से इनकी क्रिमिनल हिस्ट्री मँगा ली जाए, तो मामले में तारीख पड़ सकती है।"

"ऐं!" यह नई मुसीबत। " तो फिर!"

"इसीलिए पूछ रहे हैं। आज ही श्योर शाट जमानत चाहिए तो सेंटिग करनी पड़ेगी। उसके लिए अलग से खर्च करना पड़ेगा।"

"किससे सेटिंग करनी पड़ेगी? विपक्षी वकील से, कि जज से?"

"उतनी दूर तक क्यों जा रहे हैं? आम खाने से मतलब कि पेड़ गिनने से?"

सब सोच में पड़ गए। जिसने सुना उसने कहा कि खड़े-खड़े जमानत हो जानी है, तुरन्त। सेटिंग का क्या मतलब? समझ में आ गया कि वकील और पैसा फूसने के लिए लासा फेंक रहा है। वे सेटिंग करना भी चाहें तो नहीं कर सकते। किसी की जेब में सौ-दो सौ से ज्यादा नहीं बचे होंगे।

तब तक पुकार हो गई।

सबने कहा- "आप जोर लगाकर बहस करिए वकील साहब। बाकी जैसी इन बच्चों की तकदीर।"

और वही हुआ। जज ने थाने से क्रिमिनल हिस्ट्री मँगवाने का आदेश करके पाँच दिन आगे की तारीख दे दी। यानी आज जेल जाना पक्का। लड़कों का चेहरा देखकर लग रहा था जैसे फाँसी की सजा सुना दी गई हो।

91

छत्रधारी चौथे दिन गजाधर को छुड़ा लाए। रास्ते भर उसे समझाते रहे- "टैक्स मेरे नाम पर चढ़े या तुम्हारे नाम पर, क्या फर्क पड़ता है। तुम्हारे पास है क्या जो कोई तुमसे वसूलेगा। बकाया दस-पाँच साल पड़ा रहेगा फिर 'ज्वाइंट इन्क्वायरी' में चला जाएगा। 'राइट ऑफ' हो जाएगा। जो न देना चाहे उससे कोई कैसे ले लेगा? सरकारी टैक्स देना कोई धर्मादे का काम तो है नहीं। यह तो सरकारी गुंडा टैक्स है। सरकारी गुंडई का नमूना बताएँ?... सोना-चाँदी की खरीद-बिक्री पैसे वाला करता है तो उसकी बुलियन पर सरकार टैक्स वसूलती है, एक रुपया सैकड़ा और ईंट के रोजगार से गरीब देहाती मजदूर की रोजी-रोटी चलती है तो उस पर सरकार टैक्स वसूलती है, आठ रुपया सैकड़ा। अमीर की तुलना में गरीब से आठ गुना ज्यादा। यह गुंडई नहीं तो और क्या है? तो छत्रधारी गुंडा टैक्स देंगे?"

गजाधर को पता है कि मालिक के हाथ-पाँव बहुत लम्बे हैं लेकिन मलिकाना में उनका नाम डालना तो ठीक नहीं हुआ। इनकी मंशा अभी भी टैक्स जमा करने की नहीं दिखती। यानी फिर उन्हीं को पकड़ा जाएगा। उन्हें सबसे ज्यादा डर अपने एक बीघा खेत को लेकर है।

पन्द्रह साल तक मुंशियाना करके, पाई-पाई जोड़कर उन्होंने एक खेत खरीदा है। उनका खेत नीलाम हो सकता है। अभी तो खेत खरीदने की बात किसी को पता भी नहीं है। संतू बनिया का वही खेत वह सात-आठ साल से बटाई पर जोतते थे। उसी को खरीद लिया। संतू से हाथ जोड़कर कहा कि खरीदने की बात वह अपने तक ही रखें। ऊँची जाति के लोगों को उसका खेत खरीदना फूटी आँख नहीं सुहाएगा। वह पहले की तरह जोतते-बोते रहेंगे, किसी को पता नहीं चलेगा। पेट काटकर खरीदा गया खेत छत्रधारी के पिचाल की भेंट तो नहीं चढ़ जाएगा?

पत्नी का कहना है- जितनी जल्दी हो सके, इस जालिया की संगत छोड़ दीजिए। लेकिन भट्ठे का काम क्या इतनी आसानी से छोड़ा जा सकता है? छत्रधारी सिंह ने गुजारे के लिए दो बीघा खेत दिया है। एक महीने बाद खेत में तीन-चार बोरा अनाज मिलेगा। अभी काम छोड़ दिया तो इस अनाज से हाथ धो लेना होगा। चार प्राणी का पेट भरना है। कैसे होगा? फिर काम छोड़ते ही यह आदमी दुश्मनी ठान लेगा। जालिम आदमी है। जीने नहीं देगा।

भट्ठे से लौटकर वे देर रात छिपकर विद्रोही जी के घर जाते हैं। चाहते हैं कि

अगम बहै दरियाव

विद्रोही जी साथ चलकर सेलटैक्स के दफ्तर से कागज पत्तर की जाँच कराकर उनकी बचत का कोई रास्ता निकालें।

गजाधर के जाने के बाद बोधा बहू विद्रोही जी के सिर में तेल मालिश करते हुए उन्हें सावधान करती हैं- "यह मत सोचिए कि जिस आदमी के लिए आप गाँव के ठाकुर से वैर मोल लेने जा रहे हैं वह मौके पर आपके साथ खड़ा होगा। जरूरत पड़ने पर कटी उँगली पर मूतने भी नहीं आएगा।"

विद्रोही जी मानते हैं कि वे सही कह रही हैं लेकिन जब कोई मदद के लिए पुकार रहा है तो वे पीठ कैसे फेर लें!

वे समझाते हैं- "जैसे दोस्ती को जतन से पोसा जाता है वैसे ही किसी-किसी दुश्मनी को भी पोसना चाहिए। सारा इलाका छत्रधारी सिंह को बेईमान और जालिया मानता है। उनसे तनातनी रखने पर इलाके में इज्जत बढ़ेगी। वे हमारे 'नेचुरल एनिमी' हैं। कभी दोस्त नहीं बन सकते। मौका आने पर दाँव दे देंगे। देखती नहीं हो, गजाधर कब से उनकी गाँड़ धो रहा है लेकिन खुद को बचाने के लिए उसे डस लिया कि नहीं। इसलिए उनके साथ तनातनी फायदेमन्द रहेगी, दोस्ती नुकसान करेगी।"

बोधा बहू अपने आदमी को बहुत समझदार नहीं मानतीं लेकिन यह बात उन्हें भी जँच रही है। खासकर 'नेचुरल एनिमी' शब्द जो उनकी समझ में बिलकुल नहीं आया, उन्हें प्रभावित कर गया है।

विद्रोही गजाधर की मदद करने के लिए राजी हो गए।

गजाधर सारी कार्यवाही छत्रधारी सिंह से छिपाकर करना चाहते हैं और शहर जाने के लिए छुट्टी भी उन्हीं से लेना है। बहुत सोचने-विचारने पर उन्हें एक कारगर बहाना सूझा। उन्होंने छत्रधारी सिंह से कहा कि किले के हनुमान मन्दिर पर रोट चढ़ाने जाना है। जब हवालात में बन्द थे तो मानता माना था कि हनुमान सामी मुझे इस कालकोठरी से मुक्त करिए तो मैं आपको तीन मंगल रोट चढ़ाऊँगा।

गजाधर जानते थे कि हनुमान जी को रोट चढ़ाने के नाम पर माँगी गई छुट्टी देने से छत्रधारी इनकार नहीं कर सकते। इस तरह उन्होंने एक ही बार में तीन-तीन मंगल की छुट्टी का इन्तजाम कर लिया। तय हुआ कि दोनों लोग गाँव से अलग-अलग निकलेंगे और शहर के बड़े चौराहे पर मिलकर वकील के घर चलेंगे।

शहर आते-जाते विद्रोही जी ने एक मकान के बाहर 'एडवोकेट सेल्स टैक्स इनकम टैक्स' का बोर्ड लगा देखा है। वकील घर पर मिल गए। विद्रोही जी ने विस्तार से सारी बात बताई। वकील साहब ने कहा- "ऐसे मामले होते रहते हैं।

घबड़ाने की बात नहीं। फाइलों का मुआयना करने के बाद पता चलेगा कि सही पोजीशन क्या है?"

"बहुत गरीब आदमी हूँ साहेब। फर्जी फँसा दिया गया हूँ।" गजाधर ने रोनी सूरत बनाकर कहा।

"गरीब आदमी हो तो मुकदमा लड़ने क्यों निकले हो?" वकील ने मुस्कराते हुए उनकी ओर देखा। फिर बोले- "फँसाया तो हमेशा गरीब और सीधा आदमी ही जाता है। वैसे कितनी चल-अचल सम्पत्ति है तुम्हारे पास।" गजाधर की ओर देखते हुए पूछा वकील ने। लगता है गजाधर समझ नहीं सके।

"मतलब कितनी खेती-बारी, बाग-बगीचे हैं?"

"खेती-बारी तो एक धूर नहीं है साहेब। मुंशीगीरी करके बच्चे पाल रहा हूँ।"

वकील साहेब हँसे- "तब क्यों डरते हो? कोई तुम्हारा क्या बिगाड़ लेगा? भट्ठा मालिक से मोटी रकम वसूलो और साल में एक बार चौदह दिन के लिए हवालात में बन्द हो जाया करो।" में एक बा

"अरे नहीं साहब। लाख रुपये की इज्जत तो है।"

वकील साहेब फिर हँसे- "हो हो हो! लाख रुपये की?"

"अरे साहब, इज्जत तो बराबर ही होती है। गरीब की हो, चाहे अमीर की।"

"अच्छा?" वकील साहब फिर हँसे। इस बार गजाधर और विद्रोही जी भी मुस्कराए।

दोनों लोग मान गए कि काफी दिलखुश आदमी हैं वकील साहब।

"चलिए, ऑफिस चलकर फाइल का मुआयना कर लेते हैं। मुआयने और ऑफिस खर्चे की फीस दो सौ निकालिए।"

गजाधर तो दफ्तर जाने के नाम पर घबड़ा रहे थे। वहाँ फिर कोई पकड़-धकड़ न होने लगे। लेकिन विद्रोही जी साथ चलने को तैयार हो गए- 'दफ्तर की दुनिया भी देख ली जाए।'

गजाधर ने जेब की डायरी से निकालकर दो सौ रुपये दिए। वकील साहेब ने समझाया- 'वहाँ आप लोगों को कुछ बोलने की जरूरत नहीं है। बस साथ रहिए। देखते-सुनते जाइए। लीजिए, वकालतनामे पर दस्तखत कर दीजिए।"

वकील साहब की कार में बैठकर तीनों लोग दफ्तर आए। दफ्तर के अन्दर घुसते हुए गजाधर को थोड़ी घबराहट हुई।

वकील साहब ने खातापाल को खुश किया और बिना औपचारिक दरखास्त दिए ही गोपनीय पत्रावली से सर्वे का विवरण नोट कर लिया। फिर असेसमेंट की फाइलों को देखा। चार वर्षों में एक्सपार्टी कर निर्धारण आदेश पारित किए गए

थे। किसी वर्ष में दो नक्शे दाखिल थे किसी में तीन। टैक्स भी बहुत कम जमा था। नक्शों पर हस्ताक्षर की जगह गजाधर लिखा था। हस्ताक्षरकर्ता की प्रास्थिति 'स्वामी' दर्ज थी।

फिर बड़े बाबू के पास गए। उनको खुश करके फार्म 14 (पंजीयन) की प्रविष्टियाँ देखी गईं। भट्ठे में 25 हजार की पूँजी लगाना दिखाया गया था। भट्ठे पर गजाधर का पूर्ण स्वामित्व दर्ज था।

वापस लौटकर वकील साहब ने बताया- "रजिस्ट्रेशन फार्म और नक्शों पर मालिक की जगह तुम्हारे ही नाम का हस्ताक्षर बनाया गया है लेकिन यहवकालतनामे पर किए गए तुम्हारे हस्ताक्षर से भिन्न है। एक सर्वे पर जिसमें गजाधर की उपस्थिति दर्ज है उसमें भट्ठा मालिक का नाम छत्रधारी बताया गया है। इस पर तुम्हारा हस्ताक्षर है और यह हस्ताक्षर वकालतनामे पर किए गए हस्ताक्षर से मिलता है। रजिस्ट्रेशन में दर्ज तुम्हारे स्वामित्व को इसी सर्वे के विवरण के आधार पर चैलेंज किया जाएगा।"

दोनों लोग सिर हिलाते रहे लेकिन समझ में किसी की कुछ नहीं आया।

"चारों फैसले एक्सपार्टी हैं। यह स्थिति हमारे हक में है। चारों फैसलों की नकल लेकर अपील करनी पड़ेगी। यह बताओ, कोयले की खरीद के पर्चे किसके नाम से हैं?"

"छत्रधारी के नाम से ही होंगे। कोयला खरीदने वही जाते थे।"

"पर्चे कहाँ रखे जाते हैं?"

"भट्ठे पर बनी झोंपड़ी में।"

"तो जाकर कोयला खरीद के पर्चे ढूँढ़ लो फौरन। जो परचे छत्रधारी के नाम हों उन्हें सँभालकर अपने पास रख लो। भट्ठे का स्वामित्व साबित करने में काम आएँगे।"

थोड़ा रुककर वकील साहब ने फिर पूछा- "ईंटों का मार्का सर्वे में राणा और प्रताप दर्ज है। ये नाम इनके बेटों के हैं क्या?"

"नहीं, राजस्थान के बहुत बड़े राजा थे न, राणा प्रताप। उनके नाम पर रखा है। उनको बहुत मानते हैं।"

"यानी छत्रधारी ठाकुर है?"

गजाधर ने स्वीकार में सिर हिलाया।

"और तुम किस जाति के हो?"

गजाधर अचकचा गए। बोले-"मैं तो चमार हूँ।"

"बहुत बढ़िया, बहुत बढ़िया।"

गजाधर समझ नहीं सके कि उनका चमार होना बहुत बढ़िया कैसे हो गया? वकील साहब ने समझाया- "यह प्वाइंट हमारे पक्ष में जाएगा। जाहिर है कि राणा प्रताप किसी चमार के आदर्श नहीं हो सकते। वे किसी ठाकुर के ही आदर्श होंगे जो छत्रधारी हैं। कुछ समझ में आया?"

"बिलकुल आ गया।" विद्रोही जी ने सिर हिलाते हुए कहा- "बहुत दमदार प्वाइंट निकाला आपने।"

"बस, दफा 30 की दरखास्त देने की भी जरूरत नहीं है। फालतू का खर्च क्यों बढ़ाएँ। हम चारों एक्सपार्टी फैसलों की अपील करेंगे। सर्वे दिनांक 26 मई, 1973 में मौके पर मौजूद मुंशी गजाधर ने बताया है कि भट्ठे के मालिक छत्रधारी सिंह हैं। यह सर्वे हमारे बड़े काम का है। इससे दोनों तथ्य प्रमाणित होते हैं। एक, कि भट्ठा-मालिक छत्रधारी सिंह हैं। दूसरा, कि गजाधर भट्ठे के मुंशी हैं। 'प्रेयर' करेंगे कि यह डाइरेक्शन देते हुए केस रिमांड कर दिया जाए कि प्रस्तुत सबूतों के आधार पर ओनरशिप का विवाद 'डिसाइड' करें।"

हाथ की कलम मेज पर रखते हुए वकील साहब ने दोनों के चेहरे को तौला फिर बोले-"सारी गवाही-सबूत तभी काम आएँगे जब सही जगह पर सही समय पर 'खर्चा' पहुँचाया जाएगा। सबूतों के ऊपर

खर्चे का वजन रखा जाएगा। हर चीज का 'खर्चा' तय है। रिमांड का खर्चा, रिमांड विद फेवोरेबल डायरेक्शन का खर्चा। खर्चा नहीं पहुँचा तो चाहे जितना तगड़ा ग्राउंड हो, अपील खारिज हो सकती है या ऑर्डर 'गोल-मोल' हो सकता है।"

"बिना लिये-दिये कोई काम नहीं होता?"

"होता है लेकिन बहुत कम। एकाध सिरफिरे अफसर ऐसे मिल जाते हैं जो लेते-देते नहीं। लेकिन उनकी बेटियों की शादी या तो चंदा करके होती है या कुँवारी रह जाती हैं।"

वकील साहब ने छोटा-सा विराम लिया, फिर आगे बढ़े- " चारों फैसलों, चारों सर्वेक्षणों, फार्म 14 और 15 की प्रमाणित प्रतियाँ लेनी होंगी। इन सबका खर्चा जमा कर दीजिए और चार-पाँच दिन बाद आइए तो अपील दाखिल कर दी जाए।"

गजाधर ने आगे की जेब से सौ रुपये का एक नोट निकाला और वकील साहेब के हाथ पर रखते हुए कहा- "हम फिर अगले मंगल को आ पाएँगे वकील साहब।"

"कम है।" नोट पकड़ते हुए वकील ने कहा।

गजाधर थोड़ी देर उनका मुँह देखते रहे फिर कुर्ते की दाईं बगल की जेब से पचास का एक नोट निकालकर देते हुए बोले- "इतना ही है। अब सिर्फ किराए भर के लिए बचे हैं।"

"कोई बात नहीं। उस दिन तैयारी से आइएगा। अपील की कोर्ट फीस जमा करनी होगी। टाइपिंग का खर्चा, एफिडेविट का खर्चा, दाखिले का खर्चा, अहलमद का खर्चा, मेरे आने-जाने का खर्चा। खर्चे से नहीं पिछड़ोगे तो केस हमें जीतना ही जीतना है।"

बाहर आकर दोनों लोगों ने एक-दूसरे की ओर देखा। फिर विद्रोही जी बोले-"अच्छी बात यह है कि वकील साफ बात करने वाला है। ऐसा कौन करता है आजकल ? अँधेरे में रखते हैं और खटमल की तरह धीरे-धीरे चूसते रहते हैं। पैसे का लालची जरूर लगता है लेकिन लालची कौन नहीं है। यही तो इनकी खेती-बारी है।"

चलते-चलते गजाधर रुक गए। बोले-"अभी तीन ही बजे हैं। अगर हनुमानजी को रोट भी चढ़ाते चलें तो कैसा रहेगा? मैंने सचमुच तो मानता नहीं माना लेकिन छत्रधारी सिंह से यही बहाना करके छुट्टी लिया है। यह बात ह बात हनुमानजी को पता चल ही गई होगी। कहीं नाराज न हो जाएँ?"

नौटंकी की दुनिया में बैताली के काम को सराहा जाता है। राजा या डाकू की भूमिका वह इतना डूबकर करता है कि सीधे उस युग में पहुँच जाता है जहाँ सब कुछ तलवार या तमंचे से तय होता था। जितनी देर सम्भव हो वह उसी दुनिया में रहना चाहता है। चाहता है, रात कभी ढले नहीं, खेला कभी रुके नहीं। सपनों की इसी दुनिया में उम्र कट जाए।

राजा या डाकू के रूप में उसकी इतनी माँग है कि दूसरी नौटंकी कम्पनियाँ भी कभी-कभी उसे मुँहमाँगी कीमत पर बुला लेती हैं। उसके नाम पर पब्लिक दौड़ पड़ती है।

घनी मूँछों के बीच फूटती उसकी मारू मुस्कान पर औरतें इस कदर मोहित होती हैं कि घेर लेती हैं। साथ ले चलने की मिन्नत करती हैं।

एक लड़की बार-बार समझाने पर भी नहीं मानी-पीछे-पीछे चली आई।

"मुझे क्या दो औरतों की जोड़ी बनाकर हल में नाधना है।"

"मैं बड़ी की टहलुई बनकर रह लूँगी।"

बड़े दिन बाद एक दिन राह में दहबंगा मिली तो हँसते हुए बैताली को सुनाया-

दुई दुई नारी अकेले बलमा की एककै कहै मैं सेज लगाइउं दूसरी कहै आज ओसरी हमार हो अकेले बालमा की...

बैताली को क्या पता था कि गीत की आशंका एक दिन हकीकत में बदल जाएगी।

अब दोनों रात-दिन लड़ती हैं। दोनों की उम्र में बीस साल का अन्तर है। छोटी आए दिन बड़ी को पटककर मारती है। उसका कहना है कि अगर तू अकेले उन्हें दुह पाती तो वे मुझे क्यों लाते? मेरे आने के पहले तू अकेले पन्द्रह साल उनके साथ सोई है। अब पन्द्रह साल मैं भी सो लूँ तभी तो तेरी बारी आएगी।

इस किच-किच से बचने के लिए बैताली दोनों को दूर-दूर रखना चाहता है। अगर परधान जी उसे भीटे पर एक झोंपड़ी बनाने की जगह दे दें तो दोनों दो जगह रहने लगें। वह ओसरी (पारी) बाँध लेगा। चार दिन नई के साथ सोएगा, दो दिन पुरानी के साथ। एक रात फिरी।

इसी के साथ एक और समस्या का हल हो जाएगा। उसने छोटी के लिए बकरियाँ पाल दी हैं। तीन बकरियों से पचीस-तीस हो गई हैं। चरने के लिए सुबह-शाम जाते-आते वे गाँव की गली से गुजरती हैं तो किसी के सुखवन में मुँह डाल देती हैं। दलित की बकरियाँ भी दलित हुईं। दलित बकरी के जूठा करने से सुखवन अखाद्य हो गया। आए दिन झगड़ा होता है। वैसे तो छोटी झगड़ने से पीछे नहीं हटती। बकरियाँ घर आ जाती हैं और वह झगड़ने वाली को बिना मैदान छुड़ाए नहीं लौटती पर रोज-रोज का झगड़ा अच्छी बात तो नहीं। बकरियाँ गाँव के बाहर रहने लगेंगी तो यह झमेला भी खत्म हो जाएगा।

बैताली को अपने दरवाजे पर आया देख छत्रधारी खुश हो गए। पहली बार बैताली उनके दरवाजे पर कुछ माँगने आया है। यह बड़ी बात है। अब तक हर बार परधानी के चुनाव में वही उसके दरवाजे पर वोट माँगने जाते थे। फिर चुनाव आ गया है। दलित वोटरों पर उसकी पकड़ है। ऐसे में समझो भगवान ने ही मदद के लिए उसे भेजा है।

छत्रधारी सिंह ने सुनते ही कहा- "जाओ, भीटे पर गूलर के पेड़ के उत्तर तरफ झोंपड़ी बनाकर रहना शुरू कर दो। पाँच हजार का इन्तजाम कर लो तो उसी जमीन का पट्टा कर देंगे।"

विद्रोही जी ने परधानी लड़ने का मन बना लिया है।

उनके पहले की पीढ़ी ने कभी परधानी लड़ने का सोचा ही नहीं। निर्विरोध मिले तो भी लेने को तैयार नहीं। किसको अपने काम से फुरसत है कि दूसरे के झगड़े की पंचायत करने जाए। यह उनका काम है जिनकी घर-गृहस्थी का काम करने के लिए हलवाहे-चरवाहे हों या जिन्हें दलाली खाने की लत लग गई हो।

देश स्वतंत्र होने के पहले नदीपार पहाड़ी के उत्तर का सारा भूभाग परती था। जानवरों को खूँटे से मुक्त करने भर की जरूरत थी कि वे खुद नदी पार करके चरने के लिए परती में पहुँच जाते थे। वहाँ हिरनों के छौने बछड़ों और मेमनों के साथ मिलकर खेलने का इन्तजार करते थे।

विद्रोही जी के बाबा अपनी गाय-भैंसों को परती में छोड़कर सारे दिन पेड़ लगाने, नदी से घड़े में पानी लाकर उनकी सिंचाई करने तथा उन्हें काँटे की बाड़ बना रूँधने के काम में लगे रहते। जमींदार इस बात से खुश रहता कि उसकी जमीन पर गाय-गोरू चरते हैं जिसका पुण्य उसे मिलता है और इस बात से भी कि चरवाहे उसकी जमीन को हरा-भरा बनाने में जुटे रहते हैं।

जब सन् 1952 में जमींदारी टूटने की खबर फैली तो जमींदार ने सोचा कि जमीन हाथ से निकल जाए इसके पहले जिस भी दाम में बिके बेच डाला जाए। उसके कारिन्दे गाँव-गाँव घूमकर खरीदार खोजने लगे। साठ रुपये बीघे का रेट है, पचास ही दीजिए। पूरा पैसा नहीं है तो जितना है उतना ही दीजिए। बाकी बाद में दे दीजिएगा। बाद में कौन माँगने आता है?

तब पशुपालक जातियों को आसन्न संकट का आभास हुआ। परती बिक गई तो उनके जानवर कहाँ चरेंगे?

विद्रोही जी के बाबा, पट्टीदार, यहाँ तक कि किशोर भूसी भी बाँस में लाल झंडा बाँधकर गाँव-गाँव घूमने और लोगों से मिन्नत करने लगे कि पट्टा मत लीजिए। जानवरों का चरागाह मत छीनिए। पाप लगेगा।

लेकिन लेने वालों ने लिया। सारी परती बिक गई। अब उसी जमीन पर गेहूँ की फसल लहलहाती है। विद्रोही जी को अपने पूर्वजों की बुद्धि पर तरस आता है। मूक जानवरों के साथ रहकर उनके पूर्वज भी मूक रह गए। अपने हित की बात

सोचना और कहना नहीं आया। वरना दूध-घी का पैसा उस समय जमीन में लगा देते तो आज राजा होते।

ग्राम प्रधान ही अब नए जमाने का राजा है। यह राजा-रानी की कोख से नहीं, बैलेट बॉक्स की कोख से पैदा होता है। उन्हें नए जमाने का राजा बनना है।

छत्रधारी की नींद उड़ गई है।

इस बार परधानी हाथ से जाती लग रही है। उनके सूत्रों ने बताया है कि अधिकांश पिछड़े और दलितों ने एकमत होकर विद्रोही को समर्थन देने का मन बनाया है। वे खुद दो साल पहले संसद और विधानसभा के चुनाव में कांग्रेस की लुटिया डूबते देख चुके हैं।

दलित टोले को ठाकुर टोले से सबसे ज्यादा नाराजगी उनके ग्यारह कमासुत लोगों को जेल भिजवा देने से है। अब सभी लोग जमानत पर छूटकर गाँव आ चुके हैं। जमानत कराने में थरिया-लोटा तक बिक गया। वे लोग कैसे छत्रधारी को या किसी ठाकुर को जीतने देंगे!

विद्रोही जी दरवाजे-दरवाजे कहते घूम रहे हैं- गाँव के हजार लोगों की वोटर लिस्ट में औरतों की आधी आबादी और बाकी में सौ बूढ़ों को बाद कर दीजिए तो बचते हैं चार सौ। चार सौ में तेरह लोगों की नसबन्दी। यानी सौ में तीन से ज्यादा। और एक भी ठाकुर, बाभन, बनिया, लाला नहीं। सबके सब पिछड़े या दलित।

"तो भाइयो आप खुद विचार करके देखिए अगर गाँव के लोग भाग-भागकर खेत और जंगल में न छिपे होते तो छत्रधारी पूरे गाँव के पिछड़ों और दलितों की नस कटवा देते। कांग्रेसियों को तो सबक मिल गया। अब छत्रधारी को सबक सिखाने की बारी आ गई है।"

साल-भर पहले गजाधर के साथ किए गए धोखे से भी दलित नाराज हैं। गजाधर खुलकर छत्रधारी के विरुद्ध नहीं बोलता लेकिन अन्दरखाने वह भी अपने टोले के लोगों को छत्रधारी के खिलाफ भड़का रहा है।

पोलिंग के दिन विद्रोही ने जिस तरह ललकारकर दिल्ली के राजकुमार को वापस लौटने के लिए मजबूर किया था उसने भी गाँव के लोगों का दिल जीता है। विद्रोही डरपोक नहीं हैं। साफ दिल के और दो टूक बोलने वाले हैं। गाँव को ऐसे ही परधान की जरूरत है।

छत्रधारी जोड़-घटाव करके देख चुके हैं। इस बार परधानी मिलना किसी तरह सम्भव नहीं। लेकिन परधानी तो चाहिए। किसी भी कीमत पर चाहिए।

काफी सोच-समझकर वे माठा बाबा की शरण में जाने का फैसला करते हैं। भादों की अँधेरी रात, टप-टप होती बूँदा बाँदी और झकोरती पुरवा उनकी राह नहीं

रोक पाती। छाता लगाए, टॉर्च लुपलुपाते, अकेले बाबा के दालान में घुसते हैं।

बाबा खा-पीकर लेट चुके हैं। टॉर्च की लाइट देखकर चौंक जाते हैं-"कौन?"

"मैं हूँ बाबा। छत्रधारी। वे बाबा का पैर छूकर पैताने बैठते हुए कहते हैं।"

"इतनी रात को? क्या हो गया?" बाबा पाँव सिकोड़कर बैठते हुए पूछते हैं। छत्रधारी जलती हुई टॉर्च का मुँह ऊपर की ओर करके उसे अदवाइन के बीच फँसा देते हैं।

"इज्जत दाँव पर लग गई है बाबा। बुधइया ने पूरे गाँव को अपनी ओर मिला लिया है। पूरा गाँव सवर्ण और गैर-सवर्ण के खेमे में बँट गया है। उन लोगों ने एक मत से बुधइया को अपना परधानी का उम्मीदवार तय कर दिया है। तीन-चौथाई वोट तो उन्हीं लोगों के हैं। एक पिछड़े से हारना मेरे लिए डूब मरने के समान है।"

"तो क्या सोचा है?"

"मुझे कुछ सूझ नहीं रहा बाबा। एक मन करता है कि दस-पाँच लाठी मरवाकर हाथ-पैर तोड़ दें। पर्चा दाखिला के लिए जाने लायक ही न रह जाए।"

"ठाकुर हो न। लाठी, गोली के आगे कैसे सोच पाओगे? लेकिन उससे क्या होगा? परधानी भी जाएगी और दफा 307 के मुलजिम भी बन जाओगे। विद्रोही टूटी टाँग के बल पर जीत जाएगा।"

"तब क्या करें?"

"अकल की लाठी से मारो। अकल की चोट किसी पोस्टमार्टम रिपोर्ट में नहीं आएगी।"

"अकल लेने ही तो आपकी शरण में आए हैं बाबा।"

"पिछड़ों-दलितों के बीच से तीन-चार पर्चे दाखिल करा दीजिए। वोट बँट जाएगा। अपने आप जीत जाओगे।"

"कोशिश करके देख लिया। मुश्किल है। मुझसे सब जलते भी हैं। डरते भी हैं। मेरा डर दिखाकर बुधइया ने सबको एकजुट कर लिया है।"

छत्रधारी अभी तक विद्रोही को बुधइया ही कहते हैं। रामबोध या बुधई भी नहीं। बाबा बैठे सोचते रहे। बरसते पानी का संगीत बजता रहा।

"थोड़ा पहले चेत गए होते तो विद्रोही और उनके पट्टीदारों के बीच मारपीट कराई जा सकती थी। अब तो उसका भी समय नहीं है। अच्छा यह बताइए, आपके भाई तिलकधारी आपके पक्ष में हैं कि विपक्ष में?"

"वैसे तो हम दोनों के बीच बँटवारे का मुकदमा चल रहा है। यह बात सारा गाँव जानता है। लेकिन जहाँ मामला सवर्ण और गैर-सवर्ण के बीच पक्ष लेने का होगा वहाँ उन्हें अपने पक्ष में मना लूँगा। लाठी मारने से काई थोड़े फटती है।"

"आप दोनों भाई और विद्रोही का घर तो एक ही वार्ड में है न?"

"हाँ।"

"तो ऐसा करिए, कल दोनों भाई आपस में झगड़ा कर लीजिए। घर में नहीं, गाँव के चौराहे पर। सिर्फ तू-तू मैं-मैं नहीं, पकड़ा-पकड़ी कर लीजिए। पटका-पटकी कर लीजिए तो और अच्छा रहेगा।"

"यह क्या कह रहे हैं?"

"ठीक कह रहे हैं। आप दोनों भाइयों के झगड़े की खबर पाकर विद्रोही जरूर समर्थन माँगने तिलकधारी के पास पहुँचेंगे। न पहुँचे तो तिलकधारी खुद विद्रोही के घर पहुँच जाएँ। उनसे कहें, पुस्तैनी हिस्सा हड़पने के लिए छत्रधारी बीस साल से मुकदमेबाजी में उलझाए हुए हैं। इन्हें धन का अहंकार हो गया है। मुझे इनका अहंकार चूर करना है। इसलिए इस बार डंके की चोट पर तुम्हे परधानी जिताऊँगा।"

"इससे क्या होगा?"

एस

"इसी से जय होगी। कैसे होगी, इसे बाद में बताऊँगा। समझो तुम्हें ब्रह्मास्त्र दे रहा हूँ।"

"लेकिन इससे पिछड़े और दलित वोट मुझे कैसे मिलेंगे?"

"पिछड़ों-दलितों के वोट की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। विजय आपकी हो जाएगी।"

"लेकिन कैसे?"

"जाइए, जितना कहा है, अभी उतना कीजिए।"

अगले दिन गाँव के चौराहे पर ठीक बारह बजे दिन में दोनों भाइयों के बीच जो भयानक झगड़ा हुआ कि लोगों ने दाँतों तले उंगली दबा ली। बाद में हल्की बारिश भी शुरू हो गई। भीगने की परवाह न करते हुए आधा गाँव तमाशा देखने जुट गया। लेकिन झगड़ा शान्त कराने कोई आगे नहीं आया। नागनाथ और साँपनाथ लड़ रहे हैं तो किसी तीसरे के बोलने का क्या काम? दोनों भाई कीचड़ में सन गए। छत्रधारी तो कीचड़ में गिर पड़े। दोनों ने एक-दूसरे की धोती खींच ली। गालियाँ तो इतनी गन्दी गन्दी कि सुनकर कान के कीड़े झड़ जाएँ।

थककर हाँफ गए तो दिखावे की सहानुभूति में बुजुर्गों ने उन्हें अलग किया। तिलकधारी वहाँ से सीधे विद्रोही जी के दुआर की ओर बढ़े। विद्रोही भी दूर से तमाशा देख रहे थे। उन्हें आता देखकर आगे बढ़कर हाथ जोड़कर स्वागत किया।

"विद्रोही भाई।" विद्रोही के दोनों हाथों को अपने हाथ में लेते हुए तिलकधारी सिंह ने कहा- "भले दुनिया मुझे विभीषण कहे, लेकिन मैं आज से खुले खजाना तुम्हारे पक्ष में आ गया हूँ। रावण जैसे भाई ने मुझे लात मारी है। जैसे राम की विजय के लिए विभीषण निमित्त बने थे, मैं तुम्हारी विजय का बनूँगा। खुद पर्चा दाखिल

कराने ले चलूँगा। खुद प्रस्तावक बनूँगा। साथ-साथ 'कन्वेसिंग' करूँगा और विजयी होने पर पूरे गाँव को भोज दूँगा।"

चौराहे की भीड़ यहाँ पहुँच गई।

तिलकधारी ने भीड़ के सामने दोनों भुजाएँ आसमान की ओर उठाकर प्रण किया-" इस गाँव के रावण छत्रधारी कान खोलकर सुन लो। मैं तुम्हारी 'लंका' जलाकर रहूँगा।"

वापस जाने के पहले तिलकधारी विद्रोही जी से उसी आतुरता से गले मिले जैसे चित्रकूट में भरत राम से मिले थे।

पूरे गाँव में हर्ष की लहर दौड़ गई।

उसी दिन से राम और विभीषण का रात-दिन का साथ हो गया। साथ खाना तो नहीं लेकिन साथ पीना और साथ-साथ कैनवैसिंग करना। तिलकधारी सिंह अपनी मोटरसाइकिल पर बैठाकर विद्रोही जी को पर्चा दाखिल कराने ले गए। साथ में सपोर्टरों की पूरी फौज। खुद प्रस्तावक बक बने। पर्चा दाखिले के बाद खुद सबसे पहले उन्हें गेंदे की माला पहनाई।

छत्रधारी सिंह का दरवाजे-दरवाजे दौड़ते बुरा हाल हो गया। सबसे हाथ जोड़कर यही कहते- 'सगा भाई दगा कर गया। अब आप लोगों का ही भरोसा है।'

छत्रधारी सिंह तो खुद ही ऊँची खोपड़ी के आदमी थे। बाबा के सुझाने-भर की देर थी। दुबारा उन्हें बाबा के पास मंत्र लेने जाने की जरूरत नहीं पड़ी।

पर्चा वापसी की आखिरी तारीख पर शाम को तिलकधारी सिंह ने ब्लॉक पर जाकर प्रस्तावक के रूप में अपना नाम वापस ले लिया। विद्रोही का पर्चा खारिज हो गया। छत्रधारी निर्विरोध प्रधान घोषित हो गए।

छत्रधारी के दरवाजे पर गोले दगने शुरू हुए तो गाँव को इसकी जानकारी हुई।

विद्रोही धड़ाम से गिरे। उनके घर पर समर्थकों का मेला लग गया। सब हक्का-बक्का थे। आधी रात के बाद जब भीड़ छँटी तो विद्रोही बहू आईं और पति का हाथ पकड़कर अन्दर अपनी कोठरी में ले गईं। पत्नी से नजर मिली तो उनकी आँखें डबडबा आईं। उन्होंने कसकर पत्नी को दोनों भुजाओं में भरा और कन्धे पर सिर रखकर फफक पड़े। पत्नी ने उन्हें चारपाई पर लिटाया। लोटे में पानी लाईं। चेहरे पर छींटे मारे और आँचल गीला करके पोंछा।

सिरहाने बैठ पति का सिर गोद में लेकर दबाती रहीं। फिर बगल में लेट गईं और अपने गुलगुले भरे-भरे वक्ष का तकिया बनाकर पति का सिर उनके बीच में रख लिया। विद्रोही जी को राहत महसूस हुई।

खून का दौरा धीरे-धीरे तेज हुआ। एकाकार हुए। उस दौरान पति की गीली

होती आँखें वे आँचल से पोंछती रहीं। ज्वार विसर्जित हुआ तो चित्त शान्त था। धीरे-धीरे नींद आ गई।

इस झटके के बाद विद्रोही जी को लगा कि सिर्फ बाहुबल, पैसा या हिम्मत ही इन दगाबाजों से मुकाबला करने के लिए काफी नहीं है। 'बुद्धि' बढ़ानी होगी। दाँव-पेंच सीखना होगा। उन्होंने 'हिन्दी-अंग्रेजी' शिक्षक किताब खरीदी, डिक्शनरी खरीदी। डायरी खरीदी जिसमें अखबारों में पढ़ी या रेडियो पर सुनी जानकारियाँ, नियम-कानून नोट करने लगे। तब बहुत दिनों बाद उनकी भेंट- 'पीन पयोधरा' जैसे शब्द से हुई और यह जानकर उन्हें गर्व महसूस हुआ कि जिसका इतना माहात्म्य है, इतना गुणगान होता है ऐसी पीन पयोधरा तो खुद उनकी पत्नी हैं जिन्होंने खुद आगे बढ़कर उनका वरण किया था।

प्यारी कंगाल किसको समझती है तू

छत्रधारी ने माठा बाबा को भी डस लिया। सब जानते हैं कि छत्रधारी और माठा बाबा बाल सखा हैं। इन्हें कृष्ण और अर्जुन की जोड़ी भी कहा जाता है। गाढ़े वक्त पर माठा बाबा ने कई बार छत्रधारी को उबारा है। अब मदरहवा गाँव की चकबन्दी के दौरान जलचढ़ी वाली जमीन को माठा बाबा के पक्ष में बयान करने का मौका आया तो मुकर गए।

छत्रधारी के बाबा गजराज सिंह सवाई-डेढ़ी पर अनाज कर्ज देते थे। गरीबी का जमाना था। बहुत कम घर ऐसे थे जिनके पास साल-भर खाने के लिए अन्न पैदा होता था। ज्यादातर घरों का अनाज अगली फसल तैयार होने के पहले खत्म हो जाता था। भुखमरी से बचने के लिए कर्ज का ही सहारा होता था। अगर पाँच-छह महीने बाद वापस किया जाता तो लिये गए अनाज के वजन का डेढ़ गुना वापस करना होता और तीन महीने के अन्दर वापस किया तो सवा गुना। वापस न कर पाने पर हर छमाही ब्याज मूल में जुड़ जाता था। यही दर पूरे इलाके में लागू थी।

दक्खिन गाँव के माताबदल दूबे ने खाने के लिए उनसे एक मन अनाज कर्ज लिया था। सूखा पड़ जाने के कारण वे तीन साल तक वापस नहीं कर सके। तीन साल में अनाज और सूद मिलकर पन्द्रह गुने से ज्यादा हो गया। तब गजराज सिंह ने दबाव बनाया कि कर्ज के बदले वे अपनी एक बीघा जमीन उनके नाम बैनामा कर दें। माताबदल तैयार नहीं हुए। एक दिन गजराज सिंह अपने बेटे इन्दर सिंह के

साथ उनके घर गए और कहा कि या तो आज पूरा अनाज वापस करो या खेत का बैनामा करने चलो। न मानने पर बाप-पूत उन्हें मारने-गरियाने लगे। इन्दर सिंह बूढ़े माताबदल को पटककर उनकी छाती पर चढ़ बैठे। माताबदल ने मुँह से खून फेंक दिया और हफ्ते भर में मर गए। सारे ब्राह्मण एकमत हो गए। मामला पुलिस में गया। तीन महीने पहले ही छत्रधारी की माँ मनराज कुँवरि ब्याहकर आई थीं। खान दारोगा ने गजराज सिंह से कहा कि अपनी बहू को अंग्रेज कप्तान के पास भेज दो तो मैं तुम्हारे बेटे को कत्ल के केस से बचा लूँगा वरना फाँसी चढ़ना तय समझो। बचने की कोई राह न पाकर गजराज सिंह अनारा की नानी कलाधरी के पास गए। पगड़ी उतारकर सामने रखते हुए चिरौरी की 'इज्जत बचा लो कलाधरी बाई।'

कलाधरी ने अनारा की एक सोलह-सत्रह साल की मौसी को मेहँदी-महावर लगाकर, दुल्हन की तरह सजाकर अंग्रेज कप्तान के पास भेजा। अभी उस लड़की की नथ भी नहीं उतरी थी। लड़की दस दिन बाद लौटाई गई।

चार साल कथा-भागवत कराने के बाद मनराज कुँवरि को बेटा पैदा हुआ जो आगे चलकर छत्रधारी के नाम से मशहूर हुआ। मनराज कुँवरि धार्मिक प्रवृत्ति और साफ दिल की स्त्री थीं। वे पहले से डरी हुई थीं कि उनके इस ड्योढ़ी में कदम रखते ही ब्रह्महत्या हुई है। इस पाप की अमंगल छाया उनके परिवार का अहित कर सकती है। अपने नवजात बेटे को किसी अनिष्ट से बचाने के लिए जिस दिन उनके पुत्र की बरही थी, उन्होंने माठा बाबा के पिता को बुलाकर अपने परिवार की ओर से रोज शंकर भगवान को जल चढ़ाने की जिम्मेदारी सौंपी और इसके एवज में हाथ में कुश और जल लेकर पूरब दिशा की ओर मुँह करके, सूर्य भगवान को गवाह बनाकर मदरहवा गाँव की दो बीघा जमीन उन्हें 'संकल्प' दी। इसकी लिखा-पढ़ी का न कोई रिवाज था न उभयपक्ष इसकी जरूरत समझता था। माठा बाबा के पिता गाँव के शिवाले में स्थापित शंकर भगवान को जल चढ़ाते रहे और संकल्पित खेत जोतते-बोते रहे। कालान्तर में जमीन उत्तराधिकार के रूप में छत्रधारी सिंह दोनों भाइयों के नाम आ गई।

अब मदरहवा गाँव की चकबन्दी के समय छत्रधारी को बयान देना था कि जमीन भले ही रेकॉर्ड में हमारे नाम पर है लेकिन मौके पर पैंतालीस साल से माठा बाबा ही इस पर काबिज रहे हैं इसलिए इस पर हमारा नाम काटकर माठा बाबा का नाम दर्ज कर दिया जाए। हमें कोई एतराज नहीं है।

लेकिन छत्रधारी मुकर गए। उन्हें इसमें कोई बेईमानी नहीं दिखाई देती। वे कहते हैं-' अगर माठा के पिता ने समय रहते इन खेतों पर अपना नाम दर्ज नहीं करवाया तो इसमें उनका क्या दोख? जब तक वे जल चढ़ाते रहे, खेत जोतते-बोते रहे। अब

न मनराज कुँवरि इस दुनिया में हैं न माठा बाबा के बाप हैं। न शिवालय रहा, न शंकर भगवान। जब जल चढ़ाना ही बन्द हो गया तो जलचढ़ी का खेत माठा बाबा के पास रहने का क्या औचित्य?'

माठा बाबा गाँव-भर में कहते घूम रहे हैं कि ब्राह्मण को दान दी गई वस्तु को वापस लेने का क्या नतीजा होता है, मालूम है? छत्रधारी को राजा नृग की तरह गिरगिट योनि में जाना पड़ेगा। नृग से तो अनजाने में अपराध हुआ था। छत्रधारी तो होशोहवास में ऐसा कर रहे हैं।

जाते-जाते बाबा फिर मुड़ते हैं" और सुनो, रामायण में खुद शंकर भगवान ने क्या कहा है-

इन्द्र कुलिस मम सूल विशाला। काल दंड हरि चक्र कराला ॥ जो इन्ह कर मारा नहिं मरई। विप्र द्रोह पावक सो जरई ॥

अर्थात् जो इन्द्र के वज्र से, मेरे त्रिशूल से, काल के दंड से और विष्णु के चक्र सुदर्शन के मारने से नहीं मरता वह भी ब्राह्मण से दुश्मनी कर ले तो उसी की आग में जलकर भस्म हो जाता है। छत्रधारी ने वही कर लिया तो अब कितने दिन खैर मनाएँगे!"

पिछड़े टोले में कोई पूछ बैठता है-

"आप त्रिकालदर्शी हैं, बाबा। आप अक्सर कहा करते थे, 'करिया बाभन, गोरिया सूद, कंजा, तुर्क, भुअर राजपूत;'

"अन्धलोचन हो गया था, बच्चा; और क्या कहें।"

"हमें तो लगता है कि आपका पाप फलित हुआ है बाबा।"

दूसरा स्वर कहता है- "छत्रधारी सिंह को मनचाही जमीन पर चक दिलाने के लिए आपने गाँव के चार घर कोइरी लोगों का चक खराब करवा दिया। आपको उन परिवारों की हाय लगी है।"

"सही कहते हो, बच्चा। मैं इसका प्रायश्चित करूँगा। दुर्योधन का पक्ष छोड़कर तुम लोगों, पिछड़ों के पक्ष में रहूँगा। महाभारत की अगली लड़ाई यानी परधानी के चुनाव में खुलकर तुम लोगों का साथ दूँगा।

चाणक्य का वंशज हूँ। यह देखो, अपनी चुटिया खोल दी। अब यह छत्रधारी के नाश के बाद ही बंधेगी।"

"कहीं इसमें भी हम लोगों के खिलाफ आपकी कोई चाल न छिपी हो, बाबा?"

विद्रोही जी को सूबे की राजधानी से बुलौवा आया है। लोकदल के जनरल सेक्रेटरी ने लिखा है- 'विद्रोही जी को मालूम हो कि प्रदेश के किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य देने की माँग को लेकर पार्टी ने सात दिसम्बर को पूरे प्रदेश में धरना-प्रदर्शन और घेराव का कार्यक्रम बनाया है। आप अपने इलाके के जागरूक किसान हैं। जिला पार्टी अध्यक्ष से मिलकर निर्धारित योजना के अनुसार कार्यक्रम में अपना सहयोग सुनिश्चित करिए।'

चिट्ठी के साथ एक लाल रंग का पर्चा भी है। पर्चे में सरकार से माँग की गई है कि धान का मूल्य 150/- कुंटल, गन्ने का मूल्य 30/- कुंटल और आलू का 125/- कुंटल देना सुनिश्चित किया जाए। यह भी चेतावनी दी गई है कि यदि किसानों की माँगें न मानी गई तो गन्ने की आपूर्ति बन्द कर दी जाएगी।

विद्रोही जी नहाने जा रहे थे। कुएँ की जगत पर बैठकर पर्चा पढ़ने के साथ चेहरे पर खुशी छाने लगी। खुशी इस बात की कि अब सूबे की राजधानी से सीधे उनके नाम चिट्ठी आने लगी है।

"अब कौन सी रामायन बाँचने बैठ गए? नहाते क्यों नहीं?"

"रुको जी। जरूरी चिट्ठी है। किसान पार्टी ने भेजा है। सहयोग माँग रहे हैं।" कैसे करें? काम तो इस समय बहुत है खेती में। लेकिन जब उन्हें सहयोग लायक माना गया है तो सहयोग देना उनका फर्ज बनता है। बाहर हेल-मेल बढ़ेगा तभी गाँव में भी इज्जत बढ़ेगी।

आज फिर नायब की इजलास पर गवाही देने जा रहे हैं भूसी। छत्रधारी ने सुबह-सुबह फिर कहलवाया, 'संतोखी के पक्ष में गवाही देने मत जाओ। दो लोगों के झगड़े में तीसरे का क्या काम?'

भूसी ने सन्देशवाहक से कहलवाया- 'बेबस हूँ राजा। जबान से बंध चुका हूँ। आप ही बताइए, मर्द की जबान एक कि दो?'

107

इजलास में घुसने से पहले उनके वकील ने भूसी को ढाढ़स बंधाया-"डरिएगा नहीं, बेधड़क बोलिएगा।" भूसी मुस्कराए-"डरूँगा क्यों? मैंने उनका कर्जा खाया है क्या?"

जिन्दगी-भर सिर्फ भेड़ चराते रहे हैं तो क्या हुआ, बिरादरी की पंचायत में वे भी चालीस साल से मामला सुनते और फैसला सुनाते आ रहे हैं।

विपक्षी वकील ने शुरुआत में ही दबोचने की कोशिश की।

"कितनी गवाही दे चुके हो अब तक?"

"एक भी नहीं। जिन्दगी में पहली बार इजलास की ड्योढ़ी लाँघ रहा हूँ और मनाता हूँ कि फिर कभी यहाँ आने की रोजी न हो।"

"झूठी गवाही देने के लिए कितना रुपया लिये?"

"पैसा लेकर झूठ बोलना मेरा पेशा नहीं है वकील साहब। इसका लाइसेंस तो सरकार ने आप लोगों को दे रखा है।"

"आने-जाने का किराया तो लिया होगा? दुनिया लेती है।"

"दुनिया की दुनिया जाने। मैं तो साढ़े छह कोस पैदल चलकर आया हूँ और पैदल ही चलकर जाऊँगा। सवारी से चलता ही नहीं तो किराया किस बात का लूँगा? और पहली बार नहीं आज सातवीं बार आया हूँ।"

बयान दर्ज करता पेशकार और फाइल पढ़ते नायब, दोनों ध्यान से भूसी को देखने लगे।

"जब पेशेवर गवाह नहीं हो तो छत्रधारी से क्या दुश्मनी है जो उनके खिलाफ गवाही देने चले आए?"

"गल मत बोलिए वकील साहेब। मैं छत्रधारी के खिलाफ नहीं, सच्चाई के पक्ष में गवाही देने आया हूँ। संतोखी के बाप के मरने की तारीख की तसदीक करने आया हूँ।"

"किस तारीख को मरे थे संतोखी के बाप?"

"बीस मई सन् उन्नीस सौ बहत्तर।"

"दिन कौन-सा?"

"शनिवार, सबेरे नौ बजे के करीब।"

"समय कैसे जाने?"

"संतोखी दस बजे के करीब आए। बताए कि एक घंटा पहले बप्पा का देहान्त हो गया है। लाश जलाने के लिए लकड़ी चाहिए।"

"तिथि क्या थी?"

"बैसाख उजाले पाख की अष्टमी।"

"इतनी पुरानी बात कैसे याद रह गई?"

"उसी दिन मेरे बेटे की बारात जा रही थी। उसी तिथि के लिए हफ्तों से रिश्तेदारों को न्योता देता रहा था। 'गमी' हो जाने के चलते उसी समय मैंने दरवाजे पर बजता नगाड़ा बन्द करवाया था।"

"लेकिन संतोखी लकड़ी माँगने आपके ही पास क्यों गए? आप तो इनकी जाति-बिरादरी के भी नहीं हैं। इसका मतलब आप दोनों में दाँत-काटी रोटी वाली दोस्ती है।"

"दोस्ती-दुश्मनी की बात नहीं है वकील साहेब। मेरे खानदान का यह 'नेम' है, आज से नहीं, जमाने से, कि गाँव में किसी की मौत होती है तो लाश जलाने के लिए मेरी बाग से एक सूखी डाल और 'तिखती' बनाने के लिए कोठ से दो बाँस कोई भी काट सकता है। बिना पैसे के। इसलिए संतोखी लकड़ी और बाँस माँगने आए थे। मैंने विवाह के लिए काटी गई लकड़ी से उन्हें एक मोटा बोटा दिया था।"

"वाह, इतनी तगड़ी याददास्त। तो जरा अपने बाप के मरने की तारीख भी बताइए।"

"मेरे बाप की मौत का इस मुकदमे से क्या ताल्लुक है?"

"ताल्लुक है? दूसरे के बाप के मरने की तारीख रटे हुए हो और अपने बाप के मरने की तारीख पता नहीं?"

"पता क्यों नहीं? लिखिए 13 सितम्बर, 1942"

"सबूत?"

"सबूत चाहिए तो बेल्हा कचेहरी चले जाइए। वहाँ सन् 42 में अंग्रेजों की गोली से मरने वाले जिन शहीदों के नाम खम्भे पर खुदे हुए हैं उनमें मेरे बाप का नाम भी तीसरे नम्बर पर दर्ज है।"

इसी के साथ बहस खत्म हो गई।

बाहर निकले तो संतोखी के वकील ने हँसते हुए कहा- "वाह भूसी भगत। आपने तो विपक्षी वकील की भूसी छुड़ा दी।"

शाम को भट्ठे से लौटकर गजाधर जंगू को पढ़ा रहे थे। ओसारे में बिछे बोरे पर बाप-बेटे आमने-सामने बैठे थे। बीच में लालटेन रखी थी।

109

जंगू पढ़ने में तेज है। बीस तक का पहाड़ा तो दर्जा दो में ही याद कर लिया था। गजाधर उसे गुणा-भाग सिखा रहे हैं। वे खुद नहीं पढ़ सके। जिस साल दर्जा छह में गए उसी साल बाप का देहान्त हो गया। छत्रधारी के बाप ने उन्हें बाप की जगह हलवाही करने के लिए पकड़ लिया। पढ़ाई छूट गई। उन्होंने तय किया है कि जंगू को आखीर तक यानी सोलहों दर्जे पढ़ाएँगे।

बाहर से आवाज आई-" गजाधर।"

गजाधर ने आवाज से पहचान लिया, माठा बाबा हैं। वह हक्का-बक्का। आज क्या हो गया? आज तक तो बाबा कभी उसके दरवाजे आए नहीं। उसने खड़े होकर पायलागी की। कहा- "हुकुम करें बाबा। कहाँ बैठाएँ आपको?"

"बैठने नहीं आया बच्चा। तुम्हें एक 'ब्रह्मास्त्र' देने आया हूँ। मैं जानता हूँ कि तुम परेशान हो। उस दिन चट्टी पर तुम्हें विद्रोही के साथ बस से उतरते देखा था। दुनिया जानती है कि छत्रधारी अन्यायी हैं। जिस पत्तल में खाते हैं उसी में छेद करते हैं। लेकिन तुम तो उनके रात-दिन के साथी थे। तुम्हारे साथ उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए था।"

उन्होंने बंडी की जेब से कागज निकालते हुए कहा- "यह ऐसा दस्तावेज है जिससे तुम्हारे गले में पड़ा भट्ठे के टैक्स का फंदा निकलकर छत्रधारी सिंह के गले में कस जाएगा।"

गजाधर ने दोनों हथेलियों की अँजुरी बनाकर कागज को उसमें रोपा और सिर से लगाया।

बाबा मुड़े और अँधेरे में अन्तर्धान हो गए।

गजाधर थोड़ी देर अँधेरे में खड़ा सोचता रह गया। माठा बाबा को उसने बहुत बार कहते सुना है- शूद्र उपकार ब्रह्म हत्या। अर्थात शूद्र का उपकार करने पर उतना ही पाप लगता है जितना ब्राह्मण की हत्या करने पर लगता है। तो फिर आज बिना माँगे मुझ पर यह उपकार क्यों?

वे तुरन्त विद्रोही जी के घर पहुँचे। विद्रोही जी ने दस्तावेज पढ़कर बताया- "अरे, यह तो बड़े काम की चीज दे दिया बाबा ने। यह भट्ठा-मालिक के रूप में छत्रधारी और जमीन-मालिक के रूप में माठा बाबा के बीच छह साल पहले हुआ ईंट पाथने के लिए मिट्टी खोदने का एग्रीमेंट है। उन्हीं वर्षों के लिए जिनके लिए भट्ठा-मालिक मानते हुए तुम्हारे ऊपर टैक्स लगा है। वकील के पास जाकर इसको तुरन्त अपनी फाइल में लगवा दो। अब समझो तुम्हारा ग्रह कट गया।"

"लेकिन माठा बाबा ने छत्रधारी के खिलाफ मेरे जैसे आदमी की मदद क्यों की?" "उन्होंने तुम्हारी मदद नहीं की। तुम्हारी आड़ में छत्रधारी पर चोट की है।"

अगम बहै दरियाव

इस बार विद्रोही जी के बेटे बद्री पहलवान भी रामगंज के मेले में अपना लाल लँगोटा लहराना चाहते हैं। गाँव में नागपंचमी के दिन होने वाले दंगल में तो वे बारह साल की उम्र से ही भाग लेते रहे हैं। छत्रधारी सिंह के हाथ से कितनी तौलिया, बनियान और साबुन की बट्टियाँ इनाम के रूप में जीत चुके हैं। पिछले दो वर्षों से वे इलाके में लम्बी कूद के चैम्पियन भी बन रहे हैं। पर रामगंज के मेले में...

रामगंज का मेला इस इलाके के सांस्कृतिक जीवन में खास महत्त्व रखता है। चारों तरफ से दो-ढाई कोस दूर तक के लोग इस मेले में आते हैं। पहले तो, तीन-चार दिन पहले से दुकानदार बैलगाड़ियों पर सामान लादे पहुँचने लगते थे। विशाल आम के बाग के बाहरी वृत्त पर सैकड़ों बैलगाड़ियाँ 'पार्क' हो जाती थीं। उनके विशाल डील-डौल और बड़े-बड़े सींगों वाले बैल बोरे पर दाना-भूसा खाते कितने भव्य लगते थे! अब बैलगाड़ियों की संख्या घटी है। उनकी जगह ट्रक और टेम्पो आने लगे हैं।

यह मेला वर्षों से बिछुड़ी सहेलियों और पूर्व प्रेमी-प्रेमिकाओं का मिलन-स्थल है। बचपन की सहेलियाँ अलग-अलग दिशाओं में ब्याह दी गईं या विवाह के बाद प्रेमी पीछे छूट गए। सम्भव है इस मेले में उनसे मुलाकात हो जाय। विशाल बाग के बाहरी हिस्से में हर गाँव के लोगों ने अपनी जगह तय कर रखी है, आम या महुए के उसी खास पेड़ के नीचे वे सुस्ताने के लिए इकट्ठे होंगे। वर्षों से ऐसा है और सबको इसकी जानकारी है। नए-नए प्रेमी-प्रमिका बने और साथ जीने-मरने की कसम खा चुके जोड़े

भी इस मेले का इन्तजार करते हैं। यहीं से शाम सात बजे वाली गाड़ी पकड़कर बम्बई-सूरत भाग चलेंगे। पुराने जमाने के प्रेमियों के किस्से तो कराची-काबुल और रंगून तक भगा ले जाने के हैं। कभी-कभी वहाँ से उनकी दूसरी पीढ़ियाँ ही लौटती थीं।

दो दिन के इस मेले के तीन प्रमुख आकर्षण हैं। एक है, पहले दिन शाम को होने वाला झाबर का खेल। दूसरा है, रात में होने वाली नौटंकी और तीसरा, अगले दिन दोपहर से होने वाली कुश्ती का दंगल।

पहले यह मेला खास दशहरे के दिन ही लगता था। उन दिनों धान 'छिटुआ' बोया जाता था। फसल का बचना या सूखना वर्षा की मात्रा पर निर्भर करता था। सिंचाई के साधन नहीं थे। धान ही इस इलाके की मुख्य फसल थी। इसलिए अगैती किस्में बोई जाती थीं। जो जल्दी पक जाएँ और कम वर्षा होने पर सूखने का खतरा कम रहे,

जैसे 'तिनपखिया' अर्थात् तीन पखवारे में तैयार होने वाली प्रजाति। 'साठी' यानी साठ दिन में तैयार होने वाली प्रजाति। तब दशहरे तक कट-पिटकर धान घर आ जाता था। बाद में उन्नतिशील प्रजातियाँ बोयी जाने लगीं जिनकी बेरन डालकर रोपाई की जाती थी। यह एक सौ पन्द्रह से एक सौ तीस दिन में पकती थी और दशहरे तक फसल घर नहीं आ पाती थी। जब फसल ही घर तक नहीं पहुँची, हाँड़ी, गगरी, डेहरी, कुचुरी, हूँछी लुढ़की पड़ी हैं तो क्या लेकर मेला देखने जाएँ?

उन दिनों किसी विरहिणी ने अपनी बेबसी का रोना रोया होगा-

क्वार दसमी कै मेला घर मा पइसा ना अधेला बालम कइ गए अकेला मेला होइगा सपना।

दशमी का मेला आ गया। घर में पैसा तो छोड़िए एक अधेला तक नहीं है। बालम उसे अकेली छोड़कर परदेस विराज रहे हैं। ऐसे में मेला उसके लिए सपने जैसा है।

विरहिणी की इस वेदना को मेला आयोजकों ने गम्भीरता से लिया और मेले की तिथि दशहरे के दो हफ्ते बाद पड़ते रविवार को निर्धारित कर दी गई। तब तक धान भी घर आ जाता है और हवा में सर्दी की हल्की सिहरन भी महसूस होने लगती है।

इस मेले की झाबर में शामिल होने के लिए दूर-दूर के खिलाड़ी आते हैं। ऐसे खिलाड़ी जो अपने गाँव में सरनाम होते हैं। वे खुद को दूसरों के मुकाबले आजमाने की तमन्ना लेकर आते हैं। ऐसे खिलाड़ियों के साथ उनके चाहने वाले भी आते हैं जो मेंड़ से चिल्ला-चिल्लाकर अपने चहेते खिलाड़ी को खेलने का दाँव बताते और उसका उत्साहवर्धन करते हैं। चारों तरफ मेंड़ पर इतनी भीड़ जुटती है और इतना शोर होता है कि किसी को कुछ समझ में नहीं आता। ये समर्थक अपने साथ लाठी लेकर आते हैं। सौ-दो सौ समर्थक, तो उतनी ही लाठियाँ। बेईमानी की कोशिश तो हर खेल में होती है और निर्णायक फैसला हमेशा से लाठी ही करती आई है। हर दूसरे-तीसरे साल लाठी चल जाती है और दो-चार लोगों के सिर फूट जाते हैं। इस दुर्घटना को भोक्ता यादगार घटना के रूप में अपने बच्चों को बताता है।

झाबर स्थानीय खेल है। इस खेल को सारे खेलों का राजा कह सकते हैं। न इसमें समय का कोई बन्धन होता है, न खिलाड़ियों की संख्या का। दिन में खेलिए, चाहे रात में। उजाली रात हो तो बहुत अच्छा लेकिन अँधेरी रात में खेलने का

अगम बहै दरियाव

अपना अलग ही रोमांच है। परछाई की तरह दिख रहे खिलाड़ी पर दाँव लगाने का रोमांच। इसे दो लोग खेलें चाहे सारा गाँव खेले। न किसी मैदान की जरूरत, न कोई बैट, न बल्ला, न जूता, न नेट, न गेंद। बस एक जुता हुआ खेत भर मिल जाए। एकदम फकीरी खेल। जाहिर है कि ऐसा खेल उसी इलाके की ईजाद हो सकता है जहाँ अधिकांश लोग फकीरी जीवन जीते हों। शायद इसीलिए यह इस इलाके के आठ-दस जिलों में ही खेला जाता रहा है।

इस खेल के नायकों का किसी अखबार में नाम या फोटो नहीं छपता। वे अनाम नक्षत्र की तरह उदित होते हैं, दो-चार साल तक चमकते हैं फिर अस्त हो जाते हैं। गृहस्थी के कोल्हू में नधकर मिट्टी के धूसर रंग के साथ एकरंग हो जाते हैं। राह-बाट में चलते हुए कभी किसी की आँखों में पहचान की चमक उभर आने मात्र से उनका मन तृप्त हो जाता है।

बहुत जमाने से इस मेले की 'सिग्नेचर ट्यून' गीत की यह कड़ी है- 'चोटही जलेबी लाल-लाल, रामगंज का मेला।'

इस गीत की पुरातनता इसी बात से सिद्ध है कि इसमें चोटही जलेबी का उल्लेख है। चोटा की चाशनी में सिझाई गई जलेबी। पहले चीनी मिलों से बाई-प्रोडक्ट के रूप में चोटा निकलता था, सीरे से ज्यादा मीठा और पौष्टिक। उसकी एक खास 'मदाहिन' गन्ध होती थी। मनमुदित कर देने वाली। आदत पड़ जाए तो आदमी बार-बार सूँघना चाहे। यह 'मदाहिन' गन्ध चोटही जलेबी में उतर आती थी। सूँघिए भी, खाइए भी।

इस चोटे से कुछ कम गुणवत्ता वाले चोटे से हुक्के की तम्बाकू सानी जाती थी। जिस कोठरी में इस तम्बाकू की हाँड़ी रखी होती थी वह 'मदाहिन' गन्ध से महकती रहती थी। बच्चे बार-बार उस गन्ध को सूँघने जाते थे। चोटे का जमाना तो चला गया लेकिन मेले में जलेबी छानने वाले अब भी एक पंक्ति में बैठकर गुड़ की जलेबी छानते हैं। कालेपन की सीमा तक पहुँचती लाल जलेबी के छत्ते।

इस बार भगवत पाँड़े की नौटंकी का सट्टा हुआ है। कहते हैं पाँड़े की कम्पनी अब चनुआडीह की कम्पनी के कान काटने लगी है।

ऐलान हो रहा है कि 'सुल्ताना डाकू' का खेला होगा। जगह-जगह पोस्टर चिपकाए गए हैं। सुल्ताना के रूप में पाँड़े और उसकी प्रेमिका फूलकुँवरि के रूप में अनारा का फोटो।

इसका मतलब सुल्ताना का पार्ट पाँड़े खुद करेंगे। सच पूछिए तो सुल्ताना के रोल में बैताली ज्यादा जमता। उसकी लम्बी मूँछों और चमकती आँखों का जवाब नहीं। आवाज में कितनी तड़प है। लेकिन पाँड़े बैताली को ऐसे किसी खेला में हीरो का रोल देने से बचते हैं

जिसमें अनारा हीरोइन का रोल कर रही हो। अन्दर से डरते हैं। दोनों हमउम्र हैं, जवान हैं और जवानी अन्धी होती है।

पश्चिम में सूरज का गोला लाल होते ही रावण का दगना शुरू होता है।

मेला समाप्ति की घोषणा।

आठ बजते-बजते नगाड़े पर चोट पड़ने लगती है। देखते-देखते आधे से ज्यादा सेन्दुरिया बाग का मैदान दर्शकों से भर जाता है। अभी से आगे की जगह छेकानी होगी।

भगवत पाँड़े लम्बा कुर्ता पहने, तहमद लपेटे, सिर पर रंगीन राजस्थानी पगड़ी बाँधे स्टेज पर आते हैं और माइक टेस्टिंग के बाद ऐलान करते हैं-

गाँव बनकटा खुर्द के कह भगवत निःशंकाऽऽऽ आज सेन्दुरिया बाग में बजे फतेह का डंकाऽऽऽ कड़ कड़ कड़... धड़ाम ! धड़ाम !

पाँड़े ने अपना तखल्लुस 'निःशंक' रखा है। अपने गाँव का नाम सुनकर बनकटा गाँव के लोगों का सीना गर्व से चौड़ा हो जाता है। पाँड़े की नौटंकी कम्पनी इलाके में गाँव का नाम मशहूर कर रही है।

सामूहिक वन्दना करने और दो-तीन छुट्टा छपरहिया गानों के बाद खेला शुरू करने की आवाज उठने लगती है। रुको भाई। एकाध छपरहिया और सुनने दो। 'अइलीं-गइली' वाली बोली के गानों को इधर 'छपरहिया' गीत कहते हैं। इनमें रस ज्यादा होता है। छपरा, भागलपुर की ओर से आने वाली कम्पनियों ने इसका स्वाद जगाया है।

अब फूलकुँवरि अपना मुजरा शुरू करती हैं। सुनने वालों में हर उम्र और हैसियत के लोग दिख रहे हैं।

जरा ठहरो बलम, रात बहुतै परी।

"लगता है बलम अपना काम निकालकर भागना चाहता है।" "वह भी क्या करे? हमने भी झेला है। सबके सोने के बाद चोर की तरह घर

अगम बहै दरियाव

में घुसते थे। उसी समय कोई खाँस या छींक देता तो चिहुँक जाते। जल्दी-जल्दी पार उतरते और दबे पाँव वापस। यह भी पता लगाने की कोशिश नहीं करते कि जोड़ीदार भी पार उतर पाया कि नहीं?"

"यही बात है। रुकने की मनुहार इसीलिए कर रही है।"

"अरे, एक बार तो अपने ही गाँव में ऐसा हुआ कि बाप और जवान बेटा दोनों लोग घर के अन्दर चले गए। बाहर दोनों की चारपाई सूनी। कोई उधर से गुजरा। उसे मजाक सूझा। उसने बाहर से किंवाड़ में कुंडी लगा दी।"

"तब?- कौन थे? कैसे निकले?"

"छोड़ो। किसी को बेपर्द करने से क्या फायदा?"

ऊपर वाले ने जैसा रूप दिया है वैसा ही गला भी। क्या कोयल की तरह कूक रही है! कमर की लचक देखिए!

फिरकी की तरह नाचती फूलकुँवरि के हरे घाघरे के छत्राकार घेरे की भँवर में दर्शकों का मन गोते लगा रहा है। आकार

उमरिया बारी बीती जाय, बलम घर नाहीं आए मोर!

"आए हैं, आए हैं। इधर बैठे हैं। कई दिशाओं से आवाज आती है।"

सुल्ताना भी भेष बदलकर मुजरा सुनने वालों के बीच बैठा है। दो ही गाने में वह प्रेमबाण से घायल हो गया लेकिन मूच्छित नहीं होता। खड़ा हो जाता है। सारे दर्शक पहचानकर हर्ष-ध्वनि करते हैं- यही है सुल्ताना।

लेकिन फूलकुंवरि नहीं पहचानती।

सुल्ताना ठुमक ठुमककर कदम बढ़ाते हुए गाता है-

"क्या मिलेगा तुमसे नैना लड़ाकर नौजवान? क्या है तुम्हारी झोरी में? मैं तो सिपहिया से नैना लड़ाऊँगी जो मुझे सोने के महल में रखेगा। चाँदी के बरतन में खिलाएगा। चंदन के पलंग पर सुलाएगा।"

"मैं तुम्हें अपने दिल में रखूँगा रानी। अपने हाथ से खिलाऊँगा। अपनी गोद में सुलाऊँगा।"

"हा-हा-हा-हा! नादान नौजवान। दुनिया दिल से नहीं, दौलत से चलती है।" फिर दर्शकों की ओर मुड़कर कहती है-"कैसे-कैसे कंगाल चले आते हैं मजनूँ बनकर।"

"ऐसी गुस्ताखी।" तड़प उठता है नौजवान।

प्यारी कंगाल किसको समझती है तू मेरी दौलत जमा है अमीरों के घर जब कहेगी मैं जाकर के ढो लाऊँगा। हीरे-मोती से भर दूँगा मैं तेरा घर।

कड़कड़ कड़कड़ धड़ाम ! धड़ाम ! धड़ाम !

एक दर्शक दूसरे से पूछता है-"काका, सोने की कीमत ज्यादा होती है कि हीरे की?"

काका कहते हैं-" अपनी-अपनी पसन्द ! मेरी माँ तो जब तक जिन्दा रही सोने का ही गुन गाती रही।"

फूलकुँवरि का लहजा नरम पड़ जाता है। सिर झुकाकर आदाब बजाते हुए कहती है-"कनीज की गुस्ताखी माफ करें हुजूर। अपनी पहचान जाहिर करना चाहेंगे?"

"वक्त आने पर।" नौजवान एक झटके से नेपथ्य में जाने को मुड़ता है।

"सुनो हुजूर, सुनो...

आज आए हो औ कल चले जाओगे
यह सितम मुझको दिलबर गवारा नहीं
उम्र-भर का सहारा बनो तो बनो
चार दिन का सहारा सहारा नहीं"

नौजवान एक बार मुड़कर देखता है। दोनों की नजरें चार होती हैं।

दम्म! दम्म ! दम्म! दम्म !

नगाड़ा देर तक दमदमाता रहता है।

फूलकुँवरि ने भले न पहचाना हो लेकिन मुखबिर ने न सिर्फ पहचान लिया, बल्कि फौरन यह खबर पुलिस अफसर यंग के पास पहुँचा दी।

नौजवान के नेपथ्य में अदृश्य होते ही मंच की दूसरी तरफ से यंग प्रवेश करता है।

"ऐ लड़की, सुल्टाना टेरे कोटे पर आटा है। उसे पुलिस से गिरफ्टार कराना माँगटा।"

"नहीं हुजूर। सुल्ताना को पहले मैं गिरफ्तार करूँगी।" दोनों बाँहों का घेरा बनाती है, नीचे का होंठ दाँत से दबाती है और आँख मारकर कहती है-"...फिर पुलिस..."

अगम बहै दरियाव

"ओके, ओके, फूलकुँवर टुम बहोट चंट है। टुमको बहोट इनाम डेगा।"

अब खेला जमेगा। भीड़ ठसाठस है। लघुशंका लगी है? दबाकर बैठे रहो। निकले तो लौट नहीं पाओगे।

सुल्ताना के गिरफ्तार होते-होते आधा घंटा दिन चढ़ आया है लेकिन मजाल है कि भीड़ टस से मस हुई हो।

"कमाल का पार्ट करती है अनारा!"

"इलाके की शान है।"

अगम बहै दरियाव

दंगल का तासा बूढ़ा फिरंगी हेला बजाता है। ठीक बारह बजे वह एक पौवा देसी चढ़ाकर, पान खाकर, सिर में लाल पगड़ी बाँधकर आ जाता है। अखाड़े की गोड़ाई शुरू! पहले फावड़े से, फिर कुदाल से। मिट्टी मैदे की तरह महीन और मुलायम होनी चाहिए। जरूरत हो तो पानी का छिड़काव कर लीजिए।

इस साल मेला कमेटी ने बाहर से दो पहलवान बुलाए हैं। एक बनारस से, भुंडा पहलवान। दूसरा इलाहाबाद से, गूँगा पहलवान। विजेता को ग्यारह सौ रुपये का इनाम और उपविजेता को हजार रुपये का। बद्री पहलवान संकोची हैं। उनका नाम लड़ने वाले पहलवानों की सूची में कैसे शामिल हो?

पहले जूनियर कुश्ती शुरू होती है। फिर सीनियर।

जीते या हारे, हर प्रतिभागी के लिए कोई न कोई पुरस्कार है। पैंट-शर्ट के कपड़े, तौलिया, बनियान से लेकर कलम, कलर बॉक्स, स्कूल बैग और पटरी, पेंसिल तक।

दोनों बड़े पुरस्कारों के बाद स्थानीय विजेताओं के लिए तीन साइकिलें हैं। लकड़ी के तीन खम्भों में अखाड़े के बगल उन्हें ऊँचाई पर टाँगा गया है। एकदम चमचमाती हुई। पैडल उलटा घुमाइए तो 'फिरी' की चनचनाहट दूर तक सुनाई देती है।

फिरंगी के सिर का पसीना चेहरे पर बह रहा है। कुर्ता पसीने से भीग गया है। वह एक और 'पौवे' की माँग कर रहा है।

दोनों नुमाइशी पहलवान एक से बढ़कर एक हैं। कह नहीं सकते कि कौन बाजी मारेगा।

आधे घंटे से तो एक-दूसरे का हाथ ही छटका रहे हैं। भिड़ने की नौबत ही नहीं आई। भीड़ अखाड़े में घुसी पड़ रही है। रेफरी की सीटी बार-बार बज रही है।

अचानक गूँगे पहलवान ने पता नहीं कौन-सा दाँव लगाया कि धुंडा आसमान में पलटी खाकर पीठ के बल गिरा। शोर मच गया।

भुंडा एक बार और भिड़ना चाहता है पर गूँगा मैदान से बाहर निकल गया है। तभी बद्री पहलवान हाथ जोड़कर अखाड़े में आते हैं। क्या कह रहे हैं? वे भी लड़ना चाहते हैं? किससे? चैम्पियन से?

अब गूँगा को मैदान में लाया जाता है।

विद्रोही जी बेटे का हौसला देखकर खुश हो जाते हैं। वे अखाड़े में आकर खुद पहलवान का साफा और कुर्ता उतारकर पीठ ठोंकते हैं। पहलवान लुंगी उतारकर बाप को पकड़ाते हैं। लगता है लाल लँगोटा अभी-अभी सिलवाया हैं। एकदम नया। कितना जम रहा है। शरीर में चर्बी का नामोनिशान नहीं।

लेकिन उमर कम है।

रेफरी ने दोनों के हाथ मिलवाए। थोड़ी देर में दोनों भैंसे की तरह हाँफने लगे हैं। कोई किसी से उन्नीस नहीं लगता। बार-बार उठकर खड़े होते हैं और भिड़ते हैं। लगता है, गूँगा थक रहा है। वह बच-बच कर समय बिता रहा है। एक कुश्ती पहले लड़ चुका है न! अचानक पहलवान ने लंगी मारी। गूँगा अपने भारी शरीर का सन्तुलन खो बैठा। पलक झपकते धड़ाम।

गाँव के लोगों ने पहलवान को आसमान में टाँग लिया। अखाड़े के चारों ओर नाचने लगे। विद्रोही खुद नाचने लगे।

माला पहनाने और इनाम देने की होड़ लग गई।

विद्रोही जी बेटे के गले से माला निकाल-निकाल कर अँगोछे में बाँध रहे हैं। ले चलकर पत्नी को दिखाएँगे।

पहलव्गन अपनी लुंगी रोपकर घूमने लगे। एक, दो और पाँच के नोटों की झड़ी लग गई। कुछ दस के भी। उसे गठरी की तरह बाँधकर उन्होंने विद्रोही को पकड़ाया।

मेला कमेटी ने माइक पर घोषणा की पहलवान के लिए स्पेशल इनाम-

इक्कीस सौ रुपये का।

बाजार की सेठानियाँ भी पड़ोसी गाँव के उस पहलवान को देखना चाहती हैं जिसने बाहर के पहलवान को पटकनी दे दी। इसके लिए गुड़ मंडी के छोटे मैदान को कनात से घेरा जाता है। बीच में एक तखत रखा जाता है। यहाँ पुरुषों का आना वर्जित है। दस साल तक के बच्चे आ सकते हैं।

ढीला-ढाला कुर्ता पहने लुंगी बाँधे पहलवान दोनों हाथ। सर के ऊपर जोड़े प्रवेश करते हैं। अगल-बगल खड़ी प्रौढ़ाओं के पैर छूकर आर्शवाद लेते हैं। तखत पर खड़े होकर दोनों हाथ उठाते हैं तो शागिर्द उनका कुर्ता उतारता है। वे खुद लुंगी

अगम बहै दरियाव

खोलकर नीचे गिरा देते हैं। लाल लँगोट वाले चमकते शरीर को महिलाएँ आखों से पीने लगती हैं। नजदीक से देखने की होड़ लग जाती है। अनुभवी स्त्रियाँ इसका हल निकाल लेती हैं। गोद के बच्चे पर फूँक मरवाने के लिए वे पहलवान के नजदीक घिर आती हैं। पहलवान के पेट, पीठ और जाँघों पर वे चुटकी काट रही हैं।

कुछ स्त्रियों ने 'नेहछू' के रूप में रुपये देना शुरू किया। शागिर्द ने फौरन लुंगी फैला दी। पहलवान दोनों हाथों से नोट लेकर माथे से छुवाते हैं और लुंगी के खोंइचे में डालते जाते हैं।

घर की छतों पर खड़ी होकर देखने वाली महिलाओं को लगता है कि वे ठगी गई हैं। उन्हें यह दूरी अखर रही है। शागिर्द देखता है, दंगल में मिले इनाम में एक, दो और पाँच के नोट ज्यादा थे। यहाँ दस से कम का एक भी नहीं। कुछ पचास और सौ के भी।

र्तिक एकादशी! दलिद्दर खेदने का त्योहार।

घर में पीढ़ियों से जड़ जमाकर बैठे दलिद्दर को भगाने के लिए किसान का पूरा परिवार रात-दिन खेत में खटता है, लेकिन भगा नहीं पाता। इसलिए कार्तिक एकादशी की भोर में हर गृहिणी घर से दलिद्दर के भागने और इस्सर के आने का आह्वान करती है।

कैसे पड़ी होगी दलिद्दर खेदने की परम्परा !

हरित क्रान्ति आने के पहले पीढ़ियों से ऐसा था कि गाँव के सौ में से नब्बे लोगों को दोनों जून भोजन नहीं मिलता था। खरीफ की फसल पकने के पहले रबी का अनाज खत्म हो जाता था। सावन-भादों के इन महीनों में सुग्गे भी उपवास करते थे क्योंकि इस मौसम में न कोई फल मिलता था, न कोई फसल तैयार होती थी। जिस गृहस्थ के घर इस दुर्दिन में अनाज खत्म हो गया उसके लिए एक ही उपाय था- गम खाना। इससे बचने के लिए किसान स्टेपनी फसल का इन्तजाम करता था। साँवा, कोदो, मकरा बोता था जो भादों के अन्त तक तैयार होता था। उसके पीछे ज्वार, बाजरा, मक्का। तब तक क्वार में धान तैयार हो जाता था। पेट का दुख दूर हुआ,
*ऐश्वर्य

लेकिन पेट भरने से ही तो गुजारा नहीं होगा। घर से दलिद्दर ती तभी भागेगा जब नगदी आए और नगदी आएगी गन्ने से। तो हे गन्ने में वास करने वाली लक्ष्मी, इस साल इतनी नगदी दीजिए कि गृहलक्ष्मी को हँसुली गढ़ाई जा सके।

तो घर से दलिद्दर को भगाने और ऐश्वर्य के आने की आकांक्षा से यह त्योहार मनाया जाने लगा होगा।

विद्रोही जी भी पीतल की थाली में कंडी की आग, हँसुली, गुड़, तेल, अक्षत और सिन्दूर लेकर गन्ना पूजने जा रहे हैं। पीछे-पीछे आधी बाल्टी पानी, लोटा और गँड़ासा लेकर पहलवान।

गन्ने के एक थान को हँसुली पहनाकर विद्रोही जी तेल और सिन्दूर का टीका करते हैं। कंडे की आग पर गुड़ और अक्षत की अगियार करते हैं। पिता-पुत्र सिर झुकाते हैं।

पहलवान एक बोझ गन्ना काटकर बाँधते हैं। अगियार सुलगकर खत्म हो जाती है तो बाल्टी के पानी से आग अच्छी तरह बुझाकर बाप-पूत लौटते हैं।

गन्ना तो पहले कल्याणी की तराई में भी बढ़िया होता था, लेकिन तब सियार बहुत थे। जंगल से झुंड के झुंड निकलकर आते और सत्यानाश कर देते। चूसते कम, तोड़ते ज्यादा। तब लोगों ने गाँव के पश्चिम और उत्तर के खेतों में बोना शुरू किया। यहाँ से जंगल दूर था और बीच से रेलवे लाइन गुजरती थी। तबके सियार रेलवे की सीटी से डरते थे। इस पार नहीं आते थे। इधर नहर का पानी भी इफरात मिलता है।

दूध की कमाई से कुछ पूँजी इकट्ठी हुई तो विद्रोही बहू ने भी इधर की सिंवार में गन्ना बोने के लिए एक बीघा खेत खरीदा।

कार्तिक एकादशी से ही गन्ना चूसने और पेरने की शुरुआत होती है। दलिद्दर भी गन्ने के डंडे से पीटकर भगाया जाता है। हर घर को गन्ने की जरूरत पड़ती है।

इसलिए जिस पड़ोसी ने गन्ना नहीं बोया या जो पड़ोसी भूमिहीन है उसके घर गन्ना पहुँचाने की जिम्मेदारी गन्ने वाले पड़ोसी की बनती है। विद्रोही बहू ने भी पहलवान से कहा कि ऐसे हर पड़ोसी के घर पाँच-पाँच गन्ने दे आओ।

कार्तिक एकादशी की शाम विद्रोही बहू चना दाल की पूड़ी और सूरन की सब्जी बनाती हैं। साथ में रसियाव या मीठा चावल। विद्रोही जी भुने जीरे से सुवासित दाल पूड़ी खाकर मँड़हे में सोए तो भोर में चारों तरफ से आती ढप्प-ढप्प की आवाज से उनकी नींद टूटी।

घर की एक-एक कोठरी, भंडार घर, रसोई, और हर कोने-अंतरे से भगाने के बाद विद्रोही बहू किंवाड़ खोलकर बाहर आईं और गन्ने से सूप को पीटती तथा 'इस्सर आवै दलिद्दर जाय' का आह्वान करती पिछवाड़े की ओर चली गईं।

अगम बहै दरियाव

यही आह्वान इस समय गाँव की हर गृहिणी कर रही है।

दलिद्दर के प्रतीक पुराने सूप का हाथ-गोड़ तोड़कर उसे ऐसे गहरे गड्ढे में दफन कर देना है जहाँ से वह वापस न लौट सके।

खटिया पर बैठे गदोरी पर सुर्ती मलते विद्रोही जी सोच रहे हैं कि जाने कितने युग बीत गए किसान को अपने घर से दलिद्दर भगाने की जुगत करते हुए लेकिन दलिद्दर ऐसा गोड़ तोड़कर घर में बैठा है कि बाहर जाने का नाम नहीं ले रहा है। उन्हें लगता है कि शायद गुसाईं जी ने किसानों के लिए ही लिखा है-

सकल करम करि थकेउँ गोसाईं...

अब खबर है कि इलाके में गन्ना मिल लग रही है। गन्ना काटकर सेंटर तक पहुँचाना होगा। तीसरे दिन पैसा हाथ में आ जाएगा। इससे अच्छी खबर भला और क्या होगी! दिन-भर कोल्हू हाँकने और रात-भर भट्ठी झोंकने से फुरसत फुरसत मिल जाएगी।

लगे तो पता चले कि कितने फायदे की चीज है।

आज छत्रधारी के पक्ष में उनके हलवाहे महादेव गवाही के लिए पेश हैं। छत्रधारी ने सबूत के तौर पर सरकारी अस्पताल के रजिस्ट्रेशन का पर्चा दाखिल किया है। यह पर्चा 26 मई, 1972 को रमेसर, पुरुष, उम्र 70 वर्ष के नाम बनाया गया है। उनका तर्क है कि अगर रमेसर 20 मई को मर गए होते तो 26 मई को इलाज कराने अस्पताल कैसे पहुँच जाते? उन्होंने खुद अपने हलवाहे

के साथ रमेसर को अस्पताल भेजा था।

संतोखी के वकील महादेव से जिरह कर रहे हैं।

"छत्रधारी की हलवाही कितने दिन से कर रहे हो?"

"बीस साल से हुजूर।"

"रमेसर को किसके कहने पर अस्पताल लेकर गए थे?"

"बाबू छत्रधारी सिंह के।"

"रमेसर के बेटे संतोखी क्यों नहीं ले गए?"

"रमेसर अपना खेत बाबू साहेब की मेहरारू के नाम बैनामा कर दिए। इस बात पर बाप-बेटे में झगड़ा हो गया। संतोखी ने अपने बाप को बहुत मारा। पटक-पटक कर मारा।

रमेसर मुँह से खून फेंक दिए। उनका पेट पिराने लगा। वे रोते हुए बाबू साहेब के पास आए। बाबू साहेब ने मुझसे कहा कि ले जाओ, अस्पताल से दवा दिला लाओ।"

"लेकिन संतोखी तो कहते हैं कि उनके बाप मरने के छह महीना पहले से खटिया पकड़ लिए थे। टट्टी-पेशाब सब बिस्तर पर ही हो रहा था।"

"हमको नहीं पता।"

"अच्छा यह गले में क्या पहने हो?"

"कंठी है। राम-राम सुनकर भगत हो गए हैं।"

"ओ, तब तो मांस-मछली खाना भी छोड़ दिए होंगे?"

"एकदम। दस साल से।"

"और क्या-क्या छोड़े हो?"

"और क्या छोड़ेंगे?"

"जैसे झूठ बोलना छोड़े कि नहीं?"

"झूठ क्यों बोलेंगे?"

"हम तो इसलिए पूछ रहे हैं कि एक कहावत है-

कंठी पहिरै काठ की, तिलक देइ ठढ़ियाय। औ खेती काटै आन आन की, का कंठी चिल्लाय।"

"हमने भी सुना है।"

"तो हम जानना चाहते हैं कि अगर भगत आदमी किसी की फसल चुराने लगे या झूठ बोलने लगे तो यह कंठी चिल्लाती है कि नहीं?"

छत्रधारी का वकील टोकता है-" इस मुकदमे से इस सवाल का क्या मतलब? मेरे गवाह को इमोशनली ब्लैकमेल किया जा रहा है। मुझे सख्त एतराज है। इसे रोका जाय हुजूर।"

"अच्छा छोड़िए, यह बताइए कि जिस डाक्टर ने अस्पताल में दवा लिखी थी वह आदमी था कि औरत?"

"बहुत दिन की बात हो गई। याद नहीं।"

"डाक्टर को दवाई का दाम और फीस दिए थे कि नहीं?"

"यह भी याद नहीं।"

"डाक्टरी का पर्चा तो बनवाए होगे। तुम बनवाए थे कि रमेसर?"

"यह भी याद नहीं। उमर हो गई है।"

"पेशकार साहब, सब दर्ज करते चल रहे हैं न?"

"किस अस्पताल में गए थे? जिला अस्पताल में कि ब्लाक के अस्पताल में?"

"यह भी याद नहीं।"

"अब कुछ याद ही नहीं? अच्छा ! किस सवारी से गए थे?"

चुप रह जाते हैं महादेव। आसपास निगाह दौड़ाते हैं। पीछे खड़े छत्रधारी से निगाह मिलती है। उनकी आँखें अंगार हो रही हैं। महादेव को झुरझुरी छूटने लगती है।

"याद कर लीजिए। बस से गए थे कि इक्के से।"

"इक्के से। इक्के से।"

"कितना किराया दिए थे?"

"चार-चार आना।"

"अच्छा भगत, जिला अस्पताल तो पक्की सड़क पर है। उस पर कई सालों से इक्का चलना बन्द हो गया है। ब्लॉक वाली सड़क कंकड़ की है। उस पर अभी इक्का चलता है। इस पर भी अब सिर्फ दो इक्के ही चलते हैं। एक दुर्गापुर मियाँ का। तो आप किसके के छोटई यादव का और दूसरा भावापुर के अली मियाँ इक्के से गए थे?"

"छोटई यादव के इक्के से।"

"कितने बजे अस्पताल पहुँचे थे?"

"घड़ी तो हम बाँधे नहीं थे हुजूर। ग्यारह-बारह बज रहा होगा।"

"बस, हुजूर।" संतोखी के वकील नायब की ओर देखकर कहते हैं। "वकील साहेब," महादेव कहते हैं, "यह तो पूछे ही नहीं कि हम रमेसर को किस तारीख को अस्पताल ले गए थे?"

"इसकी याद है? बताइए।"

"छब्बीस मई, दिन शुक्रवार।"

सभी मुस्कराते हैं। साथ में महादेव भी।

संतोखी के वकील नायब की ओर मुड़ते हैं- "हुजूर मुझे एक ही बात कहनी है। इसे खासतौर से नोट किया जाए। गवाह का कहना है कि वह 26 मई, 1972 दिन शुक्रवार को इक्के पर बैठाकर रमेसर को ब्लॉक अस्पताल ग्यारह-बारह बजे लेकर गया था और छत्रधारी सिंह ने रमेसर, पुरुष, उम्र 70 वर्ष के नाम बना ओपीडी रजिस्ट्रेशन का जो पर्चा सबूत के तौर पर दाखिल किया है, वह 26 मई, 1972; को जिला अस्पताल से 11 बजकर 35 मिनट पर बनाया गया है। मतलब कि जिस समय और तारीख में जिला अस्पताल में रमेसर के नाम का पर्चा बन रहा था, उसी तारीख में लगभग उसी समय गवाह ब्लॉक अस्पताल में रमेसर को लेकर पहुँचने का दावा कर रहा है। इस बात पर भी ध्यान दिया जाए

हुजूर कि जिला अस्पताल और ब्लॉक के बीच की दूरी 40 किलोमीटर है। जाहिर है कि प्रतिवादी द्वारा अपने पक्ष में प्रस्तुत सबूत और गवाह ही एक-दूसरे के तथ्यों को काट रहे हैं। झूठ को सच काटे, ऐसा तो बहुत देखने को मिलता है, लेकिन झूठ भी झूठ को काटता है ऐसा पहली बार देख रहा हूँ।"

गजाधर घंटे भर पहले भट्ठे से लौटे थे और ओसारे में भैंस के लिए चारा काट रहे थे। चारा मशीन की आवाज लयबद्ध बज रही थी- खचर खच्च ! खचर खच्च! थोड़ी दूर जंगू बोरे पर बैठा लालटेन के प्रकाश में पढ़ रहा था। रोशनी चारा मशीन से लेकर दुआर के सामने वाले हिस्से तक पड़ रही थी। घर के अन्दर से पकती हुई रोटी की महक आ रही थी।

बाहर से आवाज आई "गजधराऽऽ..."

चारा मशीन की आवाज में गजाधर को साफ सुनाई नहीं दिया तो वह आदमी ओसारे में झाँकते हुए चिल्लाया- "कहाँ छिपा है, बे?"

गजाधर ने पहचाना। भट्ठे पर ट्रैक्टर चलाने वाला मालिक का भतीजा दुर्गेश इस तरह क्यों बोल रहा है? वे बाहर निकल आए। बाहर दो आदमी और खड़े थे।

"क्या है बाबू?"

"तू आज की बिक्री का कैश लेकर क्यों भाग आया?"

"कैश लेकर क्यों भागेंगे? बत्तीस सौ की ईंट बिकी थी। तेरह सौ पथाई बाँट दिया। बाकी बक्से में रखे हैं। मालिक ने चाभी मँगवाई हो तो ले जाइए।"

"साले झूठ बोलता है? बक्से में तो एक पैसा नहीं है। ताला तोड़कर देख लिया।"

"बेईमान मत बनाइए बाबू। एक-एक पैसे का हिसाब देता हूँ। मालिक शाम को कहीं चले गए थे तो किसको देता? बक्से में बन्द कर दिया। ताला क्यों तोड़ दिया?"

"साले जबान लड़ाता है। बेईमान ! नमकहराम ! तेरी यह मजाल कि चाचा के खिलाफ मुकदमा दायर कर दिया!"

दुर्गेश ने मारने के लिए हाथ उठाया तो गजाधर ने बीच में ही पकड़ लिया। दुर्गेश छुड़ा नहीं पाया तो चिल्लाया-"साले चमरपिल्ली, तेरी यह मजाल!... छोटकन बाबू, पीछे से कमर पकड़कर लंगी मारिए।"

तीनों ने मिलकर गजाधर को चित गिराया। छोटकन गजाधर के पैरों पर बैठ

गया और दुर्गेश ठेहुने से छाती पर हुमचने और मुँह पर घूँसा मारने लगा। गजाधर चिल्लाया और मुँह से भल्ल से खून फेंक दिया।

जंगू पास पड़ा डंडा लेकर दौड़ा। तीसरे आदमी ने उसके हाथ से डंडा छीनकर उसकी पीठ पर चार-पाँच डंडे जमाए। फिर सिर से ऊपर तक उठाकर तीन बार पटका। बच्चे की आँखें आतंक से फैल गई। धिग्धी बँध गई।

चिल्लाहट सुनकर गजाधर की औरत और बेटी अन्दर से दौड़ी आई और बाप-बेटे को मार खाता देख उनके ऊपर लेट गईं।

दुर्गेश और छोटकन ने लड़की के दोनों हाथ दोनों तरफ से पकड़े और खींचकर खंडहर की ओर ले चले। तीसरा आदमी उनके पीछे चला।

लड़की छटपटाते हुए चिल्लाने लगी-"छोड़ो। छोड़ो।"

"बहुत फड़फड़ाती हो? अभी ठंडा करते हैं।"

माँ अँधेरे में बेटी की आवाज की दिशा में दौड़ी।

"अरे, छोड़ दो बाबू! बड़मनई होकर ऐसन काम न करौ। तोहार बहिन लगेगी।"

"क्या है? कैसा शोर है?"

"शायद गजाधर भट्ठे का पैसा चुरा लाया है। दुर्गेश मार रहा है।"

दुर्गेश का नाम सुनकर पास आते लोग ठिठक गए। जब केवल गजाधर के कराहने की आवाज रह गई तो लोग एक-एक कर आए।

गजाधर को उठाकर बैठाया गया। उसके मुँह से फिर खून का थक्का निकला। जंगू का एक पैर जमीन पर थम नहीं रहा था।

"लगता है, टूट गया।"

गजाधर की औरत बेटी को सहारा देती रोते हुए लौटी।

"इसी कसाई के कहने से पूरे टोले से बैर ठाना था। मुखबिरी की थी, नहीं तो उन लोगों को क्या पता चलता कि कौन सुअरबाड़े में छिपा बैठा है, कौन खंडहर में। उसका फल यह मिल रहा है।"

"टूटी हड्डी का बैठाया जाना बहुत जरूरी है नहीं तो पैर छोटा हो जाएगा।"

बाजार के बगल तालाब के किनारे जो कंजड़ों का टोला है वहाँ का सोपारीदीन हड्डी बैठाने में माहिर है। तुरन्त एक खटोले को डोली की शक्ल दी गई। जंगू को कथरी ओढ़ाकर उसमें लिटाया गया। जाड़े की अँधियारी रात। जंगू की माँ लालटेन लेकर आगे-आगे और डोली कन्धे पर उठाए दो लोग पीछे-पीछे।

आवाज देने की नौबत नहीं आई। सोपारीदीन के कुत्तों ने ही उसे जगा दिया। वह तुरन्त आया। पैर को हिला-डुलाकर समझा, फिर खींचकर बैठाया और पुराने कपड़े का प्लास्टर चढ़ा दिया।

सावधान किया कि हफ्ते भर हिलना नहीं है और महीने भर इस पैर को जमीन पर नहीं रखना है। सुअर का तेल प्लास्टर के ऊपर से लगाते रहना है।

छत्रधारी सिंह ने अगले दिन टोले के अपने जासूसों से पता कर लिया कि थाना पुलिस में जाने की कोई चर्चा नहीं है।

गजाधर की छाती का दर्द नहीं जा रहा था तो जंगू की माँ बाजार से डॉक्टर खान को बुला लाईं। उन्होंने आला लगाया। इंजेक्शन लगाया। खाने के लिए गोलियाँ दीं और कहा- "बोलचाल तो रहे हैं। कहीं कटा-फटा भी नहीं है, लेकिन सरकारी अस्पताल ले जाकर छाती का एक्सरे करवा लेना ठीक रहेगा।"

लेकिन सरकारी अस्पताल लेकर जाए कौन? आज तक इस टोले से कभी कोई सरकारी अस्पताल गया नहीं।

"मेरे खयाल से तो हल्दी-तेल गरम करके सारी देह में लगाइए और वही हल्दी मट्ठे के साथ पिलाइए। दस दिन में उठकर खड़े हो जाएँगे।"

लेकिन नहीं खड़े हो सके। मार खाने के तेरहवें दिन मर गए।

सबेरे गजाधर के दाह-कर्म के समय ही तूफानी एक और डरावनी खबर लाया- "कानपुर के एक गाँव में फूलन नाम की एक डकैतिन ने बीस-बाईस लोगों को लाइन में खड़ा करके गोली मार दी जिसमें ज्यादातर ठाकुर थे।"

सुनकर सबके होश उड़ गए।

"किस बिरादरी की है फूलन? हम लोगों की बिरादरी की होगी तो बिना गुनाह हमारा कतल हो जाएगा।"

अभी तक सबके चेहरों पर गजाधर की अकाल मृत्यु का दुख और दुर्गेश की निर्दयता का गुस्सा था। अब उसकी जगह भय व्याप्त हो गया।

एक-दो रातें टोले के बाहर बिताना ही ठीक रहेगा।

संतोखी बहुत खुश हैं। नायब कोर्ट का मुकदमा जीत गए।

वकील ने बताया तो लगा शरीर में खून का दौरा तेज हो गया है। देह फूल की तरह हल्की लगने लगी। किसी को बाँहों में भरकर चूम लेने का मन हुआ। लेकिन किसे? आसपास सब अजनबी थे। वकील साहब को चूम नहीं सकते थे। अदालत

अगम बहै दरियाव

के पीछे जो नीम का पेड़ है, संतोखी उसे ही बाँहों में भरकर चूमने लगे। उन्हें याद आया, चार साल पहले यही मुकदमा एकतरफा खारिज हुआ था तो वे इसी पेड़ से सिर टिकाकर देर तक सिसकते रहे थे। उनकी आँखें डबडबा गईं।

सच पूछा जाए तो उन्हें उम्मीद नहीं थी कि वे छत्रधारी जैसे जंडैल और दंदी-फंदी आदमी के खिलाफ लड़कर जीत पाएँगे। लेकिन आज मान गए कि छत्रधारी कोई तुर्रम खाँ नहीं हैं। सुनवाई तो महीने भर पहले ही पूरी हो गई थी। तब से वे आए दिन तहसील के चक्कर लगाते और नायब साहब के सामने पड़कर उन्हें झुककर सलाम बजाते। पर पता न चलता कि वे उन्हें पहचानते भी हैं या नहीं।

देर से ही सही, इन्तजार का फल मीठा मिला तो सारा मलाल दूर हो गया। काम का इतना बोझ रहता है उन लोगों पर कि देर-सबेर हो ही जाती है। एक कदम इजलास में तो एक कदम बाहर। कभी दौड़कर रेवेन्यू बोर्ड जाओ तो कभी हाई कोर्ट। कभी पैमाइश, कभी हदबन्दी, कभी मीटिंग। अकेला आदमी कहाँ-कहाँ पहुँचे? हजार रूप तो धर नहीं सकता!

आदमी अच्छे हैं साहब। पहले वाला तो एक नम्बर का 'घुसहा' था। घुसहा और जातिवादी दोनों।

वकील साहब ने समझाया- "पीछे पड़कर नामान्तरण बही में नाम चढ़वाओ और उसकी नकल ले लो। उसी को अटैच करके थाने पर कब्जा दिलाने की दरखास्त लगा दो।"

"छत्रधारी अपील भी तो करेंगे।"

"अपील करेंगे तो अपील भी लड़ी जाएगी। हमारा केस इतना मजबूत है कि स्टे नहीं पा सकते।... मेरी फीस निकालो।... चाहो तो इसी फैसले के आधार पर विपक्षी के खिलाफ चार सौ बीसी की रिपोर्ट लिखा सकते हो। सजा हो जाएगी।"

"अब और खर्च का रास्ता मत दिखाओ, वकील साहब। मुझे अपने खेत पर कब्जा मिल जाय, यही बहुत है।"

वे फीस देकर चल पड़े।

आज पत्नी की बहुत याद आ रही है। दो महीने से मायके गई हैं। उनकी माताजी बीमार थीं। आज ससुराल ही चलते हैं। बेटा आया होगा तो उससे भी भेंट हो जाएगी।

बेटा चार साल से ननिहाल में रहकर पढ़ रहा था। इस साल बी.ए. करने शहर गया है। बेटा आठवीं क्लास में फर्स्ट पास हुआ तो संतोखी डर गए। इस गाँव में रहेगा तो डाही लोगों की आँखों की किरकिरी बन जाएगा। दुश्मनी चल ही रही है। कोई फर्जी केस में फँसाकर जेल भिजवा देगा तो जिन्दगी बरबाद हो जाएगी। ननिहाल

भेजने के साथ ही हिदायत दे दी थी कि कभी भूलकर भी गाँव लौटने की न सोचे।

उसके मामा ही उसकी पढ़ाई का खर्च उठाते रहे। संतोखी तो ठीक-ठीक यह भी नहीं बता पाते थे कि वह किस क्लास में पढ़ रहा है।

दोनों तरफ का किराया घटाने के बाद आधा किलो लड्डू खरीदने भर के पैसे बच रहे थे। लड्डू खरीदकर उन्होंने बस पकड़ी और खिड़की से टेक लगाकर आँखें बन्द कर लीं।

अब पहले की तरह जजमानी से काम नहीं चल सकता। पहले खुद दुआर-दुआर घूमकर गाँव-भर का बाल बनाइए, फिर छह महीने बाद पत्नी घर-घर घूमकर अनाज इकट्ठा करे। आधा मिले, आधा उधार हो जाए। जो मिले उससे छह महीने का खर्च चलना भी मुश्किल।

बेटे की पढ़ाई का खर्च भी अपने जिम्मे लेना होगा। कब तक ननिहाल के गले पड़ा रहेगा। मुंसिफी वाला मुकदमा कब तक चलेगा, पता नहीं। पैसा तो कदम-कदम पर चाहिए।

तहसील या कचहरी में बैठने की जगह ढूँढ़नी होगी। किस्बत अपने पास है ही। गुमटी किराए पर लेना खर्चीला होगा लेकिन कुर्सी तो चाहिए ही, भले काठ की हो। ईंट या पत्थर पर बैठकर तो अब कोई बाल कटाने से रहा। लेकिन कुर्सी खरीद लें तो रात में उसे रखेंगे कहाँ? कहाँ?

गजाधर बहू क्या करें? दुर्गेश हाथ धोकर उनकी बेटी के पीछे पड़ गया है। रात में दारू पीकर आ जाता है और घर में घुसना चाहता है। उसकी देखा-देखी दूसरे लड़के भी उनके घर के आसपास मँडराने लगे हैं।

गजाधर बहू रात में दरवाजे के बाहर खटिया बिछाकर सोने लगीं तो एक रात दुर्गेश खपरैल पर चढ़कर आँगन में कूद गया। बेटी चिल्लाई तो पता चला।

गजाधर बहू दुर्गेश के घर ओरहन लेकर गईं-" अपने बेटे को काबू में रखिए ठकुराइन। हम गरीबों की कोई इज्जत नहीं होती क्या?"

जवाब दुर्गेश की बुआ ने दिया- "किसके लिए बछेड़ी पालकर रखी हो? ससुराल भेजो।" फिर मुस्कराकर बोली-"ठाकुर के लड़के हैं। देखकर ललचाएँगे तो कौन रोक लेगा?"

अगम बहै दरियाव

पास-पड़ोस के लोग भी दुर्गेश के नाम से डरते हैं। गोहार लगाने पर कोई दौड़कर आने वाला नहीं।

सगी जेठानी तो कहती थी कि लड़की ही छिनार है, खुद बुलाती होगी। काम निबट जाने के बाद चिल्लाएगी तो कोई पहुँचकर क्या कर लेगा? जेठानी को यह बात आज तक नहीं भूली है कि उसके आदमी को नसबन्दी के लिए गजाधर ने ही पकड़वाया था।

"ऐसी बात बोलते हुए इस हरजाई के मुँह में कीड़े भी नहीं पड़ते।" गजाधर बहू रो-रोकर सरापती हैं- "चौदह-पन्द्रह साल की बच्ची के लिए ऐसे कुबोल!"

गजाधर बहू ने मान लिया कि अब इस गाँव में उनका गुजारा सम्भव नहीं है। उन्होंने अपने भाई को बुलवाया। जाँत, चकरी, मूसल, नाँद और चारा-मशीन रात में अपने एक पड़ोसी के घर रखकर भोर में चारों लोग निकले। चार नहीं, भैंस को लेकर पाँच। जंगू के मामा और माँ के सिर पर अनाज की बोरी और रजाई। बेटी के सिर पर बर्तन की बोरी और हाथ में बाल्टी, बाल्टी में झाड़ू, लोटा, गिलास। कथरी, कपड़े, पढ़ाई का बस्ता जंगू के सिर पर। मामा भैंस का पगहा पकड़कर आगे-आगे और जंगू संटी से भैंस को हाँकता पीछे-पीछे। टोले का कुत्ता झबुआ गाँव के बाहर तक इन्हें पहुँचाने आया। कुछ देर रुककर अँधेरे में इन्हें जाते देखता रहा।

ग्राम समाज की एक खाली पड़ी जमीन पर ग्राम प्रधान ने गजाधर बहू को झोंपड़ी बनाने की जगह दे दी। जंगू के मामा ने उस पर झोंपड़ी खड़ी कर दी। मुख्तार साहब के घर में सुबह-शाम गाय-बैल को चारा-पानी देने, गोबर काढ़ने-पाथने और झाड़ू लगाने का काम मिल गया। दिन में जहाँ मिले, माँ-बेटी मजदूरी करने जाएँ।

मुख्तार साहब की पत्नी साल-भर पहले गुजर गई। बेटा कानूनगो है। बाल-बच्चों के साथ बाहर रहता है। खाना पकाने और चौका-बर्तन का काम बूढ़ी महरिन किसी तरह निपटा देती है।

गृहस्थी का काम करने वाली का जुगाड़ हो गया तो खुश हो गए।

मुख्तार साहब तो चाहते थे कि जंगू भी उन्हीं के घर रहे। जानवरों को चरा लाए और खेती-बारी के काम में मदद करे। लेकिन गजाधर बहू राजी नहीं हुईं। जंगू के बप्पा जंगू को पढ़ाना चाहते थे। वे उसकी पढ़ाई नहीं बन्द करा सकतीं। हाँ, जब तक गर्मी की छुट्टियाँ हैं, वह गाय-बैलों की देखभाल कर लेगा।

स्कूल खुलने पर जंगू की माँ जंगू को लेकर गईं और बड़े पंडित जी को एक रुपया देकर दर्जा पाँच में नाम लिखवा दिया।

हाथ जोड़कर कहा- "बिना बाप का बच्चा है। दू अच्छर सीख लेगा तो आपका गुन गाएगा।"

129

दक्षिणा पाकर पंडित जी प्रसन्न हुए। साँवला है तो क्या हुआ, लड़का सुन्दर है। स्वस्थ भी। दाँत कैसे चमक रहे हैं। पंडित जी ने बीच-बीच में कई बार जंगू की माँ की ओर देखकर मिलान किया। माँ तो गोरी है। इसका मतलब लड़का रंग में अपने बाप पर और गढ़न में माँ पर गया है।

पहलवान की बारात निकल रही है।

जब से रामगंज मेले के दंगल में पहलवान ने गूँगा पहलवान की पीठ लगाई, उनके घर बरदेखुओं का ताँता लग गया। एक जाता तो दो आ धमकते। विद्रोही बहू उन्हें हँसकर बतातीं कि उनके बेटे का बियाह तो उसके पैदा होने के पहले से तय हो गया है। लोग हँसते। कहते, "बियाह भले न मानिए लेकिन इनकारी का कोई कायदे का बहाना तो खोज लीजिए।" जबकि विद्रोही बहू झूठ नहीं कहती थीं। जब विद्रोही उनको लेकर भागे तो अपने घर नहीं गए। वहाँ पकड़े जाने का डर था। उन्हें लेकर अपने एक मित्र के घर गए और बम्बई जाने के पहले उन्हीं के घर दस-पन्द्रह दिन छिपे रहे। इस बीच दोनों स्त्रियों में बहनापा हो गया और दोनों ने तय किया कि यदि उनमें से एक को बेटा और दूसरी को

बेटी हुई तो दोनों को ब्याह दिया जाएगा। ऐसा ही हुआ। विद्रोही बहू को बेटा और उनके परिचित को बेटी हुई। आज वहीं बारात जा रही है।

नगड़ची बज रही है। परछन हो रही है। काँड़ी की परछन, मूसल की परछन, सूप और जाँत की परछन, अन्त में कुएँ की परछन।

पीला जोड़ा-जामा पहने, पाँव में महावर और आँखों में काजल लगाए, मौर बाँधकर सजे-धजे पहलवान को लेकर औरतों का दल गीत गाता हुआ विद्रोही बहू की अगुवाई में कुआँ पूजने जा रहा है-

सुनु सुनु कारे भँवरवा
नेवता लइ जाउ
होय मोरे पूत के बियहवा
नेवता दइ आउ

अगम बहै दरियाव

ऐ काले भँवरे, सुनो! मेरे बेटे का विवाह हो रहा है। जाकर सबको नेवता दे आओ।

इस गीत को पहली बार तेल-पूजन के मौके पर गाया जाता है और उसी दिन से रिश्तेदारी में नेवता भेजने की शुरुआत होती है-

अरगन नेवातेउं परगन नेवातेउं नेवातेउं ना बीरन भय की जेसे मैं रूथ गैऊं।

अरगन को न्योतना, परगन को न्योतना। सबको न्योतना। एक मेरे बीरन भइया को मत न्योतना, जिनसे मैं रूठी हुई हूँ।

गीत में बहन अपने बीरन से क्यों रूठी हुई है, इसका खुलासा गीतकार नहीं करता। लेकिन विद्रोही बहू के भाइयों को न न्योतने का कारण उनका अपना नहीं, भाइयों का नाराज होना है।

जब से वह विद्रोही जी के साथ भागीं, मायके से बोलचाल तक नहीं है। ऐसा न होता तो सबसे पहला न्योता दूल्हे के मामा के पास ही भेजे जाने का रिवाज है।

इस गीत के बोल विद्रोही बहू के उत्साह को शिथिल कर देते हैं।

कुएँ की परछन के बाद विद्रोही बहू कुएँ में दोनों पैर लटकाकर बैठ जाती हैं। घर वापस लौटने को तैयार नहीं। क्या करेंगे घर लौटकर? अभी तक जो बेटा उनके कब्जे में था, कल से वह बहू के कब्जे में चला जाएगा। तब उनको एक टूका रोटी तक के लिए तरसना पड़ेगा। बहू की टहलुई बनकर रहने से अच्छा है कि कुएँ में कूद जाएँ।

दूल्हा आगे आता है। माँ की काँख में पीछे से हाथ डालकर उठाते हुए वचन देता है-बहू के आने से तुम्हारी हैसियत कम नहीं होगी, अम्मा। मैं पहले तुम्हें खिलाऊँगा, तब खुद खाऊँगा। घर चलो।

विद्रोही बहू गाती हुई औरतों के साथ वापस लौट रही हैं-

अरगन आए, परगन आए, नाहीं आए बिरना हमार मैं काको धरि भेंटउँ हो

अरगन-परगन सब आए। नहीं आए तो केवल हमारे भइया। मैं किसको पकड़कर भेंट!

इस गीत का दर्द विद्रोही बहू के कलेजे में बीं घोंप देता है। भाई-भतीजों के शामिल हुए बिना सारी खुशी अधूरी है। उनके पैर थर-थर काँपने लगते हैं। वे बीच रास्ते में बैठ जाती हैं। आँचल से मुँह ढककर सिसकने लगती हैं। सम्पूर्ण चराचर उनके आँसुओं की बाढ़ में डूब जाता है।

टोले के सारे मर्द बारात चले गए। आज रात भर औरतों का रतजगा होगा। नाटक, स्वाँग, नृत्य, गायन। मनोरंजन और टोले की रखवाली भी। पड़ोस के तिरबेनी बाबा से चला नहीं जाता। गठिया ने जकड़ रखा है। रतौंधी भी होती है। उन्हें टोले की रखवाली के लिए छोड़ दिया गया है। तिरबेनी बाबा को

खिला-पिला कर उनकी पतोहू ने मैड़हे में सुला दिया है। उनको नींद नहीं आ रही है। विद्रोही ले गए होते तो वे भी बारात जाते। पता नहीं कि इस बारात में रंडी भी गई है नाचने के लिए कि नहीं? बहुत पहले एक बार ऐसा नाच देखा था। त्रिभुवन सिंह के बेटे की बारात में दो बहनें गई थीं। बड़ी लैला, छोटी लैला। बड़की लैला थोड़ी मोटी हो गई थी, लेकिन छोटकी तो गजबै थी। उस बारात में वे बोझवा बनकर गए थे। तीस पूड़ी खाए थे। दोनों बहनों का कमर लचकाते हुए छमाछम नाचना। एक बार तो छोटी वाली इतने नजदीक से गुजरी कि उसकी साड़ी का पल्लू उनके चेहरे से छू गया। महक का एक झोंका आया और कपड़ा-लत्ता सब मह-मह ! उनकी आँखें बन्द हो गईं। आज एक बार फिर वैसा ही नाच देखने का चानस मिल सकता था। शायद इस जिन्दगी का आखिरी चानस, लेकिन... यह रतौंधी भी अच्छी चीज है। बाहर की दुनिया जितनी धुँधली दिखती है, पुतलियों के अन्दर दिखने वाली दुनिया उतनी ही चटक ! रंडी का नाच जो अभी बारात में शुरू भी नहीं हुआ होगा, तिरबेनी को साफ दिख रहा है। लचकती कमर, छमछम बजते घुँघरू, उड़ता पल्लू, दाँतों की बतीसी; वाह, वाह, वाह!

करेजऊ करेजऊ करेजऊ

मुझे एक चुम्बन दो, मेरे प्रिय!

नाचते-नाचते दोनों बहनें एक-दूसरे में गड्डमड्ड हो रही हैं। आँखें बन्द कर लीजिए तो बहुत ही साफ दिखाई देता है। बुढ़ऊ का सिर धीरे-धीरे हिल रहा है।

अगम बहै दरियाव

"ए बुढ़ऊ। उठो!"

"अरे, छोटी लैला आई है कि बड़ी?"

दुआर पर जल रहे बल्ब की कटी-फटी रोशनी मँड़हे में आ रही है।

"उठ बे साले, बेहनचो..." रोबीली, भारी आवाज!

सिहर जाता है बुड्ढा। जिसका डर था वही हुआ। बहुत बार ऐसा हुआ है। सारे नौजवान बारात चले जाते हैं और पीछे से डाकू आकर पूरा गाँव लूट लेते हैं। मदाँ से सूना गाँव। विरोध करने वाला कोई

नहीं। कितने मजे से लेटे-लेटे दोनों बहनों के नाच का मजा ले रहे थे। अब जान बच जाए तो गनीमत समझो।

डंडे की नोक धोती से आधा बाहर झाँक रहे उनके अंडकोष पर चुभती है तो वे चिहुँक जाते हैं- 'बाप रे, बन्दूक की नाल। जाने कब फायर झोंक दें। अब तो उठने में ही कल्याण है।'

वे कराहते हुए उठते हैं। टॉर्च की तेज लाइट आँखों पर पड़ती है। वे दोनों हाथों से आँख मींच लेते हैं। उँगलियों के बीच से देखने की कोशिश करते हैं। टॉर्च बुझने के बाद भी देर तक आँखों को कुछ नहीं सूझता। कई लोग हैं। आगे का मोटा आदमी काले पतलून में। उसके बगल का, पुलिस की पतलून में। सिर पर छतरीदार गोल टोपी। जैसे अंग्रेज बहादुर पहनता था। रात में भी काला चश्मा? मतलब लुटेरे पहचान छिपा रहे हैं। पड़ोस के ही होंगे। वे आँखें मींजे-मींजे ही कहते हैं-" जो कुछ लूटना-पाटना हो लूट-पाट लो, राजा। बस, जान बक्स दो।"

"हम डाकू नहीं, बैंक के मैनेजर हैं। तुम्हें पकड़ने के लिए दारोगा जी को साथ लेकर आए हैं। तुम्हारे बेटे ने भैंस का लोन नहीं अदा किया।"

चलो, जान बची। कँपकँपाते बुढ़ऊ की हिम्मत बढ़ती है- "बेटे के लोन के लिए बाप को क्यों गिरफ्तार करेंगे, साहेब?"

"तुम जामिनदार बने हो कि नहीं? नीचे उतरो।"

"हमें कुछ दिखाई नहीं दे रहा साहब। रतौंधी होती है।"

दारोगा जी आगे आकर भारी आवाज में गरजते हैं-" अबे सीधे-सीधे उतरेगा कि हथकड़ी लगाऊँ?" बुढ़ऊ असहाय महसूस करते हैं। उतरना ही पड़ेगा। जमीन पर पैर टिकाने के साथ ही उन्हें कुछ सूझता है। उन्होंने अपने बचपन में देखा था, मालगुजारी वसूल करने वाले आते थे तो बिना दस-पाँच रुपये लिये मानते नहीं थे। वे अपनी पतोहू को आवाज लगाते हैं-"हे रे, पपुआ की माई! ये लोग तो जान के पीछे पड़ गए हैं रे! जरा दस रुपैया तो देना। ले-देकर दफा करें।"

"नहीं सुनेगी पपुआ की माई। वह तुमसे कम तंग है क्या? यह बताओ, जब वह कुएँ पर नहाती है तो तुम ओसारे में बैठे-बैठे उसे टकटकी लगाकर ताकते क्यों हो?"

"ऐ साहेब, आपको कैसे मालूम यह बात?"

"उसने थाने पर शिकायत किया है। दारोगा जी आगे बढ़कर गरजते हैं।"

"नहीं साहेब। चाहे कुछ भी हो जाय, वह ऐसा नहीं कर सकती। खानदानी बहू है।"

"चाहे कुछ भी हो जाए? इतनी खानदानी? लेकिन तुम तो नम्बरी बदमाश हो। इससे अच्छा है कि तुम खुद शादी कर लो।"

"नहीं, सरकार। वह मेरी बहू है।"

"अबे, उससे नहीं; किसी दूसरी औरत से।"

"क्या कहते हैं सरकार, मेरी अब शादी की उमर रह गई?"

"उमर को क्या हुआ? तुम्हारी घरवाली मर गई है तो कर सकते हो। एक लाख का लोन पास कर देंगे।"

बूढ़ा अवाक् !

"क्यों मजाक करते हैं, साहेब? शादी के लिए लोन।"

"क्यों नहीं? रँडुआ हो गए तो लोन के लिए सुपात्र हो गए।"

"तो दे दें हुजूर। बड़ी मेहरबानी होगी। अब आप से क्या-क्या बताएँ, जबसे मेरी बुढ़िया मरी... बहू को चार बार आवाज लगाओ तो एक बार बोलती है। एक बूंद पानी के लिए तरसा देती है।"

"और किस-किस चीज के लिए तरसाती है?" भीड़ में हँसी की लहर...

"जी हुजूर? कान से थोड़ा कम सुनाई पड़ता है।... कहती है कि इतने प्यासे हो तो वहीं खटिया के बगल में कुआँ खोदवा लो।"

"छोड़ो। अब किसी चीज के लिए तरसने की जरूरत नहीं रहेगी।"

"अरे हुजूर, वहीं बैठे-बैठे कहती है कि आ तो रहे हैं। क्या उड़कर आ जाएँ?"

"उड़ना चाहती है तो दिक्कत क्या है?"

"जी हुजूर, थोड़ा कम सुनाई पड़ता है।"

"लोन कैसे वापस करोगे?"

"अरे हजूर। एक बीघा खेत बेंच देंगे। अभी तो सब मेरे नाम ही दर्ज है। नहीं तो जितना कहिए बैंक के नाम रेहन कर देते हैं।"

"ठीक है। लो इस कागज पर अँगूठा लगा दो।"

एक कजरौटे में बूढ़े का अँगूठा रगड़कर कागज पर छाप लगाई जाती है।

बूढ़ा अँगूठे में लगी कालिख सफेद बालों में पोंछते हुए पूछता है- "हजूर, लड़की... माने औरत का इन्तजाम भी बैंक वाले करेंगे?"

"क्या बकते हो? लड़की खुद खोजो। बैंक केवल चेक देगा। कोई लड़की है तुम्हारी नजर में?"

"है तो हुजूर। एक औरत इसी गाँव में है। बहुत ही सीधी है। उसके साथ कोई बाल-बच्चा भी नहीं है। वह मान भी जाएगी। लेकिन मेरा बेटा नहीं मानेगा।"

"तो बेटे से अलग हो जाना।"

"वही करना पड़ेगा, हुजूर। इतने दिन तक साथ रहकर अघा गए। कोई किसी का नहीं होता।"

"देख रे, पपुआ की माई। तेरे ससुर ने ब्याह रचाने के लिए खेत रेहन रख दिया। अब तू पता लगा कि इस गाँव में तेरी सास बनने वाली औरत कौन है?"

सामूहिक हँसी। भीड़ में पीछे खड़ी पपुआ की माँ भी हँसती है।

बुढ़ऊ को कुछ-कुछ माजरा समझ में आ रहा है। ये तो गाँव की औरतें हैं। उन्हें बुद्ध बना दिया! वे पहचानने की कोशिश करते हैं। टुकड़े-टुकड़े में हँसते हैं और गरियाते हैं- "हरजाइयो, मैं ही मिला तुम लोगों को मजाक करने के लिए।"

औरतों का झुंड हँसते-खिलखिलाते एक-दूसरे को ठेलते बाहर चला जाता है।

कौन विश्वास करेगा कि रात-दिन घर-गृहस्थी के काम में खटने वाली इन स्त्रियों के अन्दर इतनी नाट्य-क्षमता है। ठह-उहकर खड़ी बोली बोलती हैं, जिसका कभी अभ्यास नहीं किया। साहबी हाव-भाव और पुलिसिया रौब रुतबे की हूबहू नकल।

यह सारी रात चलेगा। गायन, वादन, नृत्य। नीम के नीचे जाजिम बिछ गया है। ढोल बजने लगा है। औरतों का झुंड आता जा रहा है। बिजली के बल्ब के अलावा दो गैस बत्तियाँ भी दो कोनों पर नीम की डाल में लटका दी गई हैं। विद्रोही जी की भारी-भरकम शरीर वाली बड़ी बहन जो नाटक में दारोगा के रोल में उतरी थी, सबको कटी हुई गरी, छुहारा और लौंग-इलायची बाँट रही हैं। मैनेजर बनी चटकीला भौजी सबको भाँग की ठंडाई का गिलास दे रही हैं। जिसको ज्यादा नशा चढ़ने का डर हो, उसके लिए सादी ठंडाई। नाउन सबको पान लगाकर दे रही हैं। दो नई बहुएँ सुनरा अइया को लेकर आती हैं। सुनरा अइया अपनी लाठी एक बहू को पकड़ाकर झुंड के बीच में बैठती हैं। औरतें झुक झुक कर उनके पैर छू रही हैं। उनके आने से महफिल में रौनक आ गई है। सुनरा अड्या गाँव की सबसे बुजुर्ग महिला हैं। दो साल पहले तक उनके बिना गाँव के किसी शादी-ब्याह का उत्सव पूरा नहीं माना जाता था। गने, बजाने, नाचने, हँसी, मजाक हर काम में बेजोड़। गृहस्वामिनी पान-सुपाड़ी देकर, पैर छूकर न्योता दे आतीं तो वे लाठी टेकते हुए जरूर पहुँचतीं। इधर दो साल से पैर साथ नहीं देते, लेकिन जब विद्रोही बहू ने तीन बार पैर छूकर इसरार किया और आँचल के कोने में सुपारी-लौंग बाँध दिया तो बोलीं- "उस दिन तक जीते रह गए तो जरूर आएँगे।"

ससुराल आने पर सुनरा अइया को गाँव की स्त्रियों ने उनकी सुन्दरता के

आधार पर पहले सुनरा (सुन्दरी) गोसाइन का सम्बोधन दिया फिर उम्र बढ़ने के साथ क्रमशः सुनरा भौजी और सुनरा अइज्या कहाईं। विवाह के दस-बारह बरस बाद तक उन्हें कोई बाल-बच्चा नहीं हुआ। एक बार पड़ोसिन के बेटे का विवाह पड़ा। उन्हें भी तेलवाई की रस्म पर बुलाया गया। दूसरी औरतों को तो पड़ोसन ने दो परी तेल दिया, उन्हें केवल एक परी दिया। कारण पूछने पर बताया- आपके घर से तो तेल की वापसी होनी नहीं है, इसलिए।

मतलब कि आपके घर कोई बाल-बच्चा तो है नहीं कि उसके ब्याह की तेलवाई में मैं आऊँ और आज दिए गए तेल की वापसी पाऊँ।

सुनरा अइया के कलेजे में यह बात 'धक' से लगी। इसके पहले उन्हें अपने निःसंतान होने का इतना दुख कभी नहीं हुआ था। वे दुखी मन घर लौटीं और पीछे पड़कर अपने पति को दूसरा विवाह करने के लिए राजी किया। खुद लड़की देखने गईं। जैसे कोई माँ अपने बेटे का ब्याह रचाए, ऐसे उत्साह के साथ। अपनी सौत को वे छोटी कहकर पुकारतीं। पति और छोटी के खानपान का विशेष ध्यान रखतीं।

विवाह के दो साल बाद छोटी को बेटा हुआ। उन्होंने धूमधाम से उसकी 'बरही' का उत्सव मनाया। नवजात बच्चे के स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए उन्होंने साल-भर के लिए पति और 'छोटी' के मिलने (साथ सोने) पर रोक लगा दी। और कुदरत का करिश्मा देखिए कि उसी साल-भर की बन्दिश के बाद खुद सुनरा अड्या को भी बेटा पैदा हुआ।

सुनरा अइया बयालीस साल की उम्र में ही विधवा हो गईं। तब खुद को पति की जगह रखकर पूरे परिवार की देखभाल की। छोटी को पहले से भी ज्यादा इसलिए मानती थीं कि उसी की गोड़ी ड्योढ़ी में पड़ने के बाद उनकी कोख खुली थी।

बड़े बेटे के विवाह की तेलवाई में सुनरा अइया ने पड़ोसन को नौ परी तेल का नेग दिया। पड़ोसन को अचम्भित देखकर बताया "नौ परी इसलिए कि आपके ताना मारने से मेरा वंश डूबने से बच गया। न आप मुझे निरबंसिन होने का ताना मारतीं न मैं अपने बुढ़ऊ (आदमी) का दूसरा ब्याह कराती, न मेरा वंश जागता।

आपका ताना मेरे लिए वरदान बन गया। दूसरे बेटे के ब्याह में भी नौ परी दूँगी।"

पड़ोसन उनका मुँह देखती रह गई।

पहले बेटियाँ नाचने उतरीं। फिर उन्होंने एक-एक करके अपनी भाभियों को बाँह पकड़कर खींचा। भाभियों ने अपनी सासों को और सासों ने अपनी ननदों को। आधी से ज्यादा रात बीत गई।

अब एक गीत आपका हो जाय अइया, जो रसदार हो।

"कैसा हो?"

अगम बहै दरियाव

"जिसके पोर-पोर में रस भरा हो।"

पान की गिलौरी पोपल अपने गाल के किनारे दबाती है और मुस्कुराती है, "मेरे दाँत नहीं हैं, क्या मैं गाऊँगी?"

विद्रोही बहू आगे आई- "बार-बार तो मेरे बेटे का ब्याह होगा नहीं अइया। एक गीत तो गाना ही होगा। एक ताव नाचना भी।"

अन्य महिलाओं का भी इसरार।

"पैर साथ नहीं देते, नाचूँगी क्या?"

"चाहे एक ही ठुमका लगा दीजिए। लीजिए, ठंडाई पी लीजिए। ताकत आ जाएगी।"

"क्या है?"

"भाँग है। ज्यादा कड़ी नहीं है।"

"भाँग? न, न, न। मुझे बहुत चढ़ती है। जमाना हुआ, एक बार पिये थे तो लग रहा था कि आकाश में उड़े जा रहे हैं।"

"आज फिर उड़िए, अइया।"

एक बहू उनके मुँह से गिलास लगा देती है। वे आधा गिलास पीती हैं, फिर दो बहुओं का सहारा लेकर खड़ी होती हैं। औरतें पीछे हटकर उनके नाचने के लिए गोलाकार जगह बनाती हैं।

अइया दाएँ-बाएँ देखते हुए ताली बजाना शुरू करती हैं। ढोल की सम ध्वनि तड़-तड़-धम, तड़-तड़-धम से लय मिलाते हुए सिर को दाएँ-बाएँ घुमाती हैं। पैर साधकर दो कदम आगे जाती हैं, फिर पीछे आती हैं। बाएँ जाती हैं फिर दाएँ आती हैं। फिर रुककर विद्रोही बहू से कहती हैं-"सुनो, दुलहा की महतारी। अगर नेग में साड़ी पहनाना कबूल करो तो मैं आज लाख टके का एक गीत सुना दूँ।"

"लाख टके का? बिलकुल सुनाइए, अम्मा। मैं साड़ी के साथ बिलाउज, पेटीकोट और जोड़ा चप्पल भी कबूलती हूँ।"

मुस्कराती हैं अइया। पान से लाल मुस्कराहट। बायाँ हाथ कमर पर रखकर और दायाँ धरती के समानान्तर उठाकर, थोड़ा बाएँ झुके-झुके, वृत्ताकार घेरे में नाचना शुरू करती हैं।

तालियाँ! तालियाँ! आह वाह का शोर !

वे कढ़ाती हैं-

आज तुमड़ी मा भाँग घोटाउ रसिया आज तुमड़ी मा...

ओ हो हो! 'रसिया' शुरू किया अड्या ने। अब कहाँ बचे रसिया गाने वाले।

अइया संकेत से सबको पुरवाने (दोहराने) के लिए कहती हैं। महिला समूह दोहराता है-

आज आप...

गति आ गई है अइया के पैरों में!

मतल मदन रैन अंधियारी रैन अंधियारी,
रैन अंधियारी तौ न ताऊ सोझाई दौ रसिया
आज तुमड़ी मा आज तुमड़ी मा भंग...

हा-हा-हा-हा... दोहराना भूल गईं सब। हँसते-हँसते, लोट-पोट।

"अरे, देखो; चक्कर आ गया क्या?"

दो बहुओं ने लपककर गिरने-गिरने को हुई अइया को पकड़ा।

- सँभालकर बैठाओ। घुमरी (चक्कर) आ गई है। दम फूल रहा है। सीपी जैसे होंठ के दोनों कोरों पर पान की लाल धार ठुड्डी तक बह आई है।

अइया को पंखा झला जाता है। गरमागरम चाय दी जाती है। नाच-गाना तो सारी रात चलेगा, लेकिन चाय पीने के बाद अइया घर जाना चाहती हैं। दो बहुएँ उन्हें पहुँचाने जाती हैं।

रात में सोई अड्या को सबेरे पड़पोते की बहू जगाने गई तो उनके प्राण-पखेरू उड़ चुके थे। वह बताती है- मुँह देखकर लगता था, जैसे हँस रही हैं।

जाते-जाते अगली पीढ़ी को लाख टके का गीत सौंप गईं। खुद भी मुक्त हो गईं, गीत को भी मुक्त कर दिया।

बलम बिन गुइयाँ नैन तलफैं हो

जंगू को ननिहाल अच्छा लगने लगा है। इसलिए कि उसे बड़े पंडित जी बहुत मानते हैं। दर्जा पाँच को वही पढ़ाते हैं। अब सबेरे की प्रार्थना जंगू ही करवाता है। वह सही

अगम बहै दरियाव

उतार-चढ़ाव के साथ बावन सेकेंड में राष्ट्रगान गा लेता है। बड़े पंडित जी कहते हैं-" जंगबहादुर तेज लड़का है। पढ़ने में ही नहीं, सेवाभाव में भी।"

वे साइकिल से उतरते बाद में हैं, जंगबहादुर उनकी साइकिल का हैंडिल पहले धाम लेता है। दोपहर की छुट्टी में उसकी सफाई भी कर देता है। वे कहते हैं-" इतने सेवाभावी लड़के का नाम जंगबहादुर किसने रखा? इसका नाम तो सेवादास होना चाहिए।" कभी-कभी वे सोचते हैं कि जरूर यह किसी ऊँची जाति के बीज से पैदा हुआ है। छोटी जाति में इतनी बुद्धि कैसे हो सकती है? तब पंडित जी को जंगबहादुर पर दया आती है कि इस बेचारे को छोटी जाति में पैदा होने का अपमान जिन्दगी-भर झेलना पड़ेगा और इसका असली बाप मजा मारकर किनारे हो गया।

बड़े पंडित जी बहुत समझाकर और पूरी मेहनत से पढ़ाते हैं। गणित तो इतनी अच्छी तरह समझाते हैं कि हिन्दी से भी आसान लगता है। पंडित जी बताते कि गणित में जो सबसे महत्त्वपूर्ण अंक है उसका आविष्कार हमारे आर्यावर्त में हुआ। उस आविष्कार से पहले दुनिया की गणित लँगड़ी थी। बताओ क्या है वह अंक? वह अंक है शून्य। शून्य खुद में कुछ नहीं है लेकिन जिस गिनती के दाहिने विराज जाता है उसका मान दस गुना बढ़ा देता है।

पंडित जी अंग्रेजों का दिया हुआ बस एक सिद्धान्त नहीं मानते कि पृथ्वी बिना किसी सहारे के अधर में लटकी हुई है। जब छोटी से छोटी चीज भी बिना सहारे के हवा में नहीं लटक सकती तो इतनी बड़ी पृथ्वी कैसे लटकी रहेगी? उन्हें उनके गुरुजी ने बताया था कि हमारे धर्मग्रन्थों की इस मान्यता को झूठा सिद्ध करने के लिए कि पृथ्वी शेषनाग के फन पर टिकी हुई है, अंग्रेज ऐसी निराधार बातें प्रचारित कर गए हैं। बच्चों को गुरुजी की बात में दम नजर आता है लेकिन यह सोचकर डर भी लगता है कि शेषनाग एक दिन बूढ़े होंगे और मरेंगे भी। तो उस दिन पृथ्वी लुढ़ककर कहाँ जाएगी? हम लोगों का क्या होगा?

रसखान के सवैये पढ़ाते हुए पंडित जी बताते कि मुसलमान होते हुए भी वे कृष्ण भगवान की भक्ति में इतने डूब गए थे कि भगवान से वरदान माँगा-

मानुष हौं तो वही रसखान बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।

यानं अगर अगले जन्म में मुझे मनुष्य बनाकर पैदा करिए तो गोकुल गाँव के ग्वालों के बीच में पैदा करिए।

भगवान ने उनकी प्रार्थना सुन ली और अगले जनम में उन्हें गोकुल में ग्वाला बनाकर पैदा किया। फिर असलम की ओर देखते हुए कहते-"सुन रहे हो?"

असलम मन्द-मन्द मुस्कराते हुए सिर हिलाता।

139

पंडित जी ध्रुव, प्रह्लाद, अजामिल, गजराज आदि की कहानियाँ सुनाकर बताते कि भगवान अपने भक्त की पुकार सुनकर उसे संकट से बचाने के लिए नंगे पाँव दौड़कर आते हैं। भगवान को पुकारने का अभ्यास बच्चों में बना रहे इसके लिए वे स्कूल में कई प्रार्थनाएँ करवाते थे। एक महीने 'निर्बल के प्राण पुकार रहे जगदीश हरे जगदीश हरे' तो अगले महीने 'भगवान मेरी नैया उस पार लगा देना' गाई जाती।

एक रात जंगू ने सपना देखा-चौड़े पाट की उमड़ी हुई नदी की बीच धारा में वह एक छोटी डोंगी में बहा चला जा रहा है। नाव सँभाले नहीं सँभल रही है। अब डूबी कि तब। वह आसमान की ओर देखते हुए भगवान को पुकार रहा है, लेकिन भगवान का कहीं अता-पता नहीं है। आसमान में बस एक चील टिंहकारी भरती पंख पसारे उड़ रही है।

वह घबराकर जगा तो पाया कि पसीने से लथपथ है और साँस तेज चल रही है। उसने असलम को बताया तो वह धीरज बँधाने लगा- "तुम्हें पीर बाबा की मजार से एक ताबीज दिलवा दूँगा। ऐसे सपने आने बन्द हो जाएँगे।"

पढ़ाई में तेज होने के चलते बड़े पंडित जी ने जंगू को अगली पंक्ति में बैठा दिया है, कक्षा मॉनीटर कौशलेन्द्र के ठीक बगल में। छोटी जाति के बच्चे को मिला यह सम्मान ऊँची जाति के लड़कों को पसन्द

नहीं आया। भले मुँह से कुछ न कह सकें, लेकिन जंगू को इसकी वजह से मिलने वाली उपेक्षा और गुस्से का आभास होता रहता है। स्कूल आते-जाते 'लँगड़वा' सम्बोधन तो उसे शुरू से मिलने लगा था, पर अब वे उसे सुनाकर चिढ़ाते हैं-

लंगड़ भचंगड़ अठारह रोटी खाय। चार तसला पानी पियै तबौ न अघाय।

इन लड़कों को उकसाता कौशलेन्द्र है, लेकिन खुद कुछ नहीं कहता। वह जंगू से बोलता ही नहीं।

जंगू माँ से बताता है तो माँ उलटे उसी को समझाती है- "हम लोगों के गिरानी के दिन हैं बेटवा। ठाकुर-बाभन लड़कों के साथ लड़ाई-झगड़े से बचो। उनसे राह बचाकर चलो। सिर झुकाकर आओ-जाओ। किसी तरह दिन काटो। पढ़-लिख लोगे तो कभी अपना समय भी बदल जाएगा।"

एक दिन इमला में कौशलेन्द्र का 'आस्ट्रेलिया' गलत और जंगू का सही हो गया तो बड़े पंडित जी ने कौशलेन्द्र को सावधान किया- "अपनी मॉनीटरी सँभालो कौशलेन्द्र। अगर बोर्ड से पहले की तैयारी परीक्षा में जंगबहादुर के नम्बर तुमसे ज्यादा आए तो कक्षा की मॉनीटरी जंगबहादुर को मिल जाएगी।"

अगम बहै दरियाव

कौशलेन्द्र की यह बात खल गई। उसकी गोल के सारे लड़कों को खल गई। नम्बर कम-ज्यादा होने से क्या होता है? उन्हें बिलकुल बर्दाश्त नहीं होगा कि एक चमार उनका मॉनीटर बने।

उस शाम स्कूल से वापसी के समय कौशलेन्द्र के गोल के एक लड़के ने पीछे आ रहे जंगू को चिढ़ाया-

जंगू चमाऽऽर हर जोतें हमाऽऽर

बाकी लड़कों ने कोरस में गाया-

जूता परै तो लगावै गोहाऽऽर झमकोइया मोरे लाऽऽल
चढ़ बैठा और सड़क की कैंकरीली

जंगू बस्ता फेंक उस लड़के पर पीछे से चढ़ बैठा पटरी पर रगड़ने लगा। सब बच्चे भाग खड़े हुए। असलम ने दोनों को अलग किया। अगले दिन सबेरे रास्ते में कौशलेन्द्र का आठवीं में पढ़ने वाला भाई सुरेन्द्र हाथ में डंडा लेकर खड़ा मिला। जंगबहादुर पास से गुजरा तो उसने बुलाया" अबे लैंगड़े, इधर आ।"

जंगू रुका। मुड़कर देखा। फिर चल पड़ा। "अबे, सुना नहीं! साले, दूसरी टाँग भी तोड़नी पड़ेगी क्या?"

उसने दौड़कर जंगबहादुर को आगे से घेरा। बाएँ हाथ की पहली उँगली तथा अँगूठे को मिलाकर गोला बनाया। फिर दाहिने हाथ की पहली उँगली को उसमें डालकर अन्दर-बाहर करते हुए कुटिल मुस्कान के साथ कहा-"एक बात बता। जब मुख्तार चाचा तेरी माँ पर चढ़ते हैं तो तुझे घचर-घचर की आवाज सुनाई पड़ती है?"

जंगू को गिनगिनी छूट गई। अपमान से चेहरा लाल हो गया। वह चल पड़ा। सुरेन्द्र ने पीछे से उसकी पीठ पर दो डंडे जमा दिए। अब जंगबहादुर की आँखों में खून उतर आया। उसने रुककर अपने से दूनी कद-काठी के लड़के को नजरों-नजरों में तौला और कन्धे से बस्ता उतारकर भिड़ गया।

साइकिल से गुजरते एक आदमी ने उतरकर दोनों को अलग किया और पूछा- "क्या बात है? क्यों मारा इतने छोटे लड़के को?"

"बुला रहा था तो साले ने सुना नहीं।" "क्यों बुला रहे थे? उसने कोई गलती की थी?"

"सुना नहीं, यह गलती नहीं है? मेरे बाबा कहते हैं, सालों को बचपन से ही मारते-गरियाते रहना चाहिए। तभी इनके अन्दर डर बैठेगा। बिना गुनाहन चार गोदाहन। यानी चार डंडे तो बिना किसी गलती के ही मारने का नियम है, इनको कंट्रोल में रखने के लिए।"

"यही पढ़ने जाते हो स्कूल में?"

"स्कूल में विद्या पढ़ने जाते हैं कि ठकुरई छोड़ने?"

"कहाँ घर है? किसके लड़के हो?"

"आप तो अपने रास्ते जाओ।" कहने के साथ सुरेन्द्र वापस मुड़ा और डंडा झुलाते चल पड़ा।

जंगू का साथ देने के कारण अब बाकी लड़कों ने असलम से भी किनारा कर लिया है। जंगू और असलम दोनों बाकी लड़कों से अलग आते-जाते हैं। उस दिन स्कूल से निकलकर दोनों सड़क पर आए तो मिलिटरी के हरे-हरे ट्रक गुजर रहे थे। पीछे हरी वर्दी पहने टोप लगाए जवान बैठे थे। असलम ने झट बस्ता नीचे रखा और सावधान की मुद्रा में खड़े होकर सैल्यूट करने लगा "जय हिन्द।"

सैनिक मुस्कराए। सैल्यूट का जवाब दिया।

थोड़ा आगे चलने वाले कौशलेन्द्र की गोल के लड़के भी सैल्यूट कर रहे थे। जंगू के लिए यह नई बात थी। अपने गाँव में उसने कभी मिलिटरी के ट्रक नहीं देखे थे। आखिरी ट्रक गुजर जाने के बाद उसने पूछा- "इनको जय हिन्द क्यों कर रहे थे?"

"ये मिलिटरी के जवान हैं। देश की रक्षा करते हैं। इनको जय हिन्द किया जाता है। मैं भी बड़ा होकर मिलिटरी में भर्ती होऊँगा।"

"किसलिए?"

"दुश्मनों से लड़ने के लिए।"

"कौन हैं दुश्मन?"

"अरे, पाकिस्तान, चीन; और कौन। तुम्हारे पहले वाले स्कूल में कुछ बताया ही नहीं गया? कक्षा में बड़े पंडित जी की कुर्सी के पीछे दीवार पर क्या लिखा है-

मुझे तोड़ लेना वनमाली उस पथ में देना तुम फेंक। मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जावें वीर अनेक।

वही वीर हैं ये लोग। मुझे भी वही बनना है। हवाई जहाज से उड़ते हुए सू-ऊँ-ऊँ से गए और दुश्मन की फौज पर बम बरसाकर यूँ वापस।"

"लेकिन उनसे हमारी दुश्मनी क्या है?"

"वे हमारी जमीन पर कब्जा करना चाहते हैं।"

"लेकिन मेरे पास तो जमीन ही नहीं है।"

"अपनी नहीं, देश की जमीन। भारत माता की जमीन। हम सीमा पर उन्हें नहीं रोकेंगे तो वे भीतर घुसकर सब कुछ लूट लेंगे।"

"लेकिन मेरे पास क्या है जो लूटेंगे। तुम्हारे पास भी सिर्फ मुर्गियाँ हैं। पैसा तो मेरे गाँव के छत्रधारी जैसे लोगों के पास है। उनके बच्चे जाएँ लड़ने। मेरे असली दुश्मन तो छत्रधारी और उनका भतीजा है। उन लोगों ने मेरे बप्पा को मार दिया। मेरा पैर तोड़ दिया। हमें गाँव छोड़कर भागना पड़ा। मुझे मौका मिलेगा तो मैं इनका पैर तोड़ूंगा।"

"ओहो। तुम्हारे तो पैर ही खराब हैं। तुम मिलिटरी में भर्ती ही नहीं हो सकते।"

"मैं दारोगा बनूँगा। उसमें पिस्तौल मिलती है। छत्रधारी के बेटे दारोगा हैं। घर आते हैं तो कमर में पिस्तौल बाँधे रहते हैं।"

"न-न-न! तुम दारोगा भी नहीं बन पाओगे ।"

"लेकिन पिस्तौल खरीदूँगा।"

"कानपुर में मिलती है।"

"तुम्हारे भाई के पास है क्या?"

"है तो, लेकिन छूने नहीं देते।"

आज भूसी को मुंसिफ कोर्ट में गवाही देने जाना है। दो बार बिना गवाही दिए लौटना पड़ा।

पुराने खिलाड़ी हैं छत्रधारी। चार साल में तो उन पर नोटिस तामील हो पाई। फिर चार साल लगा दिया जवाब दाखिल करने में।

भूसी की पत्नी महीने भर से बीमार चल रही हैं। साँस फूलती है। सुई-दवाई सब हुई। पानी भी चढ़वाए, लेकिन कल से घटका लग गया है। घर-घर्र की आवाज के साथ उलटी साँस चल रही है।

नदी पर नहाने जाने से पहले भूसी एक बार पत्नी की चारपाई तक जाते हैं। उनके माथे पर हाथ रखते हैं- 'भगवान जल्दी मुक्ति दें।'

नहाकर लौट रहे थे, तभी घर से औरतों के रोने की आवाज सुनाई पड़ी।

लोग जुटने लगे। जमीन पर पुआल बिछाकर लाश रखी गई।

संतोखी को पता चला तो उनका जी धक् से हो गया। आज फिर टली गवाही।

बाँस कटकर आ गया। टिकठी बनने लगी। चादर का पर्दा करके औरतें लाश को नहलाने लगीं।

"बहुत नेक इंसान थीं बूढ़ी। किसी का दुख नहीं देख सकती थीं। भगवान भी नेक लोगों को जल्दी बुला लेते हैं।"

"सुबह-सुबह गई हैं। सरग का फाटक खुला मिलेगा।"

बिरजू यादव की पत्नी ने 'निरगुन' शुरू किया-

सैयाँ आए अनवार, लइके डोलिया कहार मुँह ढाँके चली जाबै हम चदरिया से

औरतों का रुदन गायन में बदल गया।

"अच्छा भगत, आप दाह-संस्कार निपटाइए। मैं तो घाट तक नहीं चल सकूँगा। तारीख पर जाना होगा। यहीं से भौजी को प्रमाण करता हूँ।" संतोखी ने कहा।

"चलिए, हमें भी तो चलना है।"

"अब आप कैसे चलेंगे। दाह-संस्कार तो आपको ही करना होगा।"

लेकिन भूसी मँड़हे में चले गए। कपड़ा पहनकर झोला लेकर निकले। पत्नी के सिरहाने जाकर उकड़ू बैठ गए। उनका चेहरा दोनों हथेलियों में भरा, थोड़ा झुककर उनके माथे को चूमा और बोले- "मेरा जाना बहुत जरूरी है रघुवंश की अम्मा। जबान हार चुका हूँ। तुम भी नहीं चाहोगी कि मेरी जबान कट जाय। तकदीर वाली हो। दोनों बेटे मौजूद हैं। लुटावन को भी बुलवा लेते हैं। उनके कन्धों पर जाओ। हमें माफ कर देना।"

फिर रघुवंश से पूछा- " लुटावन को खबर भेजे कि नहीं?"

लुटावन भूसी बहू के बेटे थे, लेकिन भूसी के बेटे नहीं थे।

एक स्त्री ने सिंदूर की डिबिया खोलकर उनकी ओर बढ़ाते हुए कहा-" अच्छा, अपने हाथ से सिंदूरदान तो करते जाइए।"

भूसी ने एक चुटकी सिंदूर निकालकर बूढ़ी की मांग भर दी। उठे, हाथ जोड़े और लाठी उठाकर चल पड़े।

माँ को कन्धा देने लुटावन भी आए।

लुटावन अर्थात जो लूटे गए। अपनी माँ के साथ लुटावन भी लूटे गए थे। भूसी के बाप थे सुराजी गड़ेरिया। और सुराजी के बाप थे बन्धन गड़ेरिया। बेल्हा शहर के दक्षिण पाँच कोस पर उनका गाँव था। जैसे सुराजी का असली नाम सुराजी नहीं था, वैसे ही बन्धन का असली नाम बन्धन नहीं था।

बन्धन का असली नाम बल्ली था। एक बार जेठ के महीने में जमींदार के घर किसी उत्सव में उन्हें पाँच किलो दही पहुँचाने का हुकुम हुआ। वे दही लेकर पहुँचे तो मैनेजर ने उसे सूंघकर कहा- "इसकी महक तो अजीब है।"

"यह भेड़ के दूध का है।"

मैनेजर ने गुस्से में कमोरी पटक दी- "गाय-भैंस का लाना था तो भेड़ का क्यों लाया?"

"गाय-भैंस मेरे पास है ही नहीं, बाबू।"

बल्ली का हाथ-पैर बाँधकर कचहरी उठने तक धूप में डाल देने की सजा मिली लेकिन कचहरी बन्द होते समय कारिंदे उनका हाथ-पैर खोलना भूल गए और बल्ली अगली दोपहर तक बिना दाना-पानी के वहीं बँधे पड़े रहे। तबसे गाँव वालों को बल्ली के बजाय उनका बन्धन नाम सार्थक लगा और धीरे-धीरे बन्धन ने बल्ली को विस्थापित कर दिया।

कचहरी से लौटते हुए उन्हें इस बात का दुख कम था कि बिना किसी गलती के चौबीस घंटे बँधे पड़े रह गए और इस बात का दुख ज्यादा था कि सात-आठ साल की सेई-पखेई, सीझी कमाई 'कमोरी' पटककर तोड़ दी गई। उन्हें लगा, जैसे उन्हें ही पटककर चकनाचूर कर दिया गया। अब वे अपनी माँ को क्या जवाब देंगे?

धूप में सिर झुकाए चले आ रहे थे तभी उन्हें एक आदमी मिला। बल्ली की उदासी का कारण जानकर कहा- "अगर एक रुपया खर्च करने को तैयार हो तो मैं तुम्हें ऐसे देश भेज सकता हूँ, जहाँ सोने के पहाड़ हैं। वहाँ मजदूरी में सोना मिलता है। जितना खोदो, उतनी कमाई। आधा सोना खोदने वाले का, आधा पहाड़ मालिक का। तीन-चार साल में इतना सोना लेकर लौटोगे कि सात पुस्तें बैठकर खाएँगी।"

बल्ली कहीं भी जाने को तैयार थे, बस ऐसे निर्दयी जमींदार के राज में न रहना पड़े। सवाल एक रुपये का था।

इसके लिए उस आदमी ने महीने भर का समय दिया। तय हुआ कि बाजार के दिन चौथे रविवार को वे गुड़मंडी के कुएँ पर ठीक बारह बजे मिलेंगे।

बल्ली जानते थे कि पत्नी को बताएँगे तो शायद वे न जाने दें। इसलिए चोटा

और नमक खरीदने की बात कहकर बाजार जाने के लिए निकले और बाजार में मिले एक पड़ोसी से कहा कि मेरे घर बता देगा, तरीच देशज हैं। क 냬 댸 तीन-चार साल में लौटेंगे।

बल्ली की पत्नी लम्बी-चौड़ी कर काली की बलि महिला थी। वह कोई खास चिन्ता नहीं की। मरद मानुष तो देश-परदेस जाते ही रहते हैं। हम के गा में घुसकर बैठने से कैसे काम मलेगा? घर में सास हैं, ससुर हैं। जैसे भी होगा, सब मिलकर छेड़-भेड़ सँभाल लेंगे।

उस समय सुराजी उनके पेट में थे।

सुराजी का बचपन का नाम पड़ा भुलई। यानी भूल जाने वाला। खिलने के लिए टोले में निकलते तो वापस अपने घर नहीं लौटते, कहीं और निकल जाते। सब समझते कि लड़का अपने घर का रास्ता भूल जाता है। भूलने वाले क◌ा थूलई से ज्यादा सटीक नाम और क्या होगा!

पाँच-छह साल तो भुलई की माँ को पति की चिन्ता नहीं हुई। ये खुद ही तीन चार साल बाद लौटने के लिए कह गए थे। लेकिन फिर दुखी रहने लगीं। चोची कि अब उन्हें लौट आना चाहिए। जितना कमा लिया होगा उतना बहुत है। अपने परानी के साथ रहने का भी तो सुख होता है। उमर निकल जाएगी तो धन देने से लौट आएगी क्या?

सोना खोजन पिउ गए, मामा मरीच के देस।
सोना मिला न पिउ मिले, सित भये कारे केस।

वे लौटने के लिए चिट्ठी भी लिखाएँ तो किस दर-मुकाम पर? उनकी तो यहाँ का दर-मुकाम पता है। फिर वे अपनी हाल-खबर क्यों नहीं लिखते? कुछ लोग कहते थे कि वहाँ की औरतें जादूगरनी होती हैं। रूप बदल लेती हैं, मोहित कर लेती हैं। औरत की गन्ध को तरसता आदमी उनके पीछे-पीछे बल पड़ता है। वे अपने सिर में ऐसा गजरा गूँथती हैं, जिसे सूंघते ही आदमी सुध-बुध खो देता है।

लेकिन उन्हें अपने आदमी पर विश्वास था। उनका आदमी ऐसा नहीं है कि परायी औरत का गजरा सूँघने के फेर में पड़े। बहुत ही सुधवा है। भर आँख किसी औरत की ओर नजर उठाकर देख तक नहीं सकता।

फिर लौटकर आते क्यों नहीं?

कहते हैं कि मरीच देश से यहाँ तक आने में जहाज को तीन महीने लगते हैं। रास्ते में सोना लूटने वाले डाकू मिलते हैं।

अगम बहै दरियाव

लेकिन ऐसा कुछ होता तो उन्हें सपने में पता चल जाता। वे तो इतने निर्मोही हैं कि सपने में भी नहीं आते।

गौर माता से पूछने के अलावा अन्य कोई उपाय नहीं था। बहुत सुध आती तो कभी-कभार काम-धाम से फुरसत पाकर वे गौर उठाने बैठतीं।

गौर गोबर की शंक्वाकार आकृति होती। उसे मौनी के बीच में रखकर पूछतीं- "हे गौर माता, क्या इस दशहरे पर भुलई के बप्पा अपने खेत में बीज डालने लौट आएँगे?" और मौनी जमीन पर पलट देतीं। मौनी हटाने पर अगर गौर खड़ी दशा में मिलती तो इसका मतलब होता कि आ जाएँगे। वे खुश हो जातीं। दिन-भर गुनगुनाती घूमतीं। अगर गौर पट मिलती तो इसका मतलब नहीं आएँगे। तब वे मौन हो जातीं। आँखों से आँसू बहने लगते। बड़ी देर बाद गुनगुनाना शुरू करतीं तो उसमें उदासी का गाढ़ा पुट होता-

बाग बुढ़ाने, बगइचा बुढ़ाने
अरे डरिया लटकन लागीं

घरे कब अउब्या?
मधुरा के रहवइया घरे कब अउब्या?

खुद को गोपी और पति को कृष्ण मानते हुए वे गातीं कि यदि यह शरीर पेड़ है और शरीर पर उगे यौवन के चिह्न उसकी डालें तो ये डालें अब बूढ़ी होकर लटकने लगी हैं। आप घर कब आएँगे?

वे कामना करतीं-

मघवा नहीं आवें , पूसा नहीं आवें ,
आवें फगुनवा में , रंग बरसै,
परदेशी नहीं आवें, नयन तलफैं

वे माघ-पूस के जाड़े में न आएँ, कोई बात नहीं, लेकिन फागुन में, जब चारों ओर रंग बरस रहा हो तो जरूर आ जाएँ। परदेसी आ नहीं रहे हैं और उनको देखने के लिए नैन तड़प रहे हैं। जेठ में न आएँ, अषाढ़ में न आएँ, कोई बात नहीं लेकिन जब सावन में चारों तरफ मेह झर रहा हो तो जरूर आ जाएँ।

बलम बिन गुइयाँ नैन तलफैं हो।

ऐ सखी, बलम को देखे बिना आँखें तड़प रही हैं।

लेकिन साल-दर-साल बीतते चले गए। न बलम आए न उनका इन्तजार करती आँखें थकीं। उनकी रोशनी मन्द हो गई लेकिन उनमें बसी बलम की सूरत कभी धुँधली नहीं हुई।

स्कूल के हैंडपम्प ने पानी उठाना बन्द कर दिया है। बच्चे कुएँ से पानी भरकर पीते हैं। दलित बच्चों को लोटा-बाल्टी छूने की मनाही है क्योंकि इसी लोटे से बड़े पंडित जी भी पानी पीते हैं। इंटरवल में दलित बच्चे कुएँ के पास पंक्ति में खड़े हो जाते हैं और गैर-दलित जाति का कोई बच्चा लोटे से उनके चुल्लू में पानी उड़ेलकर पिलाता है।

जंगबहादुर पानी पीने के लिए पंक्ति में खड़ा था तभी कौशलेन्द्र आया और पानी पिलाने वाले लड़के के हाथ से लोटा लेते हुए कहा "ला, मैं पिलाता हूँ।" जंगू ने चुल्लू रोपा। कौशलेन्द्र पानी गिराने लगा। अचानक उसने लोटा नीचे करके जंगबहादुर की उँगलियों से छुआ दिया और चिल्लाया- "जंगबहादुर ने लोटा छू लिया।"

बड़े पंडित जी के सामने जंगबहादुर की पेशी हुई।

"नहीं, पंडित जी। कौशलेन्द्र ने खुद लोटा नीचे करके मेरी उँगलियों से छुआया। मेरी कोई गलती नहीं है।"

"यह झूठ बोलता है।" कौशलेन्द्र की गोल के लड़के चिल्लाए।

"नहीं, पंडित जी। मैं झूठ नहीं बोलता।"

पंडित जी कड़ी सजा देने से बचना चाहते थे। बच्चा है। छू गया होगा। लेकिन कुछ तो करना होगा। तुलसी बाबा ने कहा है-

जौ नहिं दंड करौं खल तोरा। भ्रष्ट होइ श्रुति मारग मोरा ॥

बाकी बच्चे दंड के इन्तजार में हैं।

"मुर्गा बन जा। आइंदा ऐसा न करना।"

लेकिन जंगू मुर्गा बनने को तैयार नहीं है। कहाँ तो मॉनीटरी मिलने वाली थी और कहाँ मुर्गा बनने का अपमान। वह भी बिना गलती के।

"मैंने कोई गलती नहीं की।" वह पंडित जी की आँख से आँख मिलाते हुए मिनमिनाया।

"हुकुम अदूली?" पंडित जी के नथुने फूलने लगे।

छड़ी लपलपाते हुए बोले-"नहीं बनेगा? हथेली रोप।"

जंगू हथेली रोपने के लिए भी तैयार नहीं।

पंडित जी का क्रोध उबाल खा गया। उसकी पीठ और चूतड़ पर सरासर छड़ी बरसाने लगे।

जंगू न रोया, न हिला। हर चोट पर पीठ टेढ़ी करने के साथ कहता रहा-"मैं झूठ नहीं बोलता। मैं झूठ नहीं बोलता।"

इतना जिद्दी। पंडित जी की आँखों से चिनगारी निकलने लगी।

"उठा बस्ता और भाग यहाँ से। कल लोटे का दाम लेकर ही आना, नहीं तो खाल खींच लूँगा।"

जंगू ने बस्ता उठाया और बिना किसी की ओर देखे चल पड़ा।

शाम को अपनी गोल के लड़कों के साथ लौटते समय हँसते हुए कहता है कौशलेन्द्र- "मानीटर बनने चले थे सरऊ।"

जंगू दो दिन स्कूल नहीं गया तो उसकी माँ ने टोका।

"अब मैं स्कूल नहीं जाऊँगा।"

"क्या हुआ?"

"ऊ पंडित जी कसाई हैं। बिना गलती के मारते हैं।"

"तो क्या मैं तेरे लिए दूसरा मास्टर पैदा करूँगी?"

"मैं मोटर बाइंडिंग का काम सीखूँगा। असलम के बड़े भाई मतीन से बात हो गई है। छह महीने बाद दस रुपये रोज देगा।"

"नहीं बेटा। तेरा बाप तुझे पढ़ाना चाहता था। तू स्कूल जा। बिना गलती के मार-गाली खा ले। जान से थोड़े मार देंगे। समझ ले, परसाद है। गुन करेगा।"

"मुझे नहीं खाना ऐसा परसाद।"

जंगू चार-पाँच दिन स्कूल नहीं आया तो बड़े पंडित जी चिन्तित हुए। उन्हें लगा कि बच्चे को ज्यादा सजा दे दी। वह कहाँ से लोटे का दाम लाएगा?

उन्होंने दर्जा पाँच के दो लड़कों को जंगू को बुलाने के लिए भेजा। खोजते-खोजते जंगू असलम की दुकान पर मिला। जानना चाहा- "क्यों बुलाया है?"

"हमें क्या पता।"

"मैं नहीं जाऊँगा।"

"कैसे नहीं चलोगे? हम टाँगकर ले चलेंगे।"

लेकिन जंगबहादुर ज्यादा सावधान निकला। वह तेजी से दुकान के पिछवाड़े की ओर भाग निकला।

भुलई जवान हो रहे थे तो इलाके में बाबा रामचन्द्र का किसान आन्दोलन चर्चा में था। आए दिन जगह-जगह बटोर होता। जमींदार और अंग्रेज के अत्याचार के खिलाफ भाषण होता। भुलई ने बाजार के दिन एक-दो सभाओं में उनका भाषण सुना तो उनसे जुड़ाव महसूस करने लगे। वे लगान की बढ़ोतरी से तो परेशान नहीं थे। उनके पास सिर्फ एक खेत था। लेकिन जमींदार के कारिंदे आए दिन

उनकी भेड़ उठा ले जाते थे। धमकाते अलग थे कि चराने नहीं देंगे। गाँव से निकाल देंगे। कभी-कभार इलाहाबाद में कांग्रेस की या गांधी बाबा की सभा की खबर मिलती। वे हर जगह पहुँचने की कोशिश करते। उस समय तक उनकी पत्नी भी आ गई थीं। वे भेड़ चराने का जिम्मा अपनी माँ या पत्नी को सौंपते और चल पड़ते।

माँ के पूछने पर उन्हें समझाते-"जमींदार हमारे बकरे, भेड़ें उठा ले जाते हैं। जंगल में भेड़ चराने का नजराना माँगते हैं। रामचंदर बाबा, गांधी बाबा इसे खतम कराने में लगे हैं। उनका साथ देना जरूरी है।"

सन् 1920 के क्वार महीने में बेल्हा की कचहरी घेरने का बुलावा आया तो भुलई भी गए। गए तो हफ्ते भर लौटकर नहीं आए। खबर फैली कि कचहरी में चली गोली में भुलई भी मारे गए। सास-बहू का रोते-रोते बुरा हाल हो गया। लेकिन दसवें दिन जिस रोज उनके क्रियाकर्म का 'बार' बनना था, वे लौट आए।

अब तक उनके 'सुराजी' हो जाने की खबर जमींदार के कानों तक पहुँच गई थी। उसके लिए बहुत अपमान की बात थी कि उसकी कोई रियाया खुद उनके और अंग्रेजों के विरुद्ध चलने वाले आन्दोलन में शामिल होती है। यह जानकारी उनके प्रति अंग्रेजों की नाराजगी का कारण भी बनेगी कि अपनी रियाया पर इनकी पकड़ कमजोर है।

भुलई की वापसी के दो-तीन दिन बाद जमींदार के कारिंदे आए। भुलई को पटक-पटक कर मारा और उनके आगे के ऊपर वाले तीन दाँत तोड़ दिए। कहा कि रातों-रात गाँव छोड़कर भाग जाओ नहीं तो छेड़-भेड़, थरिया-लोटा सब जब्त कर लेंगे।

भुलई की माँ ने हाथ जोड़-जोड़कर किसी तरह उन्हें मनाया, लेकिन भुलई का सभा-सम्मेलन में जाना बन्द नहीं हुआ। वे गांधी टोपी लगाने लगे और इलाके में सुराजी के नाम से मशहूर हो गए।

अगम बहै दरियाव

भुलई की माँ को इसी बात का सन्तोष था कि बेटा घूम-घाम कर देर-सबेर लौट तो आता है। उसका बाप तो जब से गया, मुड़कर पता भी नहीं किया कि हम लोग जिन्दा हैं या मर-खप गए।

लेकिन सन् 42 के आन्दोलन में निकले भुलई तो लौटकर नहीं आए। कचहरी में हुए गोली कांड में पाँच अन्य लोगों के साथ वे भी शहीद हो गए। शहीदी खम्भे पर उनका भी नाम तीसरे नम्बर पर दर्ज हो गया। उनका असली नाम किसी को पता नहीं चला होगा तो दर्ज हुआ-सुराजी गड़ेरिया, उम्र 42 वर्ष।

तीसरे दिन जमींदार के कारिंदे गाँव में आए तो सुराजी की शहादत की जानकारी मिली, लेकिन सुराजी की माँ और पत्नी को रोने का मौका भी नहीं मिला। कारिंदों ने उनकी झोंपड़ियाँ उजाड़ दीं। चावल, आटे, ज्वार से भरी तीन-चार हाँड़ी, गगरी जब्त कर लीं और तुरन्त गाँव छोड़कर भागने का फरमान सुना दिया। भेड़ों को हाँककर ले जाने लगे। दोनों औरतें रोते-रोते उनके पीछे दूर तक गईं "हे बाबू, छोड़ि देओ, जाइ देओ, हमार रोजी न छीनो।" लेकिन वे नहीं माने। गाली दे-देकर दोनों का मुँह बन्द कर दिया। दोनों रोते-रोते लौट आई।

एक सौ आठ में से सत्रह भेड़ें रात में लौट आईं। बाकी कारिंदों या सियार, कुत्तों के पेट में चली गईं या भटक गईं।

सुराजी की माँ ने दो गाड़ीवानों को तैयार किया। एक बैलगाड़ी पर सत्रह भेड़ें और उनको सँभालने के लिए तेरह बरस के भूसी सवार हुए और दूसरी पर घर-गृहस्थी का सामान - जाँत, काँड़ी, मूसर, सूप, सिल, लोढ़ा, खटिया, मचिया, कथरी, गुदरी, बर्तन-भाँड़े और उनको सँभालतीं दोनों औरतें। डर था कि कारिंदे आकर लौटी भेड़ों को फिर न हाँक ले जाएँ इसलिए जितनी जल्दी निकल जाएँ, उतना अच्छा।

लेकिन निकलकर जाएँ कहाँ? सुराजी की माँ की एक रिश्तेदारी-छोटी बहन की ससुराल-उत्तर दिशा में थी और सुराजी बहू की एक बुआ दक्षिण दिशा में ब्याही थीं। इस विपत्ति की घड़ी में किसके पास चलना ठीक रहेगा? एक जमींदार द्वारा भगाए गए असामी को दूसरा जमींदार शरण दे भी सकता है और नहीं भी दे सकता। परिवार पर 'सुराजी' होने का कलंक लग गया था। इसको छिपाना जरूरी था, लेकिन कलंक को कपड़े से तो नहीं ढका जा सकता। देर-सबेर यह भेद खुलेगा ही। तब शरणदाता रिश्तेदार के लिए भी मुसीबत खड़ी हो सकती है।

पगडंडी से अब बैलगाड़ियों को पक्की सड़क पकड़नी थी। आगे का गाड़ीवान पूछ रहा था- "बाएँ मुड़ें या दाहिने?"

दोनों स्त्रियाँ कोई जवाब सोच पातीं तब तक आगे वाली बैलगाड़ी के बैल दाहिने यानी उत्तर दिशा में मुड़ गए। दरअसल, बेल्हा का बाजार करने के लिए

वे आए दिन दाहिने मुड़ते थे। इस तरह इस उखड़े परिवार की भविष्य की दिशा दोनों बैलों ने तय की।

छोटी बहन ने खुले मन से बड़ी बहन को स्वीकार किया। दोनों बहनें देर तक गले लगकर रोती रहीं।

बहन के बेटों ने जमींदार को दस रुपये नजराना देकर पास के भीटे पर उनकी झोंपड़ी बनाने की इजाजत ले ली। अगले दिन बाँस-फूस की दो झोंपड़ियाँ खड़ी हो गईं। पूरब दिशा में नदी पार करने के बाद जंगल था। भेड़ों के चरने के लिए आदर्श जगह। बहन धान और बाजरा ले आई। सुराजी की माँ चूल्हा तैयार करने लगीं। सुराजी बहू ने काँड़ी-जाँत गाड़ा और धान कूटने लगीं।

भूखे पेट की सबसे प्रिय आवाज धान कूटते मूसल, अनाज पीसते जाँत या चावल से भूसी फटकते सूप के अलावा और क्या हो सकती है ! सबसे प्रिय महक पकते चावल या सिंकती रोटी की।

चूल्हे का धुआँ छप्पर फाड़कर आसमान की ओर बढ़ चला...

पारस सिंह हत्याकांड में फैसला आ गया।

झूरी के दोनों बेटों-विक्रम और शेरू को आजीवन कारावास की सजा मिली और झूरी को सात साल की। बिरजू, पहाड़ी और जगेसर को दस-दस साल की। पचास साल से ऊपर की उम्र वाले संपत, बिपत, झगरू तथा अठारह साल से कम उम्र वाले बदरी और तूफानी को पर्याप्त साक्ष्य के अभाव में बरी कर दिया गया।

पूरे टोले ने माना कि बचाव पक्ष के वकील ने बहस बहुत जोरदार की-

पोस्टमार्टम रिपोर्ट में मृतक के शरीर पर लाठी की छह चोट पाई गईं। मौके पर दो लाठियाँ बरामद हुईं। दूसरा कोई हथियार बरामद नहीं हुआ। तब ग्यारह लोग हत्यारोपी कैसे हो सकते हैं? दो लाठियाँ हैं तो मारने वाले भी दो ही हो सकते हैं। ऐसा तो नहीं हो सकता कि एक आरोपी एक लाठी मारने के बाद लाठी दूसरे आरोपी को पकड़ा दे कि ले अब तू मार। ऐसा भी नहीं हो सकता कि दो या तीन लोग मिलकर एक ही लाठी से वार करें। सरकारी वकील से मेरी गुजारिश है

अगम बहै दरियाव

कि वे कोर्ट के सामने दृश्य प्रस्तुत करें कि ग्यारह लोगों ने मिलकर छह वार कैसे किए?

. जाहिर है कि मृतक को कहीं और मारा गया और लाश दलित टोले में रखकर, झूठे गवाहों की फौज खड़ी करके निरपराध लोगों को फँसाया गया। ... न हत्यारोपियों से मृतक की कोई पुरानी रंजिश सिद्ध होती है, न हत्या का कोई 'मोटिव' प्रमाणित होता है।...

उनके वकील ने कोर्ट रूम के बाहर झुंड में बैठकर रोती औरतों को भी समझाया - " जैसे पाँच को यहाँ से छुड़ा लिया वैसे ही बाकी को हाई कोर्ट से छुड़ा लेंगे। हौसला रखो।"

पैरोकारों को समझाया- "कभी-कभी जज साहबान के हाथ भी बँध जाते हैं। उन लोगों ने गवाहों की फौज खड़ी कर दी। जाओ, अब अपील का खर्चा-बर्चा जुटाओ।"

"खर्चा-बर्चा कहाँ से जुटाया जाय? बच्चे पालना मुश्किल है। गाय-गोरू, सूअर-बकरी तो सेसन लड़ने में ही बिक गए। जगह-जमीन है नहीं कि उसी को बेच दें!"

संतोखी आज फिर खुश हैं।

पिछले डेढ़-दो साल से रामलीला मैदान के एक कोने में वे अपना सैलून चलाते हैं। नीम के पेड़ के मोटे तने में कील ठोंक दी है। उसी में लाकर दो बित्ता लम्बा शीशा टाँग देते हैं। शीशा खरीदना नहीं पड़ा। सड़क के किनारे-किनारे जा रहे थे। अचानक आँखों में तेज चोंधा लगा। देखा, सड़क के किनारे मलबे के ऊपर टूटा शीशा पड़ा था। उन्होंने अन्दाजा लगाया कि इसे कटवाने पर सवा फीट लम्बा टुकड़ा निकल आएगा। उठा लाए। कुर्सी खरीद चुके थे। शीशे की ही कमी थी। कटवाकर फ्रेम में मढ़ा लिए। क्रीम की एक ट्यूब खरीदकर लाए हैं। इसमें खुशबू भी आती है और झाग भी बढ़िया बनता है।

पहले ग्राहक कम मिलते थे। बाद में उन्होंने देखा कि सामने ही वह रास्ता है जिससे होकर कचहरी से लौटे मुकदमेबाज रेलवे स्टेशन और बस स्टेशन जाते हैं। तब उन्होंने आदरसूचक और नजदीकी प्रदर्शित करने वाले सम्बोधन के साथ वै आवाज देना शुरू किया

- " भइया, बाबा, दादा, दाढ़ी बहुत बढ़ गई है। खराब लग रही है। आइए, बना दें।"

ग्राहक रुक जाता है। मुड़कर देखता है तो संतोखी कहते हैं-" पैसों की चिन्ता मत करिए। जो मरजी, दे दीजिएगा। जेब खाली हो, वकील-पेशकार ने सब झाड़ लिया हो तो अगली तारीख पर दे दीजिएगा।"

रात को जाते समय कुर्सी उसी पेड़ में जंजीर से बाँधकर ताला लगा देते हैं। शीशा और किस्बत सामने के ढाबे में रख देते हैं। शहर के बाहर भट्ठे पर काम करने वाले एक परिचित मिल गए हैं। खाना उन्हीं के साथ भट्ठे की आँच पर पक जाता है। कोई ऊपरी खर्चा है नहीं। जो कुछ कमाते हैं, बेटे की पढ़ाई और दोनों वकीलों का घर भरने में खर्च होता है।

आज सैलून पर उनका मन नहीं लग रहा था। मुंसिफ कोर्ट में जिरह बहस पिछली तारीख पर ही पूरी हो गई थी। फाइल 'जजमेंट' में रखी गई थी। पूरी उम्मीद थी कि आज फैसला सुनाया जाएगा। मन में धुकुर-पुकुर हो रही थी। सैलून बन्द करके वे बारह बजे ही कचहरी आ गए। लंच के बाद फैसला सुनाया गया। यहाँ भी वे जीत गए।

फैसला सुनकर उनके शरीर में झुरझरी-सी छूटी। हाथ-पैर के रोयें खड़े हो गए। इस वक्त वे छत्रधारी सिंह का चेहरा देखना चाहते थे। कैसा धुआँ-धुँआँ सा हो गया होगा। पर छत्रधारी कहीं दिखाई नहीं दिए। उनके वकील पाँच मिनट के लिए आए और चले गए। फिर उनकी खुशी यह सोचकर घट गई कि छत्रधारी इसके

खिलाफ भी स्टे ले लेंगे।

यह 'स्टे' सबसे बड़ा रोग है।

आज भी उनके वकील साहब ने सलाह दी कि इस फैसले के आधार पर प्रतिपक्षी के विरुद्ध कूट रचित दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए दफा 420 में मुकदमा लिखा सकते हो।

संतोखी चुप रहे तो उन्होंने फिर समझाया-" इसमें इतना आगा-पीछा सोचने की क्या बात है? वे तुम्हें पदा रहे हैं तो तुम भी उन्हें पदाओ। लड़ने के लिए तो मैं हूँ ही।"

"खर्च के डर से पिछड़ रहा हूँ, वकील साहेब। एक मुकदमे का खर्च और बढ़ जाएगा। जितनी मेहनत भागने वाले को पड़ती है, उतनी ही खदेड़ने वाले को।"

वकील साहब पल-भर उन्हें ताकते रहे। फिर बोले-" जैसी तुम्हारी मरजी।

जाओ, मुंशी से मिलकर नकल की दरखास्त दिला दो।"

बस स्टेशन के पास पहुँचने वाले थे तो देखा, घाट की ओर जानेवाली पगडंडी

अगम बहै दरियाव

के सामने लाश ढोनेवाली लारी से कोई लाश उतारी जा रही थी। फूलों से सजी हुई। ध्यान से देखा तो अपने गाँव के कुछ लोग दिखे। पास जाने पर पता चला कि चम्पाबाई की लाश है। तीन-चार महीने से बीमार थीं।

थकान तो बहुत थी। दिन-भर खड़े-खड़े ही बीता था। लेकिन गाँव-जवार का मामला था। जब मौके पर मौजूद हैं तो दस कदम साथ चलना फर्ज बनता है। वे भी पीछे-पीछे चल पड़े।

चम्पा और कलाधरी माँ-बेटी को भी कम नहीं नोचा छत्रधारी ने। जिसकी बेटी के लहँगे में डेढ़-दो साल सोये उसी को विश्वास में लेकर मूँड़ लिया।

शवयात्रा में सबसे पीछे चलते हुए उनकी स्मृति में बूढ़ी कलाधरी बाई का झुर्रियों से भरा चेहरा कौंध गया। छत्रधारी द्वारा ठगे जाने पर उनकी ज्योतिहीन आँखों से आँसू की बरसात हो रही थी और चम्पा उन्हें ढाढ़स बँधा रही थीं।

उन दिनों वे छत्रधारी के हमराह ही चलते थे। छत्रधारी ने उन्हीं को कलाधरी के पास यह पता लगाने के लिए भेजा था कि इन लोगों का इरादा कोर्ट-कचहरी जाने का तो नहीं है। ऐसा हो तो उन्हें समझा-बुझाकर या डरा-धमकाकर रोका जाए।

उन्हें याद है कि छत्रधारी की नजर चम्पा की बड़ी बेटी कामिनी पर तभी गड़ गई थी जब वह पूरी तरह सयानी भी नहीं हुई थी। वे अक्सर उसके दुआर से होकर आने-जाने लगे। कलाधरी को नानी और चम्पा को मौसी कहने लगे। आए दिन इस बात का एहसान जताने लगे कि अगर ऐन मौके पर उन्होंने मदद न की होती तो हमारे खानदान की नाक कट जाती। नानी और मौसी का सम्बोधन सुनकर माँ-बेटी को मानना पड़ा कि ठाकुर का लड़का तहजीब वाला है। वे छत्रधारी को दरवाजे पर बैठाने और पान-सुपारी खिलाने लगीं।

कलाधरी बाई की बहुत दिनों से इच्छा थी कि अपने दरवाजे पर एक शिवाला बनवाएँ। छत्रधारी को पता लगा तो उन्होंने शिवाला बनवाने का जिम्मा अपने कन्धों पर ले लिया। सुझाव दिया कि इसके लिए ईंट का एक भट्ठा खोलना ठीक रहेगा। आपकी पूँजी रहेगी। मेरी जमीन रहेगी। साझे में शुरू कर देते हैं। जितनी ज्यादा पूँजी उतना ज्यादा मुनाफा। एक ही सीजन में पूँजी खाली हो जाएगी। फिर मुनाफा-ही-मुनाफा ।

उस जमाने में भट्ठा खोलने के लिए पचीस-तीस हजार रुपए की पूँजी काफी थी, लेकिन छत्रधारी ने कलाधरी से एक लाख रुपए लगवाए। अब छत्रधारी आए दिन भट्ठे का हिसाब-किताब समझाने कलाधरी के घर जाते और कामिनी से मुलाकात का मौका मिलता। चम्पा बाई ने दुनिया देखी थी। बेटी पर बंदिशें लगाना चाहा, लेकिन जब फूस और चिनगारी मिल गए तो जलने से कब तक बचते।

दो ही सीजन में घाटा दिखाकर छत्रधारी ने सारी पूँजी हड़प ली। कलाधरी के हाथ में बस दस हजार ईंटें आईं जो शिवाले की नींव डालने के लिए छत्रधारी ने पहले सीजन में भिजवाई थीं।

संतोखी को आश्चर्य होता है कि सारी दुनिया को चरा चुकी दोनों औरतें छत्रधारी के मन में पल रहे पाप की झलक कैसे नहीं पा सकीं? फिर सोचते हैं कि छत्रधारी के मन की थाह वे खुद ही कहाँ पा सके।

इलाके के ज्यादातर लोग इस बात के लिए छत्रधारी की बुद्धि का लोहा मानने लगे कि जिस कामिनी की नथ उतारने के लिए बनवारी सेठ ने नगद पचीस हजार और पाँच थान सोने के गहने चढ़ाए, उसी नथ को सेठ से भी पहले छत्रधारी ने उतार लिया, उलटे उसकी नानी से एक लाख रुपए 'दहेज' लेकर।

बहुत कम लोगों ने उस समय इस बात पर एतराज जताया होगा कि बूढ़ी कलाधरी को ठगकर छत्रधारी ने घटिया काम किया। किसी ने कहा भी तो छत्रधारी ने उलटे उसी को डपट दिया- "हुँह! बूढ़ वेश्या तपस्विनी। शिवाला बनवाने से पाप कटेगा? आखिर उस बुढ़िया के पास इतना मालमत्ता आया कहाँ से? हमारे पुरखों से ही तो नाच-गाने से रिझाकर ठगा! उसमें से थोड़ा-सा हम ठग लिये तो कौन-सा पहाड़ टूट पड़ा। अपना ही लूटा गया माल तो वापस लाए।"

संतोखी सोच रहे हैं कि अगर उस दिन उन्होंने कलाधरी माँ-बेटी को छत्रधारी के खिलाफ मुकदमा दर्ज करने की सलाह दे दी होती तो शायद छत्रधारी इतने मनबढ़ न होते कि उनके साथ धोखा करने की सोचते।

पूर्णिमा का चाँद दो बाँस ऊपर चढ़ आया है।

जंगू और असलम देर से पुलिया पर बैठकर गप कर रहे हैं। कितना कुछ है दुनिया में जो उन्हें जानना है। जिज्ञासा का अन्त नहीं। समाधान भी खुद ही तलाशना है। किसी और को कहाँ फुरसत है जो उनका समाधान करे। इसलिए बहुत सारे ऐसे प्रश्नों के उत्तर जो उन्हें खुद नहीं पता, आपस में एक-दूसरे को पूरे आत्मविश्वास से बताते हैं।

"प्रह्लाद की कहानी तो बिलकुल झूठी लगती है मुझे। भगवान उसे कहाँ मिल

गए? उसके बप्पा से भगवान की क्या दुश्मनी थी?"

"और कैसा लड़का था ध्रुव जो माँ को अकेली छोड़कर जंगल में निकल गया! तपस्या से वरदान क्या मिला? एक जगह अचल हो जाने का। हाथ-पैर सलामत रहते एक जगह बैठे-बैठे जिन्दगी काटो। यह वरदान हुआ कि सराप?"

बात काम-धन्धे की चल पड़ी। जंगू ने बताया कि आज उसने पहली मोटर की 'बाइंडिंग' अकेले की। पंखों की वायरिंग तो बहुत पहले से कर रहा है। उसने उम्मीद जताई कि इस साल अलग दुकान खोल लेगा तो माँ को दाढ़ी बाबा के घर काम करने से मना कर देगा।

नई पीढ़ी मुख्तार को दाढ़ी बाबा कहती है।

दाढ़ी बाबा के सामने पड़ना उसे बिलकुल अच्छा नहीं लगता। वे उसे हमेशा 'अबे' या 'रे' कहकर बुलाते हैं। कभी-कभी माँ की गाली दे देते हैं। एक बार कह दिया कि इसकी आँखें देखकर लगता है कि यह नामी चोर होगा।

माँ के कहने से वह कभी-कभार उनकी खेती-बारी का काम कर देता है, लेकिन दाढ़ी बाबा के घर से लाया खाना वह छूता तक नहीं।

"क्यों? वहाँ भी तो अब मैं ही बनाती हूँ।"

वह बिना बोले माँ के सामने से हट जाता है।

सिंवार में लगे सरकारी ट्यूबवेल के बाहर टँगा बल्ब जल उठा।

"अरे, बिजली आ गई।" जंगू खड़ा होते हुए बोला- " आज एक हफ्ते बाद आई है। मुझे दाढ़ी बाबा के गन्ने की सिंचाई करनी है। ऐसा करो असलम भाई, तुम आपरेटर के पास पहुँचकर मेरा नम्बर लगवाओ। मैं दौड़कर फावड़ा लाता हूँ।"

ओसारे से फावड़ा लेकर वह दालान के सामने से गुजरा तो उसे अपनी माँ की फुसफुसाहट सुनाई पड़ी- "हटिए, छोड़िए। आप एकदम्मै बउरा गए हैं क्या? अपनी उमर देखिए।"

जंगू छूहे के पास से भीतर झाँकने लगा। भीतर हल्का उजाला था। दाढ़ी बाबा उसकी माँ को खींचकर चारपाई पर ढकेलने की कोशिश कर रहे थे। उसकी माँ बार-बार उनका हाथ झटकती और उसकी चूड़ियाँ बज उठतीं।

जंगू के तन-बदन में आग लग गई। वह पलटकर अन्दर घुसा। पैरों की धमक सुनकर जब तक दाढ़ी बाबा सँभलते, जंगू का फावड़ा उनके सिर का निशाना लेकर चल चुका था। लेकिन दाढ़ी बाबा के झुकने और हाथ उठाकर वार रोकने के कारण फावड़े का घाव सिर पर न लगकर दाहिने कन्धे पर पड़ा। चिल्लाने के साथ दाढ़ी बाबा भहरा पड़े। जंगू की माँ भी चिल्लाई और दाढ़ी बाबा के बचाव में उनके ऊपर झुक गई।

जंगू दूसरा वार नहीं कर पाया। भागा।

ऑपरेटर पहली नींद में सोया था। कई आवाज देने पर उठा। उठने के बाद भी असलम को ताकता जम्भाई लेता रहा।

तब तक जंगू हरहराता हुआ प्रकट हुआ और असलम का हाथ पकड़कर खींचते हुए बोला- "चल भाग। मैंने 'दढ़िया' को काट दिया।"

आधा गाँव मुख्तार साहब के दुआर पर जुट गया। जंगू की माँ ने खूँटी से लालटेन उतारकर जला दी।

तब तक ऑपरेटर ने आकर बताया कि मारने वाला इसी औरत का बेटा जंगू था। किसी ने कहा- "तीन-चार लड़के जाकर उस लौंडे को पकड़ो।"

मुख्तार थोड़ी देर तक कराहने के बाद बेहोश हो गए थे। उलट-पलटकर घाव देखा गया। वार ओछरा गया था। इसलिए घाव गहरा नहीं था, लेकिन खून बह रहा था। उसमें लोहबान और कडुआ तेल मिलाकर भरा गया।

जंगू की माँ बताते-बताते थक चुकी थी कि वह दालान में 'बाबू' के लिए पीने का पानी रखकर मच्छरदानी लगा रही थी कि उनकी नीयत बद हो गई। उन्होंने मुझे पकड़ लिया और जबरदस्ती करने

पर आमादा हो गए। तभी किसी ने हमला किया। पता नहीं कौन था? मैंने तो उसकी परछाईं भी नहीं देखी। मेरा बेटा था तो रहा होगा। उससे नहीं देखा गया होगा। मार दिया। मारने का काम ही कर रहे थे ये !

"अब जितनी जल्दी हो, इन्हें थाने ले चलिए। थाने के बाद अस्पताल ले चलना होगा।" मुख्तार साहब के छोटे भाई, लाला बोले- "चार-छह लोग साथ चलने के लिए तैयार होकर आ जाइए।"

"पहले यह तो तय कर लीजिए कि रिपोट में लिखाना क्या है? बलात्कार का मामला सामने आने पर तो सारा केस ही पलट जाएगा। वह औरत अपनी इज्जत बचाने के लिए चिल्लाई। उसके बेटे ने माँ की इज्जत बचाने के लिए हमला कर दिया। इसमें तो उलटे मुख्तार साहब ही नप जाएँगे।"

"तब? मामले को दबा दिया जाय?"

"दबाया न जाय, ट्विस्ट किया जाय।" बीस साल तक मुहर्रिरी कर चुके लाला बोले-"सब लोग साथ दें तो नई कहानी गढ़ ली जाय। जंगुआ के साथ मियाँ टोले का असलम भी था। मियाँ टोला हम लोगों के लिए कितना खतरनाक है, यह हम सबको पता है। जितना खतरा हिन्दुस्तान को पाकिस्तान से है, उससे ज्यादा खतरा हमारे टोले को मियाँ टोले से है। ये न तनिक डरते हैं, न ओहम मानते हैं। इनके चलते हमारी बेटियों की इज्जत हमेशा दाँव पर लगी रहती है। मौका पाते ही

ये हमारी लड़कियों की 'मति' फेर देते हैं। आप सबकी राय हो तो इस मौके का फायदा उठाकर इनके लौंडों को ऐसा नाथा जाय कि दस-पाँच साल तक के लिए अमन-चैन हो जाय।"

पड़ोसी दुर्गा सिंह बोले- "इससे अच्छा क्या होगा? थाना-कचेहरी का खर्चा तो मुख्तार साहब खुद ही झेलेंगे। सबेरे इनके बेटे को बुलाने के लिए किसी को भेज दिया जाएगा। लेकिन गवाही तो हमीं लोगों को देनी पड़ेगी।"

"दी जाएगी। इस्कीम बनाइए।"

"मैं जो सोच रहा हूँ, सुनिए।" लाला बोले- " पास आ जाइए। बात यहाँ से शुरू करते हैं... यह औरत बेसहारा थी। मुख्तार साहब ने शरण दिया। जानवरों का सानी-गोबर करती थी। घर का सारा भेद

जान गई तो इसकी नीयत डोल गई। अपने बेटे और गाँव के जरायमपेशा लोगों से साँठ-गाँठ करके डकैती डलवा दिया। रात के दस बजे थे। सारा गाँव गहरी नींद में सो रहा था..."

लाला लोगों की प्रतिक्रिया जानने के लिए रुके। तभी मुख्तार जी होश में आ गए। हू-हू करके कराहने लगे। सबने उन्हें घेर लिया- "कैसी तबीयत है? कैसे हुआ यह सब?"

वे बस कराहते रहे।

सब लोग फिर कोने में आ गए।

"...एक बदमाश ने सोए हुए मुख्तार साहब का मुँह दबा रखा था, एक ने पैर। दो बदमाश घर में घुसे थे। दो बाहर पहरा दे रहे थे। मुख्तार साहब छटपटाए। झटककर मुँह छुड़ाया और चिल्लाए तो हम लोग शोर मचाते हुए दौड़कर आए। हमें देखकर बाहर खड़े बदमाश ने कट्टे से फायर किया। हम बचने के लिए दालान की ओर भागे तो देखा कि जंगुआ की माँ मुख्तार साहब की कमर पीछे से पकड़कर लटकी है और जंगुआ कुल्हाड़ी से उन पर वार कर रहा है। ठीक उसी समय लूट का माल लेकर दो बदमाश घर से बाहर निकले और सब भाग गए। यह औरत नहीं भाग पाई और पकड़ी गई। तब मामला बनेगा, डकैती विद इरादा-ए-कत्ल धारदार हथियार से हमला। दफा 395, इसी के साथ नत्थी हो जाएगी आई.पी.सी. की तीन दफाएँ 147, 148 और 149, इसमें आप मियाँ टोले के सारे बदमाश लड़कों को नाथ सकते हैं। पैसा खर्च करें तो जितने लड़कों को चाहें, हाथ-पैर तुड़वा सकते हैं। चाहें तो दौराने-गिरफ्तारी किसी का इनकाउंटर करवा सकते हैं। जितना गुड़ डालेंगे, उतना मीठा होगा।"

"घटना के गवाह कौन बनेंगे? रिपोर्ट लिखाते समय ही उनका नाम भी देना होगा।"

दुर्गासिंह का लड़का अजय उनके पीछे ही खड़ा था। बोला "बेगुनाह लोगों को फैमाना तो अच्छी बात नहीं है।"

'बेगुनाह कोई नहीं है, बेटा। सब जहर के पेड़ हैं। मौका मिला है तो इनका इत्याज हो जाना चाहिए।"

पहला गवाह बनने के लिए धुन्नी सिंह को राजी किया गया। धुन्नी सिंह मुख्तार के पक्के दोस्त हैं। ठीक पीछे घर है। उनका सबेरा मुख्तार साहब के दुआर पर ही होता है। पहली चाय यहीं पीते हैं। शाम को

गाँजे की चिलम भी साथ-साथ चटकाते हैं। यहाँ नेवासा पर आए हैं। गाँव के ठाकुर उन्हें असली ठाकुर नहीं मानते। कहते हैं, बाँदा जिले के पटेल हैं। उन्होंने ललकार कर कहा-"मैं दूँगा गवाही। डंके की चोट पर दूँगा। बस, हमें यह समझा दीजिए कि कहना क्या है।" उन्होंने चारों तरफ नजर दौड़ाई। सारा गाँव देख ले कि उनकी रगों में असली ठाकुर का खून बह रहा है।

"... धुन्नी सिंह ने टॉर्च जलाई तो देखा कि जंगू की माँ मुख्तार की कमर पकड़कर लटकी हुई थी और जंगू कुल्हाड़ी से..."

"पहले तो आपने कहा कि मुख्तार लेटे हुए थे।"

"अरे भाई, लेटने से काम नहीं चल रहा है।"

"फिर से सुनिए..."

दूसरा गवाह बनने के लिए असरफी साह पर दबाव बनाया गया। असरफी साह का घर ठीक सामने है। साइकिल से गाँव-गाँव घूमकर चाँदी और गिलट के गहने बेचते हैं। गहनों की सफाई भी करते हैं। तीन-चार महीना पहले धंधा करके शाम के झुटपुटे में गाँव पहुँच रहे थे कि दो नकाबपोश लड़कों ने उन्हें साइकिल से गिराकर गहनों वाला झोला लूट लिया था। पक्का था कि यह मुसलमान टोले के लड़कों की करामात है लेकिन रंजिश बढ़ जाने के डर से असरफी साह ने रिपोर्ट नहीं लिखवाई। आज मौका है...

लेकिन असरफी साह गवाही देने के लिए कोटि जतन तैयार नहीं हैं। कहते हैं-"हम कारोबारी आदमी हैं। हमारी साख खराब हो जाएगी। हम साख की ही रोटी खाते हैं।"

"छोड़िए, पड़ोसी गाँव के पुदई सुकुल का नाम डाल दीजिए। पेशेवर गवाह हैं। पैसा लेंगे और ठहकर गवाही देंगे।" मुख्तार के भाई लाला ने सुझाव दिया।

"लेकिन अगर पूछा गया कि वे रात में यहाँ क्यों आए थे?"

"आए थे मुख्तार से कर्ज लेने। भागवत कथा कराने वाले हैं। लौटते-लौटते अँधेरा हो गया। रतौंधी होती थी तो यहीं रुक गए।"

एं "गजब कह रहे हो? रतौंधी होती थी तो रात में वारदात कैसे देख लिया?"

"यह भी ठीक कह रहे हो। रतौंधी हटा दो। रात ज्यादा हो गई थी तो रुपया लेकर लौटने में छिन जाने का डर था इसलिए रुक गए।"

"लेकिन यह जमेगा नहीं। पुदई हर पेशी पर मोल-भाव करेंगे। अरे, आप खुद क्यों नहीं देते? सगे भाई हैं। बगल में रहते हैं।"

लाला ने बेमन से स्वीकार किया- " ठीक है।"

"अब किसे-किसे नामजद करना है, यह तय करिए।"

"पहला नाम तो तौफिकवा उर्फ मोटू का लिखिए। हीरो बना घूमता है। आज तक किसी को दुआ-सलाम तक नहीं किया। ग्रिल और रेलिंग की वेल्डिंग से कितनी कमाई हो जाती है कि इतने घमंड में रहता है। बाडी दिखाता है। उसका एक घुटना तुड़वाना है ताकि जिन्दगी-भर लाठी के सहारे चले।"

दूसरा नाम फैजुलवा का आया- "सउदिया की कमाई से तीन बीघे खेत खरीद लिया। कैसे-कैसे विभीषण हैं गाँव में कि जरा-सा ज्यादा पैसे की लालच में इन देशद्रोहियों को खेत बेचकर राजा बना रहे हैं। सबने मिलकर मसजिद बनाने के लिए जमीन खरीदा है। अब इस गाँव में मसजिद बनेगी?"

"मतिनवा दोनों भाइयों को फँसाना ही है। एक का चार माँगता है। पूरे इलाके को लूट रहा है। एक बार मेरी जली मोटर की बाइंडिंग किया था। एक पैसा कम करने को राजी नहीं हुआ। बोला- 'मेहनत की माँग रहे हैं कि हराम की?'"

सबके अपने-अपने दर्द थे। सबका इलाज जरूरी था।

"बेटा अजय, एक कागज-कलम ले आओ। जैसा बोलें, लिखते जाओ। नाम, वल्दियत, सुकूनत, उम्र, असलहा, माल क्या-क्या लुटा? बक्से, बरतन, गहने, रुपये।"

"अब पैसे का इन्तजाम।" लाला के इशारे पर धुन्नी सिंह मुख्तार को हिलाने-डुलाने लगे-" उठिए महराज। सारी रात बेहोश ही रहेंगे? बक्से की चाभी दीजिए।"

कोई हलचल न देख सबने फिर असरफी साह को घेरा।

"देखिए साह जी, रुपया-पैसा तो मुख्तार साहब रखे ही होंगे, लेकिन अभी बेहोश हैं। थाने पर ढाई-तीन हजार का खर्च तो होना ही है। इस गाढ़े वक्त में तुम्हें ही भामासाह बनना होगा। भामासाह को जानते हो न?"

"हमारे बप्पा जानते होंगे। हमारे खानदान में तो एक नामासाह हुए हैं। पहलवानी करते थे।"

"पहलवानी? अच्छा छोड़ो। जल्दी जाओ। कम-से-कम तीन हजार लेकर आओ।"

असरफी दोनों हाथ मलते हुए काँखने लगे।

धुन्नी सिंह गरजे-"कान खोलकर सुन ले 'बानिया।' तुलसी बाबा ने सबेरे-

सबेरे तुम लोगों का मुँह देखने से मना किया है। दोख लगता है। तब भी हम तुम्हें बीच गाँव में बसाकर पाल रहे हैं तो किस दिन के लिए? तून गवाही देने की तैयार है न रुपये निकालने को तो तुझे हम तेल लगाकर चाटें क्या?"

लाला का लड़का घर से पिपिया में डीजल लेकर आया और ट्रैकर स्टाई करके ट्राली जोड़ने लगा। असरफी साह आधे घंटे में हजार रुपये लेकर लौटे। भुन्नी सिंह के हाथ पर रखते हुए कहा "इतना ही घर में निकला।" फिर कहा- "आप सबकी मातबरी का खयाल करके दे रहे हैं बाबू साहब। खुदा न खास्ता मुख्तार साहब को कुछ हो-हवा गया तो मेरा रुपया डूबना नहीं चाहिए।"

"मुख्तार साहब को कुछ नहीं होने जा रहा है, असरफी। ये तेरे मरने के बाद ही मरेंगे।"

गद्दा बिछाकर मुख्तार साहब को ट्राली में लिटाया गया। थाने के अन्दर-बाहर घुप्प अँधेरा था। थाने के मुंशी तेवारी जी परिसर के बीच बने छप्पर के ऑफिस में मेज के बगल बिछी नंगी चारपाई पर सो रहे थे। नाक-मुँह दोनों बज रहे थे। करवट बदलने पर तीसरी आवाज भी निकल जाती थी। पहरे के सिपाही को पटाकर उन्हें जगाने की कोशिश की गई, लेकिन तेवारी जी उजाला होने के बाद ही उठे।

- डकैती? कितने लोग थे? अच्छा, दो को छोड़कर सारे मुसलमान? सारे के सारे गाँव के? दो नाबालिग भी? एक डाकू पकड़ा भी गया? अच्छा, पकड़ी गई! कहाँ की है, पहचाना? वह भी गाँव की? घर की ही? क्या मतलब? घर की औरत ने घर में ही डाका डाल दिया? अच्छा, जानवरों का सानी-गोबर करती थी!

- चोट कैसे लगी? उसी औरत के बेटे ने मारा? कुल्हाड़ी से? रात मैं? कितने लोग थे घर में? वह औरत और मुख्तार, बस दो! मुख्तार की बीबी? मर गई। दस साल पहले। कितनी उमर है मुख्तार की? पैंसठ ।

- तो अब क्या समझने को रह गया? तुम लोग पुलिस को एकदम चूतिया समझते हो क्या? सारा मामला आईने की तरह साफ है। सिर्फ गोबर-पानी कराकर बुड्ढा मानने वाला नहीं था। बुढ़ापे में आशिकाना भिड़ाने लगा तो मारा नहीं जाएगा? पन्द्रह-सोलह साल के लड़के को बच्चा समझते हो? फर्जी रिपोर्ट लिखाने की सजा मालूम है?

इतनी मेहनत से लिखी गई दरखास्त तेवारी जी ने हवा में उड़ा दी और कान पर जनेऊ चढ़ाते हुए पेशाब करने के लिए एक कोने की ओर बढ़ गए।

ऐसे में असरफी साह ने हिम्मत दिखाई। दरखास्त उठाकर तेवारी जी के पीछे-पीछे गए और वापसी में उन्हें राह में रोककर कहा- "जरा सुनिए, महराज। बहुत

अच्छा किया जो इतना कड़ा रुख अपनाया। पैसे वाली पार्टी है। हजार लेकर आए हैं। दरखास्त रख लीजिए। रिपोट की नकल लेने आएँगे तो फिर देंगे। सुबह-सुबह बोहनी के समय आई लक्ष्मी को ठुकराने से पाप लगेगा।"

मामला सुलझ गया। कुछ देर की लिखा-पढ़ी के बाद तेवारी जी ने सिपाही को पर्चा पकड़ाते हुए कहा- " घायल को ब्लाक अस्पताल ले जाओ।"

आठ बजने वाले थे। अभी सब बासी मुँह थे। चट्टी पर ट्रैक्टर रोका गया। अब तक मुख्तार साहब भी होश में आ गए थे। दातून-कुल्ला हुआ। जलेबी छनवाई गई। पकौड़ी तलवाई गई। दूध की स्पेशल चाय

बनी। पान-बीड़ी? बीड़ी नहीं, आज सिगरेट। मुख्तार साहब भी हू-हू करते लेटे-लेटे एक पाव जलेबी खा गए। चाय पीने के लिए उठाकर बैठाना पड़ा।

मुल्जिम खुराक लेने से मुनकिर हैं

एक दिन सुराजी की माँ की छोटी बहन ने आशंका जाहिर की कि सुराजी के बाप के लौटकर न आने के पीछे कहीं तुम्हारे कुल-देवताओं की नाराजगी तो नहीं है। जबसे सुराजी के बाप गए, देवताओं को पूजा नहीं मिली। कनूरी नहीं हुई। देवता नाराज हो जाते हैं तो राह से भटका देते हैं। आदमी घर लौटना भी चाहे तो लौट नहीं पाता। राह भूल जाता है।

सुराजी की माँ को खुद ऐसा लग रहा था। वरना दुनिया देस-परदेस जाती है और देर-सबेर लौट आती है। वे क्यों नहीं लौटे?

उसी रात उन्होंने सपना देखा कि बड़े पुरुख और गाजी मियाँ आए हैं। बर्तनों को उलट-पुलटकर पूछ रहे हैं- "मेरा मलीदा कहाँ है?"

अब तो पक्का हो गया कि सुराजी के बप्पा के न लौटने का कारण देवताओं की नाराजगी ही है। इनकी नाराजगी दूर करना जरूरी है। जवानी तो गुजर गई। बुढ़ापे में ही मुलाकात हो जाए।

पूजा की तैयारी की गई। पास के गाँव से लाल मोहम्मद, दीन मोहम्मद दोनों मुजावर भाई बुलाए गए। वे डफ्फ, खड़ताल, चँवर और दो मोटे बाँसों में बड़ी-बड़ी रंगीन पताकाएँ बाँधकर आए। साथ में उनकी बहन जहना आई। दरवाजे के कोने में गड़ी साँग की धुलाई-पोंछाई हुई। कुर्बानी देने के पहले बकरे के

माथे पर लाल तिलक लगाया गया। कटे सिर से बहते खून को साँग के सामने जमीन पर टपकाया गया।

लोहबान के धुएँ और मीठे जाउर की महक से सारा घर महकने लगा। बाजे बजने लगे। लाल मोहम्मद ने बड़े पुरुख, सती आमिना, करिया गोरिया और गाजी मियाँ की नाराजगी दूर करने के लिए उनकी अजमत का 'पचरा' शुरू किया-

देवता का जगाइ लउबै होऽऽ
सोउती निंदियाऽऽ
बड़े पुरुख औ करिया गोरिया
संग जोधा परिहार रे भाई
संग जोधा परिहार

जहना अपनी पतली आवाज में दोहराने लगीं-

पांच भाई की बहन अमीना
हुलसी राचेन जेवनार, रे भाई
हुलसी राचेन जेवनार
अंधा जान आंखी पावे
कोढ़ी सुबरन होय
जाए बझिनिया बेटा पावे
नाम पीर का होय, रे भाई नाम पीर का होय
पीर का मनय लौबै हो
सौउती निंदिया

तब वली मोहम्मद ने बखान शुरू किया। गद्य और पद्य का मिला-जुला रूप-
सरजू नदिया कहर घाघरा
अगम बहै दरियाव,
रे भाई अगम बहै दरियाव

उस दरियाव में अठीले और बरहना नाव खेते थे। कहते हैं-

सत्तर मन का सोंटा बहत्तर की जंजीर, लपटत चलें बरहना पीर।

बरहना एक बार अपनी गुदड़ी झटकते तो उसमें से एक लाख बरहना झड़ते। किशोर भूसी एक लाख बरहना की बात सुनकर दहशत में आ गए। उनके दरवाजे पर इतनी जगह कहाँ है कि एक लाख बरहना की आवभगत कर सकें।

अगम बहै दरियाव

देवता को अपनी डील पर उतारने की तैयारी में सुराजी की माँ ने साड़ी का कछाड़ मारा (साड़ी की काँछ पीछे कमर में खोंसी)। खिचड़ी बाल खोलकर बिखराए और आँचल से कमर को कसा।

लोहबान का धुआँ सूँघकर दोनों हाथों को कन्धे से गोल-गोल भाँजते हुए हस्स हस्स की आवाज निकालने लगीं। बाजे की गति तेज हो गई।

दोहाई बन्दीछोर
दोहाई करिया गोरिया
दोहाई गाजी मियाँ

वे अभुवाने लगीं। उनकी आँखें बड़ी लगने लगीं। मुखमंडल का तेज बढ़ गया। लगा कि उनकी डील पर देवता की सवारी आ गई। देवता ने हाथ उठाकर शान्त होने का इशारा किया।

बजे बंद हो गए .

देवता ने पहला सवाल दागा- "मेरी कनूरी क्यों बन्द हुई?"

सुराजी की माँ की आवाज मर्दानी और मोटी हो गई।

लाल मोहम्मद ने हाथ बाँधकर कहा- "आपकी सवारी देशावर चली गई, साहेब। लौटी ही नहीं।"

"दूसरी सवारी का इन्तजाम क्यों नहीं हुआ?"

"दूसरी सवारी एकदम बच्चा थी। सयानी हुई तो फिरंगी की गोली से शहीद हो गई।"

"पूरा खानदान शहीद हो गया?"

"नहीं, साहेब। औरतें बची थीं, लेकिन उन्हें भी घर छोड़कर भागना पड़ा। इसी से चूक हो गई।"

"चूक की सजा भुगतनी होगी।"

"रहम साहेब, रहम। आगे चूक नहीं होगी।"

देवता के 'परगट' होने की खबर पाकर अड़ोस-पड़ोस के लोग उमड़ आए। खासकर औरतें। आँगन भर गया। देवता के पास हर समस्या का समाधान रहता है, हर सवाल का जवाब। सबके पास सवाल हैं। अनसुलझे रहस्यों से परदा हटवाना है। समाधान पूछना है। किसी की भैंस खो गई है। उसे ढूँढने के लिए किस दिशा में जाएँ? किसी की बाल्टी चोरी हो गई है। चोर की शिनाख्त चाहिए। किसी की गाय ने दूध झन्न कर लिया है। किसी के कटहल की बतिया सूखकर गिर रही है। जितने घर उतनी मुसीबतें । देवता सबका समाधान करते हैं।

किसी-किसी को डाँट भी देते हैं। दूर आँगन के कोने में घूँघट काढ़कर बैठी दुल्हन को भी समाधान चाहिए, लेकिन इतने लोगों के सामने लाजवश अपनी पूरी बात नहीं कह पा रही है। इतना ही कहती है-देवता को तो सब मालूम ही है। कोई राह सुझाएँ।

देवता भी हक्के-बक्के हैं।

तब उसकी बूढ़ी सास मदद के लिए आगे आती है-"यह मेरी बहू है, साहेब। इसका आदमी, मतलब मेरा छोटा बेटा जूड़ पड़ गया है। (ठंडा पड़ गया है। संसर्ग में अक्षम हो गया है।) उसे काम लायक बना दीजिए।"

देवता थोड़ी देर तक मौन खड़े रह जाते हैं, फिर कहते हैं-"लासा फेंक, लासा।"

कहने के साथ फिर अभुवाने लगते हैं।

तुरन्त किसी की समझ में नहीं आता कि 'लासा फेंक' का मतलब क्या हुआ? फिर बड़ी-बूड़ियाँ कानाफूसी करने लगती हैं।

'दोहाई' देवता अभुवाना बन्द करके दुहाई देते हैं- "दोहाई बन्दीछोर! दोहाई करिया गोरिया! दोहाई बड़े पुरुख ! दोहाई गाजी मियाँ।"

फिर पूछते हैं- "कुछ चाहिए?"

सुराजी की माँ ने अपनी बहन से कह रखा था कि देवता 'परगट' हों तो उनसे 'माँगन' माँगना कि सुराजी के बप्पा को लौटा लावैं।

बहन कहती है- "हम चाहते हैं कि सुराजी के बप्पा लौट आवैं ताकि आपको हर साल पूजा मिलती रहे।"

लौटेगा।" लौटेगा।

"कब लौटेंगे? वहाँ किसी जादूगरनी ने उनको भेड़ा बनाकर बाँध तो नहीं लिया है?"

देवता इनकार में सिर हिलाते हैं-" नहीं, नहीं।"

"तो अब तक लौटे क्यों नहीं? मेरी बहन उनका इन्तजार करते-करते बूढ़ी हो गई। उनकी जवानी अकारथ हो गई।"

इस प्रश्न से सुराजी की माँ की थिरकन शिथिल होने लगी है। आँखें कातर होने लगी हैं। अचानक उनका शरीर थर-थर काँपने लगता है। वे चीख पड़ती हैं। यह चीख स्त्री स्वर में होती है। वे खड़े से सीधे जमीन पर गिरती हैं, जैसे कटा पेड़ गिरता है। दोनों हाथ आगे की ओर जमीन पर पट पड़ जाते हैं। सिजदा ।

इसका मतलब देवता वापस चले गए। देवता की इस तरह अचानक वापसी सबको अचरज में डाल देती है। इस तरह तो नहीं जाते। उन्हें जाने के लिए भी भनाना पड़ता है। बाजा बजाकर, उनकी अजमत का पचरा सुनाकर खुशामद करनी पड़ती है।

अगम बहै दरियाव

जब वह मस्त होकर झूमने लगते हैं तब कहा जाता है- महराज अब अपने थाने-पवाने लौटिए।

आज अचानक क्यों चले गए?

देवता की सवारी जाने के बाद बहुत कमजोरी महसूस होती है। सुराजी की माँ सिर दबाती छोटी बहन से लेटे-लेटे पूछती हैं-

"देवता से पूछा नहीं कि सुराजी के बप्पा लौटेंगे कि नहीं?"

"पूछा था। बोले, लौटेंगे।"

"इसी तरह साफ-साफ कहा?"

"हाँ दीदी, और क्या हम झूठ बोलेंगे?"

सुराजी की माँ ने यही सवाल अलग-अलग समय पर अपनी बहू और भूसी से पूछा। फिर जैसे अपने आपको आश्वस्त किया- 'जब देवता ने बचन दे दिया तो लौटना ही पड़ेगा।'

मरने के साल-भर पहले उनका दिमाग फिर गया। तब वे कभी-कभी दिवंगत सुराजी के बचपन का नाम लेकर कहतीं- " भुलई बेटवा, ई देखो, तुम्हारे बप्पा तो लौट आए ! जरा पानी-ओनी लाओ। खटिया बिछा दो।"

फिर सुराजी के बाप को सम्बोधित करते हुए कहतीं- "आओ, लेकिन आज तुम्हें घर में नहीं घुसने देंगे। उहाँ भरपेट भात मिलने लगा तो हम सबकी सुध भूल गए?"

छोटे दारोगा तफ्तीश के लिए आए हैं।

चौकीदार सबेरे ही आकर कह गया था कि खास-खास लोग मौका-ए-वारदात पर हाजिर रहें। मुख्तार साहब अभी जिला अस्पताल में हैं। लाला ने दालान के सामने पानी छिड़कवाकर कुछ कुर्सियाँ और चारपाइयाँ डलवा दी हैं। दारोगा जी के लिए अलग कुर्सी-मेज लगी है। बैठने के पहले वे दालान का निरीक्षण करते हैं और कागज पर नक्शा बनाते हैं। कच्चे फर्श की खून सनी सूखी मिट्टी को चौकीदार से खुरचवाकर रखते हैं और खून सनी चादर को अपनी अभिरक्षा में लेते हैं।

फिर पूछते हैं- "वह औरत कहाँ है जिसे नामजद किया गया है?"

जंगू की माँ हाथ जोड़कर हाजिर होती है।

"क्यों रे? जिसका नमक खाया उसी को लुटवा दिया।"

"ई झूठ है, सरकार।"

"बुड्ढे को घाव कैसे लगा? किसने मारा?"

"हम पहचान नहीं पाए, सरकार।"

"तू उस समय कहाँ थी?"

"हम मुख्तार साहब की मच्छरदानी लगाने और रात में पीने के लिए पानी रखने आए थे। लेकिन उनकी देह में आग लगी थी। वे मुझे पकड़कर गिराने लगे। हम मना करने, समझाने लगे। तब तक कोऊ पीछे से मार दिहिस।"

"चश्मदीद गवाह धुन्नी सिंह कौन है? आगे आइए। आप मौके पर कब पहुँचे, क्या देखा?"

"रात ग्यारह का बखत रहा होगा सरकार। मेरा घर ठीक सामने है। मुख्तार साहब का चिल्लाना सुनकर दौड़ा। क्या देखता है कि इस औरत ने उनको कमर से पकड़ रखा है और..."

"आगे से पकड़ा था कि पीछे से?"

"पीछे से सरकार। और इसका लड़का मारने के लिए कुल्हाड़ी उठाए हुए है। मेरे रोकते-रोकते मार भी दिया।"

"आगे से कि पीछे से?"

"पीछे से सरकार।"

"पीछे से तो लगनी चाहिए।" इस औरत ने पकड़ रखा था। तब तो चोट इस औरत को

"तब आगे से पकड़ा होगा।"

"आपने यह सब कैसे देखा?"

"अपनी टॉर्च जलाकर, हुजूर।"

"और क्या देखा?"

"उसी समय शोर सुनकर मुसलमानों के तीन लड़के घर का बर्तन-भाँड़ा, सन्दूक वगैरह लेकर निकले। मैंने उन पर टॉर्च मारी तो बाईं ओर मुड़कर भागे। इस औरत का बेटा भी उन्हीं के पीछे भागा। दो बदमाश बाहर निगरानी पर खड़े थे। वे भी भागे। बस यह औरत नहीं भाग पाई। पकड़ी गई।"

"ई सब झूठ है, सरकार। हम काहे भागेंगे?" जंगू की माँ ने तीखा प्रतिवाद किया-"घर में तो बाबू साँझ से ही ताला लगा देते हैं। कोई कैसे घुसेगा? ऊ देखौ, अबहीं भी ताला लटकि रहा है। चाभी बाबूजी के जनेऊ में बँधी रहती है।" फिर

धुन्नी सिंह की ओर उँगली उठाकर बोली-" और टारच-ओरच इनके पास कुछ नहीं है। हमसे माचिस माँग के तौ बीड़ी लेसत हैं। कहाँ है इनकी टारच, दिखावैं।"

"आप अपनी टॉर्च लाइए। सबूत के तौर पर जमा करना होगा।"

धुन्नी सिंह अपने घर आ गए। लेकिन टॉर्च कहाँ से लावें।

दारोगा जी ने पीछे से चौकीदार को भी भेज दिया। किसी से माँगने का मौका भी नहीं मिल रहा है.

"दूसरे गवाह?"

लाला चाय-पानी के इन्तजाम में लगे थे। उन्हें उनके घर से बुलाया गया।

"हुजूर, मेरा नाम शिउबरन लाल है। सब लाला-लाला कहते हैं। मुख्तार साहब का छोटा भाई हूँ। बगल में ही मेरा घर है।"

"आप कब पहुँचे? क्या देखा?"

"मैं, भइया की चीख सुनकर पहुँचा तो देखा कि यह औरत आगे से भइया की कमर पकड़कर लटकी है और इसका बेटा पीछे से कुल्हाड़ी से वार कर रहा है।"

"कैसे देखा? अँधेरा था कि उजाला?"

"हुजूर, बाहर पूर्णिमा की टह-टह चाँदनी फैली थी जिससे दालान के अन्दर भी हल्का उजाला था। ठीक उसी समय धुन्नी सिंह भी पहुँचे और टॉर्च जला दी। एकदम दगादग हो गया।"

"यह बताइए, मुख्तार साहब घाव लगने के पहले चिल्लाए कि बाद में?"

"हुजूर, घाव लगने पर ही चिल्लाए होंगे।"

"और घाव तुम्हारे सामने लगा। तो तुम किसकी चिल्लाहट सुनकर दौड़े?"

"हुजूर, पहले भी चिल्लाए होंगे, तभी तो मैं दौड़ा।"

"इसका मतलब दोनों भाई बहुत बुद्धिमान हो।"

"बुद्धि की ही रोटी खाते आए हैं, हुजूर। और हम लोगों के पास है क्या? दस साल मुहर्रिरी कर चुका हूँ।"

"कुल्हाड़ी कहाँ है जिससे मारा?"

"कुल्हाड़ी लेकर भाग गया सरकार।"

"डाक्टरी रिपोर्ट कहती है कि एक ही घाव लगा है और वह घाव पाँच इंच लम्बा है।"

"सही लिखा है, सरकार।"

"तुम्हारे गाँव में पाँच इंच के फाल वाली कुल्हाड़ी बनती है? पाँच इंच का फाल तो कुल्हाड़े का भी नहीं होता।"

चौकीदार आकर बताता है कि धुन्नी सिंह की टॉर्च नहीं मिल रही है।

169

"हाँ, सरकार। लगता है उसी भीड़-भाड़ में कोई चुरा ले गया।"

"यह सब छोड़िए।" लाला कहते हैं- "बड़े भाग हमारे जो हमारे दरवाजे पर आपका आगमन हुआ। कुछ चाय-पानी पीजिए।"

"पानी पीने लायक गाँव है आपका?"

"अरे, हम लोग कोई अछूत हैं क्या?" लाला की आवाज में ऐंठ आ जाती है। "इतनी देर से सारी जिरह खुद ही किए जा रहे हैं। कुछ वकील और जज के लिए भी छोड़ दीजिए।"

दारोगा जी के नथुने फूलने लगे हैं।

धुन्नी सिंह अन्दर से थोड़ा घबराए हुए हैं। बात बिगड़नी नहीं चाहिए। कहते हैं-"मुख्तार साहब के बेटे भी सरकारी आदमी हैं। कानूनगो हैं। उनको मालूम है कि सरकारी काम कैसे होता है। आ जाएँ तो थाने पर ही जाकर आपसे मिल लेंगे। तब तक मुख्तार साहब भी अस्पताल से डिस्चार्ज डिस्चार्ज हो हो जाएँगे। हम लोग तो अनपढ़-गँवार हैं..."

"गँवार?" दारोगा जी झटके से खड़े होते हैं- "कि कोबरा नाग? गाँव को रंगमहल बना लिया है तुम बुड्ढों ने। इतना फर्जीफिकेशन ? मैंने सब पता लगा लिया है।"

"क्या असली और क्या फर्जी।" दारोगा जी के बगल-बगल चलते हुए कहते हैं धुन्नी सिंह- "सब कुछ आप ही के हाथ में है। हम लोग आपसे बाहर नहीं जाएँगे। थोड़ा इन्तजार कर लीजिएगा।"

आँख तरेरते दारोगा जी एक किक में मोटरसाइकिल स्टार्ट करते हैं-भड़-भड़ भड़...

कुछ देर तक सन्नाटा रहता है।

"आपने उसे चिढ़ा दिया।"

"वह चिढ़ा-चिढ़ाया आया था।"

"कौन जाति का होगा?"

"नेमप्लेट पर तो जी. प्रसाद लिखा था।"

"तो होगा कोई गोबर गांडू परसाद। कोई खानदानी आदमी ऐसी तफतीस करेगा?"

"सेंकेड अफसर की क्या औकात? भतीजे को आने दीजिए, पोलिटिकल प्रेसर डालकर जाँच अधिकारी ही बदलवा दिया जाएगा। इतने कमजोर थोड़े हैं। जब एक बार कूद पड़े हैं तो वारा-न्यारा करके रहेंगे।"

अगम बहै दरियाव

वे चार थे। आम के बाग में लीक के किनारे बैठकर गाँजा पी रहे थे। फागुन का महीना था। जाड़ा बीत गया था लेकिन बाग की छाया में हल्की सिहरन थी। सूखी टहनियों और पत्तियों से छोटा-सा अलाव जला लिया गया था।

दूर से एक डोली आती हुई दिखी। पास आने पर डोली ढोने वाले कहारों के बोल स्पष्ट हुए- 'हूले रहु-दाबे रहु ।' इस तरह के बोल थकान मिटाने और नई ऊर्जा प्राप्त करने के लिए तो टॉनिक का काम करते ही थे, साथ ही दुल्हन के मानस को राग-रंग के लिए उद्दीप्त करके पति मिलन की पूर्व-पीठिका तैयार करते थे। कहारों को गाँजे की गन्ध दूर से ही मिल गई थी। चारों में से किसी ने कहा- 'दम लगाते जाओ जोड़ीदारो। पसीने से लथपथ हो रहे हो।'

इस निमंत्रण ने कहारों के पैर छान लिये। खींचकर दो कस लगाने को मिल गया तो सारी थकान भाग जाएगी। डोली थोड़े फासले पर रखकर कहार अलाव के पास आ गए। विदाई कराकर ला रहे दोनों अनवार भी पास आ गए।

"किस गाँव से बिदाई कराई?...ओ, तब तो दो कोस की मंजिल मार लिये। किस बिरादरी की बिदाई है?... अच्छा, अच्छा।"

चिलम की राख उलटकर नया माल बोझा गया। लप्प-लप्प चिलम से लपक निकलने लगी। धुआँ आसमान की ओर छोड़ा जाने लगा। सबने माना कि माल कड़क है।

अचानक नजर पड़ी कि दुल्हन डोली के बाहर खड़ी है। फिर वह घूँघट काढ़े सिर झुकाए विपरीत दिशा की ओर बढ़ने लगी। क्या बात है? पेट तो नहीं खराब हो गया?

तभी झाड़ी की आड़ से तीन आदमी प्रकट हुए। एक दुल्हन को कन्धे पर लादकर भागा। बाकी दोनों लट्ठबाज उसके पीछे सुरक्षा घेरा बनाकर दौड़ने लगे। दुल्हन की लूट! पकड़ो-पकड़ो।

बिदाई कराने गए दोनों आदमियों और कहारों ने लुटेरों का पीछा किया।

तब अलाव के पास बैठे चारों आदमी इत्मीनान से डोली के पास आए। उनमें जो सबसे ज्यादा ताकतवर, महामानव जैसा था, उसने ओहार हटाकर दुल्हन को बाँहों में उठाया और कन्धे पर लाद लिया। दूसरे ने झट पीछे से दुल्हन का मुँह दबा दिया। पलक झपकते वे पास के सूखे नाले में उतर गए।

"घबराओ नहीं, छटपटाओ नहीं। हम चोर-डाकू नहीं हैं। तुम्हारा गहना-गुरिया, इज्जत-आबरू लूटने नहीं आए हैं। तुम्हारी असली ससुराल के आदमी हैं। तुम्हें वहीं ले चल रहे हैं।"

थोड़ी दूर तक पीछा करके पहली दुल्हन के लुटेरों को घेर लिया गया। मामूली झड़प के बाद दुल्हन छीन ली गई। लेकिन इस छीना-झपटी में दुल्हन की साड़ी खुल गई और उसके अन्दर से पन्द्रह-सोलह साल के संतोखी प्रकट हुए। सब हक्का-बक्का। लुटेरे भी, लुटने वाले भी। संतोखी ने बताया कि मुझे बीस रुपये देकर साड़ी पहनाकर तीनों आदमी यहाँ लाए थे। उन्हीं के कहने से मैं डोली के पास आया था। बाकी बात मैं नहीं जानता।

दो-चार झापड़ खाकर संतोखी रोते हुए चल पड़े। बाकी लुटेरे पहले ही खिसक लिये थे।

विदा कराने गए लोग परेशान कि उनके साथ आखिर ऐसा धोखा क्यों किया गया? अब वे खाली डोली लेकर अपने घर जाएँ कि असली दुल्हन की बिदाई कराने दुल्हन के मायके जाएँ?

भूसी का विवाह पाँच वर्ष की उम्र में हो गया था। विवाह के नौवें वर्ष में गौना माँगा गया। लड़की का बाप आया। घर-दुआर देखा। घर क्या था, दो झोंपड़ियाँ थीं। साठ-सत्तर भेड़ें थीं। दो बीघे ऊसर जमीन का पट्टा था, लेकिन उसमें अभी कुछ पैदा नहीं होता था। गाँव के बाहर भीटे पर बसावट थी और पीने के लिए पानी फर्लांग भर दूर कुएँ से भरकर लाना पड़ता था। सबसे चिन्ता की बात कि लड़के का बाप अंग्रेज की गोली खाकर मरा है। इसकी वजह से इस परिवार पर कोई मुसीबत तो नहीं आ जाएगी? उसने तो खाता-पीता परिवार देखकर बेटी का ब्याह किया था।

वह यह कहकर गया कि लड़की अभी कमजोर है। ठीक से सयानी हो जाए तो ग्यारहवें वर्ष में गौना देंगे। लेकिन बाद में पता चला कि उसकी बिदाई कहीं और कर दी गई।

भूसी की दादी दुखी हुईं। रोईं कि जवानी में पति हाथ से गया। बुढ़ापे में बेटा हाथ से गया। अब मरने के दिन आए तो पोते की बहू हाथ से गई। भगवान बार-बार उन्हीं की परीक्षा क्यों ले रहे हैं? इस परायी जगह में मेरा पोता कुँवारा ही रह जाएगा क्या? किसकी बेटी इस उम्र तक कुँवारी बैठी होगी जिसके आगे जाकर वे हाथ जोड़ें। मरते-मरते भी इसका बाप खानदान की जड़ खोद गया।

लेकिन उनकी बियही बहू को कोई दूसरा कैसे ले जा सकता है? वह हमारे खानदान की इज्जत है। ब्याह में उनका पलरी-भर रुपया खर्च हुआ है। गहने गढ़ाकर दिये गए हैं।

अगम बहै दरियाव

गाँव के लोगों को भी इसमें पूरे गाँव की बेइज्जती नजर आई।

जिस गाँव में भूसी की ससुराल थी उसी गाँव में भूसी की बड़ी मौसी ब्याही गई थीं। उन्हीं की अगुवाई में भूसी का ब्याह हुआ था और उन्हीं से दूसरी जगह बिदाई की खबर मिली। भूसी की दादी ने उनके पास सन्देश भेजा कि रिवाज के अनुसार बहू गोड़ी फेरने के लिए मायके आएगी ही। मायके से दुबारा बिदाई की जो साइत पंडित बताएँ उस दिन की जानकारी वे समय रहते उनके पास पहुँचा दें।

नाले के पेट में कुछ दूर चलने के बाद दुल्हन को जमीन पर उतारा गया।

'महामानव' चलते-चलते मसखरी करने लगे-" इतनी दूर तुम्हें ढोकर ले आए लेकिन आज के बाद फिर कभी तुम्हें छू भी नहीं सकेंगे। इसलिए कि पद में हम तुम्हारे 'जेठ' लगते हैं। आज छूना पड़ा इस दोष से मुक्त होने के लिए पूरे टोले में गुड़ बाँटना पड़ेगा। पर तीन लोगों के सामने इतना बचन आज ही दे दो कि तीज-त्योहार पर पूड़ी-पकवान खिलाती रहोगी।"

महामानव का नाम भीम था। जिस काम में बैल या घोड़े जैसी ताकत की जरूरत होती थी, उसमें भीम को जोता जाता था। भीम को एक ही बात का दुख था। उनका विवाह नहीं हुआ था। विवाह तो हुआ था। दुल्हन भी आई थी, लेकिन कमजोर थी। ज्यादा दिन टिकी नहीं। सुबह उठकर अपनी सास से शिकायत करती कि पेट में दर्द हो रहा है। उसकी सास ने तो भीम को पैदा ही किया था। पाला-पोसा था। वे पेट-दर्द का कारण समझ जाती थीं, लेकिन क्या बोलें? चुपचाप बहू का मुँह ताकने लगती थीं।

एक सुबह बहू पैदल ही अपने मायके के लिए भागी। गाँव के बाहर खेतों के बीच उसे रोका गया, लेकिन वह वापस होने के लिए कोटि जतन तैयार न हो। बूढ़े पीपल के नीचे बैठ गई। सब जुट गए। रामउदार सिंह भी खेत घूमने निकले थे। पूछा- "आखिर तुझे ससुराल में किस बात का दुख है? खाना नहीं मिलता, कि कपड़ा नहीं मिलता? क्यों भाग रही है?" वह कुछ बताने को तैयार नहीं। बहुत कुरेदने पर बोली- "मेरे बाप ने मुझे आदमी के साथ ब्याहा था, घोड़े के साथ थोड़े।" कहकर वह उठी और मायके की राह पर बढ़ गई। फिर कोई उसे रोकने के लिए आगे नहीं बढ़ सका। भीम की माँ जब तक जिन्दा रहीं, सबके आगे हाथ जोड़ती रहीं कि उनके बेटे के लिए कहीं से एक रोटी पोने वाली का इन्तजाम करवा दे कोई। पर तब तक भीम की ख्याति चारों तरफ इतनी फैल चुकी थी कि कोई अपनी बेटी देने को तैयार नहीं हुआ।

भूसी की दादी ने भीम से मदद माँगने के साथ-साथ वचन दिया था

कि जब तक जिन्दा रहेंगी उन्हें हर तीज-त्योहार पर पूड़ी पकवान का न्योता देती रहेंगी। भीम दादी की जिन्दगी के बाद भी इसका बन्दोबस्त आज ही कर लेना चाहते थे।

लूटी गई दुल्हन के मायके या ससुराल पक्ष के लोग कोई बखेड़ा खड़ा करते, इसके पहले भूसी की दादी लाठी टेकते हुए गईं और पीढ़ियों से सुरक्षित रखी एक मोहर नजराने में देकर थाना पूज लिया।

लूट के चौथे महीने लुटावन पैदा हुए। लुटावन की माँ ने दो साल तक भूसी को पास नहीं आने दिया। कहा तो यह कि मेरा बेटा दो साल तक माँ का दूध पिएगा। उसे मैं दुधकट्टू नहीं होने दूँगी। लेकिन शायद उन्हें यह उम्मीद रही हो कि किसी दिन उनके पिता या पति उन्हें लेने आ जाएँ। दो साल बाद जब उनके पिता ने आकर बताया कि उनके पति ने दूसरा विवाह कर लिया है और अब इसी घर को वे अपनी ससुराल मानें तब उन्होंने भूसी को अपना पति स्वीकार किया।

भूसी बहू भी भीम बाबा को मानती-जानती रहीं। तीज-त्योहार पर पूड़ी-पकवान खिलाती रहीं, लेकिन शिकायत भी करती रहीं कि उन्हीं के कारण उनके 'लुटावन' बिना बाप के हो गए।

भीम बाबा पहले चले गए। होते तो जरूर आते। वे भी रैसी बहू को अन्तिम बिदाई देने

अब मुख्तार साहब को लगता है कि उनके सगे भाई लाला ने ही उन्हें उलझा दिया। वे तो उस समय कुछ सोचने-समझने की हालत में थे नहीं। भाई ने जो चाहा लिखकर दे दिया। मामले को इतना तूल देने की जरूरत क्या थी? मेरी कौन सी बहन-बेटी गाँव में रहती है जिसकी इज्जत दाँव पर लगी थी। जिन्दगी-भर दूसरों को लड़ाते रहे, आखिर में खुद ही अरझ गए।

लेकिन लाला ने एक बात सही सोची। उसकी राय मानकर अगर इन्क्वायरी अफसर न बदलवाया होता तो जी. परसदवा उलटे हमीं लोगों को फँसा देता। यह भी उसी की राय थी कि आमने-सामने बैठकर तय-तमाम कर लिया जाए कि हम पुलिस से क्या चाहते हैं और पुलिस हमसे क्या चाहती है?

थानाध्यक्ष ने हवा में उँगली से लिखकर एक 'इनकाउंटर' की जो रकम बताई थी वह टोले के लोगों को बहुत ज्यादा लगी। टोले के लोगों ने जितना कबूला,

अगम बहै दरियाव

उसे सुनकर थानाध्यक्ष हो-हो करके हँसने लगे-" इससे तो इनकाउंटर की जाँच करने बाले मजिस्ट्रेट का ही पेट नहीं भरेगा।" अन्ततः तय हुआ कि किसी के इनकाउंटर की जरूरत नहीं है। सब कमाएँ-खाएँ, जिन्दा रहें। बस, इनका गुर्राना बन्द हो जाए। डरकर रहें, आँखें नीची करके चलें। हम जल्लाद थोड़े हैं। हाँ, मोटू का ऐसा इलाज कर दें कि बिना लाठी का सहारा लिये चल न सके। और जंगुआ के मामा को अन्दर करना इसलिए जरूरी है कि बाहर कोई जमानत कराने वाला न रह जाए। चाहे जितना रूंधो, यह साला हर साल मेरा कटहल तोड़ ले जाता है।

चालान तो करना ही पड़ेगा, लेकिन चालान से भी ज्यादा जोर 'तुड़ाई' पर रहे। चालान कोई कारगर इलाज नहीं है और कभी-कभी तो उलटा पड़ जाता है। बुराई करिए, भलाई हो जाती है। गाजीपुर जिले के एक गाँव के मुसहरों को सबक सिखाने के लिए उनके गाँव के एक ब्राह्मण देवता ने सन् 1942 में डकैती के फर्जी केस में फँसा दिया। पूरे टोले को फँसा दिया। कोई जमानत कराने वाला तक नहीं बचा। साल भर जेल में ही सड़ते रह गए बेचारे। बाद में उन सबको स्वतंत्रता सेनानी की पेंशन मिलने लगी। सारे मुसहर पेंशन लेने जाते तो उन ब्राह्मण देवता को भी माला पहनाकर रिक्शे पर बैठाकर साथ ले जाते। लड्डू खिलाते। ये भी जेल जाएँ तो कहीं ज्यादा बदमाश होकर निकलें। भेजना भी हो तो किसी दूसरे मामले में भेजें, ताकि हम लोगों को दौड़-दौड़कर कचहरी जाने की जहमत न उठानी पड़े।

थाने का पूरा खर्च गिरफ्तारी के पहले एडवांस जमा कराने की शर्त पूरी की गई। पुलिस अपोजिट पार्टी का गला दबाकर जो निचोड़ ले वह उसकी अतिरिक्त कमाई होगी।

मुख्तार साहब जंगू की माँ को दोषमुक्त कराकर वापस ले जाने के लिए आए, तब थानाध्यक्ष को लगा कि वह कितने काम की चीज थी। इतने बड़े थाना-परिसर में पहली बरसात के बाद उग आए झाड़-फूस को छील-काटकर कितना साफ-सुथरा बना दिया इसने। इसका तो थाने पर ही रहना अच्छा है।

"नहीं, हुजूर। इसके बिना काम नहीं चल रहा है।"

"महीने-भर भी काम नहीं चल पाया?" थानाध्यक्ष मुस्कराए।

"अरे हुजूर, एक दिन भी चलना मुश्किल है। जानवर बिना चारा-पानी के मरे जा रहे हैं।"

"आप तो नहीं मरे जा रहे?"

"कोई दूसरी औरत काम करने को राजी नहीं हो रही है। कोई बूढ़ी-ठेली तक नहीं।"

जंगू की माँ ने सिर को धरती से टिकाकर थानाध्यक्ष को सलाम किया और आँचल की टोंक से आँसू पोंछते हुए मुख्तार साहब के पीछे-पीछे चल पड़ी।

महीने भर में सारे मुल्जिम पकड़ लिये गए।

जंगू की झोंपड़ी की तलाशी के लिए पुलिस जंगू को साथ लेकर आई। खूँटी पर टँगे एक झोले में काफी रेजगारी और नोट मिले। अठन्नी और रुपये के सिक्के और एक, दो, पाँच, दस के नोट। बड़ी सफलता कही जाएगी। पुलिस पार्टी खुश हो गई। इतना अनाड़ी अपराधी कि इसको छिपाने तक की नहीं सोच पाया। गिनने पर 2,620 रुपये निकले।

"बाकी रकम कहाँ गई? मुख्तार के घर से पाँच हजार की नगदी लुटी है।"

"यह लूट की रकम नहीं है। मेरे मेहनताने का पैसा है।"

"इतना मेहनताना?"

"चार साल में मिला है। पहली साल दस रुपये दूसरी साल पचास, तीसरी साल साठ और चौथी साल सौ रुपये।" महीना,

"बड़ा हिसाबी-किताबी है तू तू तो रे।"

दो पुलिस वालों ने थोड़ी देर तक जोड़ने की असफल कोशिश की फिर बोले-" तब भी तो इतनी रकम नहीं बनती, रे।"

"हर साल उस्ताद ईदी देते थे। मुख्तार साहब बाजार से दारू मँगाते थे तो अठन्नी देते थे। मैं कभी-कभी मछली मारकर बेचता था तो दो-चार रुपये मिल जाते थे। सब अपनी दुकान खोलने के लिए जमा कर रहा था।"

"वाह! अच्छी कहानी गढ़ लेता है। गुलशन नन्दा का बाप लगता है। चल, पहले इसे तीन हजार पूरा कर।"

दहबंगा का सपना पूरा हुआ। तूफानी वकील बन गया।

कत्ल का मुकदमा लड़ने के दौरान दहबंगा ने महसूस किया कि परिवार में एक वकील का होना बहुत जरूरी है। उन्हें यह देखकर अजीब लगा कि आप अपनी बात सीधे हाकिम से नहीं कह सकते। आप वकील को बताइए और वकील हाकिम को बताएगा।

अगम बहै दरियाव

बहुत खुशी की बात है कि अब उनका बेटा भी काला कोट पहनकर रोज कचहरी जाएगा।

लेकिन खुशी मनाने की बात पर वे राजी नहीं हुईं। एक तो इसलिए कि उनका परिवार सजा काट रहा है, दूसरे इसलिए कि खुशी मनाने से गाँव वालों के पेट में दर्द होगा। वे हमारे दुख से खुश और सुख से दुखी होते हैं। इसलिए अपनी खुशी और अपना गम अपने मन में दबाकर रखना ही ठीक होगा।

प्रैक्टिस शुरू करने के थोड़े समय बाद मिली एक चिट्ठी ने तूफानी की जिन्दगी में छोटा-मोटा तूफान ला दिया। मान्यवर की छोटी-सी चिट्ठी -

... पता चला कि आप दलित समाज के जागरूक नौजवान हैं। कानून की पढ़ाई किया है। हम चाहते हैं कि आप इस पढ़ाई का उपयोग अपनी रोजी-रोटी कमाने के साथ-साथ दलित-शोषित समाज को जागरूक बनाने में करें। हमारे साथ, हमारी पार्टी के साथ जुड़ें।

मान्यवर के संगठन और उद्देश्य की जानकारी तूफानी को है। उसे यह जानकर अच्छा लगा कि मान्यवर उसके बारे में जानते हैं। मान्यवर के साथ जुड़ने की बात सोचकर उसे बार-बार रोमांच हो रहा है। वह दिन में कई बार जेब से चिट्ठी निकालकर पढ़ता है। चिट्ठी पर 17 सितम्बर, 1986 की तारीख पड़ी है।

चिट्ठी पढ़कर तूफानी बेचैन है। कैसे मान्यवर को बताए कि वह उनके साथ तुरन्त जुड़ने को तैयार है। चिट्ठी भेजे तो किस पते पर? मिलने जाए तो कहाँ?

जहाँ होंगे वहीं जाएगा और और अभी जाएगा।

थाना परिसर के पिछले हिस्से में है यह गोल कमरा। अंग्रेजों के जमाने का टॉर्चर रूम। लकड़ी की मोटी काली कड़ियों पर लाल टाइल की छाजन । गिरफ्तार सारे मुल्जिम तीन दिन से इसी में नंगे करके बन्द किए गए हैं। इनके पेट का पानी निकालने का दौर जारी है। टॉर्चर के एक्सपर्ट दोनों सिपाही रामायण और जालिम बारी-बारी ड्यूटी कर रहे हैं। मदद के लिए दो मुस्टंड मुखबिर। बीच-बीच में थाना इंचार्ज खुद भी बेल्ट लेकर जुटते हैं।

छत की कड़ी में बँधी रस्सी से उलटा लटकाकर पैर के तलवों पर रबर की

बेल्ट से पिटाई का दौर गुजर चुका है। अब इनका चल सकना तो दूर, खड़े रह पाना भी मुश्किल है। मुँह में बार-बार गरम पानी डालने से जीभ और गाल जल गए हैं।

जंगू ने बेल्ट की पिटाई पर ही कबूल लिया कि दादी बाबा की उसी ने मारा। फावड़े से मारा। फावड़ा गन्ने के खेत में फेंक दिया है। बरामद करा देगा। पर साथियों का नाम नहीं बताता। कहता है-" अकेले मारा।"

"किसके कहने से मारा?"

"अपने मन से।"

"क्यों?"

जंगू चुप।

"इसके पेल्टर में दो ईंट बाँधकर लटकाओ। और इसके भी।" थानाध्यक्ष फैजुल्ला की ओर इशारा करते हैं।

इकहरी हड्डी और बयालीस किलो वजन वाला असलम बेल्ट की पिटाई से ही बेहोश हो गया था। उलटा लटका है। आँखें बन्द हैं। गरम पानी फेंकने पर शरीर न्द हैं। ग में कँपकँपी छूटती है।

कुंटल-भर वजन वाले तौफीक उर्फ मोटू पर पिटाई और गरम पानी का बहुत कम असर पड़ा है। दाँत भींचकर और आँखें मीचकर सब झेल गया है।

"इसकी गाँ... में डंडा घुसेड़ो।"

पन्द्रह-बीस साल पहले यहाँ एक थानेदार आए थे-डंडा गुरू। जुर्म कबुलवाने के लिए मुल्जिमों के पीछे लाल मिर्च की बुकनी में सना डंडा डालना उनका आजमाया हुआ नुस्खा था। इसको ऑपरेट करने के लिए मुल्जिम को नब्बे डिग्री पर झुकाना पड़ता है। डंडा गुरू ने टॉर्चर रूम की दीवार और फर्श की

संधि पर लोहे के चुल्ले जड़वाए। मुल्जिम के दोनों हाथ चुल्ले में डालकर फँसा दीजिए फिर वह चाहे जितना छटपटाए, उसे पकड़ने-सँभालने की जहमत खत्म।

डेढ़-दो इंच डंडा अन्दर जाते-जाते मोटू का शरीर फन कुचले नाग की तरह ऐंठने लगा है। जैसे दर्जनों चाकू उसे अन्दर से छील रहे हों। थोड़ा और भैंसाते ही वह बाँ-बाँ करके चीखने लगता है।

उसका लिंग ढीला होकर नीचे लटक आया है। रामायण कुछ देर तक एकटक उसे अचरज से ताकता रह जाता है- हथियार कितना बेढब पाया है हरामजादे ने!

"मेरी जान क्यों ले रहे हैं, साहब?" मोटू गिड़गिड़ाने लगा है- "मैंने किसका क्या बिगाड़ा है?"

"मैं जान ले रहा हूँ कि ड्यूटी कर रहा हूँ बे? तू क्या समझता है कि हराम की तनखा लेता हूँ। इतनी ही जान प्यारी है तो कबूल क्यों नहीं कर लेता?"

अगम बहै दरियाव

"क्या कबुलवाना चाहते हैं?"

"डकैती। मुंशी के बर्तन तेरे घर से बरामद हुए कि नहीं?"

"वे सब तो मेरे बर्तन हैं। उनमें बधना है, सनहगी है। ये हिन्दुओं के घर में थोड़े मिलते हैं।"

"तो इतने बर्तनों से क्या दुकान खोलनी थी।"

डंडे का दबाव बढ़ने के साथ मोटू कलपता है- " या अल्लाह ! सीधे गोली ही क्यों नहीं मार देता जालिम?"

"जालिम ड्यूटी पर आए तो उससे कहना।"

वह मतीन मिस्त्री की ओर बढ़ता है।

मतीन पर मिर्ची डंडा पहले ही ऑपरेट किया जा चुका है। उसका शरीर दर्द से ऐंठ रहा है। रामायण को आता देख चिल्लाता है- " रहम ! रहम!"

सीताराम को उतान लिटाकर हाथ-पैर में रस्सी कसकर चारों दिशाओं में बाँधा गया है। लिंग में बिजली का झटका देने पर गले से घरघराहट के साथ ऐसी चीत्कार निकलती है जैसे जमीन पर पटककर लोहे की गरम सलाख से दिल छेदे जाने पर सुअर चिल्लाता है।

"बेकसूर पर जुलुम करके क्या पाएँगे, सरकार?"

"हरामजादे, कसूर-बेकसूर का फैसला तू करेगा कि पुलिस? तू समझता है कि बिना कबूले जिन्दा बच जाएगा?"

है?कच जाएगा?" "क्या कबूलना है?"

"यह भी तू ही बताएगा। अभी तू मुझे ठीक से जानता नहीं। एक कत्ल का जुर्म मैं पाँच अलग-अलग मुल्जिमों से कबुलवा चुका हूँ। हर एक ने कसम खाकर कबूला कि कत्ल उसी ने किया और अकेले किया।"

थाना इंचार्ज आकर मुआयना करते हैं। चीख-चिल्लाहट के मारे बात करना मुश्किल। मोटू बेहोश होकर फर्श पर गिर पड़ा है। हाथ चुल्ले में फँसे हैं।

"इसको झटका देकर होश में लाओ और पैरों पर बेलन चलाओ। एक घुटना लेना है।"

"और इसका क्या हुआ?" थाना इंचार्ज कोने में पैर फैलाकर खड़े कराहते फैजुल्लाह की ओर इशारा करते हैं।

फैजुल्लाह की हाय-हाय तेज हो जाती है। वह पसीने से सराबोर है। दिल की धड़कन बढ़ी हुई है। आँखें लाल हैं।

इंचार्ज के जाने के बाद रामायण उसकी जुल्फी पकड़कर सिर दीवार से टकराता है-"तेरी गाँड़ में मिर्ची डंडा डालना पड़ेगा?"

"हजूर, मैं एकदम बेकसूर हूँ। मैं तो डेढ़ साल से सउदिया में था। मुख्तार साहब की वारदात के दस दिन बाद मुलुक लौटा हूँ। मेरा पासपोर्ट देख लीजिए।"

"देख लिया। दूसरा सबूत दे।"

"दूसरा क्या दें, सरकार?"

"डेढ़ साल सउदिया कमाकर लौटा है और देने के नाम पर सिर्फ पासपोर्ट है? हम कैसे मानें कि सउदिया से लौटा है? तेरे दिमाग में सिर्फ गोबर भरा है?"

रामायण की ड्यूटी खत्म। अगली ड्यूटी पर जालिम आ रहा है। तब तक डेढ़-दो घंटे की राहत।

जालिम आते ही मोटू पर बेलन चलाने का इन्तजाम करता है। पीठ के बल लिटाकर दोनों पैरों के अँगूठे एक साथ बाँधे जाते हैं। लकड़ी का लम्बा गोल बेलन पैरों पर आड़ा रखा जाता है। उस पर एक चौड़ा पटरा रखकर दोनों सिरों पर दोनों मुखबिर चढ़ जाते हैं। बेलन को आगे-पीछे सरकाते ही भयानक चीत्कार गूँजती है।

हड्डियाँ करकरा जाती हैं।

"अब बोल, एम.एल.ए. साहब की मोटर चुराया?"

'चुराया सरकार, चुराया। जान बख्स जिए।"

" अब तक कितनी मोटरें चाया? दस ?"

"हाँ, सरकार।"

"कि बीस?"

"बीस सरकार, बीस।"

"किसको बेचा?"

"जिसको कहें सरकार।"

"मतीन मिस्त्री को।"

"हाँ, सरकार।"

"सीतारमवा को?"

"हाँ, सरकार। या अल्लाह! जान निकल जाएगी।"

"कितनी मोटरें?"

"जितनी कहें सरकार।"

"पाँच मतिनवा को? पाँच सीतारमवा को?"

"जी, सरकार।"

"मजिस्ट्रेट के सामने भूल तो नहीं जाएगा?"

"कब्भी नहीं, सरकार।"

"कहाँ-कहाँ से चुराया?"

अगम बहै दरियाव

"जहाँ से कहें, सरकार।"

"हरामजादे, सब कुछ मैं ही बताऊँगा? कब कहाँ से किसकी मोटरें चुराई गई हैं, यह बताना तेरा काम है कि मेरा? मतिनवा की दुकान से कितनी मोटरें बरामद हो सकती हैं?"

"तीन-चार, सरकार।"

"चल, अब वह बताएगा कि बाकी किसे-किसे बेचा?"

जंगू को फिर धमकाया जा रहा है कि डकैती नहीं कबूलेगा तो तेरी बहन को नंगा करके उस पर तुझी को चढ़ाएँगे।

असलम होश में आ गया है। उसे रस्सी से उतारकर फर्श पर लेटाया जाता है। वह थोड़ी-थोड़ी देर में चीख उठता है। उसकी सारी देह थरथरा जाती है। पसीने से नहाया हुआ है।

"याद कर, तूने दो बार कचेहरी में बम विस्फोट किया था। उस समय तेरे साथ और कौन-कौन थे?"

"अल्ला कसम, मैंने न कभी बम देखा, न कचेहरी।"

"अब हर महीने देखेगा।"

थानाध्यक्ष के कमरे में जाकर जालिम लम्बी सैल्यूट मारता है- "जै हिन्द, सर। सर, मोटू और मतीन दोनों टूट गए। मोटू ने मोटर चोरी करके बेचना कबूल कर लिया और मतीन ने कबूल लिया कि पिछले साल रेलवे स्टेशन के बाहर कुएँ में जो लाश मिली थी उसे सीताराम के साथ उसी ने मारकर कुएँ में फेंका था। जिस कुल्हाड़ी से हत्या की थी, उसे उसी कुएँ में डाल दिया था। निकालकर बरामद करा देगा।" देगा।"

"लेकिन उस लाश की पोस्टमार्टम रिपोर्ट में तो मौत का कारण 'बुलेट इंजरी' लिखा है।"

जालिम पल-भर को हिचकिचाता है, पर ढिठाई से कहता है- "ये डाक्टर भी न सर... दारू के नशे में जो न लिख दें।... आज के जमाने में जुर्म कबुलवाना कितना 'टफ' है।"

"पुलिस की ड्यूटी है ही टफ। यह बताओ कि किसी से काम की बात भी कबुलवा पाए?"

"हाँ, सर।" जालिम टेबल पर तनिक झुक जाता है- "वह सउदिया वाला लौंडा भी टूट गया। फिरौती की पूरी रकम देने को राजी है। कह रहा है कि मेरे अब्बा से बात करा दो।"

"करा दो। गेट के बाहर पूरा खानदान बैठा है।"

"करा दिया। उसका बाप कल शाम तक की मोहलत माँग रहा है।"

"नहीं। आज रात बारह बजे तक की मोहलत है। कल आना है तो पोस्टमार्टम हाउस पर कफन और ताबूत के साथ आवै।"

रात बारह बजने में दस मिनट बाकी थे जब फैजुल्लाह के अब्बा उसे 'दोष मुक्त' कराकर ले गए।

मुख्तार साहब के घर पड़ी डकैती की वारदात घूमते-घूमते बिजली मोटर चोरी की वारदात में तब्दील हो गई।

तेवारी मुंशी बाकी मुल्जिमों की गिरफ्तारी दिखाने और उनके चालान के कागज तैयार करने में लग गया।

उधर ऑफिस में जी. प्रसाद की बिदाई पार्टी चल रही थी।

इधर टॉर्चर रूम में मोटू कराहते हुए 'पानी-पानी' बुदबुदा रहा था।

उसी समय जी.डी. में दर्ज हुआ-हुआ-मुल्जिम खुराक लेने से मुनकिर हैं।

लूट और फूट का मुकम्मल इन्तजाम : वर्णवाद

जंगू की कल्पना की जेल पहले ही बहुत भयानक थी। इतना विशाल फाटक देखा तो उसकी कँपकँपी छूट गई। जब थाने में ही देह का भुरकुस निकल गया तो जेल में क्या गति होगी?

वह जेल वाहन से लँगड़ाते हुए उतरा। चला नहीं जा रहा था। तलवों में सूजन थी। छोटी-छोटी कंकड़ियाँ काँटे की तरह गड़ रही थीं। पूरा शरीर दुख रहा था।

गेटकीपर ठोंक-बजाकर देर तक एक-एक मुल्जिम का मुआयना करता और रजिस्टर में दर्ज करता रहा-'कोई बाहरी चोट? कोई अन्दरूनी चोट? कहीं कटा-फटा? कोई नया-पुराना घाव?'

जंगू के सारे साथी अन्दर हो गए तो थाने का दारोगा और सिपाही तौफीक को दोनों तरफ से सहारा देते हुए लाए। तौफीक के पैर उठ नहीं रहे हैं, घिसट रहे हैं। आँखें खुल नहीं रही हैं। सिर एक तरफ को लटका जा रहा है।

"छोड़ो-छोड़ो। उसे अपने पैर पर खड़ा होने दो।"

छोड़ते ही वह औंधे मुँह गिरने लगा तो सिपाही ने थाम लिया।

"जेल को कब्रिस्तान समझ लिया है क्या?" गेटकीपर तौफीक को लेकर आए दारोगा से आँख मिलाता है।

"तुझे यह कब्रिस्तान ले जाने लायक लग रहा है?"

सिपाही है तो क्या ! दारोगा के नाजायज दबाव में थोड़े आ जाएगा। उतने ही टेढ़े ढंग से कहता है-"जब तक वहाँ पहुँचकर कब्र खोदोगे तब तक हो जाएगा। एक भी हड्डी सलामत छोड़ी है क्या? पैर लोड ले रहा है? अपनी बला हमारी खोपड़ी पर पटकना चाहते हो?"

दारोगा को ऐसे टूटे-फूटे मुल्जिम जेल के मत्थे मढ़ने का पुराना अनुभव है। वह नरमी से काम लेता है-" दीवान जी, दौराने-गिरफ्तारी, चोट-चपेट लगती ही है। घबड़ाकर छत से कूद पड़ा तो हाथ-पैर में

चोट लगनी ही थी। छह महीने जेल की रोटी खाएगा तो साँड़ हो जाएगा। आप भी नौकरी करिए और हमें भी करने दीजिए।"

लेकिन गेटकीपर इस नरमी से पसीजने वाला नहीं है। जेल प्रशासन छाँटकर सबसे तेज-तर्रार सिपाही की ड्यूटी गेटकीपर के रूप में इसीलिए लगाता है कि वह दारोगा तो क्या डी.एस.पी. के अर्दब में भी न आए।

"इसकी गाँड़ से अभी तक खून रिस रहा है। चूतड़ की लुंगी भीग रही है। मक्खियाँ भिनक रही हैं और आप मुझे नौकरी करना सिखा रहे हैं! ले जाइए पहले सरकारी अस्पताल में इसका इलाज कराइए, फिर वारंट के साथ डॉक्टर का पर्चा नत्थी करके लाइए।"

दारोगा गुस्से से किलकिला उठता है-" और जेल का अस्पताल किसलिए है? यहाँ इलाज नहीं होता? सिर्फ अंडा, दूध और दवाई ब्लैक होती है?"

"बैल जैसी आँखों से डराने की कोशिश मत करो। मैं तुम्हारे थाने का चौकीदार नहीं हूँ। जो कह दिया सो कह दिया।"

गुस्से से बिलबिलाता दारोगा तौफीक का कन्धा पकड़कर वापस मुड़ते हुए फुफकारता है-"मादरचो... कहीं का।" दूर जाते दारोगा को सुनाने के लिए गेट कीपर तनिक ऊँची आवाज में कहता है- " पूरे इलाके को अपनी शिकारगाह बना रखा है। लच्छन बता रहे हैं कि एक दिन इसी जेल रजिस्टर में तुम्हारी आमद भी मुझे दर्ज करनी पड़ेगी।"

* दबाव

अपनी थाली, कटोरी, गिलास, कंबल लेकर असलम के साथ बच्चा बैरक में पहुँचते-पहुँचते जंगू का डर काबू में हो गया। कहीं से रोने-चिल्लाने की आवाज नहीं आ रही थी। सोने के लिए सीमेंट से बनी पक्की चौकी। बैरक के फर्श पर चाहे जितना पानी गिरे, कीचड़ नहीं हो सकता। बच्चा बैरक में चार-पाँच अधबूढ़े कैदी भी थे जो शोर मचाने और झगड़ने वाले लड़कों को डाँट-डपट रहे थे। थाने में एक बार भी ढंग का खाना नहीं मिला। कभी जोन्हरी का लावा मिला, कभी फूट (भादों में पकने वाली ककड़ी)। एक रात केवल एक-एक सूखा गन्ना मिला था। नौ दिन की भूख जमा थी। असलम तो पाँच रोटी ही खा पाया, वह आठों खा गया। कुम्हड़े की सब्जी कितनी स्वाद वाली थी।

नींद देर से आई। अचानक बैरक में शोर हुआ। एक अठारह-बीस साल का लड़का 13-14 साल के लड़के के साथ मुराही करता हुआ पकड़ा गया। छोटा लड़का चिल्लाया तो अधबूढ़े कैदियों ने दोनों को अलग किया।

जिला अस्पताल के इमरजेंसी वार्ड में ऊँघ रहे डॉक्टर को आधी रात में ड्यूटी नर्स ने जगाया!

छाती थपथपाई। आला लगाकर हार्टबीट सुनने डॉक्टर ने आकर तौफीक की छाती की कोशिश की। फिर निराश स्वर में कहा- "डेड।"

"नहीं, नहीं। अभी तो बोल रहा था डाक्टर साहब।" दारोगा डॉक्टर के साथ 'साहब' नहीं कहना चाहता था। आज तक किसी डॉक्टर को साहब नहीं कहा था, लेकिन आज मुँह से निकल गया।

"ट्राई करो। कोई इंजेक्शन लगाओ। कोई गोली खिलाओ।"

"मुर्दा गोली निगल लेगा?" डॉक्टर ने तनिक रुखाई से पूछा।

दारोगा के कठोर चेहरे पर पसीने की नन्ही-नन्ही बूँदें उभरीं।

"एडमिट करिए सर। पर्चा तो बनाइए।"

डॉक्टर ने पर्चे पर लिखा- " ब्रॉट डेड. "

पाँच बजे पचासा का घंटा बजने लगा तो जंगू को लगा जैसे यह सपने में बज रहा है। सात बजे वे दोनों भी नाश्ते की लाइन में खड़े हो गए। नाश्ते में मिला चना

अगम बहै दरियाव

कितना स्वादिष्ट! जेल इतनी खराब जगह तो नहीं लग रही है।

मुलाहिजा के बाद जंगू की ड्यूटी गायों का गोबर साफ करने और असलम की, मैदान की घास साफ करने में लगी। जंगू के साथ एक पुराना कैदी भी लगाया गया। वाह! बहुत पली हुई गायें हैं ये तो। जर्सी और फ्रीजियन। लाल, काली और चितकबरी। जैसे उसके ननिहाल के बाबा की कुटी पर हैं।

दर्द के मारे जंगू से झुका नहीं जा रहा था। वह उकहूँ बैठकर तसले में गोबर भरने लगा। दूसरा कैदी गदोरी पर खैनी मलता रहा। जंगू को उसका चेहरा पसन्द नहीं आया-उजड्ड और सूखा।

"जल्दी कर! घंटे भर में सारा गोबर फेंक देना है।"

"तुम क्या खड़े-खड़े जमादारी करने आए हो? तीन गाय का मैं फेंकूँगा, तीन का तुम।"

"ए साले!" उसने आँखें निकालीं- "कल ही अन्दर हुआ और आज ही कानून बूकने लगा। ऐसी लात पड़ेगी कि...मादर..."

"ए, गाली काहे देते हो?"

"चोप्प साला! कौन जात है रे?"

"जाति? बहन के लिए दुलहा खोजने खोजने निकले हो क्या?"

अगले पल दोनों गुत्थमगुत्था थे। दूसरा कैदी पचास-पचपन साल का हट्टा-कट्टा जवान था लेकिन उसका पैर गोबर के छोत पर पड़कर फिसल गया। वह गोबर-भरे तसले पर गिरा और चिल्लाया। आसपास काम कर रहे कैदियों ने दौड़कर दोनों को अलग किया। पुराने कैदी के समर्थक ज्यादा थे। वे जंगू को पीटने लगे। तब तक जंगू का मामा पहुँच गया। वह जंगू को अपनी अँकवार में छिपाते हुए कहने लगा-" जाने दीजिए। बच्चा है।"

"बच्चा है कि सँपोला? किस जुर्म में आया है?"

"अरे, ए तो गजाधर भइया के साले हैं।" - शेरू ने पहचाना। विक्रम भी आ गया।

परिदृश्य बदल गया।

उसी दिन से जंगू के लिए जेल घर जैसी हो गई, जहाँ झूरी बाबा हैं। शेरू और विक्रम चाचा हैं। बिरजू, जगेसर और पहाड़ी भइया हैं।

वहीं सीताराम को वकील साहब मिल गए। धवल या ऐसा ही कुछ नाम है। किसी इम्तहान का पर्चा आउट कराने के जुर्म में बन्द हैं। रोजी-रोटी तलाशने के क्रम में उसने कई साल पहले उनकी कोठी पर पाँच-छह महीने मालीगिरी की थी। यहाँ सीताराम उनकी छोटी-मोटी सेवा कर देता है।

जंगू की जान-पहचान गोबरधन मास्टर से हो गई। अभी पैंतीस-चालीस साल से

ज्यादा के नहीं होंगे। बहुत पढ़े-लिखे। बहुत विद्वान, बहुत निडर। उसी की बिरादरी के हैं। 302 में उम्रकैद की सजा काट रहे हैं। जंगू की जिन्दगी के बारे में जानकर उसको बहुत मानने लगे। जंगू को जब भी मौका मिलता है, उनके पास बैठकर दुनिया-जहान की बात पूछता है। उनके पास जंगू के हर सवाल का जवाब है। मास्टर जी की बताई पहली बात जो जंगू को सबसे ज्यादा पसन्द आई-" नेताजी कहते थे, आदमी का धरम है कमजोर की ओर से लड़ना।"

"नेताजी कौन हैं?"

"हैं नहीं, थे। बताऊँगा किसी दिन। उन्हीं की हत्या के जुर्म में तो मैं उम्रकैद काट रहा हूँ।"

असरफी साह को लगी हजार रुपये की चोट भुलाए नहीं भूलती। ।। अजगर के मुँह में गया मांस बाहर आए, सवाल ही नहीं पैदा होता।

वे कई दिन से सोच रहे हैं कि जाकर थाना प्रभारी को अकल दे आएँ- "जब मोटू थाने की पिटाई से मर गया तब तो यह इनकाउंटर से हुई मौत मानी जाएगी। ऐसे में गाँव वालों का फर्ज बनता है कि वे इनकाउंटर का 'रेट' दें। मुख्तार को बुलाकर चाँपिए, हुजूर" बनता है

"लगता नहीं कि आपके हाथों किसी की हत्या हो सकती है।" "सही कह रहे हो। लेकिन संसार की गति बहुत विचित्र है। नेताजी का मैं बहुत आदर करता था। वे मेरे मार्गदर्शक थे। मैं सोच भी नहीं सकता था कि एक दिन उनके हत्यारे के रूप में मुझे उम्रकैद काटनी पड़ेगी।"

"कैसे हुआ यह सब?"

" नेताजी का एक संगठन था - खेतिहर मजदूर संघर्ष मोर्चा। संगठन मेरी तहसील के कुछ गाँवों में मजदूरी बढ़ाने के लिए आन्दोलन चला रहा था। मेरी रुचि भी

सामाजिक कामों में थी। उसी साल मैंने बी.ए. किया था। मेरे गाँव में भी पारम्परिक रूप से मिलने वाली मजदूरी बहुत कम थी। नेताजी से मिलकर मैंने भी उन्हें अपने और आसपास के गाँवों में आन्दोलन चलाने के लिए राजी किया। मजदूर तो कम मजदूरी से त्रस्त थे ही। साथ आ गए। तय हुआ कि तीन किलो प्रति दिन मजदूरी मिलेगी तभी काम करेंगे।

" इलाके में ज्यादातर बड़े किसान सवर्ण थे। वे इतनी मजदूरी देने को राजी नहीं थे। घुड़की-धमकी देकर हड़ताल तोड़ने की कोशिश करने लगे। लेकिन सफलता नहीं मिली। मजदूरों के अभाव में उस साल अषाढ़ में गाँव के आधे से ज्यादा खेत परती पड़े रह गए। कुछ सवर्ण स्त्रियाँ और बच्चे अपने खेतों

में काम करने के लिए पहली बार उतरे। यह तुम्हारे गाँव में मजदूरी बढ़ाने के लिए हुई हड़ताल से दो या तीन साल पहले की बात है।

"'यह नेता कहाँ से पैदा हो गया हमारे लिए मुसीबत बनकर ?' - उन लोगों ने नेताजी के घर का पता लगाया। असली नाम मंगल सिंह। जाति राजपूत। जिला... गाँव...ओ! यह तो बिरादरी का ही निकला। यहाँ से डेढ़ सौ कि.मी. दूर का। उनके घर गए। यहाँ नेताजी के गाँव में भी उसी पुरानी दर से मजदूरी दी जा रही है। और इनके सपूत हमारी खोपड़ी पर क्रान्ति करने पहुँच गए।

" नेताजी के बाप ने कहा- 'मैं उसका बाप जरूर हूँ लेकिन वह कपूत निकल गया। हम लोगों के लिए बह गया। मर गया। बस, उसका किरिया-करम नहीं किया हमने इसलिए कि उसकी मेहरारू चूड़ियाँ तोड़ने और मांग का सिन्दूर पोंछने को राजी नहीं हुई।... हम भला उस कुल-कलंकी के पास सिफारिस कारने चलते राजी नहीं हुई ।..

" तब उन लोगों ने एक रात नेताजी को शहर की उनकी कोठरी पर घेरा। मैं भी उस रात नेताजी की कोठरी पर ही रुका था। उन लोगों को आया देख मैं पीछे के बरामदे में चला गया।

"'आप तो अपने जाति भाई ही निकले। आप भी सिंह, हम भी सिंह।'

"'मैं सिंह नहीं हूँ। सिंह तो जानवर होता है। मैं आदमी हूँ। जानवर को आदमी बनने में लाख बरस लगे हैं। आप फिर जानवर क्यों बन रहे हैं?'

"'ऐसी बातें हमारी समझ से बाहर हैं। हम बिरादरी समझकर आपके सामने रोने आए हैं। बिरादरी के आगे रोने में कैसी शर्म? हमारी कमर मत तोड़िए। हम अपनी पगड़ी आपके पैर पर रखते हैं।'

"'पगड़ी नहीं ऐंठ त्यागिए, बाबू साहब। गरीब को भी जीने-खाने का हक है। उसको जानवर नहीं आदमी समझिए।'

"'गरीबी-अमीरी सनातन से रही है बिरादर। हमारे आपके मिटाने से नहीं मिटने वाली। उन्हें उठाने के चक्कर में आप हमें मिटा दे रहे हैं। आपकी शह पाकर ये नान्ह नीच लोग आँखों में आँखें डालकर,

गुरेरकर ताकना सीख गए हैं। ऐंठकर बोलना सीख गए हैं। बस लात-जूता मारना बाकी है। आपकी ऐसी ही किरपा रही तो एक दिन वह भी...'

" नेताजी चुप रहे। पीछे के बरामदे में खड़े-खड़े मैं डरने लगा कि कहीं नेताजी सरेंडर न कर दें।

"'उस टोले में आपकी ससुराल तो है नहीं। आपके उस टोले में जाने से बिरादरी की बदनामी होती है। दुनिया में हर काम करिए, लेकिन परदे में। कहिए तो आपकी इसी कोठरी में किसी जवान औरत का इन्तजाम कर दिया जाय।'

"'या कहिए तो चार-छह सौ रुपये चंदा-फंदा जुटा दिया जाय। दुनिया बहुत बड़ी है। कहीं और अपनी नेतागिरी चमकाइए। नहीं तो जो छूत का रोग आप फैलाने में लगे हैं, पूरा इलाका बरबाद करके रख देंगे।'

"'आखिर आप किसी की मेहनत की सही मजदूरी नहीं देंगे?'

"'कौन भँड़वा देगा और कौन माई का लाल दिलाएगा! यह जरूर है कि इसके चलते जो नहीं होना चाहिए वही होकर रहेगा।'

""हम तो ज्यादा पढ़े-लिखे नहीं हैं बाबू, लेकिन सुना है, मनु महराज ने बहुत पहले बरजा है कि न शूद्राय मतिं मतिं दे देहि। शूद्र को बुद्धि देने से दशवर्त नर्क में जाना पड़ता है।'

"'और शूद्र की बहन-बेटी पर कुदृष्टि डालने पर तो किसी नरक का विधान होगा नहीं? उनका पेट काटने पर तो एकदम नहीं?'

"लोग उठकर खड़े हो गए।

"'अब नहीं रुक सकते। बिरादरी से हाथी जैसा व्यवहार करना चाहिए ठाकुर, कुत्ते जैसा नहीं। इसीलिए कहा जाता है कि मरा हुआ हाथी भी सवा लाख का होता है और जो कुत्तागिरी करता है उसे कुत्ते की मौत मरना पड़ता है।"

संतोखी आज फिर खुश हैं।

आज वे एसडीएम कोर्ट से भी मुकदमा जीत गए। अब उनको यकीन हो गया

कि सत्य की विजय होकर रहती है। इसीलिए हर इजलास पर लिखा रहता है- सत्यमेव जयते।

जब दो महीने तक छत्रधारी कमिश्नरी से स्टे नहीं ला पाए तो संतीखी अपने दीवानी के वकील के पास गए।

सारी बात सुनकर वकील ने कहा-" नायब कोर्ट में जीतने के बाद ही छत्रधारी के खिलाफ चार सौ बीसी की रिपोर्ट लिखा देते तो अब तक उसके जेल जाने की नौबत आ जाती।"

संतोखी चुप रह गए।

"अब भी दुविधा में हो क्या?"

वकील साहब ने एक दरखास्त लिखी और उसे संतोखी को देकर बोले-" थाना रिपोर्ट लिखने में टालमटोल कर सकता है, बल्कि करेगा ही; तो घबराना नहीं। हम किस दिन के लिए हैं? आ जाना। सीजेएम कोर्ट में दफा 156 (3) सीआरपीसी में दरखास्त देकर आदेश करा देंगे तो थाना क्या, थाने का बाप भी दर्ज करेगा।"

घबराहट तो उन्हें अभी से हो रही है। आज तक वे कभी थाने के अन्दर नहीं घुसे। सामने से गुजरते हुए ही दिल की धड़कन बढ़ जाती है। लेकिन वकील की ललकार सुनकर उनमें हौसला आया। वही प्रभाव पड़ा जो गाँव में चटचटाकर बजती ढोल के साथ आल्हा सुनने पर होता है।

कई लोग आते-जाते रहे। वे मुंशी की चौकी से थोड़ी दूर पेड़ के नीचे खड़े देर तक इन्तजार करते रहे कि मुंशी या दारोगा कोई फुरसत में दिखे तो वे अपनी बात कहें। अन्त में मुंशी ने ही घुड़ककर पूछा- "क्या है?"

संतोखी तेजी से आगे बढ़े। दरखास्त उसके हाथ में पकड़ा दी। मुंशी ने सरसरी तौर पर पढ़ा फिर उसे वापस करते हुए कहा-" इंचार्ज साहब लौटें तो उन्हें डायरेक्ट देना। आज सहादत में गए हैं।"

तीन बार जाना पड़ा तब इंचार्ज साहब से भेंट हो पाई। उन्होंने मुंशी को आवाज देकर कहा-"ले लो।"

मुंशी ने दोनों कॉपियाँ रख लीं।

"वकील साहब ने कहा था कि एक कागज पर थाने की मोहर लगकर वापस मिलेगी। सबूत के तौर पर।"

"निरा गदहा ही है क्या रे? थाने पर सबूत लिया जाता है कि दिया जाता है?

चल भाग।"

"कब लिखेंगे साहब?"

"लिख लेंगे। कोई आफत आई है क्या?"

"हम पता करने कब आएँ?"

"जब मरजी आओ। कोई काम न हो तो रोज ही आओ।"

"लेकिन वकील... मेरी बात तो सुनें, हुजूर।"

"पुलिस सुनती नहीं, सिर्फ धुनती है। धुनें?"

पन्द्रह दिन बाद डरते-डरते फिर गए तो मुंशी ने कहा- "फैसले की कॉपी लाओ।" फैसले की कॉपी लेकर गए तो कहा- "गजटेड अफसर से प्रमाणित कराकर लाओ।" वे समझ ही न सके कि इसका मतलब क्या हुआ? समझे तो कई दिन तक गजटेड अफसर की खोज में दौड़ते रहे।

गजटेड अफसर के पेशकार ने समझाया- " यह नकल तो खुद कोर्ट से प्रमाणित है। प्रमाणित को प्रमाणित कराने का क्या मतलब? कुछ अकल-सहूर है?"

"अरे भइया, आदमी से नहीं, पुलिस से पाला पड़ा है। वहाँ अकल-सहूर क्या करेगा? आप भी अपने साहब की मोहर ठोंक देते तो काम बन जाता।"

पेशकार ने कागज उनके मुँह पर फेंक दिया।

माघ का सूरज निस्तेज होकर पश्चिम में लटक गया है। संतोखी सूनी सड़क की पटरी पकड़े उदास मन थाने की ओर चले जा रहे हैं। बड़बड़ा रहे हैं- 'क्यों मेरी जिन्दगी नरक कर दिए छत्रधारी? आदमी से न सही भगवान से तो डरते।' फिर अचानक उनकी आवाज ऊँची हो जाती है-

तोहरे पाप से धरती हाली
हंकार से आसमान
बहुत दिना ले बाबू हमका सताया
अबै सुनत नाही ना भगवान
कभौ बिलाइ जाब्या ना
राम का अइहैं जौ दरेगवा
बाबू बिलाइ जाब्या ना।

तुम्हारे पाप से धरती और अहंकार से आसमान हिलने लगा है। बहुत दिनों से मुझे सता रहे हो। अभी भगवान सुन नहीं रहे हैं, लेकिन जिस दिन राम को दरेग आ गया, तुम मिट जाओगे।

बगल के खेत में आलू की खुदाई कर रहा बूढ़ा खड़ा होकर पूछता है-"कौन है राम के दिल में दरेग आने की उम्मीद करने वाला भाई? संतोखी हो क्या? राम तुम्हारे खानदानी हैं कि छत्रधारी के? उनके दिल में तुम्हारे लिए दरेग पैदा होगा कि छत्रधारी के लिए? राम के भरोसे रहोगे तो खुद बिला जाओगे।"

अगम बहै दरियाव

संतोखी सन्न ! हिम्मत नहीं पड़ी कि नजर उठाकर बूढ़े की ओर देख लें। सिर झुकाए चलते चले गए।

छत्रधारी को संतोखी की दरखास्त का पता चल गया है। वे संतोखी पर कील्हे हुए हैं। छत्रधारी का कामकाज करने वाले लोग संतोखी को सावधान करते हैं- 'तुम्हारी जान को खतरा है। रात-बिरात रास्ता चलने से बचो। जान है तो जहान है।'

कभी संतोखी का दिल बैठने लगता है। कभी सोचते हैं कि जो होना हो, हो जाए। वे पीछे नहीं हटने वाले।

इधर दौड़-धूप बढ़ जाने से उनका सैलून बन्द चल रहा था। एक दिन गए तो मैदान एकदम साफ था। पूछने पर पता चला कि सारी दुकानें गैरकानूनी कब्जा करके खोली गई थीं। नगरपालिका ने खाली करा लिया।

वे होटल मालिक को कहाँ ढूँढ़ते? संयोग से वह नगरपालिका गेट पर ही भटकता मिल गया। बताया कि कुर्सी तो नगरपालिका वाले लाद ले गए थे। किस्बत और शीशा उसके पास सुरक्षित है। पास की दुकान पर ले जाकर चाय पिलाया और बताया- " नगरपालिका वालों को पटाकर दूसरी जगह पाने की कोशिश कर रहा हूँ। मिल जाए तो फिर शुरू करें। वही जगह देते हैं, वही उजाड़ देते हैं। शहर में नोचने वाले भी तो दर्जनों हैं। पुलिस को अलग दीजिए, नगरपालिका को अलग दीजिए, नम्बर दो से बिजली की कटिया लगाने के लिए अलग दीजिए, फूड चेकिंग वालों को अलग दीजिए। लेकिन क्या किया जाय। गाँव में रहकर तो पेट भर नहीं सकता इसलिए सब कुछ झेलकर भी यहीं रहना मजबूरी है।"

किस्बत और शीशा लेकर संतोखी शाम को लौट आए।

वे भादों के आखिरी दिन थे। मैं नेताजी के साथ आखिरी बस से नदी के पुल पर उतरा तो रात के दस बज रहे थे। चाँद सिर के ऊपर चमक रहा था। बन्धा पकड़कर हम दोनों लोग नदी के किनारे-किनारे आगे बढ़े। ओस पड़ने लगी थी। दस कदम चलते ही पैर के नीचे की घास पुचुर-पुचुर करने लगी। बार-बार पैर झाड़ना पड़ता, खर-पतवार, कीचड़, मिट्टी। किसी मेढक के नदी के पानी में छलाँग लगाने या मछली के उछलने से नीरवता भंग हो जाती, अभी आधा किलोमीटर बन्धे पर चलना था।

फिर ढलान उतरकर एक किलोमीटर पगडंडी, तब अपना टोला। बीच में बरगद का बूढ़ा पेड़। पेड़ पार हो जाए तब कोई डर नहीं। हालाँकि मैं भूत-प्रेत नहीं मानता, पर बचपन से इस पेड़ के भूतों की इतनी कथाएँ सुन चुका था कि... पीछे से हल्के-हल्के दौड़ते पैरों की आवाज आने लगी। दो आदमी हाथ में लाठी लिये दौड़ते हुए बिलकुल पास आ गए। मैंने नेताजी का हाथ पकड़कर तनिक किनारे खींच लिया। दोनों हमें ताकते हुए आगे निकल गए।

"कौन थे?"

"पता नहीं। बाहर के लगते हैं।" मैंने कहा- "हमें आज शहर में ही रुक जाना चाहिए था।"

"क्यों?"

"गाँव में इतनी 'तनातनी' चल रही है। सँभलकर आना-जाना चाहिए।"

"तुम्हीं तो बजिद थे लौटने के लिए।"

नेताजी सही कह रहे थे। देर होने लगी तो उन्होंने अपने कमरे पर रुकने के लिए कहा था। मेरे न मानने पर वे भी साथ चल पड़े थे। मेरे न मानने का कारण था। मेरी पत्नी का गर्भकाल पूरा हो चुका था। उसके पास मेरा होना जरूरी था।

हम लोग हड़ताल से बेरोजगार हुए गाँव के मजदूरों के लिए रोजगार की व्यवस्था करने निकले थे। पहले किराए पर रिक्शा चलवाने वाले एक सेठ से टोले के आठ नवयुवकों को रिक्शा दिलवाया गया, फिर जिलाधिकारी से मिलकर बाकी लोगों के लिए नई-नई बन रही चीनी मिल में काम करने का इन्तजाम किया गया। इसी में देर हो गई।

पीछे से मोटरसाइकिल की आवाज आई। उसकी रोशनी हमारी पीठ पर पड़ने लगी। दो मोटरसाइकिलें हमारे बगल से आगे गईं। दोनों पर दो-दो आदमी। मुझे आशंका हुई। थोड़ा डर लगा। हम किसी के निशाने पर तो नहीं हैं? मुझे लगा कि दोनों मोटरसाइकिलें बरगद के पेड़ तक तो गईं, लेकिन उसके आगे जाती नहीं दिखीं। मैं तो दाएँ-बाएँ भागकर, छिपकर बच सकता हूँ लेकिन नेताजी तो जरा-सा लीक से बेलीक हुए तो भहरा पड़ेंगे। पगडंडी के दोनों ओर धान के कीचड़-पानी वाले खेत थे। सामने सौ मीटर पर बरगद था।

हम लोग रुक गए। क्या किया जाए? बरगद के नीचे पूरी तरह सन्नाटा और घना अँधेरा था। पगडंडी के अलावा गाँव में जाने का दूसरा रास्ता नहीं था। हिम्मत करके आगे बढ़े। जैसे ही बरगद के नीचे पहुँचे, पीछे से टॉर्च की तेज रोशनी और बगल से लाठी का सधा वार पड़ा। सिर पर पड़ती लाठी फिसलकर मेरे कन्धे पर पड़ी। मैं पीछे मुड़ा, कावा काटा, झटका दिया, लेकिन बेकार।

कई बलिष्ठ हाथों ने मुझे पटक दिया। मैं चीखा- गोहार लागाऽऽऽ... लेकिन तभी अचानक कोई मुँह दबाते हुए छाती पर चढ़ बैठा।

पहले मुँह में कपड़ा दूँसा गया फिर अँगोछे से आड़ा-बेड़ा बाँधा गया; आँख, नाक, ठुड्डी सहित। तब एक बोरे में उकहूँ बैठाकर बोरे का मुँह ऊपर से बाँध दिया गया। साँस खींचने में कितनी ताकत लगानी पड़ रही थी।

मोटरसाइकिलें स्टार्ट हुईं। चार हाथों ने मुझे उठाकर मोटरसाइकिल के कैरियर पर रख दिया। कैरियर का प्रेसर राड झटके से आकर रीढ़ की हड्डी से टकराया। लगा, कमर टूट गई। बाँध भी रहे हैं। शायद साइकिल की ट्यूब से। कहाँ ले जाएँगे?

भाई जी के साथ भी यही सब हुआ होगा! मोटरसाइकिलें चल पड़ीं। कैरियर का प्रेसर राड रीढ़ की हड्डी को रगड़ता रहा। समझ गया कि यह मेरी जिन्दगी की आखिरी रात है। पत्नी इन्तजार कर रही होगी। उसे क्या पता कि उसका आज का इन्तजार अब कभी खत्म न होगा। अभी किसी नदी, कुएँ या तालाब में जीते जी फेंक दिया जाऊँगा और टोले के लोगों को पता चलेगा चार-पाँच दिन बाद, जब लाश सड़, फूलकर उतराएगी, बोरा फटेगा, बदबू फैलेगी...

सबेरे घर से चला तभी पत्नी के पेट में हल्का-हल्का दर्द उठ रहा था। हो सकता है, उसकी गोद में इस समय कोई नवजात रो रहा हो या जिस समय किसी ताल-पोखर में मेरा दम निकल रहा हो, मेरी झोंपड़ी में कोई शिशु पहली-पहली बार रोने का अभ्यास शुरू करे।

कैरियर का प्रेसर राड कमर को जिस जगह दबा रहा था, उसके नीचे खून का दौरा बन्द हो गया था। एकदम सुन्न। कन्धे पर लगी लाठी का दर्द फोड़े की तरह पक रहा था। रास्ते की धूल बोरे में भरती जा रही थी। साँस लेना असम्भव होता जा रहा था। बेहोशी आएगी क्या?

सहसा मुझ पर प्राणों का मोह तारी हो गया। मृत्युभय से मैं अन्दर तक हिल गया। आज यह दुनिया छूट जाएगी। मुझे अपना बचपन याद आने लगा। प्राइमरी स्कूल, स्कूल से थोड़ी दूर पर जंजीर में बँधा झूमता धूल उड़ाता हाथी, साथी लड़के, घर के पास का इमली का पेड़, बाप की उँगली पकड़कर स्कूल जाता मैं, रोटी देती अन्धी माँ। कुत्ते के नवजात पिल्ले, धान के खेत, सियारों के बिल, उड़ते हुए तोते, बहती नदी, तैरते बादल, नवजात शिशु, पत्नी...

मोटरसाइकिलें रुकीं। मुझे उठाकर जमीन पर पटका गया तो पल-भर को चेतना लौटी। असम्बद्ध ध्वनियाँ। कोई अर्थ नहीं। कोई लय नहीं। जैसे नीले पानी की अतल ठंडी गहराई में डूबता जा रहा होऊँ...

यही है मरना? यही है अन्त?

जा रे छूटती दुनिया, मैं तुझे कितना देख पाया! चेतना में सफेद बादलों के फाहे उड़ने लगे...

"तो कैसे बच गए?"

"बच गए इसलिए कि उम्रकैद काटनी थी।... मेरी मूर्च्छा टूटी तो पाया कि सड़क की पटरी के किनारे पड़ा हूँ। धूप निकल आई थी। कन्धे में भयानक दर्द था और कमर के नीचे के हिस्से में लगता था, जान ही नहीं है। हरकत देख आवाज आई- 'जिन्दा है'। कुछ लोग पास आ गए। सहारा देकर बैठाया, फिर खड़ा किया। कुछ दूर तक चलाया, तब पैरों में जान आई। समझ नहीं पाया कि उन लोगों ने मुझे जिन्दा क्यों छोड़ दिया। इसका मतलब नेताजी भी कहीं आसपास होंगे। चलते-चलते मैं सड़क के दोनों ओर देखता रहा। जेब में हाथ गया तो वहाँ मेरी डायरी नहीं थी, लेकिन बस का टिकट और पाँच रुपये का नोट मौजूद था। जितनी खुशी खुद को जिन्दा पाकर हुई थी उतनी ही खुशी पाँच का नोट पाकर हुई। उससे घर तक पहुँचना आसान हो गया।

टोले के लोग हमारे न लौटने से चिन्तित थे। पिछली रात मेरा चिल्लाना सुनकर वे महुए के पेड़ के नीचे तक पहुँचे थे। वहाँ नेताजी का चश्मा और तीन चप्पलें मिली थीं। उन्हें आशंका थी कि कुछ अनहोनी घटित हुई है। मुझे देखकर सबकी जान में जान आई। माना गया कि नेताजी को भी छोड़ दिया गया होगा।

लेकिन तीसरी रात पुलिस मुझे गिरफ्तार करके ले गई। जिस जगह नेताजी की लाश फेंकी गई थी उसी जगह मेरी डायरी मिली थी। और मेरे ही अँगोछे से नेताजी के हाथ पीछे बँधे थे। पुलिस ने मुझे हत्यारोपी बनाया और हत्या का कारण मेरी पत्नी से नेताजी का नाजायज सम्बन्ध बताया। नेताजी की मृत्यु लाठी की चोट या दम घुटने के कारण हो गई होगी। तब मुझे मारने के बजाय नेताजी का हत्यारा सिद्ध करना उन्हें ज्यादा ठीक लगा होगा। एक हफ्ते बाद मजदूरी आन्दोलन की अगुआई करने वाले

टोले के तीन अन्य लड़कों को भी पुलिस ने पकड़ा और कई दिन तक पिटाई करने के बाद नेताजी की हत्या में सहअभियुक्त बनाकर जेल भेज दिया। एक तीर से दो शिकार नहीं, उन लोगों ने तीन शिकार किए और आन्दोलन को पूरी तरह कुचल दिया।

अगम बहै दरियाव

चिट्ठी मिलने के ठीक उन्नीस महीने बाद मान्यवर जनजागरण यात्रा करते हुए उसके क्षेत्र में आए हैं। तूफानी अब मान्यवर से पूरी तरह जुड़ चुका है। उसे मान्यवर के हर कार्यक्रम की जानकारी रहती है। मान्यवर की आसपास के गाँवों की साइकिल-यात्रा का कार्यक्रम उसने खुद ही बनाया है। कड़ी धूप में सिर पर तूफानी का गमछा लपेटकर नौजवानों के साथ साइकिल चलाते मान्यवर खुद किसी नौजवान से कम नहीं लगते।

आज शाम कार्यकर्ताओं की सभा और रात्रिभोज तूफानी के घर पर ही है।

भोजन करते हुए मान्यवर, परोस रही दहबंगा से कहते हैं- " अपने बेटे को समाज के लिए दान कर दीजिए, बहन जी। समाज को इसकी जरूरत है।"

दहबंगा तुरन्त कुछ नहीं बोलीं। मान्यवर की थाली में एक रोटी और डाल देती हैं। मान्यवर सिर उठाकर उन्हें ताकते हैं।

"दे तो देते साहेब, लेकिन अभी हमारी गृहस्थी बहुत कच्ची है। आप तो गृहस्थी के जंजाल से मुक्त हैं, हम इसमें फँस चुके हैं। हमारा पूरा परिवार जेल में है। इसी लड़के के सिर पर सारा भार है।"

पता नहीं, मान्यवर को परिवार के जेल में होने की जानकारी थी कि नहीं। वे कुछ बोले नहीं। चुपचाप खाते रहे।

दहबंगा ही फिर बोलीं- " आधा-आधा बाँट लेते हैं साहेब। आधा समय अपनी रोजी-रोटी कमाने में लगाएँ, आधा आपका हुकुम बजाने में।"

जाते हुए मान्यवर ने तूफानी को संगठन मजबूत करने, जनजागरण करने और दीवारों पर पार्टी के नारे लिखने की जिम्मेदारी सौंपी।

- " साधन और सहयोगी जुटाओ और हर गली-कूचे की दीवारें पार्टी के नारों से भर दो।"

जंगू की जिज्ञासा का अन्त नहीं। ऐसे-ऐसे सवाल जो गोबरधन के मन में भी नहीं उठे। जंगू गोबरधन को 'मास्टर जी' कहता है।

"मास्टर जी, हम चमार हैं तो इसमें हमारी क्या गलती है?"

"गलती हमारी नहीं उनकी है, जिन्होंने जाति का यह शिकंजा बनाया। खुद को बड़ा और दूसरों को छोटा बताया।"

"तो हम बड़ी जाति वाले कैसे बन सकते हैं?"

"नहीं बन सकते। यह ऐसा मकड़जाल है जिससे निकलने की राह खोजना अभी बाकी है।"

"चौदह साल पढ़कर भी आप इससे छूटने की राह नहीं खोज पाए तो हमें पढ़ने के लिए इतना जोर क्यों देते हैं?"

"राह जब भी निकलेगी, पढ़ाई से ही निकलेगी।"

"मास्टर जी, ऐसी कोई पढ़ाई हो जिसके पढ़ने से मन का डर खत्म हो जाय तो मैं पढ़ने को तैयार हूँ।"

गोबरधन उसका मुँह ताकता रह जाता है।

"मैं छोटी जाति का बनकर एक दिन भी नहीं रहना चाहता। बड़ी बेइज्जती लगती है। मैं हर हाल में बड़ी जाति का बनना चाहता हूँ। क्या करूँ?"

गोबरधन निरुत्तर है।

"मास्टर जी, हमारे शरीर में ऐसी कौन-सी चीज घुसी हुई है जिससे वह हमें छूने से परहेज करते हैं।"

"हमारे शरीर में नहीं, उनके दिमाग में घुसी हुई है। उसका नाम है नफरत। अपने अलावा सबसे नफरत। अकारण नफरत। अपार नफरत। दिमागी बीमारी जो यहाँ के अलावा और कहीं नहीं मिलती।"

बाग भी उन "और सारे खेत-बाग भी उन्हीं लोगों के पास हैं, क्यों? हमारे हिस्से के खेत-बाग कहाँ गए?"

"हमारे हिस्से की भी सारी सम्पत्ति हमारे पैदा होने के पहले इन्हीं लोगों द्वारा हड़पी जा चुकी है। आज जो कुछ उनके पास है, उसमें हमारा भी हिस्सा है।"

"तो उनसे हमारा हिस्सा वापस कब मिलेगा?"

"वे नहीं देंगे। उनमें दूसरे का दुख देखकर पसीजने वाला दिल नहीं है। उन्हें दूसरे का हिस्सा हड़पकर ही तसल्ली होती है। हिस्सा न देना पड़े इसीलिए वे कहते हैं कि हम नीच हैं, हमें सम्पत्ति रखने का अधिकार नहीं है।"

"अगर हम इतने नीच हैं, खराब हैं, तो हमें भगवान ने पैदा ही क्यों किया?"

"भगवान ने किसी को नहीं पैदा किया। खुद इन्हीं ठगों-लुटेरों ने अपने खाने-कमाने के लिए भगवान को पैदा किया। भगवान जैसी कोई चीज नहीं होती।"

"भगवान नहीं हैं तो यह दुनिया किसने बनाई?"

"किसी ने नहीं? अपने आप बनी।"

जंगू थोड़ी देर गोबरधन का मुँह ताकता रहता है फिर कहता है- "तो कुछ नहीं हो सकता? कोई रास्ता नहीं?"

"रास्ता पढ़ाई से ही सूझेगा, जंगू। केवल गिनती पहाड़ा ही पढ़ाई नहीं है। वह तो शुरुआत है। असली पढ़ाई आगे है। तुम्हारे सवालों के जवाब इतने छोटे नहीं हैं। मुझे भी कहाँ सारे जवाब पता हैं। लेकिन मुझे लगता है कि तुम इन सवालों के जवाब खोज सकते हो। तुम्हारे अन्दर अम्बेडकर जैसी प्रतिभा है।"

"किसके जैसी !"

"एक हुए हैं अम्बेडकर बाबा। वे भी दलित थे। उन्होंने बहुत मुश्किलें झेलीं, लेकिन पढ़े। बिलायत जाकर पढ़े। बहुत सारे सवालों के जवाब खोजे। तुम भी अगर पढ़-लिख लो तो उन्हीं की तरह विद्वान बन सकते हो। जो राह खोजनी बाकी रह गई है उसे खोज सकते हो।"

"मुझे उनके बारे में बताइए। वे कहाँ रहते हैं?"

पचासा बजने लगा।

"चलो खाने का घंटा बजने लगा। किसी दिन फुरसत बताऊँगा।"

इस बार विद्रोही जी साल-भर पहले से परधानी की फील्ड बनाने में लग गए हैं। पिछली बार मिले धोखे के बाद खुद को हर प्रकार से सही कैंडीडेट साबित करना चाहते हैं। विधायक जी ने उन्हें मंत्र दिया है कि हर जगह 'वेश' की पूजा होती है। चोर-डाकू भी साधू का बाना धर लेते हैं तो सम्मान पाने लगते हैं। नेता बनना है तो नेता का बाना धारण करिए। हर जगह पटरे वाली जाँघिया पहनकर जाने से बचिए। जाँघिया हल जोतने, धान निराने और दूध दुहने तक ही ठीक है। कहीं आइए-जाइए तो खद्दर का कुरता-पाजामा पहनिए।

पाजामा तो अब इस जनम में वे क्या पहनेंगे ! हाँ, धोती-कुरता ठीक है। खादी की धोती-कुरता, ऊपर से सदरी और पम्प जूता।

हिन्दी-अंग्रेजी डिक्शनरी, हिन्दी-अंग्रेजी शिक्षक और डायरी तो उन्होंने पिछली बार चुनाव में मिले धोखे के बाद ही खरीद लिया था, पर घर-गृहस्थी के काम के बोझ के चलते पढ़ाई नहीं हो सकी। अब पहलवान घर-गृहस्थी सँभालने लगे हैं तो फिर से पढ़ना शुरू किया है।

बोलते समय बीच-बीच में अंग्रेजी शब्दों का पुट देने से धाक जम जाती है। जो समझता है उस पर तो जमती ही है, जो नहीं समझ पाता उस पर और ज्यादा जमती है।

जब से अध्यक्ष जी ने उन्हें विद्रोही की पदवी दी, वे हर जगह 'विद्रोही' लिखकर ही दस्तखत करते थे। फिर जल्दी ही समझ गए कि दस्तखत और साइन करने में जमीन-आसमान का फर्क होता है। तब अंग्रेजी में साइन करने लगे। पहले वि से शुरू करते थे। लेकिन लगा कि वि से वह बात नहीं पैदा होती जो बि का मुकाबला कर सके। अब बि से शुरू करते हैं और आखिरी ऐ की पूँछ नीचे से बाईं ओर लाकर बि के ऊपर से आखिरी ऐ तक तम्बू जैसा तान देते हैं। इसको कहते हैं चिड़ियाउड़ान दस्तखत या फ्लाइंग बर्ड साइन। बहुत अभ्यास के बाद यह सेट हुआ है।

विधायक जी के साथ उठते-बैठते उन्हें यह भी समझ में आ गया है कि बहुत सारी चीजों के बीच बहुत सारा फर्क होता है। जाति-जाति का फर्क, देहाती-शहराती का फर्क, गोरे-काले का फर्क, कद-काठी का फर्क, हिन्दू-मुसलमान का फर्क, हिन्दी-अंग्रेजी का फर्क। किसी से बात करते समय इस फर्क का ध्यान रखना चाहिए। यह नहीं कहना चाहिए कि आप हमारे लिए क्या कर सकते हैं। वह तो पाँच साल में एक बार चुनाव के समय कहना है। उसके पहले और बाद में यह पूछना चाहिए कि हम आपके लिए क्या कर सकते हैं।

विद्रोही जी जानते हैं कि माठा बाबा इस गाँव के जहरमोहरा हैं। जहर चढ़ाने-उतारने में माहिर हैं। वे हाथ जोड़कर कहते हैं-" इस बार तहेदिल से आशीर्वाद दे दीजिए बाबा। एक बार आपने कहा था कि अब आप हम लोगों के शुक्राचार्य बनेंगे। उसका समय अब आ गया है। कल एक दुधारू गाय लाकर खूँटे पर बाँध जाऊँगा।"

वैसे तो बाबा को विद्रोही जी की अक्खड़ता थोड़ी खलती है। वे साइत-सुदिन में विश्वास नहीं करते। पोथी-पत्तरा को कुटियाते हैं। पैर नहीं छूते। दूर से हाथ जोड़ते हैं। पैर छूने और हाथ जोड़ने में जमीन-आसमान का फर्क होता है। लेकिन विद्रोही बहू की श्रद्धा-भक्ति बाबा के इस दंश पर मरहम का काम करती है। इसके अलावा किसी-न-किसी के पक्ष में तो दिखना ही चाहिए। छत्रधारी के पक्ष में जाने का रास्ता खुद छत्रधारी ने बन्द कर दिया।

वे कहते हैं- "लेकिन गाय को चारा-भूसा देने वाला कौन है मेरे घर। हम बूढ़े-बूढ़ी के लिए पाव-आध सेर दूध भिजवा दिया करना, यही बहुत है।"

"ठीक है। आज शाम से बेटा दे जाएगा। प्रणाम।"

"खुश रहो। जाओ। मेरा तप तुम्हारे साथ है।"

माठा बाबा के साथ आ जाने से पूरे विप्र समाज में अच्छा सन्देश जाएगा। उनके साथ छत्रधारी द्वारा की गई दगाबाजी कोई भूलने की चीज है!

गजाधर की पिटाई, मृत्यु और उसके परिवार के निष्कासन से दलित टोला भी छत्रधारी से नाराज है। पूरा टोला गजाधर की मृत्यु को हत्या मानता है। विद्रोही

अगम बहै दरियाव

तो शुरू से इसे हत्या कहते आए हैं। वे आश्वासन दे रहे हैं- " आप लोगों ने परधान बना दिया तो सबसे पहले हरिजन टोले के रास्ते पर खड़ंजा लगवाऊँगा। बरसात के तीन महीने पूरा टोला टापू बन जाता है। पूरे टोले को घुटने-भर कीचड़ में घुसकर आना-जाना पड़ता है। इस नरककुंड से गुजरने का यही आखिरी साल होगा।"

जब से दलितों की अलग पार्टी बनी है, तूफानी की अगुआई में दलित लड़के सक्रिय हो गए हैं। उन लोगों ने खुद विद्रोही जी से वचन लिया है-" चाचा, आपको डंके की चोट पर जिताएँगे, लेकिन एक शर्त पर। जीतने के बाद गाँव में बाबा साहब की मूर्ति लगवानी होगी।"

"कौन बाबा?"

"बाबा साहब अम्बेडकर, जिन्होंने इस देश का संविधान बनाया है। हमें जीने का अधिकार दिया है। हमारे देवता वही हैं।"

"मंजूर। जीतने के छह महीने के अन्दर लगवा दूँगा।"

बैताली छत्रधारी का आदमी है। है नहीं, था। छत्रधारी ने उसे पारस सिंह हत्याकांड में जेल जाने से बचाया था और बैताली ने पिछले दोनों परधानी के चुनाव में अपने खानदान का सारा वोट छत्रधारी को दिलवाया था।

छत्रधारी ने पट्टा देने के लिए बैताली से नौ साल पहले पाँच हजार रुपये लिये थे लेकिन पट्टा आज तक नहीं दिया।

इधर कहने लगे हैं कि इस बार जिताओ तब पट्टा करेंगे।

बैताली दुखी है लेकिन खुलकर छत्रधारी के खिलाफ कुछ बोल नहीं सकता।.

विद्रोही समझाते हैं- "खुलकर कुछ बोलने की जरूरत ही नहीं है। वोट तो ओट में दिया जाता है। छत्रधारी पुराने धोखेबाज हैं। जिसने उनकी मदद की उसे ही धोखा दिया। जब वेश्या तक को नहीं छोड़ा जिसके लहँगे में सोलह-सत्रह साल की उम्र से सोते रहे, ब्राह्मण को नहीं छोड़ा जिसके पैर छुए तो तुमको छोड़ देंगे? अभी और चूसना चाहते होंगे। मुझे जिताओ तो मैं महीने भर के अन्दर उसी जमीन का पट्टा कर दूँगा, बिना एक धेला खर्च कराए।"

दुआर पर औरतों के सामने इस तरह की बात करना ठीक नहीं। तुरन्त गाँव-भर में फैला देंगी। इसलिए दोनों लोग टोले से दूर खेतों के बीच अँधेरे में फुसफुसा रहे हैं।

इमरजेंसी में विद्रोही बहू ने दहबंगा के साथ मिलकर नायब को पटका था। तबसे दोनों में बहनापा है। विद्रोही ने अपनी पत्नी को दहबंगा से हेलमेल बढ़ाने के लिए कहा है।

"उसको साथ लेकर दलित टोले की सारी औरतों से खुद जाकर मिलो।"

पहलवान को पढ़ाना-लिखाना काम आ रहा है। सरकारी दफ्तर की भागा-दौड़ी उन्हीं के जिम्मे है। वे अभी से वोटर लिस्ट में अपने लोगों के नाम जुड़वाने में लग गए हैं। पुराने नामों की जाँच भी जरूरी है। पता नहीं, कब किसका नाम लिस्ट से गायब हो जाए। ऐसा भी हो सकता है कि वोट काटने के लिए खिलाफ पार्टी उन्हीं की बिरादरी का कोई कैंडीडेट खड़ा कर दे। कभी-कभी उनके मन में डर की एक लहर दौड़ जाती है कि फिर कोई ऐसा धोखा न हो जाए, जहाँ तक उनका दिमाग न पहुँच रहा हो।

पिछली बार का धोखा अभी भी कलेजे में काँटे की तरह करकता है। इस बार वे छत्रधारी की पीठ लगाकर रहेंगे।

गोबरधन के एक-एक शब्द को जंगू प्यासे की तरह पीता है।

"जो ताकतवर है वह कमजोर का हिस्सा हड़पेगा ही। यह जीव मात्र की प्रवृत्ति है। अगर तुम आगे पढ़ते तो जानते कि पूरी दुनिया में बलवानों और चालाक लोगों ने अपने-अपने तरीके से कमजोर और भोले लोगों को लूटा है। लेकिन इस लूट को मुकम्मल करने का पुख्ता इन्तजाम हिन्दू या कहिए, ब्राह्मण धर्म में ही हुआ है। वैसा स्थायी इन्तजाम दूसरे धर्म नहीं कर सके। दूसरे लोगों की हर पीढ़ी आमने-सामने लड़कर छीनती-लूटती रही। इसमें हर पीढ़ी के दोनों पक्षों को नुकसान उठाना पड़ता था। हमारे यहाँ के लोग ज्यादा चतुर निकले। उन्होंने शरीर को नहीं, सीधे दिमाग को काबू में करने का इन्तजाम किया। वर्ण-व्यवस्था दुनिया की सबसे ज्यादा अन्यायी, शातिर और स्थायी व्यवस्था है। दिमाग को ही बन्धक बना लो। पैदा होने के दिन से। हाथ-पैर बाँधने की जरूरत ही न रहे। अगली पीढ़ी को आमने-सामने लड़ने का खतरा भी न रहे। क्या समझे?"

"समझने की कोशिश कर रहा हूँ, मास्टर जी। इस तरह समझाने वाला पहले कोई मिला नहीं।"

"देखो, अगर सबसे ज्यादा अन्याय, सबसे ज्यादा क्रूरता किसी धर्म में आदमी आदमी पर करता है तो वह हिन्दू धर्म है। वर्ण-व्यवस्था बनाई ही गई है इस बदनीयती से कि दूसरों का हक मारकर और दूसरों की मेहनत लूटकर मौज की जाए।

अगम बहै दरियाव

पूरी दुनिया में बहुसंख्यक अल्पसंख्यकों का हिस्सा हड़पते हैं, लेकिन हिन्दुस्तान में अल्पसंख्यक सवर्ण बहुसंख्यक कमेरी जातियों का हिस्सा हड़पते हैं, इसी वर्ण- व्यवस्था के हथियार से।

"इस व्यवस्था ने हमारे समाज को जाति के नाम पर छह हजार टुकड़ों में तोड़ दिया। जब यही बात कहिए तो कहते हैं कि तुम तो समाज को तोड़ने की बात करते हो। अरे बाबा, हम तो बता रहे हैं। तोड़ा तो तुमने है।

"भेदभाव की इस व्यवस्था को बनाने वालों का न कभी पेट भरता है न कभी अन्याय करते हुए उनका दिल पसीजता है। अन्याय पर टिकी ऐसी व्यवस्था से न्याय की उम्मीद कैसे कर सकते हैं? यह धर्म मानवता के खिलाफ है, संविधान के खिलाफ है, कानून के खिलाफ है लेकिन इसे समझने के लिए कानून पढ़ना पड़ेगा, संविधान पढ़ना पड़ेगा। संविधान लिखा-पढ़ी में दर्ज की गई वह व्यवस्था है जिसके हिसाब से इस देश के हर आदमी को चलना है। इसमें हर ८ है न बड़ा, न कोई ऊँचा आदमी को बराबर की जगह दी गई है। न कोई छोटा है न नीचा।"

"तो ऐसा होता क्यों नहीं?"

"होता इसलिए नहीं कि इस संविधान से जिनका हक हिस्सा बँट रहा है वे इसे लागू नहीं करना चाहते और जिन्हें उनका हक-हिस्सा मिलना है उन्हें इसकी जानकारी ही नहीं है। पाँचवीं तक पढ़ने से तो इसका ज्ञान नहीं हो सकता। तुम खुद को ही देखो। देश में जुवेनाइल एक्ट लागू हो चुका है। तुम्हारी उम्र अठारह साल से कम है इसलिए कायदे से तुम्हें इस जेल में लाने के बजाय बाल सुधार गृह में भेजना चाहिए। तुम्हें पता होता तो तुम इसकी माँग कर सकते थे।

"और जानते हो, जिन अम्बेडकर बाबा की चर्चा मैंने उस दिन की थी उन्होंने ही यह बराबरी देने वाला संविधान बनाया है। उन्हें भी जाति के कारण अपमान झेलना पड़ा। क्लास के बाहर बैठकर पढ़ना पड़ा। लेकिन सारा अपमान झेलकर बिलायत तक पढ़ने गए और इतने काबिल माने गए कि देश के लिए कायदा बनाने का काम उन्हीं को सौंपा गया। तभी हमें उसमें बराबरी की जगह मिली। लेकिन जब तुम्हें पता ही नहीं रहेगा कि तुम्हारा अधिकार क्या है, तुम्हारा हक-हिस्सा क्या है तो लोगे कैसे? बिना माँगे, बिना छीने किसी को कुछ मिलता है क्या?"

जंगू को लगता है कि वह भूल भुलैया में फँसता जा रहा है। बस, एक बात पल्ले पड़ी-बिना लड़े, बिना छीने किसी को कुछ नहीं मिल सकता।

"लेकिन छीन वही सकता है जो ताकतवर हो। ऊँची जातियों के लोग छोटी जातियों को उभरने ही नहीं देते।

उनकी ताकत घटाने, उनका मनोबल तोड़ने के लिए निरन्तर उन पर अत्याचार करते हैं। उनके घर फूँकते हैं। उनकी बहन-बेटियों से बलात्कार करते हैं। और चूँकि पुलिस से न्यायालय तक उन्हीं के लोग भरे हैं इसलिए उन्हें सजा भी नहीं होती। पुलिस के स्तर से नहीं छूटते तो न्यायालय के स्तर से छूट जाते हैं क्योंकि अपने यहाँ जाति देखकर सजा होती है। हिन्दू धर्म में जाति के अनुसार सजा का प्रावधान पहले से है। ऊँची जाति के लोग आज भी उसी को सही मानते हैं। तुम अभी बच्चे हो, नहीं जानते होगे। पिछले वर्षों में गरीबों-दलितों की इतनी सामूहिक हत्याएँ हुईं, पचीस-पचास लोगों की हत्या ! उन्हें नरसंहार कहा गया। सामूहिक नरसंहार ! शायद ही किसी मामले में हत्यारों को सजा हुई हो। निचली अदालत से हो भी गई तो ऊपर की अदालतों से बरी हो गए। कहते हैं कोई प्रत्यक्षदर्शी नहीं। सन्देह का लाभ देकर बरी कर दिया। अरे भाई, पचास हथियारबन्द लोग मुँह बाँधकर रात के अँधेरे में आए और पूरा टोला साफ कर दिए तो प्रत्यक्षदर्शी गवाह कहाँ से आएँगे? कत्लेआम हुआ तो किसी-न-किसी ने तो किया। वे सन्देह से परे लोग कौन हैं? उन्हें खोजने की जिम्मेदारी किसकी है? जो मर गए वे खोजने आएँगे क्या? लेकिन वही अपराध करने वाले, वही पकड़ने वाले, वही सजा सुनाने वाले तो सजा होगी कैसे? दूसरी बात यह कि अगर नीचे सबूत ही नष्ट कर दिया गया तो कोई न्यायी पुरुष सजा देना भी चाहे तो कैसे दे देगा? और मुझे देखो, बिना किसी की हत्या किए हत्या की सजा काट रहा हूँ। पता करो, मेरे जैसे जाने कितने हैं! जेलें भरी हैं निरपराध लोगों से और असली अपराधी मूँछ पर ताव देकर बाहर घूम रहे हैं।"

"तब फायदा क्या हुआ बराबरी वाला कानून बनाकर?"

"फायदा तब होगा जब हम खुद पढ़-लिखकर उन जगहों पर बैठेंगे। पुलिस में घुसेंगे। अदालतों में घुसेंगे। अभी तो हाई कोर्ट और सुप्रीम कोर्ट जो देश की सबसे ऊँची अदालतें हैं, उनमें सौ में नब्बे वही लोग जमे बैठे हैं जिनके बारे में अंग्रेज कहते थे कि उनमें न्यायिक चरित्र ही नहीं होता। तो वे हमें न्याय क्या देंगे? उनमें न्यायिक चरित्र होता तो हम लोगों को भी उसमें जगह देते। जजों के कंडक्ट पर हमारे

देश में कोई प्रभावी कानून ही नहीं बना! राजनीतिक पार्टियों पर भाई-भतीजावाद का आरोप लगता है लेकिन वे चुनाव जीतकर तो आते हैं। ऊँची अदालतों में तो पूरी तरह भाई-भतीजावाद है। चाचा, ताऊ, जीजा, फूफा, साले, बहनोई ज्यादातर रिश्तेदार ही काबिज हैं। जो जजों को चुनने के लिए जिम्मेदार हैं उन्हें अपने रिश्तेदारों से ज्यादा काबिल कोई नजर ही नहीं आता। हर जगह नौकरी पाने के लिए इम्तहान देना पड़ता है और सिफारिश को अयोग्यता माना जाता है, वहाँ सिफारिश से ही नौकरी दी जाती है। इम्तहान की कोई जरूरत ही नहीं समझी

जाती। मुझे नहीं लगता कि दुनिया के किसी दूसरे देश में इतनी अन्धेर होगी! अदालतों में डाइवर्सिटी का सिद्धान्त लागू होता तो वहाँ हमारी भी भागीदारी होती। तब हमें भी सचमुच का न्याय मिलता।"

"हमारे लोग वहाँ तक कैसे पहुँचेंगे?"

"पढ़-लिखकर और आवाज उठाकर।"

"उसमें तो बहुत दिन लग जाएँगे।"

"लगेंगे ही। लेकिन रास्ता यही है।"

"तुरन्त का रास्ता क्या है?"

"तुरन्त का कोई रास्ता नहीं है।"

"तो हम खुद न्याय करें। खुद फैसला सुनाएँ। खुद सजा दें।"

गोबरधन कुछ देर तक जंगू का मुँह ताकता रह गया। फिर समझाने की मुद्रा में कहने लगा-" इस सोच से पार नहीं पा सकोगे। उनसे लड़कर नहीं जीत सकते। खत्म कर दिए जाओगे। कितने खत्म कर दिए गए। कितने किसी-न-किसी बहाने से रोज खत्म किए जा रहे हैं। जिन्दा रहने के लिए लड़ना जितना जरूरी है उतना ही लड़ने के लिए जिन्दा रहना जरूरी है। जो लोग मरने-कटने के लिए ललकारते हैं वास्तव में वे हमारी जान की कीमत पर अपनी गोटी लाल करना चाहते हैं। राजा-महाराजा तो हजारों साल से यही करते रहे हैं। तुम बन्दूक लेकर सरकार से लड़ने निकलोगे, वह तुम्हें श्री नाट श्री से

उड़ा देगी। सरकार से लड़ना है तो ऐसे हथियार से लड़ना होगा जो सरकार के पास न हो। यूनिवर्सिटी में हम एक नारा लगाते थे- 'पढ़ो लड़ाई करने को। लड़ो समाज बदलने को।' पढ़ाई से ही सही-गलत की पहचान कर सकोगे। पढ़ाई से ही मिथ और इतिहास का सम्बन्ध जान सकोगे। जान सकोगे कि कहाँ इतिहास मिथ का चोला पहनकर बैठा है और कहाँ मिथ इतिहास का। और चोला बदलने के पीछे मंशा क्या है? मिथ के जयद्रथ और इतिहास के वृहद्रथ में क्या सम्बन्ध है? दोनों का सिर युद्धभूमि में काटा गया और दोनों का धोखे से काटा गया। असल में दोनों दो नहीं, एक ही हैं। यह सब समझने के लिए पढ़ना बहुत जरूरी है। पढ़ाई से ही जान सकोगे कि किससे लड़ना है, क्यों लड़ना है और कैसे लड़ना है। पढ़ने से ही लड़ाई के ज्यादा कारगर तरीके मिलेंगे।"

"मास्टर जी, आप इतने दिनों बाद क्यों मिले? वह भी जेल में! जो थोड़ा-बहुत पढ़ा-लिखा था वह भी छह-सात साल में भूल गया।"

"फिर शुरू करो। भूला हुआ याद आ जाएगा। मुझसे पढ़ो। जेल में इतनी बड़ी लाइब्रेरी है, उससे पढ़ो।"

"अम्बेडकर बाबा वाली किताब भी यहाँ होगी, जिसमें बराबरी वाला कानून लिखा है?"

"होनी चाहिए। खोजेंगे।"

विद्रोही जी जानते हैं कि बिना दलित टोले का वोट पाए जीतना मुश्किल है। मुश्किल यह है कि मुँह पर हाँ-हाँ कर लेंगे, लेकिन रात में सौ रुपये और एक पाउच दारू पर बिक जाएँगे। तूफानी होता तो काफी मदद मिलती, लेकिन वह मान्यवर के साथ साइकिल यात्रा में भाग लेने पंजाब गया हुआ है। इसलिए बगल के गाँव से दलितों के चौधरी को बुलाया है। रात में दलित टोले के नीम के नीचे जुटान हुआ है। चौधरी जमीनी ढंग से जमीनी बात करते हैं। समझा रहे हैं- " जाति व्यवस्था हमारे पैर का छनउर है। छनउर तो आप सब जानते ही हैं। गधे या घोड़े के अगले दोनों पैरों को आपस में रस्सी से बाँध देते हैं ताकि न वह खुलकर चल सके न चर सके। दौड़ना तो दूर। वह दिन-भर कूद-कूद कर चरता

है, लेकिन पेट नहीं भरता। उसी तरह जैसे दिन-भर खटने के बाद आपका पेट नहीं भरता। आपके परधान जी के पास पचीस बीघे खेत हैं और आपके पास एक धूर नहीं। आपके खेत किसके पेट में गए? - उन्हीं के पेट में तो? आपको पता ही नहीं है। विद्रोही जी को जिताओगे तो ये जमीन का पट्टा देकर आपके पैर का छनउर काटेंगे।

"जाति व्यवस्था धोखा है। जाति पेड़-पौधों में होती है। जानवरों-पक्षियों में होती है। आदमी में नहीं। फल-फूल या पत्ती से पहचान जाते हैं कि यह कौन पेड़ या पौधा है। आम, अमरूद, जामुन, कटहल, गेहूँ, चना। जानवरों में शक्ल से, रंग से, बोली से, पैरों के निशान से या टट्टी से पहचान हो जाती है कि हाथी बोल रहा है या बैल, बकरे की लेंड़ी है या ऊँट की, बैल का गोबर है या घोड़े की लीद। आदमी की टट्टी देखकर बता सकते हैं कि यह ठाकुर की टट्टी है कि चमार की? पैर के निशान से या बोली से? तब कैसे कह सकते हो कि आदमी में जाति-भेद होता है। यह हमारे शोषण का शिकंजा है। इससे मुक्त होने के लिए कोई दवाई खाने की जरूरत नहीं है। जरूरत है, छानने वालों से परहेज करने की। लेकिन आप अपनों से परहेज करते हैं। अहिर कहता है, हमको चमार से एलर्जी है। चमार कहता है, हमको अहिर से एलर्जी है। लेकिन बाभन-ठाकुर से दोनों को एलर्जी नहीं है, जो

अगम बहै दरियाव

बारी-बारी दोनों की मारते हैं। वे कब से परधानी की कुर्सी पर काबिज हैं। क्या दिए? अपनी कोठी खड़ी कर लिये। अगर फिर उन्हीं को जिताए तो किसी कागज पर मुहर लगवाने के लिए उनके दरवाजे पर दोपहर तक बैठकर हिनहिनाओगे। कहेंगे-जरा चैला फाड़ दो। भूसा रख दो। बैलों को पानी पिला दो। तुम्हें पानी के लिए नहीं पूछेंगे। इसलिए इस बार उनसे परहेज करना है। इस बार अपने विद्रोही भइया को जिताइए। ये पानी भी पिलाएँगे। दादा, भइया कहकर बुलाएँगे भी और बेंच-कुर्सी पर बैठाएँगे भी। आपके गाँव की बहादुरी का किस्सा पन्द्रह साल की उम्र से सुनते आए हैं। इस बार फिर बहादुरी दिखाइए और इतिहास बदल दीजिए।"

जब से विद्रोही जी बोट क्लब पर महेन्द्र सिंह टिकैत द्वारा आहूत धरने में भाग लेकर लौटे हैं, वहाँ का बखान करने से नहीं थकते- "बाप रे, लाखों की भीड़! एक आदमी के आवाहन पर। केवल खद्दर पहनना परधानी जीतने के लिए काफी नहीं है। बल्कि आजकल तो जो खद्दर पहनने लगता है उससे आदमी चौकन्ना हो जाता है। बोट क्लब पर तो एक भी खद्दरधारी नहीं था। लोगों का दिल जीतने की कला सीखनी होगी कि कैसे एक आदमी के पीछे लाखों की भीड़ चल पड़ती है।"

बाउर पंडित से ज्यादा काबिल दूसरा कौन है जो दिल जीतने की कला सिखा सके। वे मास्टर रहे हैं जो गधे को भी ठोंक-पीटकर आदमी बना देता है। 'कबी' भी हैं। अपने पुस्तकालय का उद्घाटन कराने के लिए श्याम नारायण पांडेय 'कबी जी' को दुर्गापुर बाजार से गाँव तक हाथी पर बैठाकर लाए थे। जब 'मार ले साथी जाने न पाए' गीत लिखने पर गँजेहड़ी के शायर मजरूह सुल्तानपुरी को जेल हो गई तो उनसे अपना समर्थन जताने के लिए बम्बई तक गए थे। दिल के साफ हैं इसलिए दिल जीतने की कला सीखने विद्रोही जी उन्हीं की शरण में गए।

'बाउर जी' ने समझाया- "दिल जीतने के लिए बात बनाने की कला सीखनी होगी। कहा गया है-बातन हाथी पाइए, बातन हाथी पाँव। यानी बातों से खुश करके आप राजा से इनाम में हाथी पा सकते हैं और बात से नाराज करके हाथी के पाँव तले कुचले जा सकते हैं। इसलिए भाषण देना सीखिए। अब्राहम लिंकन का नाम सुना है? भाषण की बदौलत अमेरिका के राष्ट्रपति बन गए। जंगल में जाकर पेड़ों को सुनाकर बोलने का अभ्यास किया करते थे। आप भी नदी पार जंगल में जाइए।"

कई दिन के अभ्यास के बाद आज विद्रोही जी अपनी भाषण-कला का इम्तहान देने आए हैं। सुनकर पंडित जी खुश होते हैं- "बहुत बढ़िया। बहुत बढ़िया। क्या बुलन्द आवाज है! छोटा-मोटा सुधार करना होगा। बोलते समय हाथ भी उठाइए। चेतावनी की तरह तर्जनी भी दिखाइए। दाएँ-बाएँ देखते भी रहिए। ... और यह जो बोले- 'जलेंगे हर बरस मेले!' ऐसा नहीं, 'लगेंगे हर बरस मेले', कहा जाता है।"

"लेकिन मेले में रावण जलता तो है।"

"रावण जलेगा, लेकिन मेला लगेगा।"

विद्रोही जी स्वीकार में सिर हिलाते हैं।

"और 'वे सुनकर कूद उठे' नहीं, 'कूद पड़े' या 'उछल पड़े'।"

"लेकिन कूदने पर तो आदमी ऊपर उठेगा ही उठेगा। 'कूद पड़े' कहने पर तो लगता है कि कूदते ही गिर पड़ा।"

"गिरे चाहे पड़े, लेकिन बोलना वही पड़ेगा जो बोलने की परम्परा है।"

पंडित जी की आवाज में क्रोध का रंग झलका। विद्रोही जी उनका स्वभाव जानते हैं, इसलिए फौरन स्वीकार में सिर हिला दिया।

"और सुनो, तुमने कहा- उनके साथ सिर्फ कुछ चन्द्र लोग हैं। यहाँ 'चन्द्र' नहीं, 'चन्द' होगा, जिसका मतलब गिने-चुने या थोड़े होता है। चन्द्र का मतलब तो चन्द्रमा हुआ। 'कुछ' और 'चन्द' दोनों साथ नहीं बोले जाएँगे। दोहराव हो जाएगा।"

विद्रोही जी सिर हिलाकर समझने की कोशिश कर रहे हैं।

"हम अपनी मेजारिटी प्रूफ कर देंगे नहीं, 'प्रूव' कर देंगे, कहना होगा। एक जगह कहा- 'छत्रधारी हम तुम्हारा मटियामेट मिटा देंगे।' यह भी गलत है।"

"गलत नहीं, सही कह रहा हूँ। मिटाकर रहूँगा।"

"जरूर मिटाइए। मैं मना थोड़े कर रहा हूँ, लेकिन मटियामेट के साथ नहीं। ऐसे कहिए कि 'छत्रधारी, मैं तुम्हारा मटियामेट कर दूँगा।"

"और एक जगह कहा, 'क्या हम इतने गए-गुजरे भी नहीं हैं कि...।' ऐसा कहने से तो पूरा अर्थ ही उलट गया। इसमें 'क्या' की क्या जरूरत है? कहिए कि 'हम इतने गए-गुजरे भी नहीं हैं कि...'"

"इसका मतलब बहुत गलत बोल गए। और कोई गलती?"

"बस, एक चीज और। तुमने कहा- 'विधायक जी का ड्राइवर अपनी गाड़ी पीछे बैक करने' लगा। इसमें 'पीछे' और 'बैक' दोनों एक साथ नहीं कहेंगे। या तो कहो, पीछे करने लगा या बैक करने लगा।"

"अब बस करिए, पंडी जी।" विद्रोही जी ने हाथ जोड़ दिए - "नहीं तो पहले दिन ही मेरी हिम्मत टूट जाएगी।"

अगम बहै दरियाव

"बस, एक चीज और जान लो। जरूरी है। तुम जो बोले कि उस दिन मेरे सिर में बहुत 'हेडेक' हो रहा था, यह भी गलत है।"

"गलत नहीं पंडी जी, यह तो एकदम सच्ची बात है। उस दिन..."

"सुनो तो। हेडेक तो कहते ही हैं सिर दर्द को। पैर में थोड़े हेडेक हो सकता है। या तो कहो मुझे सिरदर्द था या कहो हेडेक था।"

लौटते हुए विद्रोही जी सोच रहे हैं- 'एक ही भाषण में इतना लफड़ा। सही-गलत के चक्कर में पड़ना ही गलत है।'

मास्टर जी जंगू की क्लास ले रहे हैं-"पाप, अन्याय या अत्याचार करने के लिए मन मजबूत किया जा सके और धोखा देते, ठगी करते, हत्या या बलात्कार करते हुए अपनी आत्मा खुद को ही धिक्कारने न लगे इसके लिए उन लोगों ने पूरी तैयारी की है। अपने भगवान, अपने देवता और अपने पूर्वज ऋषि-मुनियों को बलात्कारी, हिंसक, ठग और धोखेबाज बनाया है। वे कभी बाभन बनकर ठगते हैं, कभी साधू बनकर तो कभी मोहिनी सुन्दरी बनकर। जब इनके भगवान, देवता और ऋषि-मुनि ही ऐसे हैं तो इनको पूजने वालों को ऐसा बनने में पाप-बोध क्यों होने लगा? जब इनके आराध्य को ही ऐसा करते हुए कोई शर्म या डर महसूस नहीं होता तो इन्हें क्यों महसूस होगा? तभी तो जो इनके खेतों में काम करते हैं, जो इनके लिए अन्न उपजाते हैं, उन्हीं की बहन-बेटियों को भोगना आज भी ये अपना विशेषाधिकार समझते हैं। दलित टोला को ये ससुराल टोला कहते हैं।"

"इनके द्वारा कल्पित ऋषि-मुनि अपने राजा तक को डराकर रखते हैं। उन्हीं के महल में अतिथि बनकर उन्हीं की कुँवारी कन्याओं को गर्भवती करते रहे हैं। कौरव-पांडव का नाम तो सुना होगा। राजा लोग थे। पांडवों की माता का नाम कुन्ती था। वे भी राजा की बेटी थीं। जब वे कुँवारी थीं तभी किसी ऐसे ही कुकर्मी ने उन्हें गर्भवती कर दिया और प्रचार कर दिया गया कि यह सूर्य की करतूत है। सोचो, आग का गोला सूर्य! ये कितनी लन्तरानी हाँक सकते हैं इसकी कोई सीमा नहीं है।"

"इनके कल्पित देवता इतने जालिम और लँगोट के कच्चे हैं कि अपनी सगी बेटी और गुरुआनी तक के साथ बलात्कार कर देते हैं। तब इन्हें दूसरों की बहन-बेटियों के साथ ऐसा करते कितनी देर लगेगी? इसीलिए रोज किसी-न-किसी दलित,

गरीब या कमजोर की बहन-बेटी इनका शिकार बनती है। इन्होंने दलित जातियों पर जितना अत्याचार किया है उसके लिए इन्हें शर्म से डूब मरना चाहिए। लेकिन इनकी सोच अब भी नहीं बदल रही है।"

"इस देश में इतना भ्रष्टाचार, इतनी घूसखोरी क्यों है? क्योंकि इन्होंने अपने कल्पित भगवान को ही घूसखोर बना दिया है। उन्हें पूड़ी-मिठाई खिलाकर और भेंट-पूजा चढ़ाकर अपने दुश्मन का सत्यानाश करने के लिए उकसाते रहते हैं।"

"विदेशियों ने यहाँ की लड़ाइयाँ जितनी लड़कर नहीं जीतीं, उससे कई गुना ज्यादा घूस देकर, गद्दारी करवाकर जीतीं। रोज देखने को मिलता है कि बड़े नेता पैसे या पद की लालच में कैसे पलक झपकते इस पार्टी से उस पार्टी में छलाँग लगा जाते हैं। ऐसा करते हुए न उन्हें कोई शर्मिंदगी महसूस होती है न उनके समर्थकों को, क्योंकि ऐसी गद्दारी के लिए उनके मानस को हजारों साल से अनुकूलित किया गया है। गद्दारी करने और घूस खाकर पाला बदलने में ये लोग शायद दुनिया में नम्बर एक पर होंगे।"

"इनकी सबसे नायाब व्यवस्था तो यह है कि जघन्य से जघन्य पाप या अपराध है कि जघ करिए और किसी नदी में स्नान करके, किसी मंत्र या स्तोत्र का जाप करके या ब्राह्मणों को भोजन कराकर पाप मुक्त हो जाइए।

"एक कथावाचक एक चौपाई सुना रहे थे। वह चौपाई मुझे बहुत खास लगी तो नोट कर लिया। उस चौपाई में इनके भगवान कहते हैं -

सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं।
जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं ॥

यानी भगवान की शरण में जाते ही, सिर्फ एक जन्म के नहीं, करोड़ों जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं।"

अब बताइए कि पाप या अपराध करने के लिए इससे बड़ा प्रोत्साहन या उकसावा दूसरा हो सकता है क्या? तब क्यों न हमारा समाज ऐसा बनता जैसा आज है?

"यह तो कहिए कि इस देश में अंग्रेज आ गए तो हम जैसे जुगों-जुगों से दबे-कुचले लोगों को आदमी माना जाने लगा। वरना क्या छोड़ा था इन्होंने हमारे पास! न धन-दौलत रख सकते थे, न पढ़-लिख सकते थे। जानवर बनकर रहते थे। कहते हैं कि अंग्रेज देश की दौलत लूट रहे थे इसलिए उन्हें भगाना जरूरी था। लेकिन कौन-सी दौलत? वही जो हम गैर-सवर्णों से इन लोगों ने हजारों साल में लूटी थी। उसका लूटा जाना हमें क्यों अखरता? हमें तो उलटे अच्छा ही लगेगा कि जो हमें लूटकर कंगाल किये थे अब वे खुद कंगाल हो रहे हैं। अंग्रेजों ने 1795 में कानून बनाकर हमें धन-सम्पत्ति रखने का अधिकार दिया। 1813 में कानून बनाकर पढ़ने-

अगम बहै दरियाव

लिखने का अधिकार दिया। पहले ब्राह्मण अवध्य होता था और शूद्र को मामूली अपराध के लिए भी अंग-भंग की सजा दी जाती थी। 1860 में समान दंड संहिता बनाकर इससे मुक्ति दिलाई और भी जाने क्या-क्या दिया। समझिए कि हमें जानवर से फिर आदमी बनाने की शुरुआत की। उनका हम लोगों पर यह मामूली उपकार नहीं है। अफसोस यही है कि वे देर से आए और जल्दी चले गए। और सौ साल तक रह जाते तो हमारे जैसे लोगों का और भला कर जाते। हमारे लिए और राहें खोल जाते। अब तो डर लगने लगा है कि कहीं यह वर्णवादी मनुवादी विचारधारा हमारे संविधान को ही न निगल ले।"

"लेकिन नेताजी तो ऊँची जाति के थे जो दलित-मजदूरों की ओर से लड़ रहे थे।" "सही कह रहे हो। ऐसे लोग हैं और वे हमारे लिए हमारी जान से भी ज्यादा कीमती हैं लेकिन उनकी संख्या बहुत कम है और ज्यादातर उनका वही हश्र होता है जो हमारे नेताजी का हुआ।"

विद्रोहियों ने सरदारी जीत ली।

आसानी से नहीं जीते। छत्रधारी ने अच्छी टक्कर दी। पाँड़े परिवार पहले से अन्दरखाने विद्रोही के पक्ष में था। माठा बाबा ने भी बाँह गहे का धरम निभाया। उनके प्रयास से पोलिंग से एक दिन पहले ब्राह्मण विद्रोही के पक्ष में एकजुट हो गए और विद्रोही तीन सौ तिरपन के मुकाबले तीन सौ पचासी वोट पाकर विजयी रहे। विद्रोही जी के दुआर पर देर तक गोले दगते रहे। छुरछुरिया-अनार छूटते रहे। विद्रोही को माला से लादकर उनके समर्थक उन्हें कन्धे पर बैठाकर नाचते रहे। विधायक जी भी देर रात दल-बल के साथ बधाई देने आए। पीठ ठोंकी। इस समय भूतपूर्व हैं, लेकिन चुनाव के आसार बन रहे हैं। विद्रोही जी से अपना साथ देने का वादा लेकर गए।

विद्रोही जी ने सारे गाँव के सामने साफ कर दिया - "सारे गाँव ने मिलकर परधान बनाया है। मैं सारे गाँव को साथ लेकर चलूँगा। सारे गाँव का काम करूँगा।" छत्रधारी हँसे। बोले-" काम तो तब करेंगे जब मैं करने दूँगा। बुधई से जाकर कह देना-जीत भले गए हैं लेकिन परधानी नहीं करने पाएँगे।"

सुनकर लोग हँसे - "जैसे इनके बाप की है परधानी! "

चार्ज देने में दो महीने तक हीला-हवाली की छत्रधारी ने।

जीत का जश्न खत्म भी नहीं हो पाया था कि बैताली ने उनके हाथ में एक कागज पकड़ाया। बताया कि वह सुल्ताना का किला देखने नजीबाबाद गया था। लौटा तो 'छोटकी' ने यह कागज दिया। बताया कि तहसील का एक आदमी दे गया है।

विद्रोही जी ने पढ़कर बताया- "तुम्हारे साथ भी दगाबाजी कर गए छत्रधारी। दफा 122बी का मुकदमा कायम करवा दिया जाते-जाते। यानी ग्राम समाज की जमीन पर अवैध कब्जा करने का मुकदमा। लगता है उनको विश्वास हो गया कि इस बार तुमने उनको वोट नहीं दिया।"

"लेकिन मुझसे तो इसी जमीन का पट्टा करने के लिए दस साल पहले पाँच हजार ले चुके हैं। जब भी मैंने उन्हें पट्टे की याद दिलाई, हमेशा हँसकर कहा कि मेरे रहते चिन्ता क्यों करते हो। तीन हजार बाद में भी लिये। और अब यह नोटिस!" विद्रोही जी ने बैताली को आश्वस्त किया-" अब मैं हूँ न। सब ठीक कर दूँगा।" विद्रोही लेखपाल से पूछते हैं- "सड़क के किनारे कोई साफ-सुथरी जमीन बताइए। कोई टंटा न हो। बाबा साहब की मूर्ति लगवानी है।"

कुछ न समझते हुए लेखपाल पूछता है-"अपने बाबाजी की मूर्ति लगाना चाहते हैं कि किसी साधू बाबा की?"

"नहीं भाई, बाबा साहब अम्बेडकर की मूर्ति।"

"अभी से फालतू के चक्कर में क्यों पड़ गए?" लेखपाल समझाने लगा-"आदमी पहले अपने लिए सोचता है कि फालतू के काम... पहले दो-चार पट्टा ऐसे लोगों को दीजिए जहाँ से हाथ में दो पैसा आवै।"

"नहीं, नहीं। मैंने वादा किया है।"

लेखपाल ने तजवीज कर, दो दिन बाद बताया- "है तो सवा बिस्वा का एक टुकड़ा। सड़क के किनारे ही है।"

"ठीक है। उसी का प्रस्ताव बनाते हैं।"

और महीने भर बाद उन्होंने तूफानी को बताया- " बाबा साहब के लिए जमीन आबंटित हो रही है। मूर्ति का इन्तजाम कर लो।"

"अरे चाचा, मूर्ति का इन्तजाम भी आपको ही करना पड़ेगा। बाबा साहब अकेले हमीं लोगों के थोड़े हैं। आपके भी उतने ही सगे हैं। पूरे गाँव, पूरे देश के सगे हैं।"

सच बात तो यह है कि विद्रोही खुद भी बाबा साहब के बारे में ज्यादा नहीं जानते। लेकिन स्वीकार में सिर हिलाते हैं-" सही बात, सही बात।"

और पाँच सौ का नोट देते हुए कहते हैं- " जाकर मूर्ति का बयाना दे आओ।"

अगम बहै दरियाव

बैरक का कोई कैदी खाना नहीं खा रहा है। सत्रह वर्ष जेल काटने के बाद आज शौकत अली बाइज्जत बरी कर दिये गए। उन पर कचहरी में बम फोड़ने का आरोप सिद्ध नहीं हुआ। शाम को फैसले की जानकारी बैरक में आई तो लोग खुशी का इजहार करने लगे। शौकत अली को घेर लिया। 'रिहाई मुबारक' का शोर मच गया।

लेकिन शौकत जहाँ बैठे थे वहीं बैठे रह गए। गुमसुम।

जेल की दुनिया में हर दिल अजीज थे शौकत। हँसते-हँसाते रहने वाले। उनके पास लोट-पोट कर देने वाले किस्सों का खजाना था। वे जेल की जरूरत भी बन गए थे। बिजली का काम, प्लंबिंग का काम, गंडा-ताबीज देकर दुखिया का दुख घटाने का काम। वे तो भूल ही गए थे कि जेल के बाहर भी उनकी कोई दुनिया है। बड़ी देर बाद उनके अन्दर की बर्फ पिघली तो आँखें बरसने लगीं। फूट-फूट कर रोने लगे। रोते ही रहे।

"खुश होने के बजाय रो क्यों रहे हो?"

"किस बात के लिए खुश होऊँ भाई? इसलिए कि बरी होने के पहले मैं उस जुर्म से ज्यादा की सजा काट चुका जो मैंने किया ही नहीं। पूरी तरह मूँछें नहीं उगी थीं जब जेल में दाखिल हुआ था। चार-चार बार मेरी जमानत अर्जी खारिज हुई। अब बाहर जा रहा हूँ तो दाढ़ी-मूँछ के बाल पूरी तरह पक चुके हैं। गंजा हो चुका हूँ। माँ-बाप मर चुके हैं। जेल आने के छह महीने पहले शादी हुई थी। चार साल तक इन्तजार करने के बाद बीवी ने दूसरा शौहर कर लिया। अब छूटकर किस घर जाऊँ? अदालत ने इज्जत तो लौटा दी, जवानी कौन लौटाएगा? मेरी खोई हुई दुनिया कौन वापस करेगा?"

शौकत का कलपना देखकर पूरी बैरक का माहौल गमगीन हो गया है।

जंगू गोबरधन से पूछता है-" जिनके जि-मे फैसला देना है वे इतने सुस्त क्यों हैं?" "अपने यहाँ कानून लागू करने की शुरुआत गरीब से और न्याय देने की शुरुआत अमीर से होती है। शौकत अमीर होता तो कब का छूट जाता और ऊँची जाति का हिन्दू होता तो फर्जी केस में फँसाया ही न गया होता।"

"तो जिन्होंने बेकसूर आदमी को फंसाया था उनको अब सजा होगी?" "उनको सजा होती तो इस समय जेल के आधे सजायाफ्ता पुलिस वाले ही होते। सरकार सबसे बड़ी अन्यायी है। सबसे बड़ी अन्यायी और सबसे ज्यादा ताकतवर।

जो उसके लिए काम करता है उसका सात खून माफ रहता है।"

"जहाँ इतना अन्याय है उसके लिए स्कूल में क्यों गाया जाता है- 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा।' "

"कुछ लोगों के लिए यह हिन्दोस्ताँ सचमुच सारे जहाँ से अच्छा है, लेकिन सबके लिए नहीं। सरकारों की जिम्मेदारी है कि सब सुख-शान्ति से रहें, लेकिन सुख और शान्ति का बँटवारा कर दिया गया है। वे सुख से बाहर रह सकें इसके लिए हम जैसे लोगों को शान्ति से रहने के लिए अन्दर कर दिया जाता है।"

एक बूढ़ा कैदी कहता है- "देखो भइया, सही बात तो यह है कि कमजोर लोगों के लिए बाहर की दुनिया भी जेलखाना ही है। इसलिए कमजोर बाहर की जेल में रहे या अन्दर की, बात एक ही है।"

"नहीं दादा, एक अन्तर है।" जंगू कहता है-" अन्दर की जेल में हम अपनी मरजी नहीं चला सकते लेकिन बाहर की दुनिया में चला सकते हैं।"

"जाना तो चलाकर देखना। अव्वल तो ऊपर भेज दिये भेज दिये जाओगे। बच गए तो फिर लौटकर यहीं आओगे।"

तरसै जियरा मोर राम तरसै जियरा मोर बालम मोरा लरिकवा...

विद्रोही जी के दुआर पर फगुआ जमा है। होली नजदीक है। खेती-बारी का काम निबटाकर फगुआ शुरू होता है तो बारह बजे रात तक ढोल तड़तड़ाती है। ढोलक की थाप बीमार आदमी के मन में भी थिरकन पैदा कर देती है। पहले गाँव में फगुआ की एक ही गोल थी। वे खास-खास लोगों के दरवाजे पर जाकर गाते और पान-सुपारी खाते। ठंडाई पीते। नशा बढ़ाने के लिए ठंडाई में ताँबे का पैसा रगड़कर या धतूरे का बीज पीसकर डाला जाता। किसी-किसी को भाँग का नशा इतना चढ़ता कि दो-तीन दिन तक न उतरता।

कुछ वर्षों से सवर्णों और पिछड़ों की अलग गोल बन गई है। दलित पहले भी श्रोता की भूमिका में थे, अब भी श्रोता की भूमिका में हैं।

अगम बहै दरियाव

मुकदमेबाजी में फँसने के पहले संतोखी फगुआ भी अच्छा गाते थे और ढोलक भी मस्त बजाते थे। फिर सब छोड़ दिया था। आज विद्रोही जी ने उन्हें बुलाकर ललकारा- "हर अदालत से जीतते जा रहे हो तब क्यों मुरझाये रहते हो। लो, पान खाकर मुँह लाल करो और ढोलक सँभालो।"

छत्रधारी को हराकर परधानी सँभाला है विद्रोही ने। बहुत उत्साह में हैं। जो जितनी चाहे ठंडाई पिये या भाँग की गोली खाए। कोई रोक-टोक नहीं।

विद्रोही जी की मनुहार भला संतोखी कैसे नजरअन्दाज कर दें। उनकी उँगलियाँ ढोलक पर थिरक रही हैं-

बूढ़े मरद संगे हम न सुतबै बिना मरद बरु जीबै हो।

जो जहाँ है वहीं इस बोल पर झूम रहा है। ढोलक की ठनक पूरे गाँव के कान में मधुरिमा घोल रही है। अचानक हल्ला होता है - आग ! आग ! दौड़ो।

गाने वाली गोल को सबसे बाद में पता चलता है। तब तक आधा गाँव बाल्टी, गगरा लेकर आग बुझाने में जुट गया था। आग संतोखी के घर में लगी थी। फूस का ओसारा जल चुका था। काठ के किवाड़ जल रहे थे। आग खपरैल के टोटे को पकड़ चुकी थी। संतोखी भी दौड़कर पहुँचे और आग की विकरालता देख ठिठक गए। न रोये, न चिल्लाए, न आग बुझाने में जुटे। उन्हें इस बात का संतोष था कि उनकी पत्नी दो दिन पहले अपनी माँ की तेरही में शामिल होने मायके चली गई थीं।

"लेकिन आग लगी कैसे?"

छत्रधारी का हलवाहा महादेव आगे बढ़ आया। उसके हाथ में लोटा था। बोला- "मैं लोटा लेकर दिशा-मैदान के लिए आया था। अभी लोटा जमीन पर रखकर धोती की काँछ खोल ही रहा था कि संतोखी के ओसारे पर आग की लपट दिखाई पड़ी। मैं गोहार लगाता हुआ दौड़ा।"

"किसी को देखा नहीं? आखिर आग अपने आप तो लगी न होगी?"

महादेव चुप हो गया। नीचे देखने लगा।

"बोलो। चुप क्यों हो गए?"

"अब क्या बोलूँ? रँगे हाथ तो पकड़ नहीं पाया। नया लौंडा था। हाथ में आते-आते सड़ से निकल गया।"

"चेहरा तो देखा होगा? टह-टह चाँदनी फैली हुई है।" पीछे से छत्रधारी के भाई करिया सिंह की आवाज आई- " पहचाना है तो बेधड़क बता। आगजनी तो गोहत्या से भी बड़ा पाप है। कोढ़ फूटता है।"

"मैं गरीब आदमी हूँ, लम्मरदार। किसी से दुश्मनी नहीं लेना चाहता।"

करिया सिंह ने लपककर महादेव के गाल पर एक झापड़ मारा, "ऐसा कौन है गाँव में जो हम लोगों के रहते तुझसे दुश्मनी साधेगा? हम लोग मिलकर उसका घर नहीं फूंक देंगे। माना कि संतोखी से हमारे खानदान की मुकदमेबाजी है, लेकिन है तो वह हमारे गाँव का। आज उसका घर फूँका है तो कल किसी दूसरे का भी फूंका जा सकता है। बेधड़क बोल!"

"मुझे तो लगा जैसे बोधा भाई का बड़ा लड़का है।"

"यह झूठ है।" संतोखी तड़पे और महादेव के सामने आकर पूछा- "तुम आधा गाँव पार करके इधर दिशा-मैदान के लिए कैसे आ गए? और तो कभी नहीं आते?"

"इधर आने की मनाही है का? देखो, लोटा अभी तक हमारे हाथ में है।"

"मनाही तो नहीं है लेकिन..." सहसा संतोखी ने महादेव के हाथ से लोटा ले लिया।

15

"माथा बाबा, चोर के दीपक की रोशनी बाल्टी में मारो।"

लोटे में झाँकने के साथ संतोखी चिल्लाए -" जरा देखो पंचो; बाबा, आप भी देखिए, सब लोग देखिए। कहते हैं कि इधर लोटा लेकर दिशा-मैदान के लिए आए थे। सब लोग दिशा-मैदान जाते हैं पानी लेकर और महादेव आए थे आग लेकर। देखिए आप लोग। राख अभी तक लोटे के पेंदे में दिख रही है।"

राकर बाला राख महादेव घबराकर बोला- " राख तो मैंने अभी यहीं लोटे में डाला है। लोटा मटियाने के लिए।"

"सुनो पंचो, मेरे जले ओसारे की राख फूस की है। इसको इसमें उपले की राख कहाँ से मिल गई? देखिए लोटे में। माठा बाबा, जरा फिर लैट मारिए... देखिए आप लोग। उपले की राख और वह भी सूखी। सौंचने के बाद लोटे में राख डाली गई होती तो कुछ न कुछ राख गीली होकर पेंदी में चिपकती कि नहीं? देख लीजिए सब लोग।"

संतोखी घूम-घूम कर टॉर्च की रोशनी में लोटा दिखाने लगे।

लोग अवाक् ।

"एक बात पर और गौर कीजिए। सारी दुनिया लोटा मटियाती है निबटान के बाद और ये मटियाते हैं निबटान के पहले। अभी आप लोगों के सामने इसने कहा कि लोटा जमीन पर रखकर धोती की काँछ खोल रहा था तो लपट देखा और गोहार लगाते हुए दौड़ा। मतलब कि ये निबटान के लिए धोती भी नहीं खोल पाए थे। निबटान तो पीछे छूट गया और ये लोटा लेकर दौड़े। सौंचने की तो नौबत ही नहीं आई तो लोटा मटियाने की जरूरत क्यों पड़ गई? और सौंचे तो ऐसा

सौंचे कि लोटे में पानी की बूँद तक नहीं बची, पेंदी का गीलापन तक सूख गया। तभी तो उसमें डाली गई राख सूखी की सूखी रह गई। अब क्या जानना-पूछना बाकी रहा?"

इस बीच करिया सिंह कब खिसक गए, कोई देख नहीं पाया। महादेव खिसकने लगा तो लोगों ने घेर लिया -"पकड़ो साले को।"

"पेड़ से बाँधो। मुँह में कालिख पोतकर सबेरे गाँव-भर में घुमाया जाए।" संतोखी बोले-" नहीं भाई, नहीं। यह तो ढेला है। ढेला कूटने से क्या मिलेगा? आगे किसी का घर न जले, इसके लिए उस हाथ को पहचानना जरूरी है जिसने यह ढेला चलाया। जिसने एक तीर से दो शिकार करना चाहा। मेरा घर भी फुकवाया और हमारे हितुआ, हारे-गाढ़े हमारी मदद करने वाले विद्रोही जी के लड़के का नाम लेकर उनसे बिगाड़ करा देने की तिकड़म भी लगाया।"

फिर तनिक रुककर बोले- "महादेव को छोड़ दीजिए। सारी गलती तो हम लोगों की है। हम इतने नासमझ हैं कि शातिर लोग ढेला बना लेते हैं।" आसानी से हमें अपना

धवल वकील साहब सीतारा सीताराम की सेवा-टहल से खुश थे। कहते थे, मुझे बाहर निकलने दो। मैं तुम दोनों की जमानत करा दूँगा। जब धवल साहब को बाहर निकले महीने-भर हो गया और असलम दोनों भाइयों की जमानत भी हो गई तो सीताराम निराश हो गए। उन्होंने सोच लिया कि अपने कपड़े-लत्ते धुलवाने और सिर में चम्पी कराने के लिए ही वकील साहब उसे जमानत कराने का चारा दिया करते थे। कोई और तो बाहर उनकी पैरवी करने वाला है नहीं। अन्दर ही सड़ना होगा।

पर उसका सोचना गलत निकला। बाहर जाने के दो महीने के अन्दर उन्होंने मामा-भानजे की जमानत करा ली। बड़े लोगों की सोच भी बड़ी होती है।

जेल से बाहर निकलते हुए जंगू भावुक और उदास था। विक्रम, शेरू, बिरजू जगेसर, पहाड़ी-समझिए पूरा परिवार ही बस गया था जेल के अन्दर। गोवर्धन से गले लगते हुए जंगू के आँसू बह चले।

"फिर मिलेंगे।"

कुछ भी हो, रहेगा तो चमार ही

मिशन के काम में भूत की तरह लगा है तूफानी। चार-साढ़े चार बजे कचहरी से निकलने के बाद आधी रात तक सिर्फ पार्टी का काम। चार-पाँच नाट्य-मंडलियाँ बनाकर बाबा साहब और मान्यवर का सन्देश गाँव-गाँव पहुँचाता है। इसके लिए खुद ही छोटे-छोटे नाटक लिखे हैं जो आधे घंटे में खेले जा सकते हैं। इनमें दलित समुदाय के विरुद्ध होने वाले अत्याचारों को विषय बनाकर अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध संगठित होने और प्रतिरोध के लिए आगे आने का आह्वान किया जाता है। इन नाटकों की भाषा इतनी बेधक, संवाद इतने मुखर और सन्देश इतना उत्तेजित करने वाला होता है कि सवर्ण और दलित समुदाय के बीच अक्सर मारपीट की नौबत आ जाती है। पार्टी के झंडे-पताके नोचकर फेंक दिये जाते हैं। पर्चे फाड़ दिये जाते हैं। दीवार पर लिखे नारों पर कोलतार पोत दिया जाता है।

इसलिए इधर ज्यादा जोर गोपन बौद्धिक क्लास पर दिया गया है। तूफानी अपने दो-चार साथियों के साथ किसी दलित टोले में शाम को अँधेरा होने के बाद पहुँचता है। इनके खाने के लिए टोले के हर घर से एक-एक रोटी आती है। टोले के लोग एक जगह इकट्ठा होते हैं। इन्हें राजनैतिक रूप से जागरूक किया जाता है। सवर्ण समाज को इसकी भनक नहीं लगने पाती। सुबह होने से पहले सब अपने-अपने रास्ते चले जाते हैं। लगने

... मान्यवर का कहना है कि शिक्षित बनो, संगठित बनो। संगठित होने से सत्ता मिलेगी। तब, जो लोग आज आपसे लात-जूते से नीचे बात नहीं करते वही आपके जूते के फीते खोलने के लिए लपकेंगे।

क्लास की समाप्ति पर उद्बोधन गीत होता है-

राजनीति अब समुझे औ समुझावै का परी।
बहुजन फँसल बाटें जाल मा, छोड़ावे का परी ॥

गीत के बाद प्रतिज्ञा-तूफानी खड़ा होकर पढ़ता है और सब दोहराते हैं-

"मैं ब्रह्मा-विष्णु-महेश में कोई विश्वास नहीं करूँगा।

"मैं राम और कृष्ण में कोई आस्था नहीं रखूँगा।

"...और न ही उनकी पूजा करूँगा।

"मैं गौरी गणपति और हिन्दुओं के अन्य देवी-देवताओं में आस्था नहीं रखूँगा।

"...और न ही उनकी पूजा करूँगा।

अगम बहै दरियाव

"मैं भगवान के अवतार में विश्वास नहीं..."

तभी शोर हुआ और एक भीड़ गाली देती दौड़ती हुई आई और डंडे भाँजते हुए ललकारा-"रुको, ससुरो। जूते का फीता तो जब खोलेंगे, तब खोलेंगे। पहले तो तुम्हारी खोपड़ी खोलेंगे, हरामजादो!"

जरूर क्लास में कोई भेदिया रहा होगा जिसने जूते का फीता खोलने की बात बाहर पहुँचाई।

डंडे पड़ने लगे। अँधेरे में जिसको जिधर राह सूझी, भागा। कई लोगों की खोपड़ी फूटी। तूफानी भागते-भागते एक सूखे कुएँ में गिर पड़ा। अच्छा हुआ, गिर पड़ा। दम साधे पड़ा रहा। मारे जाने से बच गया।

कलाई में फ्रैक्चर हो गया था इसलिए महीने भर गले में पट्टा लटकाए घूमना पड़ा।

उस दिन भी थानेदार नहीं मिले, लेकिन थानेदारिन मिल गईं। दरअसल, थानेदार की गाय रँभा रही थी। चुप होने का नाम नहीं ले रही थी। संतोखी से देखा नहीं गया। थानेदारिन को बताने चले गए कि गाय गरम है इसे क्रास करा दीजिए।

थानेदारिन के चेहरे पर थोड़ी शर्म की लाली फैली।

बोलीं- "समझ रही हूँ। कल से चोंकड़ रही है। सुई से दो-दो बार क्रास करा चुके, नहीं ठहरी। अब साँड़ से कराना पड़ेगा, लेकिन भेजवाएँ किससे? साँड़ वाले ग्वाले को कहलवाया गया कि साँड़ को लेकर यहीं चले आओ, लेकिन उसका पैर टूटा है। 'ये' आज बाहर गए हैं।"

संतोखी को पता था कि आसपास एक ही कायदे का साँड़ है। अच्छी डील-डौल वाला और जवान। पड़ोस के गाँव के जोखू का। आसपास के गाँव वाले अपनी गाय उसी के पास बरदवाने ले जाते हैं। वह थोड़ी देर में ही काम निबटा देता है। लोगों को फुरसत मिल जाती है। जबकि दूसरे साँड़ कभी-कभी मामले को घंटों लटका देते हैं। असली काम छोड़कर चरने लगते हैं। जोखू के साँड़ की बस यही एक लत है कि जब तक जोखू उसे अपने हाथ से एक भेली गुड़ न खिला दें, वह गाय के नजदीक नहीं जाता।

एक दिन हुआ ऐसा कि सबेरे-सबेरे कोई अपनी गाय लेकर आया। जोखू ने साँड़ को खोल दिया, लेकिन गाय के पास जाने के बजाय वह अपनी जगह पर ही खड़ा रह गया। उस दिन संयोग से गुड़ खतम हो गया था। साँड़ गुड़ का इन्तजार कर रहा था। जोखू उसके नजदीक गया तो उसने गुस्से में सींग पर उठाकर जोखू को पटक दिया। कूल्हे की हड्डी टूट गई।

संतोखी खुशी-खुशी गाय को साँड़ के पास ले जाने को तैयार हो गए। थानेदारिन चाह लेंगी तो थानेदार साहब को उनकी रिपोर्ट लिखनी ही पड़ेगी।

थाने पर रहने वाली गाय जैसी होनी चाहिए, वैसी ही थी। हायल, मरकही और लापी। लेकिन संतोखी ने बाँस का डेढ़ हाथ का डैना उसके गले में पहनाकर काबू में किया और अकेले क्रास करा लाए।

थानेदारिन खुश हो गईं। बोलीं- " एक गिरहकट दो महीने से इसका चारा-पानी कर दिया करता था। अभी अपराध उन्मूलन पखवारा चला तो तुरन्त और किसी का इन्तजाम न हो पाने के चलते उसका चालान करना पड़ा। ऐसा नहीं हो सकता कि जब तक कोई नहीं मिलता, तुम ही इसे सँभाल दो?"

संतोखी का घर जल चुका था। उसकी मरम्मत नहीं करा सके और बरसात आ गई। मिट्टी की दीवार पानी की बौछार से कट-कट कर गिर रही थी। पत्नी और बेटा ससुराल में थे। अन्दर अन्दर छत्रधारी से डर भी लगता था। उनके खिलाफ रिपोर्ट भी लिखानी थी। संतोखी मान गए।

तब से थाने पर ही रह रहे हैं।

थाने की पुरानी खपरैल इमारत ढह गई थी। पीछे की ओर बनी कुछ रिहाइशी कोठरियों का खपरैल बचा रह गया था। उन्हीं में से बिना किवाड़ वाली एक कोठरी को संतोखी ने अपना आशियाना बनाया है। दरवाजे की जगह रस्सी के ऊपर धोती टाँग देते हैं तो एकान्त भी हो जाता है। ट्रांसफर पर जाने वाला एक सिपाही उनके लिए अपना तखत छोड़ गया है।

किस्बत उनके साथ ही है। थाने के स्टाफ, हवालातियों से मिलने आए मुलाकातियों, थाने के दलालों और मुखबिरों के बाल काटकर दो पैसा भी कमा लेते हैं।

थाने पर रहने से रोज नई-नई बातें पता चलती हैं। भाँति-भाँति के जुर्म, धोखे, फरेब और दरिंदगी। पता चलता है कि दुनिया किस तरह रसातल में जा रही है। यहाँ रहकर पता चलता है कि थानेदार की 'पावर' क्या होती है।

गाय और थानेदारिन का सहारा मिल गया है तो देर-सबेर छत्रधारी के खिलाफ 420 का मुकदमा दर्ज हो ही जाएगा।

अगम बहै दरियाव

अम्बेडकर बाबा की मूर्ति बनकर आ गई। लकड़ी के मजबूत चौखटे में पैक होकर आई है। विद्रोही ने अपना वादा पूरा किया। लेखपाल को बुलाकर मूर्ति के लिए आबंटित जमीन की पैमाइश करा दी।

आज तूफानी की अगुआई में दलित टोले के पाँच लड़के उस जमीन पर उगी घास-फूस की सफाई कर रहे हैं। पहले बाउंड्री और गेट बनेगा, फिर बीच में चबूतरा बनाकर मूर्ति की स्थापना होगी।

अचानक ठाकुर टोले के पाँच-छह लड़के लाठी लेकर शोर मचाते दौड़े आए। दलित टोले के लड़के फावड़ा उठाकर मुकाबले के लिए खड़े हो गए। तूफानी ने सिर के ऊपर फावड़ा तानकर ललकारा - " खबरदार! जिसको अपनी जान प्यारी न हो वही आगे बढ़े। मरेंगे तो मारकर मरेंगे।"

दलित टोले के दर्जनों आदमी-औरतें शोर मचाते हुए दौड़े। ठाकुर टोले के बुजुर्गों ने कुछ सयानों को अपने लड़कों के पीछे भेजा - "जाकर सँभालो। खून-खच्चर नहीं होना चाहिए। बाद में बहुत झेलना पड़ता है। डरा-धमकाकर जितना काम बने, बना लीजिए।"

"यह जमीन सैकड़ों साल से ठाकुरों के कब्जे में है। हमारे टोले का कोई गया-जगन्नाथ जी जाता है तो इसी जमीन पर पहला पिंडदान करता है। प्रथम ग्रास निकालता है। यहीं से सारे तीर्थयात्री बस में आरूढ़ होते हैं। इसी जमीन को बुधइया ने चोरी-चोरी पट्टा कर दिया ! हमारे टोले से सटी जमीन पर चमार की मूर्ति कैसे लग जाएगी?"

"चमार क्यों कहते हैं? वे हमारे संविधान-निर्माता हैं।"

"निर्माता है तो क्या? रहेगा तो चमार ही। बाभन तो नहीं हो जाएगा ! मूर्ति लग गई तो सबेरे उठकर उसी का मुँह देखना पड़ेगा। अपनी मूर्ति ले जाकर अपने टोले में लगाओ। मूर्ति ही लगानी होगी तो यहाँ महाराणा प्रताप की लगाएँगे।"

दलित टोले के बूढ़ों और औरतों को समझ में नहीं आ रहा है कि झगड़ा किस बात का है? किसकी मूर्ति लगा रहे हैं? उससे क्या मिलेगा? मूर्ति दूध देगी क्या? बारह-तेरह साल पहले ठाकुरों से लड़ाई हुई थी तो सारा टोला फूंक दिया गया था। टोले के पाँच लोग अभी तक सजा काट रहे हैं। फिर वही रार शुरू कर रहे हैं।

विद्रोही के विरोधियों ने कहना शुरू किया कि केवल दलितों का काम करने के लिए तो परधान बनाया नहीं गया।

हम लोगों ने किसी दूसरे गाँव के आदमी को वोट दिया है क्या?

जमीन विवादित करार देकर और फिर से जमीन की पैमाइश कराने का मुद्दा पेश करके लोगों ने झगड़ा शान्त करा दिया। ठाकुर टोले के लड़के जाते-जाते धमकी दे गए कि दुबारा इस जमीन पर पैर रखा तो पैर काटकर हाथ पर रख देंगे। अपने टोले के नौजवानों से घिरा तूफानी कह रहा है- " मूर्ति लगेगी तो यहीं लगेगी। डंके की चोट पर लगेगी। ये लोग बड़के लँड़ऊ हैं क्या जो हम डर जाएँगे!"

विद्रोही जी शाम को ब्लॉक की मीटिंग से लौटते हैं तो सारी बात सुनकर कहते हैं-" इन लोगों को असली जलन मुझसे है। मेरे हर काम का विरोध करना है। मूर्ति यहीं लगेगी। ऐसे नहीं लगने पाएगी तो पुलिस प्रोटेक्सन में लगेगी।"

ब्राह्मण और बनिया टोले को भी अम्बेडकर की मूर्ति का लगना पसन्द नहीं आया। बनिया टोला शंकर भगवान की मूर्ति लगाने के पक्ष में है और ब्राह्मण टोले के कुछ लोग परशुराम की। विद्रोही जी की चलती तो वे अपनी बिरादरी के उस लड़के की मूर्ति लगवाते जो सन् 1971 में बांग्ला देश की लड़ाई में शहीद हुआ था। अम्बेडकर की मूर्ति लगवाने के लिए तो पूरा देश पड़ा है। हजारों लगी हैं और हजारों आगे लगेंगी, लेकिन यह बात वे अपने मुँह से नहीं कह सकते।

स्वजातीय पूर्व विधायक जी ने विद्रोही जी को सलाह दी कि अभी कुछ दिन चुप बैठना ठीक होगा। आम चुनाव होने के आसार बन रहे हैं। देखना पड़ेगा कि किसका किसके साथ गठबन्धन हो रहा है। मनमाफिक सरकार आ गई तो मामला दो घंटे में हल हो जाएगा। वैसे भी अब आपका फायदा मामले को हल करने के बजाय उसे लटकाकर रखने में है। दलितों और सवर्णों के बीच जितनी तल्खी बढ़ेगी, उतना ही आप फायदे में रहेंगे।

इस बार का चुनाव तो गजबै है! समझ में नहीं आ रहा है किसका हाथ पकड़ा जाए। इस गाँव का ठाकुर, बाभन टोला सदा से कांग्रेसी रहा है। सन् 1977 में छिटका था, फिर लौट आया। लेकिन इस

बार पेंच यह फँस गया है कि दिल्ली में ठाकुर राजा ने कांग्रेस से बगावत करके 'जनता दल' बना लिया है। उसी में ठाकुर, यादव, जाट, कुर्मी सभी घुस गए हैं। इस गाँव के लोगों को समझ में नहीं

अगम बहै दरियाव

आ रहा है कि ठाकुर और यादव जाति एक ही पक्ष से कैसे लड़ सकती हैं? तब लड़ाई का मजा ही क्या रहेगा?

ठाकुरों के बीच प्रचार हो गया है कि 'जनता दल' जीता तो प्रधानमंत्री की कुर्सी राजा को ही मिलेगी। अभी तक कभी कोई ठाकुर इस देश का प्रधानमंत्री नहीं बना। अब मौका आया है तो चूकना नहीं चाहिए। कहा गया है कि 'जिस देश-जाति में जन्म लिया, बलिदान उसी पर हो जाएँ।' यहाँ बलिदान नहीं देना, सिर्फ वोट देना है; और वह भी आड़ में। क्षत्रिय महासभा ने सारे ठाकुरों से 'जनता दल' के झंडे के नीचे इकट्ठा होने का आह्वान किया है। यह भी तय हुआ है कि हर ब्लॉक से एक दर्जन लोगों का जत्था अर्षने संसाधन से राजा के चुनाव क्षेत्र में उनके लिए प्रचार करने जाएगा।

जोर से बोलो-

राजा नहीं फकीर है। भारत की तकदीर है।

यादव गण धर्मसंकट में फँस गए हैं।

मुख्यमंत्री - "कहते हैं कि यही राजा जब थे तो चुन-चुन कर यादव डाकुओं का इनकाउंटर करवाए थे।"

जनता दल ने घोषणा की है कि सत्ता में आने पर वह मंडल आयोग की रिपोर्ट लागू करेगा। विद्रोही जी इतने दिन में जान गए हैं कि 'मंडल' का मिलना बहुत बड़ी बात है। कांग्रेस बहुत चालाक पार्टी है। कितने साल से मंडल आयोग की सिफारिश दबाए बैठी है। इस बार लागू न हुई तो कभी नहीं होगी। गाँव की जनता के लिए सांसद से ज्यादा काम की चीज विधायक होता है। सौ में नब्बे कामों के लिए उन्हीं की सिफारिश की जरूरत पड़ती है। लेकिन मंडल लागू करवाने के लिए दिल्ली में राजा की सरकार बनवाना भी जरूरी है। दिल्ली की गद्दी राजा को मिले और राजा मंडल लागू करें। असली समस्या विधायकी में आ रही है। पहले तो यहाँ से विधायकी का टिकट जनता दल ने पूर्व विधायक यादव को देने का मन बनाया था, लेकिन आखिरी समय में ठाकुर राजकुमार को मिल गया। अब पूर्व

विधायक यादव कांग्रेस के टिकट पर खड़े हो गए हैं। उन्हीं के लिए सन् 1977 में विद्रोही जी ने पोलिंग बूथ पर जान की बाजी लगाई थी। अब मुश्किल यह है कि पार्टी का दामन पकड़ते हैं तो जाति हाथ से छूटती है और जाति पकड़ते हैं तो पार्टी। वोट और बेटी जाति में देने का रिवाज रहा है। ठाकुर को जिताने का मतलब होगा, इलाके में फिर दो-चार कतल !

221

गाँव में वोट माँगने के लिए सबसे पहले ठाकुर राजकुमार ही आए - दलबल के साथ, और सबसे पहले विद्रोही जी के दरवाजे पर। उनके कन्धे पर हाथ रखकर बोले-" आपके रहते मुझे इस गाँव में आने की जरूरत ही नहीं है। मैं निश्चिन्त हूँ कि आप सब सँभाल लेंगे।"

अगले दिन ठीक यही बात कांग्रेसी यादव उम्मीदवार कहकर गए। उन्होंने अपनी पुरानी रिश्तेदारी की भी याद दिलाई, जिसका विद्रोही को आज तक पता ही नहीं था।

ब्राह्मणों को तय करना है कि बानर-भालुओं की सेना बटोरकर 'ब्राह्मणी' सत्ता को चुनौती दे रहे ठाकुरों का पिछलग्गू बनना कितना सही और कितना फायदेमन्द रहेगा।

दलितों के सामने कोई धर्मसंकट नहीं है। वे हमेशा कांग्रेस को ही वोट देते आए थे। इमरजेंसी की प्रताड़ना झेलने के बाद पहली बार छिटके। अब तो मान्यवर साहब ने खुद अपनी पार्टी खड़ी कर ली है - खास दलितों की पार्टी। फिर किसी और का पिछलग्गू बनने बनने की क्या जरूरत है?

तूफानी अब कचहरी में बहुत कम बैठ रहा है। है। पूरे पूरे समय पार्टी का काम देखता है। रोज कहीं-न-कहीं कार्यक्रम लगाए रहता है। उसकी लोकनाट्य मंडलियाँ जगह-जगह दलितों को जागरूक कर रही हैं। पहली बार उसी के मुँह से गाँव के दलितों ने नारा सुना -

तिलक तराजू औ' तलवार।
इनको मारो जूते चार।

"जूते मारने का मतलब सचमुच जूते मारना नहीं। इसका मतलब, इनको त्यागो। इनकी संगत मत करो। इनके बहकावे में मत आओ। अब खुद गद्दी पर बैठने का समय आ रहा है।"

खुद गद्दी पर बैठने का रोमांच ऐसा है कि इसके लिए कुछ भी किया जा सकता है।

"मान्यवर साहब के हाथ मजबूत करो।"

"हाथ नहीं, हाथी।"

अगम बहै दरियाव

पहलवानिन कई बार अपनी सास से आग्रह कर चुकी हैं कि वे किसी दिन अपने भागने का किस्सा सुनावें। कभी मनमाफिक फुरसत ही नहीं मिली। आज विद्रोही जी राजनीति का रंग-ढंग समझने राजधानी गए हैं। दोनों जनी फुरसत में हैं और नीम के नीचे बोरा बिछाकर बैठी पहलवानिन सास के सिर से जुआँ निकाल रही हैं। सास की पीठ पतोहू के आगे। पहलवानिन जुआँ पकड़कर सास की हथेली पर रखती हैं और वे उसे दोनों अँगूठों के नाखून के बीच दबाकर कुचल देती हैं।

पहलवानिन आज इसी शर्त पर सास के सिर से जुआँ निकालने को तैयार हुई हैं कि वे उन्हें अपने भागने का पूरा किस्सा सुनाएँगी।

"धत्। अब इस उमर में वह किस्सा!"

"उमर को अभी क्या हुआ है, अम्मा? आपके मुँह से सुनना अच्छा लगेगा। कैसे कर लीं इतनी हिम्मत?"

"हिम्मत क्या, नादानी कहो। वह उमर ही ऐसी होती है। तब और कुछ नहीं सूझता।"

"कहाँ भेंट हुई थी आप दोनों की?"

"मैं अपनी बुआ के घर गई थी। वहाँ भात (भोज) पड़ा था। पहले गया-जगन्नाथ जी का भात बहुत पड़ता था। लोग पितरों का तर्पण करने के लिए गया, जगन्नाथ जी या चारों धाम जाते और लौटकर बिरादरी को खिलाते। हजार-हजार लोगों को। चार-छह साल की कमाई भोज में खर्च कर देते। कर्ज तक लेकर खिलाते। फिर कई साल तक कर्ज भरते रहते।"

"तो बुआ के घर क्या हुआ?"

"हट्! बहुत अकुता रही हो।" कहते हुए वे तनिक मुस्कराईं- "बुआ के घर भोज के मौके पर फरवाही नाच हो रही थी। नाचने वाले थे यही तुम्हारे ससुर। तब इनका नाच इलाके में सरनाम था। खासकर अहीर और गड़ेरिया बिरादरी में। इनके बारे में मशहूर था कि मौके के अनुसार गीत की कड़ी तुरन्त गढ़कर गा देते हैं। जैसे ही लोगों को पता चलता कि फलाने गाँव में बोधा फरवाह की नाच हो रही है, भीड़ उमड़ पड़ती। धत्तेरे की... मैंने तो इनका नाम ले लिया! औरतों की भीड़ ज्यादा उमड़ती। बारहों बरन की औरतें। रोके से न रुकतीं। कहतीं- 'बोधा का नखरा न देखा तो कुछ न देखा।'

"फागुन बीतने वाला था। पाँच-छह दिन बाद होली थी। आम की घनी बाग में दुपहरिया में नगड़ची टंकारने लगी। दो-कछी धोती के ऊपर घुँघरू गुँथी जाँघिया चढ़ाए गोल घेरे में ठुमक ठुमक कर ये नाचने लगे। दोनों कन्धों से होकर एड़ी

तक लटकते दोनों नीले पट्टे फहराने लगे। नगड़ची और नगाड़ा मिलकर ताल लगाने लगे-

तघुड़ी घुड़ी मा... जाय।
तघुड़ी घुड़ी मा... जाय।

साथ में गूँजती बाँसुरी की टेर।

खासकर औरतों पर तो जैसे किसी ने मंतर मार दिया। सुध-बुध भूल गईं। जो कहते हैं न कि 'बंसी बाजी श्याम की, तीनि लोक गए मोहि।' तो मैं क्या तीन लोक से न्यारी थी? मैं औरतों के झुंड में अपनी सखी के साथ आगे ही बैठी थी। इनकी नई-नई उगी भूरी-काली नरम मूँछों के नीचे झरती मीठी मुस्कान और नगाड़े पर पड़ती चोट मेरे दिल की धड़कन बढ़ा रही थी। साथ में कलेजे के पार उतरती

रागिनी - 'केकर जिया मरबू चुनरिया रँगाइ के'- रँगी हुई चुनरी पहनकर किसकी जान मारना चाहती हो? - चुनरी पहनकर बैठी औरतें भीतर-भीतर पसौजने लगीं।"

"आप भी चुनरी पहने थीं?"

"नहीं, मैं पियरी पहने थी। तब औरतों के पहनने के लिए दो अंगुल चौड़ी किनारी वाली सफेद जनानी धोती आती थी जिसे घर में ही रंगकर पहना जाता था। आजकल की तरह छपैली साड़ी नहीं मिलती थी। पीले रंग में रँगी धोती पियरी कहलाती थी।

"...मुझे लग रहा था कि नाचते-गाते हुए वे मुझे ही देखते जा रहे हैं। मैं भी एकटक उन्हें देख रही थी।

"उन्होंने गाया -गाया

पियरी रँगाइउ आँखी कजरा लगाइउ
माथे बुनुकवा दइके नाऽऽ
लुटिया बोधा कै इमनवा
माथे बुनुकवा दइके नाऽऽ

पियरी मैंने पहन ही रखा था। आँखों में काजल लगा ही रखा था। माथे पर लाल रंग की बिन्दी भी लगी थी। जाहिर है कि यह गीत खास मेरे लिए ही गाया जा रहा था। तो क्या सचमुच मैंने इनका ईमान लूट लिया? हमारी आँखें कई बार मिलीं। मैं पसीने से भीग गई।"

"भीड़ इनाम देने लगी। किसी ने एक रुपया दिया, किसी ने दो। थोड़ी ही देर में पचासों रुपये झर गए।"

अगम बहै दरियाव

"आपने क्या दिया?"

"मैं क्या देती? मेरे पास तो चवन्नी भी न थी। और होती भी तो कैसे देती? मैं पद में उस गाँव की बेटी जो ठहरी। लेकिन मन में आया कि दौड़कर जाऊँ और उनका साँवला चेहरा अँजुरी में भरकर चूम लूँ।

उनके होंठों का लाल रंग मेरे होंठों में भी लग जाय। ...तब मेरी उमर ही क्या थी, सोलह-सत्रह साल। लरिकाई की बुद्धि। अगले एगहन में मेरा गौना जाने वाला था।"

"फिर?"

"फिर उन्होंने सुभद्रा-हरण का बिरहा शुरू किया। तभी पता चला कि सुभद्रा को अर्जुन ने नहीं भगाया था। वह खुद अर्जुन के साथ भागी थीं। अर्जुन के रथ के घोड़े वही हाँक रही थीं। तो क्या सुभद्रा की कथा मेरे लिए ही गाई जा रही है? क्या यही हैं मेरे अर्जुन?

"आधे घंटे के करीब दिन बाकी था जब सब भोजन के लिए उठे। नाच देखने वालों की भीड़ छितराने लगी। मैंने बगल में बैठी अपनी सखी से कहा- 'जैसे भी हो, इस फरवाह से मुझे मिलाने का जतन करो। कह दो कि झुटपुटा होते ही बाग के पश्चिमी सिरे पर कुएँ के पास मुझसे मिलें।'

"सन्देश सुनकर उन्होंने पूछा- 'मूँड़ कटवाने की नौबत तो नहीं आएगी?'

"मेरी सखी ने हँसकर पूछा-'क्या पूछा- मूँड़ कटवाने का इससे अच्छा मौका जिन्दगी में फिर मिलेगा?'

"वे मुस्करा दिए।

"कुएँ के छूहों की आड़ में मिलकर उनके रूप को आँखों से पीते हुए मैंने कहा-'मैं आप पर मोहित हूँ। आपके बिना नहीं जी सकती। आपके साथ भागने को तैयार हूँ।'

"वे कुछ देर खड़े सोचते रहे, फिर बोले-'अभी तो मेरे साथ कई लोग हैं। बाद में आऊँगा। कहाँ भेंट होगी?'

"मैं बुआ के घर आई हूँ। अभी तीन दिन रहूँगी। रोज सबेरे नदी की तराई में घास छीलने जाती हूँ।

"ठीक है। कल नहीं, परसों यानी बुधवार को पहर दिन चढ़े भेष बदलकर नदी के घाट पर आऊँगा। तुम वहीं मिलो।

"बुआ का गाँव एक ऊँचे टीले पर नदी के कंठ पर बसा है। आगे दस-बारह पोरसा (सत्तर-अस्सी फीट) नीचे दोनों किनारों पर तिराई और बीच में हँसिया की तरह मुड़कर बहती नदी। नदी का नाम है

मझुई। बरसात में इसका पानी पूरी तिराई में फैल जाता है। जाड़े में यह अपने पेटे में सिमट आती है। घाट पर जामुन का एक पुराना छतनार पेड़ था।

225

इसके सामने नदी कुछ उथली थी। यहीं से लोग नदी पार करते थे।

"उस दिन मै घाट के आसपास घास छीलते हुए रह-रह कर घाट की ओर ही देखती रही। कई मुसाफिर आए गए, लेकिन जिसका इन्तजार था वे नहीं दिखे। आएँगे कि नहीं? झूठा वादा कर गए क्या? मुझे रोना आ रहा था। मेरी सखी मुझे धीरज बँधा रही थी। काफी देर हो गई तो हम दोनों सखियाँ नदी के दह में उतरकर नहाने लगीं। थोड़ी देर में एक आदमी गाँव की ऊँचाई से नदी की ओर उतरते हुए आता दिखा। सफेद कुर्ता, पीली धोती, पीली पगड़ी। पास आने पर देखा, हाथ में पोथी, गले में माला, माथे पर लाल रोली का टीका। यह तो कोई बाभन है।

"जामुन के नीचे पहुँचकर वह इधर-उधर देखने लगा। हम लोगों पर नजर पड़ी तो गाने लगा-

ए गोरी अंग-अंग रस बोरी
करौ गंगा स्नान
तोहारी गोदिया मा दुई नौरंगिया
द्या बभना का दान

गंगा-स्नान करने वाली गोरी, (स्नान के बाद ऐ पोर-पोर रस से भरी, गंगा ब्राह्मण को दान देने का विधान है) तुम्हारी गोद में दो नारंगियाँ हैं। उन्हें ब्राह्मण को दान कर दो।

'आवाज वही थे। आसपास किसी को न देखकर मेरी सखी से पहचान गई। ने जवाब दिया-दिया

ऐ बाभन के छोकरे
का पढ़ि लिखि भये नदान
जाकी लागी लाख रुपैया
तेहू न किए नवान्न

ऐ ब्राह्मण के पुत्र, इतना पढ़-लिखकर भी नादान क्यों बने रह गए? ब्याह करने में जिस (पति) का लाख रुपैया खर्च हो गया, अभी तो उसने भी नवान्न नहीं किया।"

"जवाब सुनकर उनकी झिझक खत्म हुई। आगे बढ़ आए। पहचाना। मुस्कराए। फिर गाया-

अगम बहै दरियाव

चार महीना चौमस जोतै
गेहूँ बोवै किसान
पहिल बालि सुगना लै भागै
पीछे पावै किसान

चार महीना चौमासा जोतने के बाद किसान गेहूँ बोता है, लेकिन फसल पकती है तो पहली बाली काटकर सुग्गा ही ले जाता है। किसान को तो बाद में मिलता है।"

"वैसे तो देर करना ठीक नहीं था, लेकिन मेरी सखी को यह सवाल-जवाब अच्छा लग रहा था। बिना जवाब दिए कैसे जाने दे? उसने जवाब देने के लिए मुँह खोला ही था कि गाँव की ओर से एक अधेड़ औरत दोनों हाथों से लरकोरी-कथरी थामे आ पहुँची। कथरी को धोने के लिए पानी में फेंकते हुए उसने तट पर खड़े नौजवान ब्राह्मण को घूरकर देखा और गुर्राकर बोली- 'का महराज, कैसे बाभन हैं? नहाती हुई बहिन-बिटिया को खड़े-खड़े घूर रहे हैं। लाज-शरम सब धोकर पी गए हैं क्या?'

""नहीं माताराम, दूर राह चलकर आ रहे हैं। दम मारने के लिए रुक गए थे।' "औरत अपनी कथरी को पानी में उलटते-पुलटते हुए गुर्राई - 'दम मारने के लिए रुके हो कि आँख मारने के लिए? लड़कियों को गीले कपड़े बदलने हैं। भागो नहीं तो इसी पेड़ में बँधवा दूँगी।'

"ये सचमुच डर गए। तुरन्त पैर का चमरौधा निकालकर एक हाथ में पकड़ा। किताब वाले हाथ से धोती ऊपर उठाई और नदी में हिल गए। पानी घुटने से थोड़ा ऊपर था। हम दोनों के पास से गुजरते हुए सुनाकर कहा- 'कल सबेरे-सबेरे फिर इसी राह लौटना है। जाएँगे नहीं तो क्या यहीं बस जाएँगे? माताराम तो ऐसे बिगड़ रही हैं जैसे हम कोई चोर-उचक्के हैं।'

"औरत बोली-'लच्छन तो चोर-उचक्कों के ही लगते हैं। सबके मुँह से लार चूती है, तुम्हारी आँखों से चू रही है।'

"फिर हम लोगों को डाँटने लगी- 'तुम लोग दोपहर तक नहाती ही रहोगी? घर में कोई काम-धन्धा नहीं है? निकलो, अपने-अपने घर जाओ।'

"मुड़कर देखा। नौजवान मरी हुई चाल से आगे बढ़ रहा था। बालू में उसके पैर धँसे जा रहे थे। बहुत दुख हुआ। बहुत गुस्सा आया। बहुत रोना आया। तसल्ली थी तो यही कि कल आने को कहकर गए हैं। कल नहीं आ पाए तो? परसों तो मुझे लौट जाना है।

"दूसरे दिन मैं और मेरी सखी सूरज निकलने के पहले ही खाँची-खुरपा लेकर निकल पड़े। दूसरी घास छीलने वालियों से दूरी बनाकर, घाट से थोड़ा हटकर मेंड़ पर घास छीलने लगे। तिराई में गेहूँ-जौ की अधपकी फसल खड़ी थी। बैठ जाने पर दूर से दिखाई नहीं देता था। हम दोनों थोड़ी-थोड़ी देर बाद उझककर घाट की ओर देख लेते थे। एक घंटा से ज्यादा दिन चढ़ आया। कहाँ रह गए? जिन्दगी में फिर कभी इतनी बेचैनी नहीं हुई।

"एक आदमी नदी पार करके इस पार आया। सफेद धोती-कुरता। इधर-उधर देखने लगा। वही होंगे। मैं उतावली में उठकर मेंड़ पर खड़ी हो गई कि मेरी पियरी पर उनकी नजर पड़ जाय। पड़ गई। उन्होंने सिर खुजलाया और नदी के किनारे-किनारे हमारी ओर बढ़े।

"पास में बबूल का एक पेड़ था। हम दोनों अपनी खाँची-खुरपा लेकर उस पेड़ के नीचे आकर बैठ गए। थोड़ी देर बाद वे भी वहीं आकर सामने बैठे। चारों ओर खड़ी फसल के बीच हम छिप गए। मेरा दिल धड़-धड़ करने लगा। उछलकर बाहर न आ जाय।

"सखी ने बात शुरू की-'मेरी सखी तुम्हें दिल हार गई है। तुमसे नाता जोड़ने में माँ-बाप, भाई-बन्धु, कुल-परिवार, सबसे नाता टूट रहा है। ले जाने के पहले हमारी दुविधा दूर करिए। अपने जवाब से लाजवाब कर दीजिए तो ले जाइए। इसे तुम्हारे साथ क्यों जाना चाहिए?'

"इसलिए कि मैं इनके रूप-गुण की कदर करूँगा। यह रूप घास छीलने के लिए नहीं बना है। बैसाख जेठ की धूप में यह कुम्हला जाएगा।

"मेरी ओर देखकर वे दबे स्वर में गाने लगे-

लख टका कै गोरी तोहरि सुरतिया
कुम्हिलाई जइहैं ना
लागे जेठवा कै घमवा
कुम्हिलाई जइहैं ना

"हर कोई इनकी कदर नहीं कर सकता। मैं रतन पारखी हूँ। इनकी कीमत जानता हूँ।

घमवा अउ सिठिया पराई न देबई देहियां
अरे जोगइ के राखब ना
अपनी पुतरी की छहियाँ
मैं तुम्हें शामिल नहीं रखूंगा

अगम बहै दरियाव

मैं तुम्हारी देह पर धूप और शीत नहीं पड़ने दूँगा। तुम्हें अपनी पुतलियों की छाया में सँभालकर रखूँगा। पान के पत्ते की तरह फेरूँगा। रोज सबेरे महोबिया पान खिलाऊँगा।"

"लेकिन पान-पत्ता खिलाने का चाव कितने दिन रहेगा?

चार दिना ले राजा पनवा खिअउब्या
फिर उतारि देब्या ना
जैसे गोड़वा की पनहिया
राजा उतारि देब्या ना

चार दिन तक पान खिलाओगे फिर जैसे लोग पैर की पनही उतार देते हैं, चित से उतार दोगे, तब? शादी-ब्याह होता है तो उसमें नाई, बाभन गवाह रहते हैं। मेरी सखी की ओर से कोई गवाह नहीं है। आपके घर में इनका दर्जा क्या होगा? चेरी का कि रानी का?"

"इनका यह लाख टके का जोबन क्या चेरी बनाकर रखने लायक है? मैं इस उमड़े जोबन पर अपना धन-धरम न्योछावर कर दूँगा।"

"'लेकिन जोबन तो हमेशा एक जैसा नहीं रहेगा। आज उमड़ा है तो कल ढलक जाएगा।'

उठत जोबनावा बिकाय लखतकवा
अरे गिरे पै जोबना
माटी मोलवा ना बिकइहैं
अरे गिरे पै जोबना

उठते हुए जोबन की कीमत लाख रुपैया होती है, सही। लेकिन ढलक जाने पर तो माटी के मोल भी नहीं बिकेगा। और एक दिन ढलकेगा जरूर। मेरी सखी को तो जिन्दगी-भर साथ निभाने का वचन चाहिए। घर में और कौन-कौन है?"

"अंगर डर रही हो कि मेरे घर में इनकी कोई सौत बैठी है तो ऐसा नहीं है। मेरी बियही गौना आने के साल भर बाद ही हैजे से मर गई। घर में अम्मा-बाबूजी और एक छोटी बहन है। बस इन्हीं की कमी है। सब कुछ इनके हवाले कर दूँगा।

"कहने के साथ वे उठकर पास आ गए। मेरी बाँह पकड़कर उठाते हुए

बोले- 'अब उठो। चलकर अपना राज-पाट सँभालो।'

"मुझ पर तो पहले से ही जादू हो गया था। उठकर खड़ी हो गई। सखी ने मुझे गले से लगाते हुए कहा- 'जाओ। जहाँ रहो, सुखी रहो।'

"मैंने कहा- 'मेरी खाँची-खुरपा घर लेती जाना।'

"'खाँची-खुरपा ले गई तो मारी नहीं जाऊँगी? क्या बताऊँगी कि तू कहाँ गई? यहाँ की फिकर छोड़। अब मैं दो घंटे बाद ही घर जाऊँगी। तब तक तू दूर निकल जाएगी।'

"ये मेंड़ पर आगे-आगे और उनसे दूरी बनाकर चलती मैं।

"एक कोस चलने पर सड़क आई। इन्होंने झोले से निकालकर एक लाल चादर दी। चादर ओढ़कर घूँघट निकालकर मैं सड़क की ओर पीठ करके पेड़ के नीचे बैठ गई।

"थोड़ी देर में घुँघरू के बजने और घोड़े के टाप की आवाज सुनाई पड़ी। मैं खड़ी हो गई। इक्का पास आकर रुक गया। लाल कलंगी वाले ऊँचे कत्थई घोड़े ने फड़र्र फड़र्र करके नथुने साफ किए और गर्दन हिलाकर घुँघरू बजाया। समझो वही मेरी बिदाई में बजने वाला बाजा था।

" इक्के पर बैठते ही मुझे रुलाई आ गई।

" कितना सही हो रहा है, कितना गलत?

मुझे रोता देखकर इक्केवान समझाने लगा- 'एक दिन सबकी बिदाई होती है बिटिया। चुप हो जाओ।'

"" घोड़े ने रफ्तार पकड़ी तो इक्केवान हवा में संटी घुमाते हुए गाने लगा-

गोरी नैहरे मा कै दिना गुजर होय
जाणा ससुरार होय ना।

मुझे और तेज रुलाई आ गई। हिचकी ले-ले कर रोने लगी।

" फिर खयाल आया- इक्केवान मेरे सादा पैरों को देखकर क्या सोच रहा होगा? यह कैसी बिदाई है कि पैरों में आलता-महावर तक नहीं लगा है। मैंने घबराकर पियरी से पैर ढक लिये।

" घोड़े की टाप एक लय में बजती रही-

टप् टप् टप् टप्...

घुँघरू-घन घन घन घन..."

अगम बहै दरियाव

कचहरी जा रहे रघुवंश को रास्ते में रोककर माठा बाबा कहते हैं-"मेरे एक सवाल का जवाब देकर जाओ। भारत के संविधान-निर्माता का दर्जा ऊँचा माना जाएगा या भारत देश के निर्माता का?"

सवाल रघुवंश की समझ में नहीं आया।

माठा बाबा पास आ जाते हैं।

"भारत के संविधान-निर्माता कौन हैं? "

"बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर।"

"और भारत देश के निर्माता?"

"... नहीं पता?"

"वकील बन गए हो। जानना तो चाहिए।"

तो बताइए।" रही है। शहर से कुछ लाना हो 'बाबा, मुझे कचेहरी पहुँचने में देर हो रही है।

"अरे बेटा, पूरी बात तो सुनो।"

बाबा चाभी घुमाकर मोटरसाइकिल का का इंजन बन्द करके कहते हैं-" जरूरी बात है। ध्यान से सुनो। ।। चन्द्रगुप्त मौर्य का नाम सुना है? उसने छोटे-छोटे राज्यों को जीतकर जो देश बनाया वही आज का

भारत है। और वह तुम्हारी जाति का था। जंगल में भेड़ चरा रहा था, जब चाणक्य ने उसके तेज को पहचाना और साथ ले गया। चरवाहे से राजा बना दिया, सम्राट ! "

रघुवंश उत्सुकता से बाबा का चेहरा देखने लगता है।

"अंग्रेज खुद चन्द्रगुप्त मौर्य को भारत राष्ट्र का निर्माता मानते हैं। दिल्ली में संसद भवन के पाँचवें गेट के सामने उसकी काँसे की मूर्ति लगी है। जानते हो उसके स्तम्भ पर अंग्रेजी में क्या लिखा है? 'सेफर्ड ब्वाय चन्द्रगुप्त मौर्य, भावी भारत की कल्पना में डूबा।' अब बताओ, इस गाँव में अम्बेडकर की मूर्ति लगनी चाहिए कि चन्द्रगुप्त मौर्य की? जाओ, सोचो।"

रघुवंश सोचते हुए जा रहा है। बाबा द्वारा दी गई जानकारी और सुझाव उसे गुदगुदा रहे हैं। पर बहुत सोचने के बाद भी वह समझ नहीं पा रहा है कि इस सुझाव के पीछे बाबा का असली मकसद क्या है?

बाबा साहब! अमर रहें !!

कल बाबा साहब को भारतरत्न देने की घोषणा हुई है। तूफानी इस खुशी में. आज जुलूस निकाल रहा है। देर से ही सही, इस देश के नेताओं को बाबा साहेब की याद तो आई।

जुलूस रामगंज और दुर्गापुर बाजार के बीच सड़क से गुजरेगा। सबसे आगे रंग-बिरंगी ड्रेस में बैंड बाजा वाले। उनके पीछे नाचते हुए स्त्रियों-पुरुषों का समूह। फिर झंडा-बैनर से सजी एक ट्रैक्टर ट्राली। ट्राली

पर चौकी रखकर उस पर बाबा साहब के प्रतिरूप को बैठाया गया है। तूफानी ने अपने छोटे भाई को बाबा साहब -की पोशाक पहनाकर बैठाया है। काला कोट, लाल टाई। एक हाथ की ऊपर तनी तर्जनी खबरदार करती हुई। दूसरे हाथ में संविधान की प्रति। कोट का रंग नीला होता तो और फबता, लेकिन काला भी चलेगा।

ट्रैक्टर के पीछे दस रिक्शे चल रहे हैं। सबमें बाबा साहब की फ्रेम में मढ़ी फोटो माला पहनाकर स्थापित की गई है-

जब तक सूरज चाँद रहेगा,
बाबा तेरा नाम रहेगा।

गैर-दलित बिरादरी से अभी केवल विद्रोही जी आए हैं। तूफानी ने उन्हें अपनी मोटरसाइकिल के पीछे बिठा लिया है। आगे-पीछे चलते हुए तूफानी जुलूस को नियंत्रित कर रहा है। रास्ते में बाजार की ओर जाते माठा बाबा मिल जाते हैं। तूफानी उनसे अपने जुलूस में शामिल होने का अनुरोध करता है।

"क्यों नहीं, क्यों नहीं। बाबा साहब अकेले तुम्हारे ही थोड़े, पूरे देश के हैं।" दोनों लोग मिलकर बाबा को एक रिक्शे पर बिठाते हैं। बाबा रिक्शे पर बैठकर बाबा साहब की फोटो दोनों हाथों में पकड़ लेते हैं।

तूफानी ने आसपास के पाँच-छह गाँवों से ही सौ के करीब ऐसे कार्यकर्ता तैयार कर लिये हैं जो उसके एक सन्देश पर कहीं भी धरना-प्रदर्शन करने के लिए इकट्ठे हो जाते हैं। इनमें दस-बारह तो रिक्शाचालक हैं। ये खुद तो आते ही हैं, दूसरे लोगों को भी बिठाकर लाते हैं।

बाजार के बनियों को इतना सजा-धजा, नाचता-गाता जुलूस देखकर आश्चर्य

अगम बहै दरियाव

होता है। आए दिन किसी-न-किसी बात को लेकर ये दलित आन्दोलित होते रहते हैं। खाने को भरपेट नहीं मिलता लेकिन जुलूस के नाम पर काम छोड़कर भाग आते हैं। और एक हमारे बाजार के लोग हैं! माले चाचा शाखा में आने के लिए बुलाते रहते हैं, लेकिन कभी भी आठ-दस लोगों से ज्यादा इकट्ठा नहीं होते।

लड़के नाचते-नाचते पसीने से सराबोर हैं। सारी देह ऐंठे डाल रहे हैं। कमर तो लगता है, रबर की है सबकी। नाचते-नाचते सड़क पर लेट जा रहे हैं। रूमाल को दाँत से पकड़कर बीन बजा रहे हैं। मुँह में उँगली डालकर सीटी बजा रहे हैं। सड़क के दोनों तरफ लोग इकट्ठे होते जा रहे हैं।

"हे बुझाने वाले, तुम किसलिए मार्च कर रहे हो?"

"हमारे नेता को भी सरकार ने सरदार मान लिया, इसी बात का।"

कई लोग फोटो खींच रहे हैं। इसका मतलब कल अखबार में भी छपेगा।

लाले बनिया को चिन्ता है कि जुलूस में शामिल रिक्शे वाले आज का किराया नहीं देंगे। ज्यादा बोले तो रिक्शा दुकान के सामने खड़ा करके कह देंगे- अपना रिक्शा अपनी... में डाल लो। दुनिया में काम की कमी है क्या? जब से यह तूफानी वकील इन लोगों का नेता बना है, तब से ये बड़े सरकश हो गए हैं। धंधे के लिए गम खाना पड़ेगा।

लेकिन इनके साथ सबसे अच्छी बात यह है कि ये मेहनती और ईमानदार होते हैं। समय से किराया देते रहते हैं। अभी किसी ऊँची जाति के आदमी को पकड़ा दो तो हफ्ते-भर में रिक्शा बेचकर भाग जाएगा। उसके दरवाजे जाओ तो लाठी लेकर मारने दौड़ेगा। बनिया आदमी क्या कर लेंगे? लाठी तो चला नहीं सकते।

धूप तेज होने लगी है। नाचने वाले लड़कों ने पसीने से सराबोर बनियान-कमीज निकालकर फेंक दिये हैं।

"तूफानी भइया, जिन्दाबाद! "

भोला की दुकान पर दो किलो चीनी, दो लीटर दूध और चाय का पैकेट देकर उसे जुलूस में शामिल लोगों को चाय पिलाने के लिए राजी किया गया है। बड़े से देग में पानी गर्म हो रहा है।

बुझावन कहते हैं- "चाय तो भोले बाबू की एवन होती है, लेकिन कुल्हड़ बहुत छोटा है। घूँट-भर भी नहीं अमाता।"

तूफानी तो चाहता है कि जुलूस में शामिल हर आदमी को छोले-समोसे का नाश्ता भी कराए, लेकिन...

वह दिन भी कभी-न-कभी जरूर आएगा।

233

अम्बेडकर जयंती को चार दिन रह गए थे, जब पीएसी के एक सेक्शन जवानों को लेकर पीला ट्रक सुबह-सुबह गुर्राता हुआ गाँव में घुसा। जवानों ने मूर्ति लगाने की जगह को चारों तरफ से घेर लिया।

तूफानी ने चूल से चूल भिड़ा रखा था। थोड़ी देर में लेखपाल ने आकर जमीन की चौहद्दी चिह्नित करके खूँटा गड़वा दिया। नींव की खुदाई शुरू।

एक ट्राली पर ईंट और दूसरी पर मोरंग, सीमेंट आ गया।

लेकिन यह सब इतनी आसानी से नहीं हो गया। इसके लिए तूफानी को रात- दिन एक करना पड़ा। जिस दिन बाबा साहब को भारतरत्न दिये जाने की घोषणा हुई, उसी दिन तूफानी ने समझ लिया था कि मूर्ति-स्थापना के लिए इससे अच्छा मौका फिर नहीं आएगा। इस समय मुख्यमंत्री की कुर्सी विद्रोही जी की बिरादरी के कब्जे में है। उनके शपथ ग्रहण समारोह में वह भी विद्रोही जी के साथ राजधानी गया था।

विद्रोही जी ने भी पूरा साथ दिया। चार-पाँच दिन मुख्यमंत्री आवास से लेकर तहसील मुख्यालय और थाने तक भागदौड़ की। यह सब उसी का नतीजा है, वरना क्या रेवेन्यू और पुलिस विभाग के कानों पर इतनी जल्दी जूँ रेंगती!

अच्छी पकड़ बना ली है विद्रोही जी ने।

उनकी लम्बी-चौड़ी काया अपना असर तुरन्त दिखाती है। गलमुच्छों वाले साँवले चौड़े चेहरे पर बड़ी-बड़ी रतनारी आँखें देखने वाले की नजर बाँध देती हैं।

आशंका के विपरीत मौके पर विरोध करने कोई नहीं आया। सब या तो अपनी-अपनी गली से झाँकते रहे या तमाशबीन बनकर आए। विद्रोही जी सुबह से दोपहर तक मौके पर हाजिर रहे। ईंट की जुड़ाई शुरू हो गई तब दाना-पानी करने गए। पूजा-पाठ करने के बाद माठा बाबा भी चक्कर लगाने आए। बोले, "एक संक्षिप्त ही सही, पूजा होनी चाहिए। शुभ कार्य हो रहा है।"

विद्रोही जी की तो पूरी कोशिश थी कि मूर्ति का अनावरण मुख्यमंत्री जी के कर कमलों से हो, लेकिन कार्यक्रम ही नहीं मिल पाया। चौदह अप्रैल को राजधानी में ही उनके कई कार्यक्रम लगे थे। तब विधायक जी को राजी किया गया।

पत्थर पर अनावरणकर्ता के नाम को छोड़कर सब कुछ पहले से ही खुदवा लिया गया था। पथरकट ने आकर मौके पर ही विधायक जी के नाम की खुदाई कर दी और अनावरण होते-होते पत्थर जड़ भी दिया गया।

अगम बहै दरियाव

अनावरण के समय तक आधा गाँव उमड़ आया। तूफानी ने बाउंड्री वॉल की रेलिंग तक को गेंदे के फूलों की लड़ियों से सजा दिया।

माठा बाबा ने तूफानी से कहा था कि कार्यक्रम की शुरुआत मंगलाचरण के श्लोक पढ़कर और मूर्ति पर अक्षत फेंककर वे खुद करेंगे, लेकिन विधायक जी पहले ही, बिना जूता उतारे माला लेकर आगे बढ़ गए। यह तो शुभ नहीं हुआ।

दहबंगा को तूफानी का और विद्रोही बहू को विद्रोही जी का भाषण सबसे अच्छा लगा। विधायक जी को ऐन मौके पर अपनी पुर्जी ढूँढ़े नहीं मिली। जाने किस जेब में रख दिया था। उसी में भाषण के प्वाइंट नोट करके लाए थे। इसलिए बहुत संक्षिप्त और अटक-अटक कर बोले और उदास हो गए। किसी क्लास में अम्बेडकर के बारे में कभी पढ़ाया ही नहीं गया तो उनकी क्या गलती?

तूफानी ने भाषण के साथ-साथ सूचना दी कि शाम को बाबा साहब के जीवन पर आधारित नाटक का मंचन होगा। सभी से अनुरोध है कि

फिर मुट्ठी हवा में तानकर नारा लगाया -

जब तक सूरज चाँद रहेगा,
बाबा तेरा नाम रहेगा।

सिपाहियों की ड्यूटी लगा दी गई। उत्पाती तत्त्व मूर्ति को नुकसान न पहुँचाएँ इसलिए कुछ दिनों के लिए दो

दलित टोले के खड़ंजे का काम शुरू हो गया।

पता नहीं कब इस टोले तक कच्ची पगडंडी बनी थी। इसका जो हिस्सा तालाब के किनारे-किनारे जाता है, वहाँ की दो-चार अंगुल मिट्टी हर बरसात में कटकर ताल में समाती रही। नतीजा यह हुआ कि कुछ दूरी तक तो दो-ढाई फीट गहरी कटान हो गई है। इसमें मिट्टी की भराई-कुटाई होगी, तब खड़ंजा लग पाएगा। बरसात के पहले-पहले यह काम हो जाना है। विद्रोही जी ने टोले के लोगों को आश्वस्त किया है-" अब कीचड़-काँदों में घुसकर आने-जाने से फुरसत समझो। इस बरसात में साइकिल पर बैठे-बैठे टोले में घुसोगे।"

खेती-किसानी का काम करने वाले मजदूर फावड़ेबाजी नहीं कर सकते। धूप में दस मिनट फावड़ा चला लें तो छाँह खोजने लगते हैं। मिट्टी का काम इन अधेड़ों और औरतों के वश का नहीं है। नौजवान चाहिए।

लेकिन दूसरे टोले के जवान दलित टोले के खड़ंजे पर काम करने के लिए तैयार नहीं। अपमान लगता है। दलित टोले के पाँच-छह नौजवान 'मटिहा' गैंग में काम करते हैं। मटिहा गैंग मिट्टी काटने के काम में माहिर होता है। टीले काटना, गड्ढे पाटना, तालाब की खुदाई करना। जेठ-बैशाख की कड़ी धूप भी इन्हें विचलित नहीं कर पाती। लाल चींटों की तरह काम में जुट गए तो जल्दी साँस नहीं लेते। ये लड़के मटिहा गैंग के अपने साथियों को लेकर आ गए हैं। इनको देखकर काम भागता है।

ईंट बैठाने के पहले गगरी-गगरी पानी डालकर और दुरमुट से कुटाई करके मिट्टी बैठाई गई ताकि एक ही बरसात में ताल के पेट में न चली जाए।

लेकिन शिकायत हो गई।

शिकायत हो गई कि फर्जी मस्टररोल भरकर सरकारी धन का गबन कर लिया गया। अमानत में खयानत।

जाँच का आदेश हो गया। एक नायब तहसीलदार और एक इंजीनियर की टीम जाँच करने आई। टीम ने पाया कि जिन मजदूरों का नाम दर्ज किया गया है उनमें से पाँच-छह मजदूर ही इस गाँव के निवासी हैं। बाकी दूसरे गाँव के हैं।

"फर्जी नाम क्यों लिखा?"

"फर्जी नहीं है साहेब। एक भी नाम फर्जी नहीं है। मैं आपके सामने उनकी परेड करा देता हूँ।"

सचमुच परेड करा दी विद्रोही जी ने।

"लेकिन ये सब तो बगल के गाँव के हैं। आपको पता नहीं है कि जवाहर रोजगार योजना में गाँव के मजदूरों से ही काम कराने की शर्त है।"

"मालूम तो बाद में मुझे भी हो गया था साहब, लेकिन इसमें दो पेंच फँस गए। एक तो दलित टोले के लिए बन रहे खड़ंजे में काम करने को गाँव के गैर-दलित मजदूर तैयार नहीं थे। दूसरे यह भी शर्त थी कि एक मजदूर प्रतिदिन 100 घन फीट मिट्टी जरूर खोदकर फेंकेगा। इतनी मिट्टी खोद पाना हर आदमी के वश का नहीं है। बहुत मेहनती और जवान आदमी ही कर सकता है। इसलिए मिट्टी खोदने में एक्सपर्ट मजदूरों को लगाया गया। तब भी डेढ़-दो हजार रुपये अपनी जेब से खर्च हो गए।"

"अपनी जेब से क्यों?"

"साहब, काम अधूरा छूट जाता तब भी तो ठीक नहीं था। चाय-पानी कराना पड़ा। सुर्ती, सुपाड़ी खिलानी पड़ी। अपना काम समझकर कराया।"

"यही तो गलत किए। सरकारी धन और अपने धन को एक समझ लिया।"

"तो गलत क्या किया, साहब ? न तो एक भी मजदूर ज्यादा दिखाया गया। न किसी को कम मजदूरी दी गई, न मौके पर काम कम हुआ। आप खुद नाप कर देख लें।"

"नाप लेंगे। लेकिन काम की शर्तों का उल्लंघन तो कर दिया।"

"साहब, ऐसी शर्त लगानी ही नहीं चाहिए जो सम्भव न हो। गाँव के लोगों से काम कराने की शर्त तो ठीक है बशर्ते कि गाँव में इसके लिए मजदूर मिलें। लेकिन 100 घन फीट मिट्टी खोद डालने की शर्त? जरूर यह शर्त किसी ऐसे अफसर ने रखी होगी जिसने अपनी जिन्दगी में कभी एक घंटे भी मिट्टी नहीं खोदी होगी।"

"लेकिन इन्हीं शर्तों पर दूसरे गाँव के लोग कैसे काम करवा रहे हैं?"

"वे या तो मजदूरों की संख्या बढ़ाकर दिखाते होंगे या काम कम कराते होंगे।"

"तो आपको ऐसा करने से किसने रोका था?"

"हम ऐसा करते तो जे.ई. को खुश करना पड़ता। हम यह काम नहीं करना चाहते थे।"

दोनों जाँच अधिकारी जोर से हँसे। कुछ देर हँसते रहे। हँसते हुए ही बोले-"क्यों नहीं खुश करना चाहते थे? दूसरे की खुशी नहीं देख सकते? दूसरे को खुश करना बुरी बात है?"

आज बाजार का दिन है। सड़क की दोनों पटरियों पर दुकानें लग गई हैं। भीड़-भाड़ है। एक सिरे से एक खुली जीप धीरे-धीरे आगे बढ़ रही है। जीप में आठ-दस युवा बैठे हैं। एक लड़का हाथ में माइक पकड़कर चीख रहा है-

राजा नहीं है, रंक है, देश का कलंक है।

जीप के दोनों तरफ बैनर बँधा है जिस पर आरक्षण विरोधी नारे लिखे हैं। जीप के आगे-आगे आठ दस गधों का झुंड दुलकी चाल से दौड़ रहा है। गधों

की पीठ के दोनों तरफ भी कपड़े का बैनर लटक रहा है जिन पर गाढ़ी नीली स्याही से एक-एक नारा लिखा है-

मैं गद्दार हूँ-वीपी सिंह मैं मानसिंह की औलाद हूँ- प्रधानमंत्री

मैं जयचंद का वंशज हूँ-राजा माँडा

तीन गधों के बैनर पर पिछड़े वर्ग के तीन प्रसिद्ध नेताओं के अलग-अलग चित्र बने हैं और नीचे लिखा है- मंडल का गधा।

जीप के पीछे पन्द्रह-बीस मोटरसाइकिलें चल रही हैं। उनमें डंडों से बँधी तख्तियों पर भी प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह और आरक्षण के विरुद्ध नारे लिखे हैं।

नारेबाजी जारी है-

मंडल कमीशन : हाय हाय ! वी.पी. सिंह : गद्दी छोड़ो!

अब तक सबको पता चल गया है कि प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह ने सवर्णों और पिछड़ों के बीच सरकारी नौकरी का बँटवारा कर दिया है जिससे सवर्ण लड़के क्रोधित हैं। अखबारों में छपी खबरें बताती हैं कि दिल्ली और दूसरे बड़े शहरों में वे आगजनी और तोड़-फोड़ कर रहे हैं। दो लड़कों ने अपने शरीर में आग लगा ली है।

दुकानदार नारा लगाते इन लड़कों को पहचानते हैं। साल भर पहले यही लड़के नारा लगा रहे थे

राजा नहीं फकीर है, देश की तकदीर है।

सब आसपास के गाँव के हैं। अक्सर झगड़ा करते हैं। सामान खरीद लेते हैं, पैसा नहीं देते।

आज भी कुछ-न-कुछ उपद्रव जरूर करेंगे। धीरे-धीरे वे अपनी दुकानें बन्द करने लगे हैं।

बाजार के दूसरे सिरे तक जाकर जुलूस फिर लौटता है। सबसे पहले गधों को हाँकने वाला लड़का आगे से उन्हें दोबकर लौटाता है, उसके पीछे जीप और मोटरसाइकिलें।

डेढ़-दो घंटे नारेबाजी चलती है। हवा में उमस है। क्वार की धूप तेज है। लड़कों का गला सूख गया है। वे एक हलवाई की दुकान के सामने रुकते हैं। कोई लस्सी

का ऑर्डर दे रहा है, कोई दूध का, कोई कोल्ड ड्रिंक का। एक दाढ़ी वाला लड़का लड्डू की ट्रे उठाकर अपने पीछे खड़े लड़कों की ओर बढ़ा देता है।

दुकानदार हा-हा करके रोकने की कोशिश करता है, फिर शटर गिराने लगता है। लूट मच जाती है।

पुलिस की जीप का साइरन सुनाई पड़ता है। फिर ऐलान- "दफा 144 लागू हो गई है। उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कठोर कार्रवाई..."

जीप दुकान के सामने धीमी होती है, पर रुकती नहीं। सब भाग रहे हैं। आगे तक जाकर, जब तक जीप वापस आती है, सड़क खाली हो चुकी है। सिर्फ गधों का झुंड पीठ पर बैनर सँभाले, सिर झुकाए एक किनारे शान्त खड़ा है।

दो होमगार्ड उनकी पीठ पर टँगे बैनर उतारते हैं और जीप आगे बढ़ जाती है।

विद्रोही जी गिरफ्तार हो गए।

रात भनक मिली कि उनके प्रधान पद के सारे वित्तीय और प्रशासनिक अधिकार जब्त कर लिये गए हैं। सारी रात करवट बदलते रहे। नींद नहीं आई। कहाँ जाएँ? रारात करवट क्या करें?

विधायक जी के पास जाने का इरादा उन्होंने बदल दिया। विधायक जी उन्हें बहादुर और निडर आदमी मानते हैं। घबराया हुआ चेहरा देखकर क्या सोचेंगे? अच्छा यह रहेगा कि पहले खबर की सत्यता की जाँच कर लें।

अभी उन्हें मन के भावों को छिपाने में महारत नहीं हासिल हो पाई। पत्नी सबेरे चेहरा देखकर पीछे पड़ गई- "बताइए, क्या छिपा रहे हैं?"

"कुछ नहीं, भाई।" उन्होंने दृढ़ता से कहा।

कहाँ से पता करना ठीक रहेगा? ब्लॉक से या ए.डी.एम. प्लानिंग के दफ्तर से? आगा-पीछा सोचते-सोचते चौराहे पर पहुँचकर उन्होंने साइकिल ब्लॉक ऑफिस के रास्ते पर मोड़ दी। जरूरत हुई तो उधर से ही विधायक जी के गाँव जा सकते हैं।

थाने के गेट के सामने से गुजर रहे थे तो वहाँ खड़े सिपाही ने हाथ हिलाकर उन्हें रुकने का इशारा किया और आगे बढ़कर साइकिल के हैंडिल पर हाथ रख दिया- "इंचार्ज साहब बुला रहे हैं।"

विद्रोही जी को आश्चर्य हुआ-" उनको कैसे पता चला, मैं आ रहा हूँ?"

सिपाही मुस्कराया -"पता नहीं रहेगा तो इंचार्ज कितने दिन रह पाएँगे?"

थाना इंचार्ज दबंग हैं। विधायक जी के खास बनते हैं। जानते हैं कि विधायक जी से मेरा भी हेलमेल है। इसलिए हँसकर प्रेम से मिलते हैं। प्रेम से तो आज भी मिले। सामने की कुर्सी पर बैठाया। हाल-चाल पूछा, लेकिन विद्रोही जी बेचैन थे। जाने की इजाजत माँगी तो बोले-"रुकिए। आपके खिलाफ रिपोर्ट दर्ज हुई है- सरकारी धन के गबन की। आपको अरेस्ट करना मजबूरी हो गई है।"

विद्रोही जी को पसीना छूटने लगा। लेकिन उनको भी दुनिया कम दबंग नहीं मानती।

"आप, और मजबूरी! अच्छा मजाक कर रहे हैं। जब चाहिएगा, अरेस्ट कर लीजिएगा। हम कहीं भागे जा रहे हैं। अभी बहुत जरूरी काम से जा रहे हैं। जब कहिएगा, हाजिर हो जाएँगे।"

विद्रोही जी खड़े हो गए।

"नहीं-नहीं, भागने की कोशिश मत करिए। अब आप कस्टडी में हैं। यहीं आराम से बैठिए। हवालात में नहीं डाल रहा हूँ। घंटे-भर में चालान कर देता हूँ। शाम तक जमानत करवा लीजिएगा। मैं चाय भेजवाता हूँ।"

इंचार्ज अपने क्वार्टर की ओर चले गए।

भागकर तो मैं अभी भी निकल सकता हूँ। थाने की छह फीट ऊँची बाउंड्री को कूदना कौन मुश्किल है! इंचार्ज साहब दौड़ाकर पकड़ लें तो जानूँ। लेकिन...

वही सिपाही चाय लेकर आ गया जिसने गेट पर रोका था। बोले- " फँसा दिया न! तनिक भी इशारा अगर कर देते... सारी जान-पहचान दुआ-सलाम गई तेल लेने... चालान कर रहे हैं! इसीलिए कहते हैं, पुलिस की दोस्ती अच्छी न दुश्मनी। कूकुर काटे तो भी खतरा, चाटे तो भी खतरा।"

"ऐसा नहीं है, परधान जी। कहाँ पुलिस, कहाँ कूकुर। और चालान करना जरूरी थोड़े है। निजी मुचलका लेकर छोड़ सकते हैं। आप कोई चोर-बदमाश हैं कि फरार हो जाएँगे। रसूखदार आदमी हैं।"

"ओ! अच्छा प्वाइंट बताया। ये तो खुद ही छोड़ सकते हैं।"

"बिलकुल। लेकिन थोड़ा जोर लगाकर कहना पड़ेगा। ये आनाकानी करेंगे लेकिन आपको डटे रहना होगा। छत्रधारी के बेटे भी तो दारोगा हैं। पिछली बार छुट्टी आए थे तो इंचार्ज साहब से मिलने आए थे। और सबसे बड़ा कनेक्शन तो जाति-बिरादरी का होता है। अभी आपकी बिरादरी का कोई इंचार्ज होता तो आपको कुछ कहने की जरूरत पड़ती? इतने सटहे केस में चालान होता?"

"अच्छा, एक काम करिए। कहीं से विधायक जी को फोन करके सारी बात

अगम बहै दरियाव

बताइए और कहिए कि जितनी जल्दी हो सके, थाने पर आ जायें।"

"रखा तो है मेज पर फोन। खुद मिला लीजिए। आइए।"

फोन के छेद को घुमाती उँगली काँप रही थी। तीन बार पूरी घंटी गई। चौथी बार में उठा। खुद विधायक जी ने उठाया था। विद्रोही जी ने जल्दी-जल्दी सारी बात बताई।

'आ जाइए, नहीं तो यह जेल भेजकर मानेगा।"

"इंचार्ज से मेरी बात कराइए।"

"अभी क्वार्टर पर गया है।"

"आए तो कहिए, बात करे।"

इंचार्ज लौटे तो विद्रोही जी ने विधायक जी का सन्देश दिया। इंचार्ज फोन मिलाने लगे, "डायल टोन ही गायब है।"

"कोई बात नहीं। आ ही रहे होंगे। मेरा कहना यह है कि मैं कोई चोर-बदमाश तो हूँ नहीं! जनता का प्रतिनिधि हूँ। इज्जतदार हूँ। मुझे जेल भेजकर आपको क्या मिलेगा? मेरी इज्जत जरूर चली जाएगी। आप खुद निजी मुचलका लेकर छोड़ सकते हैं। कहिए तो मेडिकल सर्टीफिकेट बनवा लाऊँ।"

"इतना आसान नहीं है। इसमें अपोजिट पार्टी स्टेट है। ऊपर से मानीटरिंग हो रही है।"

"उससे क्या ! आप मौके के हाकिम हैं। आपको पावर है।"

"पावर तो है लेकिन मेरे हाथ बँधे हैं।"

विद्रोही जी का स्वर ऊँचा हो गया- "किसने बाँध दिये आपके हाथ? आपके जातिभाई ने कि उसके दारोगा बेटे ने?"

इंचार्ज की आँखों में लाल डोरे उभर आए। उन्होंने मुंशी को आवाज लगाई "क्या महाभारत लिख रहे हो? मुझे जाने नहीं दोगे?"

विद्रोही जी उनकी आँखों में आँखें डालकर बोले- "क्या समझते हैं कि जहाँ भेज रहे हैं वहाँ से लौटकर नहीं आ पाऊँगा? लेकिन आप जाएँगे तो पक्का है कि नहीं लौट पाएँगे।"

"मुझे जातिवादी बता रहे हो और खुद जातिभाई के बल पर धमका रहे हो? पहले जहाँ मैं भेज रहा हूँ, वहाँ जाओ। लौटना तो मुझे भेजना।"

मुंशी ने रवानगी के कागजों पर दस्तखत कराए और विद्रोही जी के पहले इंचार्ज साहब की मोटरसाइकिल थाने के बाहर निकली। दो सिपाही विद्रोही जी को लेकर कचहरी रवाना हुए। इनमें वह सिपाही भी था जिसने उन्हें निजी मुचलके का रास्ता बताया था।

उसने फिर रास्ता बताया- "चाय वाले सेठ के पास एक जीप है। दो सौ रुपया लेगा। आप लोगों की नजर में आने से भी बच जाएँगे और जल्दी पहुँच भी जाएँगे। कुछ खा-पी लेंगे। चाहें तो किसी से मिल भी लेंगे। ठीक समझें तो उससे बात कर लें।"

"ठीक है। घर से बेटे को भी ले लेंगे।"

जीप पर बैठ ही रहे थे कि साइरन बजाते हुए विधायक जी भी आ गए। पूरी बात सुनकर बोले-"नमकहराम। इंचार्जी लेनी थी तो कितने दिन पीछे-पीछे घूमा था! "

रास्ते में विद्रोही जी ने सिपाही से निराश स्वर में पूछा -" आखिर इंचार्ज साहब इतनी तेजी से गए कहाँ?"

"कहाँ गए यह तो नहीं बता सकता, लेकिन क्यों गए यह बता सकता हूँ।"

विद्रोही जी ने उसके मुँह की ओर ताका।

"इसलिए कि विधायक जी का सामना न करना पड़े।"

"और फोन का डायल टोन कैसे चला गया?"

"थाने के फोन का डायल टोन भी इंचार्ज के इशारे पर आता-जाता है।"

सीजेएम कोर्ट से तो जमानत की अर्जी खारिज ही होनी थी। सेसन कोर्ट में कल दरखास्त लगेगी।

जेल फाटक की साढ़े चार फीट ऊँची खिड़की में विद्रोही जी ने सिर झुकाकर प्रवेश किया तो लगता है, इसकी खबर सबसे पहले छत्रधारी को ही लगी। अभी अँधेरा नहीं उतरा था, जब छत्रधारी के दुआर पर गोले दगने शुरू हुए। अगली सुबह विद्रोही बहू ने देखा कि उनके दुआर पर कोई सूअर के लेंड़ से भरी गगरी पटककर फोड़ गया था।

नेल्सन मंडेला कौन जाति हैं

विश्व हिन्दू परिषद के कुछ लोग हफ्ते भर पहले आए थे। दिन-भर गाँव में घूम-घूम कर अयोध्या चलने के लिए प्रेरित कर गए। उनके द्वारा दिए गए नारे बच्चों की जबान पर चढ़ गए हैं-

बच्चा-बच्चा राम का। जन्मभूमि के काम का॥

अगम बहै दरियाव

और

रामलला हम आएँगे।
मन्दिर वहीं बनाएँगे ॥

पचीस-तीस साल पहले तक गाँव से तीर्थयात्रियों का मेला हर साल अयोध्या पहुँचता था। औरतें भी, बच्चे भी। तीर्थयात्रा के पुण्य के साथ-साथ औरतों को श्रृंगार-पटार और रसोई के काम की चीजें मिल जाती थीं। शीशा, कंघी, चोटी, चौका, बेलन, तावा, चिमटा, कड़ाही, कठौता। भक्तों को रेहल, रुद्राक्ष, सुमिरनी, कंठी, चंदन, शंख, मुर्दा शंख। पढ़ने के लिए रामायण-महाभारत, प्रेमसागर, सुखसागर, ब्रह्मानन्द भजनमाला, लावनी मनमोहनी, देवताओं की आरतियाँ, हनुमान चालीसा। नौजवानों के लिए ढोल-मजीरा, हारमोनियम, बाँसुरी, आल्हा, नौटंकी, फाग और बिरहा की किताबें। कोई-कोई सबकी नजर बचाकर पीली पन्नी में लिपटी गुप्त किताबें भी खरीदते। सबसे ज्यादा माँग रहती 'जो चाहोगे वही मिलेगा' की गारंटी देने वाली चमत्कारिक तांत्रिक अँगूठी की। इसमें गारंटी रहती थी कि माशूका सात समुन्दर लाँघकर, सात ताले तोड़कर आ मिलेगी। माठा बाबा ने एक बार मनीराम और अलगू को ऐसे सुरमे के बारे में बताया था, जिसे आँख में आँज लीजिए तो कपड़े के नीचे भी सब कुछ साफ-साफ दिखाई पड़ता है। बाबा ने बताया था कि उस सुरमे का जिक्र बाबा तुलसीदास ने रामायण में 'सुअंजन' के नाम से किया है, जिसका उपयोग 'साधक सिद्ध सुजान' लोग करते रहे हैं।

दोनों लोग उस सुरमे की तलाश में कई बार अयोध्या गए। कई दिन खोजा। मिला भी, लेकिन असली नहीं मिला। उससे कोई काम नहीं बना। बाबा ने सांत्वना दी-"मिलावट ने ही तो दुनिया को बर्बाद किया है।"

तब खरीफ में उँचास की जमीन पर थोड़ा-बहुत ज्वार-बाजारा होता था, लेकिन मुख्य फसल धान की ही होती थी जो क्वार के अन्त तक या कार्तिक में कटती थी।

चारकोसी परिक्रमा के समय गाँव में कोई काम नहीं रहता था। गाँव के दमड़ी सेठ ने सन् 1940 के आसपास अयोध्या में दो मंजिल की धर्मशाला बनवा दी थी। गाँव के लोग जाते तो स्नान करने और मेला घूमने के बाद उसी में रात्रि-विश्राम करते। सबेरे हनुमान गढ़ी का दर्शन करके वापस लौटते थे।

अब धान और बाजरे की खेती करके तो गुजारा होने वाला नहीं है। ज्वार-बाजरा गाँव से पूरी तरह गायब हो गया। प्लास्टिक आने के बाद सनई भी बोने की जरूरत नहीं रही। अब सितम्बर की शुरुआत में ही गोभी लगाई जाती है। अक्टूबर में आलू

बोने की मारामारी रहती है। गोभी की निराई-गुड़ाई के लिए मजदूर पूरे नहीं पड़ते। किसको फुरसत है अयोध्या जाने की !

पहले कहा जाता था-'तेरह कातिक तीन अषाढ़' यानी किसान के लिए कार्तिक महीने के तेरह दिन और आषाढ़ महीने के तीन दिन सर्वाधिक व्यस्तता के होते हैं। अब वह बात नहीं रही। अब करना चाहें तो बारहों मास काम है।

पिछड़ी जाति के लोगों का मानना है कि मुख्यमंत्री की कुर्सी पर पिछड़ी जाति के एक आदमी को बैठा देखकर ऊँची जाति के लोगों की छाती फट रही है। मंडल आयोग की रिपोर्ट लागू करके प्रधानमंत्री अपने ही लोगों की नजर में गद्दार बन गए हैं। अब इनका कुर्सी पर रहना उन लोगों को फूटी आँख नहीं सुहा रहा है तो उत्पात मचा रहे हैं। ये लोग हमेशा धर्म की आड़ में अधर्म करते आए हैं। फिर करेंगे। उसी के उस्ताद हैं। इनको और आता क्या है!

तूफानी अपने लोगों को समझा लेता है- "हमें मन्दिर से क्या काम। मन्दिर हमें रोटी देगा क्या?"

लेकिन गाँव के रिश्ते में तूफानी के बाबा लगनेवाले फेरई दास जाना चाहते हैं। इस बार मन्दिर की नींव पड़नी है। चाहते हैं कि उनके हाथ से भी एक मुट्ठी बालू नींव में पड़ जाए।

फेरई दास ने साल-भर पहले ही कंठी ली है और मांस-मछली खाना छोड़ दिया है। इस साल एक बालक को अपना चेला भी मूँड़ा है। उसी को साथ लेकर जा रहे हैं।

"चलो, कारसेवा करने चलो।"

"कारसेवा का मतलब क्या हुआ?"

"कार माने काम और सेवा माने सेवा। दिन-भर मन्दिर के निर्माण में काम करिए और रात में संतों की सेवा करिए। संतन को भोग लगै भक्त करें सेवा।"

मनोकामना तो उनकी भी है कि अयोध्या में रहने के लिए एक अखाड़े का इन्तजाम हो जाए। वे भोग लगाएँ और उनके भक्त सेवा करें। लेकिन दलित साधुओं को वहाँ के महंत टिकने नहीं देते। बड़े चाईं होते हैं। सात पुश्त की जनमपत्री बाँच लेते हैं।

फेरई गुरु-चेला निकले तो रास्ते में अनारा का बूढ़ा तबलची अलबेला मिल गया। उसने बताया, "परिक्रमा पर तो सरकार ने रोक लगा दी है। रास्ते में पुलिस लगी है। अयोध्या जाने से मना कर रही है। सबको मार-मार कर भगा रही है।"

फेरई दास दाढ़ी के बाल खुजलाते हुए कुछ देर तक सोचते रहे फिर बोले-" जो होगा, देखा जाएगा।"

अलबेला भी साथ हो लिया।

अगम बहै दरियाव

कारसेवकों के गुम्बद पर चढ़ने और पुलिस द्वारा लाठी-गोली चलाने की खबर अखबारों में पढ़-पढ़कर तूफानी चिन्तित होता रहा। कुछ भी हो, फेरई दास रिश्ते में उसके बाबा लगेंगे। जब तक सुरक्षित लौट न आवैं, चिन्ता तो होगी ही।

लेकिन दस दिन बाद लौटा भी तो अकेले फेरई दास का चेला मतोले। उसने बताया कि पुलिस को चकमा देकर खेत-बाग से होते हुए वे लोग अयोध्या पहुँच गए थे। तीस तारीख को इतनी भीड़ हो गई थी कि अपनी जगह से हिलना मुश्किल । तभी लाठीचार्ज हो गया और भगदड़ मच गई। गुरुजी का हाथ छूट गया। तब से अब तक उन्हें खोज ही रहा था। भीड़ छँटी तो 'खोया-पाया' के तम्बू में दोनों लोगों का नाम लिखाकर पुकार कराई, लेकिन कुछ पता नहीं चला।

महीने-भर बाद जब शहीद हुए कारसेवकों के अस्थिकलश गाँव-गाँव घुमाये जाने लगे तो इस गाँव में भी आए। लोगों ने पढ़ा एक अस्थिकलश पर फेरई उर्फ रामफेर, ग्राम बनकट का भी नाम था। शोर मच गया। पूरे टोले के लोग उस अस्थिकलश पर फूल चढ़ाने के लिए उमड़ पड़े। माठा बाबा ने कहा- "धन्य हैं फेरई दास, जिन्होंने इस गाँव का नाम भी 'श्रीराम' के रजिस्टर में शहीदी गाँव के रूप में दर्ज करा दिया।"

अब प्रश्न उठा कि उनका क्रिया-कर्म किस रीति से किया जाए? कंठी ले चुके थे इसलिए साधुओं के तौर-तरीके से या गृहस्थ के ? चूँकि अभी गृहत्यागी नहीं हुए थे इसलिए गृहस्थी के नियम से चलना ही ठीक माना गया। मृत्यु का पता आज चला तो आज के तेरहवें दिन तेरही होनी चाहिए।

लेकिन फेरई दास तीसरे दिन ही साँझ के धुँधलके में प्रकट हो गए। खाली हाथ। तुमड़ी, चिमटा कहाँ गया? उन्होंने बताया कि भगदड़ हुई तो वे भीड़ के नीचे दबकर बेहोश हो गए थे। होश आया तो अस्पताल में थे। आठ दिन बाद अस्पताल से छूटे तो हनुमान गढ़ी से लेकर सरजू के घाट तक कई दिन तक मतोले और अलबेला को खोजते रहे।

"दो दिन पिछड़ गए, बाबा।" किसी लड़के ने कूट किया-"नहीं तो अपने अस्थिकलश पर खुद भी फूल चढ़ाकर पुन्नि कमाते।"

"लेकिन तेरही का खर्च बचा लिया।" दूसरा बोला।

विद्रोही जी कचहरी में जेल के लिए रवाना हुए तभी उन्हें आभास हो गया था कि इस बार उनकी दीवाली जेल में ही बीतेगी। सी.जे.एम. कोर्ट से जमानत की अर्जी खारिज हो गई। सेशन कोर्ट से भी खारिज ही होनी है। 419, 420, 467 और 468 जैसी गैरजमानती दफा लगी हों तो अक्सर यही होता है। दो दिन बाद ही दीवाली है। इसके बाद गोवर्धन पूजा और भाईदूज की छुट्टियाँ। उसके बाद ही हाईकोर्ट में सुनवाई हो पाएगी।

कोई बात नहीं। रास्ते-भर वे अपने मन को मजबूत करते रहे-'जेल भी तो मर्दों के लिए ही बनी है।'

लेकिन जेल के अन्दर घुसते ही उनकी खोपड़ी भाँय-भाँय करने लगी। उसके बाद कब उनकी आमद दर्ज हुई, कब थाली-कटोरी-गिलास मिला, कंबल मिला, क्या खाया, क्या पिया-कुछ याद नहीं। जैसे सब कुछ सपने में खुद-ब-खुद होता चला गया। सारी रात आँखों में कट गई। पूरी तरह होश में आने में चौबीस घंटे लग गए। और होश में भी कैसे आए? सिर झुकाए बैठे थे तो किसी ने पीछे से कन्धे पर हाथ रखते हुए पूछा- "रामबोध भाई हैं क्या?" विद्रोही जी ने सिर उठाकर देखा, 'पक्के' की पीली वर्दी में छोटी-छोटी पकी दाढ़ी-मूँछ वाला चेहरा, इकहरा शरीर, चमकती आँखें।

"नहीं पहचाने?" पूछने के साथ वक्त की मार खाया हुआ चेहरा मुस्कराया तो विद्रोही जी की आँखों में चमक आ गई।

"अरे, माजिद भाई!"

विद्रोही जी उठकर माजिद के गले लग गए।

जूनियर हाई स्कूल में माजिद उनसे एक दर्जा आगे थे।

"आप यहाँ कैसे?"

माजिद ने बताया कि वे अपने दामाद का कत्ल करके जेल आए हैं। गोली मारनी पड़ी, इसलिए कि बदचलन हो गया था। ससुराल आता तो खानदान की बहू-बेटियों से गलत हरकत करता। कई बार समझाया। अल्टीमेटम दिया कि सुधर जाओ वरना गोली मार दूंगा; पर नहीं सुधरा। एक बार ऐसी ही गलत हरकत करने पर पीछा करते हुए उसके गाँव तक गया और गोली मार दी। उसके गाँव के लोगों ने कहा- "गलती की माफी माँग लो तो हम लोग गवाही नहीं देंगे। छूट जाओगे।"

मैंने कहा- "माफी नहीं माँगूगा। सजा भुगत लूँगा।" बाप रे! ऐसे दिलेर लोग भी हैं दुनिया में!

सुबह-सुबह अखबार मिल जाए तो विद्रोही जी को और कुछ नहीं चाहिए। कैदियों तक अखबार एक दिन बाद पहुँचता है। दीवाली की शान्त सुबह में वे

एक दिन पुराना अखबार बैरक के बाहर बने चबूतरे पर फैलाकर पढ़ने बैठे हैं। उनकी आदत हर खबर को आदि से अन्त तक पढ़ने की है। एक ही बात से उन्हें उलझन होती है। आधी खबर पहले पन्ने पर छापकर कहते हैं कि बाकी पढ़ने के लिए फलाने पेज पर जाओ। उनकी दूसरी आदत अखबार को बोलकर पढ़ने की है। मन-ही-मन पढ़ने से पूरी तसल्ली नहीं होती। बोलकर पढ़ते हैं तो दूसरे कैदी भी सुनने आ जाते हैं।

'नेल्सन मंडेला को भारतरत्न सम्मान' - एक बड़े फोटो के साथ पहले पेज पर प्रमुखता से खबर छपी है। फोटो में एक दरमियाने कद का बूढ़ा, राष्ट्रपति से मेडल प्राप्त कर रहा है।

विद्रोही जी आगे पढ़कर बताते हैं- " यह अपने देश का सबसे बड़ा सम्मान है जो पहली बार गैर-देश के किसी आदमी को दिया गया है।"

"ऐसा क्या किया इन्होंने?"

"इन्होंने अपने देश से गोरों का आतंक खत्म अट्ठाईस साल जेल काटी।" कराया। इसके लिए सत्ताईस-

"ओ! फोटो में बहुत बूढ़े और कमजोर लग रहे रहे हैं।"

"शक्ल-सूरत से छोटी जाति के लगते हैं। बड़ी जाति के होते तो कनेक्शन भिड़ाकर पहले छूट जाते। इतने दिन जेल में न रहना पड़ता।"

"कौन जाति हैं?"

"उनके देश में जाति नहीं होती।" विद्रोही जी ने स्पष्ट किया।

"क्यों नहीं होती?"

"इसलिए कि जाति बनाने वाले वहाँ तक पहुँच ही नहीं पाए। उस समय अपने यहाँ समुद्र-यात्रा वर्जित थी।"

दो-चार दिन में ही चित्त स्थिर हो गया। चौदहवें दिन बाहर निकले तो इतना हेल-मेल, हौसला और नियम-कानून की जानकारी लेकर निकले जितना बाहर रहकर चौदह महीने में भी न होती। लेकिन असली लड़ाई तो अभी बाकी है। वित्तीय और प्रशासनिक अधिकारों की बहाली के लिए दूसरी रिट

दाखिल करनी होगी। पैसा चाहे जितना खर्च हो जाए, पावर वापस चाहिए। पैसा पावर से बढ़कर थोड़े है!

सवा महीने बाद हाई कोर्ट से वापस लौटे तो पावर बहाली का आदेश साथ लेकर।

हाई कोर्ट ने विद्रोही जी के इस तर्क में बल पाया कि उनके विरुद्ध निर्णय लेने के पहले उन्हें अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अवसर नहीं दिया गया जो प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त के विरुद्ध है।

247

...इसलिए जिलाधिकारी द्वारा पारित आदेश का प्रभाव और क्रियान्वयन अग्रिम आदेश तक स्थगित किया जाता है। याची अपने पद व दायित्वों का निर्वहन पूर्ववत करता रहेगा।... जाँच की प्रक्रिया चलती रहेगी।

दस बजने वाले हैं। धूप तेज हो गई है। हवा में गरमी आ गई है। एक बूढ़ी झुकी कमर को लाठी के सहारे साधती सड़क की पटरी पकड़े चली जा रही हैं। उनके दूसरे हाथ में एक झोला है। पैरों में घिसी हुई हवाई चप्पल है।

इस ऊसर वाले इलाके में सड़क के किनारे इक्का-दुक्का पेड़ हैं। दोनों तरफ खरीफ की फसल कटने से खाली हुए खेतों का पीलापन और वीरानी फैली है।

ये बूढ़ी सियादुलारी हैं। उम्र पचहत्तर के आसपास होगी। फर्जी वसीयत का मुकदमा लड़ने तहसील जा रही हैं। एक दबंग ठेकेदार ने तहसीलकर्मियों को मिलाकर कागजों में उन्हें मृत दिखा दिया है और सड़क के किनारे की दो बीघा जमीन पर अपनी वसीयत दर्ज कराकर कब्जा कर लिया है। उस पर मोरंग-बालू की दुकान खोल दी है।

सियादुलारी बीस वर्ष पहले विधवा हो गईं। अकेली हैं। उनकी एकमात्र संतान, एक बेटी अपने परिवार के साथ बम्बई में रहती है। बेटी ने इस जालसाजी की खबर सुनी तो पति के साथ दौड़ी आई। दौड़-धूप कर मुकदमा दर्ज कराया। दो-तीन तारीख पर खुद भी आई। लेकिन इतनी दूर से कोई कितनी बार दौड़-दौड़कर आ सकता है। ढीली पड़ गई। दूसरे-तीसरे महीने सौ-दो सौ रुपये का मनीऑर्डर भेज देती थी। अब वह भी करीब-करीब बन्द हो गया है। मुकदमे का यह सातवाँ साल है। अभी सिर्फ तारीख पड़ रही है।

सियादुलारी को आँख से कम दिखाई देता है। कान से कम सुनाई देता है। तारीख वाले दिन वे घंटा-भर रात रहे उठती हैं। अपनी गाय-बछिया को चारा देती हैं। उनके पीने के लिए हौदी में पानी भरती हैं। इनकी देख-रेख का जिम्मा पड़ोसिन को सौंपकर रात की बनी रोटी झोले में रखकर निकल पड़ती हैं। धूप तेज होने के पहले जितना रास्ता कट जाए, उतना अच्छा।

तेरह किलोमीटर की दूरी वे चार-साढ़े चार घंटे में तय करती हैं। थोड़ी देर सुस्ताकर पेशकार के सामने हाजिर होती हैं। तारीख पड़ चुकी होती है तो आँचल के खूँट से दो रुपये का नोट निकालकर पेशकार की ओर बढ़ाती हैं। पेशकार

फुसफुसाकर और पंजा पूरा फैलाकर पाँच रुपये देने का संकेत करता है। वे हर बार चिरौरी करती हैं-"कहाँ से लाएँ, साहेब। हमारे यहाँ कौन कमाने वाला बैठा है!"

पहले 'बेटवा' कहती थीं। फिर उन्हें लगा कि बेटवा कहने से चिड़चिड़ा जाता है पेशकार, तो 'साहेब' कहने लगीं।

पेशकार दो रुपया लेने का इच्छुक नहीं दिखता। सियादुलारी फिर चिरौरी करती हैं-" राँड़-रेवा हूँ, साहेब। तुम्हारे लिए ही तो इसे बचाकर लाती हूँ। किराए में नहीं खर्च करती। पैदल आती हूँ। दो दिन तक पैर दर्द से चिलकते हैं।"

पेशकार बेमन से दो रुपये का नोट पकड़ता है और एक पुर्जी में अगली तारीख नोट करके बूढ़ी को पकड़ा देता है। सियादुलारी पुर्जी को आँचल के टोंक में दो गाँठ लगाकर बाँधती हैं और कमर में खोंस लेती हैं।

बाहर निकलकर सियादुलारी पप्पू की चाय की दुकान के सामने आम के पेड़ के नीचे आती हैं। झोले से गिलास निकालकर सामने हैंडपम्प से पानी लेती हैं और पास पड़े पत्थर पर बैठती हैं। झोले से सूखी रोटियाँ निकालकर उनके टुकड़े गिलास के पानी में भिगोकर नरम करती हैं, फिर देर तक चुभलाती हैं। बिना दाँत का पोपला मुँह लोहार की भाथी की तरह ऊपर-नीचे चलता है। इतने दिनों से आते-जाते आसपास के दुकानदार भी सियादुलारी को पहचानने लगे हैं। कभी-कभी सत्तू की दुकान वाली सहुआइन महुए के पत्ते पर चटनी रखकर दे जाती हैं। पप्पू चाय का गिलास दे देता है। पहली बार पप्पू चाय देने आया तो बूढ़ी ने घबड़ाकर हाथ जोड़ दिए-" नहीं, बेटवा ! मेरे पास पैसा नहीं है।"

"कोई बात नहीं। पी लीजिए।"

देर तक असमंजस में रहीं सियादुलारी। पी लेने के बाद पैसा माँगने लगा तो? सियादुलारी का चेहरा पप्पू को अपनी नानी से मिलता हुआ लगता है। नानी के घर से उनके दो थान गहने चुराकर भागा था पप्पू। उन्हीं को बेचकर यह दुकान खोली है। उसे लगता है, वह अपनी नानी को चाय पिला रहा है।

रोटी निगलकर बूढ़ी आम के पेड़ के नीचे घंटे-दो घंटे आराम करती हैं। तीन बजे वापस लौटती हैं।

नदी के पुल पर बैठे दो लोग दूर से आती बुढ़िया को देख रहे हैं। सूरज अस्त होने जा रहा है।

एक-दूसरे को बताता है-"यही है वह बुढ़िया, जिसके खेत ठेकेदार ने हड़प लिये। मुकदमे की तारीख से लौट रही है।"

दूसरा, बुढ़िया की उम्र और परेशानी देखकर द्रवित है-" इस बेचारी को लूट लिया! इतना जालिम ! जालिम का इलाज जरूरी है।"

और दस दिन बाद ठेकेदार को एक चिट्ठी मिलती है-

सियादुलारी के खेत वापस कर दो वरना अंजाम के लिए तैयार रहो।

- जंगू

ठठाकर हँसा ठेकेदार। "यह जंगू कौन है साला?"

एक महीने बाद मोरंग की दुकान पर शाम के धुँधलके में पता नहीं किधर से तीन लोग प्रकट हुए। ठेकेदार ने बोतल गिलास और नमकीन स्टूल पर जमाया ही था कि 'पकड़' हो गई। पटककर तुरन्त मुँह में कपड़ा दूँसा गया फिर पास के महुए के पेड़ की जड़ में डालकर उसके दोनों पैरों को आगे की ओर उलटकर घुटनों को तोड़ दिया गया।

"मेरा ही नाम जंगू है। फिर कभी इधर दिखाई मत पड़ना।"

बाद में खुद को जनसेवक कहने वाले जंगू की यह पहली पहली जनसेवा थी।

बहुत सुन्दर बछिया पैदा हुई, सफेद और खैरे रंग की चितकबरी। संतोखी ही दुहते थे। थानेदारिन उन्हें एक पाव दूध चाय के लिए देती थीं। लेकिन थानेदार साहेब का ट्रांसफर हो गया। थानेदारिन तो चाहती थीं कि संतोखी भी उनके साथ चलें लेकिन साहेब का ट्रांसफर कप्तान साहब के दफ्तर में हुआ है। अभी तो यही समस्या है कि गाय कहाँ रखेंगे।

इतना अच्छा हुआ कि जाते-जाते साहेब छत्रधारी के खिलाफ चार सौ बीसी की रिपोर्ट दर्ज करते गए।

नई थानेदारिन भी अच्छी हैं। सुन्दर भी हैं। साहेब के जाने के बाद बाल झारने के लिए मचिया पर बैठती हैं तो... बाप रे, कितने लम्बे बाल ! बालों में जो तेल लगाती हैं उसकी महक संतोखी की कोठरी तक आती है। पूर्णमासी के चाँद की तरह गोल और गोरा मुखड़ा। देखिए तो देखते ही रह जाइए। पतली आवाज में प्रेम से बोलती हैं। पुरानी थानेदारिन परिचय करा गई हैं। इनके साथ गाय-गोरू का झंझट भी नहीं है।

केस दर्ज होने के बाद अगला काम है तफ्तीश। थाने पर रह जाएँगे तो तफ्तीश कराना आसान होगा। नहीं तो ऐसे मामले की तफ्तीश सालों धूल फाँकती है। रोज

अगम बहै दरियाव

हाथ जोड़कर खोपड़ी पर खड़े रहेंगे तो कितने दिन टालेंगे? आखिर ढाई साल में रिपोर्ट लिखवा ही लिये।

नई थानेदारिन उनके बीवी-बच्चों का हाल पूछने लगीं। बता दिया- "एक ही बेटा है, साहेब। माँ के साथ ननिहाल भेज दिया था। सोलह किताब पढ़ लिया। इस साल बैंक की नौकरी पा गया है।"

"मेरा बेटा तो लगता है, पढ़ नहीं पाएगा।" पतीली में चायपत्ती डालते हुए थानेदारिन कहती हैं।

"ननिहाल न भेजते तो क्या करते? छत्रधारी से बहुत खतरा था। मेरा घर फुंकवा दिया। दुबारा छवा नहीं पाए।"

"बचपन में पढ़ने में बहुत तेज था, फिर सोहबत बिगड़ गई।"

"फिर छवाते, वे फिर फुंकवा देते। सरहंग आदमी हैं। हम कितनी बार छवाते?"

"सोहबत का बहुत असर पड़ता है। साहेब को कभी इतनी फुरसत नहीं मिली कि उसकी कॉपी-किताब चेक करते।"

"मेरे एक मामले की तफतीस साहेब के पास लटकी है।... उसी को अगर आप..."

थानेदारिन चुपचाप चाय छानने लगीं। इसका मतलब इस समय आगे की 'रामकहानी' सुनाने से कोई फायदा नहीं।

"साहेब को चाय दे आओ।"

एक दिन संतोखी को नींद का पहला झोंका ही आया था कि गेट के अन्दर घुसती कार की हेडलाइट से उनकी कोठरी पल-भर के लिए उजाले से भर गई। 'पहरा' के रोकते-रोकते गाड़ी बीच अहाते में आकर रुकी।

कप्तान साहब औचक मुआयने पर आ गए क्या? लुंगी खोलकर फेंकने और वर्दी चढ़ाने में एक मिनट भी नहीं लगा साहेब को। जब तक संतोखी उठकर अपनी कोठरी के कोने से झाँकते, साहेब सेल्यूट मारने के लिए लपके, लेकिन गाड़ी देखकर रुक गए।

दहाड़े-"कौन?"

गाड़ी से हाथ जोड़ते हुए एक अधेड़ निकला।

"हुजूर, मैं कानपुर का साबुन व्यापारी हूँ, सुगनामल सिन्धी। तगादा करके लौटते-लौटते रात हो गई तो पीछे बदमाश लग गए। जान-माल की सलामती के लिए आपकी शरण में आया हूँ।"

साहेब ने कोने से झाँक रहे संतोखी से मुड़कर कहा- "इनको एक चारपाई दे दो। उधर बिछाकर सो जायँ।"

251

घंटे-डेढ़ घंटे बाद नीमअँधेरे में तीन परछाइयाँ साहेब के आवास की खिड़की के बाहर झलकीं। खिड़की के आर-पार से बात हुई। परछाइयों ने बताया कि चारपाई पर सोए सेठ के पास मोटी रकम है। माल आधा-आधा बाँटने का सौदा हुआ। यह ताकीद भी की गई कि थाना परिसर के अन्दर खून-खराबा नहीं होना चाहिए। गला घोंटो और लाश गायब कर दो।

संतोखी को कुछ अनहोनी की आशंका हुई। उन्हें सेठ के सूखे मुँह और डरी आँखों की याद आई। परछाइयाँ गायब हुईं तो संतोखी दबे पाँव सेठ की चारपाई के पास आए। सेठ जगा था। अपना बैग पकड़े चारपाई पर बैठा था।

उसके कान में फुसफुसाए- "तुम्हारे सिर पर काल मँडरा रहा है। इस आम के पेड़ पर चढ़ जाओ। दम साधकर बैठे रहना। खाँसना-खखारना नहीं।"

उसको ठेलकर पेड़ पर चढ़ाया और बैग उसको पकड़ा दिया।

दो-ढाई बजे के करीब फिर थानेदार साहब की खिड़की के बाहर परछाइयाँ झलकीं।

"हुजूर, माल तो नहीं मिला।"

"गाड़ी में देखो।"

"देख लिया।"

थानेदार साहेब बाहर आए। टॉर्च जलाई तो देखा, उनका जवान बेटा चारपाई पर मरा पड़ा था। थोड़ी-सी जीभ दाँतों के बीच से बाहर निकल आई थी।

लड़का आधी रात में पिक्चर देखकर लौटा तो बाहर बिछी चारपाई खाली देखकर उसी पर सो गया। बदमाशों ने सेठ समझकर अँधेरे में उसी का गला घोंट दिया। साहेब चीखकर इकलौते बेटे की लाश पर गिर पड़े। सारा थाना जग गया।

सबेरा होते-होते थाना खाकी वर्दी से भर गया।

सेठ कहाँ गया? खोज शुरू हुई तो पेड़ के ऊपर से आवाज आई-" मैं यहाँ हूँ, सरकार।"

शाम तक साहेब निलम्बित होकर गिरफ्तार हो गए। जाँच बैठ गई। संतोखी को थाने की हवालात में बन्द करके तीन दिन तक पूछताछ की गई।

जाँच अधिकारी ने पहले ही निष्कर्ष निकाल लिया था कि ड्राइवर के साथ-साथ संतोखी के तार भी अपराधियों से जुड़े हैं। इसी को कबुलवाने के लिए उनको निशाने पर लेकर सख्ती की जा रही थी। वे तीन दिन में तीन बार बेहोश हुए। लेकिन 'तार' होते तब तो जुड़ते। चौथे दिन सबेरे उन्हें छोड़ा गया तो बदहवास लँगड़ाते हुए गेट की ओर बढ़े। गेट पर संतरी की नजरों से पता चला कि वे अलफ नंगे हैं। अब न

अगम बहै दरियाव

उनसे आगे जाते बने, न पीछे। यहीं उन्हें यह भी पता चला कि उनके हाथ उन्हीं के अँगोछे से पीछे बँधे हैं।

घंटे भर बाद टॉर्चर रूम से उनकी धोती वापस मिली और हाथ खोल दिए गए। वे धोती कमर में लपेटते, लँगड़ाते हुए बाहर भागे।

खुद को ब्राह्मण और क्षत्रिय मानने वाली कुछ जातियों को मंडल आयोग की सिफारिश पर 'अन्य पिछड़ी जाति' की सूची में शामिल किया गया है। एक से सामाजिक प्रतिष्ठा मिल रही है, दूसरी से आर्थिक मजबूती मिलेगी। वे पिछड़ी जाति का प्रमाणपत्र तो बनवा रही हैं लेकिन यह भी कोशिश है कि यह बात जितनी ढँपी-तुपी रहे उतना अच्छा।

लेकिन कुछ घरों की औरतें इसका मुखर विरोध कर रही हैं। पीढ़ियों के प्रयास के बाद तो सवर्ण माने गए थे, अब फिर शूद्र बन जाएँ? गाँव में कहीं मुँह दिखाने लायक नहीं रहेंगे।

"चोप्प ससुरी, जिन्दगी-भर भकचोन्हर ही बनी रहेगी?"

पार्टी ने प्रचार के लिए तूफानी की ड्यूटी बगल के विधानसभा क्षेत्र में लगाई है। रामवादी पार्टी ने यहाँ से शिक्षा माफिया चन्द्रकान्त ओझा को उम्मीदवार बनाया है। मान्यवर की पार्टी ने उनके मुकाबले में लोटनराम वर्मा को खड़ा किया। लोटनराम साइकिल से कचहरी आने-जाने वाले वकील हैं और शुरू से ही पार्टी से जुड़े हैं। दो मंडलियाँ लेकर तूफानी लोटनराम के प्रचार के लिए आया है। लोटनराम ने बाजार में दो कमरों का एक मकान दिला दिया है। पीछे बड़ा-सा आँगन है। उसी में खाना बनता है। तूफानी खाना बनाने के लिए अपने गाँव से दो लड़के ले आया है। लोटनराम ने बोरे में आटा, चावल,

दाल और आलू पहुँचा दिया है। मिर्च-मसाले-तेल-नमक के लिए पाँच सौ रुपये दे गए हैं। जलावन देने के लिए पास की आरा मिल को सहेज दिया है।

253

लड़के शाम को लिट्टी-चोखा बनाते हैं और सबेरे खिचड़ी। खिचड़ी खाकर और शाम को बनी दो-दो लिट्टी जेब में डालकर नाट्य-मंडली प्रचार के लिए साइकिल पर निकल पड़ती है। वर्षों से वही नाटक करते-करते अभिनेता अपने रोल में मँज गए हैं। ढोल-मजीरे और झाँझ हारमोनियम का संगीत भीड़ को तुरन्त खींच लेता है।

शिक्षा माफिया को लग रहा है कि इन नाट्य-मंडलियों का सन्देश जनमत को उनके विरुद्ध कर रहा है। एक-दो बार उनके समर्थकों की इन मंडलियों के साथ झड़प हुई, लेकिन खुलेआम इससे ज्यादा कुछ करना खतरे से खाली नहीं है। चुनाव आयुक्त शेषन का आतंक दिनोदिन बढ़ता जा रहा है। लोग कहने लगे हैं कि टी.एन. शेषन अपने नाश्ते में रोज दो नेता खाते हैं। तब कैसे इन नाटक-नौटंकी वालों से निपटा जाए?

रात दो बजे का समय रहा होगा। पूरा बाजार अँधेरे में डूबा था। दिन-भर प्रचार कार्य से थककर चूर लड़के बरामदे से आँगन तक फैलकर बेसुध सोए थे। तभी दो ट्रकों में पचास-साठ लोग आए।

ट्रक का इंजन थोड़ी दूर पहले बन्द कर दिया। सोए पड़े इक्कीस लोगों के सिरहाने-पैताने दो-दो मुस्टंडे खड़े हो गए। उन्हें गीली रूमाल सुँघाई गई और मुँह, हाथ, पैर बाँधकर ट्रक में लादा जाने लगा। आँगन के कोने में जूठे बर्तनों के बीच जमीन पर सोया एक लड़का जग गया। उसने बगल सोए अपने साथी को हिलाकर जगाया और दोनों आँगन की चहारदीवारी फाँदकर पिछवाड़े कूद गए।

सबेरे लोगों ने देखा कि ढोल, हारमोनियम अपनी जगह सुरक्षित हैं। साइकिलें भी खड़ी हैं, लेकिन आदमी एक भी नहीं दिखता। गली के कुत्ते पतीले में रखी लिट्टी निकालकर इधर-उधर बैठे खा रहे हैं।

पोलिंग के आठ दिन बचे थे। पता ही नहीं चला कि इतने लोग अचानक कहाँ गायब हो गए! उनके साथ क्या हुआ? धरती निगल गई कि आसमान?

दोनों लड़के गिरते-पड़ते अगले दिन शाम को गाँव पहुँचे तो इतना ही बता पाए कि रात के अँधेरे में एक भीड़ अन्दर घुस आई थी।

जहाँ-जहाँ लावारिस लाश मिलने की खबर मिलती, दहबंगा पहचान करने पहुँच जातीं। उनके घर के दो लोग गायब थे- तूफानी और उसका चचेरा भाई बदरी।

पोलिंग के तीसरे दिन उन्नीस नाट्यकर्मियों को आधी रात में बगल के जिले की सीमा पर छोड़ा गया और तूफानी दोनों भाइयों को मरणासन्न हालत में दूसरे जिले की सीमा पर सड़क के बगल की बाँस की कोठ में फेंका गया। सबेरे दिशा-मैदान के लिए जाती गाँव की औरतों ने कराहने की आवाज सुनकर लोगों को बताया।

अगम बहै दरियाव

अस्पताल में तूफानी दोनों भाइयों की देख-रेख के लिए अकेले झूरी थे। दहबंगा दौड़-भागकर चिन्ता से बीमार पड़ गई थी। अभी पार्टी का कोई आदमी उनकी हाल-खबर लेने नहीं पहुँचा। अस्पताल में ही तूफानी को अखबार से पता लगा कि लोटन वर्मा को शिक्षा माफिया ने तेईस हजार से ज्यादा वोटों से हराया है। रामवादी पार्टी को पूर्ण बहुमत मिल गया था।

जिस दिन तूफानी को अस्पताल से छुट्टी मिली, उसी दिन शिक्षा माफिया चन्द्रकान्त ओझा ने शिक्षामंत्री की शपथ ली।

थाने पर रिपोर्ट लिखाने की जिद पर अड़े तूफानी को थाना इंचार्ज देर तक समझाता रहा कि चुनावी हिंसा को हिंसा नहीं माना जाता। जिसको जहाँ पहुँचना था पहुँच गया। तुम भी अपनी कचहरी सँभालो।

हाथ काँपने के कारण संतोखी को 'कटिंग' का काम छोड़ना पड़ा। दाढ़ी बनाते समय कभी-कभी ग्राहक के गाल पर छुरे का कट लग जाता था। अब वे कचहरी और बस अड्डे के बीच घूम-घूम कर लाई-चना बेचते हैं। पत्नी को बेटे के पास से लिवा लाए हैं। ठोंगा बनाने और नमक की पुड़िया तैयार करने का काम वही करती है। लाई-चने से ज्यादा उनके 'हरे नमक' को प्रसिद्धि मिली है। हरी मिर्च, हरी धनिया

और लहसुन के साथ पिसा हुआ नमक - हरा नमक। कुछ लोग तो उसी का स्वाद लेने के लिए लाई खरीदते हैं। कई वकील, मुंशी और बेंडर नियमित ग्राहक बन गए हैं। कभी-कभी जज लोग भी चपरासी भेजकर मँगवाते हैं।

लाई का दाम, नमक इनाम - लाई-चना बेचने के साथ वे छत्रधारी द्वारा अपने साथ की गई ज्यादती और छल का किस्सा भी गाकर सुनाते हैं। इलाके में प्रचलित पारम्परिक लोकगीतों की धुन और पंक्तियों तथा अवधी बोली के स्थानीय कवियों की उपयोगी लगने वाली पंक्तियों को लेकर, जरूरत के अनुसार अपनी ओर से कुछ जोड़कर लम्बा पँवारा गढ़ लिया है। हर जगह से घूमकर कचहरी के अन्दर विशाल बरगद की छाया में आते हैं। वहाँ कई बेंचें रखी हैं। इन पर पुकार का इन्तजार करते मुकदमेबाज बैठे रहते हैं। उन्हें संतोखी का इन्तजार रहता है। इनके बीच पन्द्रह-बीस ठोंगे आराम से बिक जाते हैं।

संतोखी कन्धे से टँगा लाई-चने का झोला खाली बेंच पर रखते हैं और पँवारे की शुरुआत करते हैं।

शुरुआत वे छत्रधारी सिंह के पिता इन्दर सिंह के कारनामों के उल्लेख से करते हैं-

इन्दर सिंह कै बखान पंचौ सुनो लगा के कान जेकरे पपवा से धरती रही गरुआन।

उन इन्दर सिंह उर्फ इन्द्रपती सिंह का बखान सुनिए जिनके पाप से धरती बोझ महसूस करने लगी थी।

संतोखी ने दाढ़ी-मूँछ रख ली हैं। सिर के लम्बे बालों ने जटा का रूप ले लिया है। सफेद लम्बे चोंगे और लुंगी में वे किसी कबीरपंथी साधु की तरह लगते हैं। गाते-गाते गला भी खुल गया है-

हर गंगा ने खेत नहीं काटे, हर गंगा ने खेत नहीं लूटे। हर बहन-बेटी ने सौंदर्य नहीं देखा, हर गंगा ने राल नहीं गिराई।

किसी कमजोर का खेत जबरदस्ती कटवा लेना, किसी का खलिहान लुटवा लेना, दूसरे की सुन्दर बहू-बेटियों पर कुदृष्टि डालना ही उनका काम था।

लम्बा कुरता करिया जाकिट एक-एक मा चार-चार पाकिट केह्या भरोसा भया हलाल कौनी घरी दगा दै जायें, हर गंगा...

भरोसा किए नहीं कि हलाल हुए। पता नहीं कब दगा दे दें। खैराती डाकू ने भरोसा किया और हलाल हो गया।

खैराती डाकू का किस्सा नहीं जानते?

वे खैराती डाकू का किस्सा सुनाने में इतना रम जाते हैं कि लाई का ठोंगा देने के बाद ग्राहक से पैसा लेना भूल जाते हैं।

बहुत पुरानी बात है। खैराती इस इलाके का खूंखार डाकू था और दमड़ी साह इस गाँव के मशहूर सेठ। गहना और खेत गिरवी रखकर कर्ज देने का कारोबार करते थे। धरम-करम में यकीन करते थे। अयोध्या और चित्रकूट में धर्मशाला बनवाई थी। एक पक्का सागर बनवाया था। अकाल पड़ा तो गाँव के पश्चिम में तालाब

अगम बहै दरियाव

खुदवाया और तीन महीने तक मजदूरी में खिचड़ी बाँटते रहे।

लेकिन इन्दर सिंह से खटक गई। उनका कहना था कि मोटा ब्याज भी लेते हो और कर्जदार को वापस करते समय चाँदी की जगह गिलट के गहने लौटाते हो। पूरे इलाके का धन लूट रहे हो। मैं गाँव का लम्मरदार हूँ। सुरक्षा देता हूँ-तो इस लूट में मेरा भी हिस्सा बनता है। अकेले नहीं खाने दूँगा।

दमड़ी साह नहीं माने। वे थाने पर पाँच सौ रुपया सालाना जन्माष्टमी का चन्दा देते थे। इन्दर सिंह ने खैराती को बुलाकर डाका डलवा दिया। तलघर की एक कोठरी गिरवी रखे गहनों से भरी थी। नगदी होती तो खैराती बाँध ले जाता। इतने गहने कब तक ढोये और रातों-रात कहाँ लेकर जाय? इन्दर सिंह ने सारा माल अपने घर रखवा लिया, लेकिन बात छिपी नहीं। पुलिस को खबर हो गई। कप्तान ने दबाव बनाया कि खैराती को पकड़वाओ नहीं तो लूटे गए माल की बरामदगी तुम्हारे घर से दिखाकर जेल भेज देंगे। इन्दर सिंह ने खैराती को माल बाँटने के बहाने बुलाया और खाने में जहर दे दिया।

पुलिस मरणासन्न खैराती को उठाकर ले गई और मुठभेड़ में मारा जाना दिखा दिया। लूटा गया माल आधो-आध बाँटा गया या सारा पुलिस वाले ले गए, पता नहीं चला।

ओनकर पूत भये छत्तर सिंह
जिनकर पाप रहा गरुआय
उज्जर दाढ़ी टेढुआ कुबरी
गोलुआ तिलक लिलारे पार

तो सफेद दाढ़ी फहराने वाले, माथे पर गोलुआ तिलक लगाने वाले और हाथ में टेढ़ी कुबरी लेकर चलने वाले छत्रधारी उन्हीं दगाबाज बाप के बेटे हैं, जिनके पाप से यह धरती दबी जा रही है।

संतोखी के गले में ऐसा जादू है कि वही किस्सा बार-बार सुनकर भी श्रोताओं का मन नहीं भरता। उन्हें सुनने के लिए भीड़ जुट जाती है। बीच-बीच में लाई-चने की बिक्री भी चलती रहती है। गीत की धुन और पंक्तियों में थोड़ा-बहुत बदलाव करके वे नवीनता बनाए रखते हैं।

रमेसर हमरा साथे करी,
गरीब जगहे जमीन लिखवा दी,
कहले कि रमेसर हरिद्वारे
नहाने गईल, हर गंगा...

257

संतोखी का आगे का नीचे वाला एक दाँत टूट गया है। गाते समय उस झरोखे से लुपलुपाती जीभ की झलक मिलती रहती है।

अयोध्या में राम मन्दिर का मुद्दा गरमाने के बाद पिछले साल से छत्रधारी अपना भट्ठा 'राम मन्दिर निर्माण समिति' के नाम से चला रहे हैं। समिति की सचिव उनकी पत्नी मनराज कुँवरि उर्फ इन्द्रावती हैं और मैनेजर दुर्गेश। वही सारा काम देखता है। अभिलेखों में समिति का उद्देश्य 'राम मन्दिर निर्माण' के लिए ईंट का उत्पादन करना है। समिति का कोई व्यापारिक उद्देश्य नहीं है। अर्थात ईंटों की खरीद-बिक्री नहीं की जाएगी। बिक्री ही नहीं तो टैक्स की देनदारी भी नहीं। निजी प्रयोग में ली गई ईंटों पर तो टैक्स है नहीं।

भट्ठे पर चार-पाँच लम्बे बाँसों में भगवा ध्वज फहराता रहता है। धार्मिक प्रवचन के कैसेट रात-दिन बजते रहते हैं। मन्दिर के लिए चलने वाले भट्ठे पर हाथ डालने की जुर्रत कोई पागल अफसर ही करेगा। और करेगा तो भुगतेगा।

अब भट्ठे पर राना, प्रताप आदि पुराने मार्के की ईंटें खोजने पर भी नहीं मिलेंगी। नई ईंटों के मार्के 'जय श्रीराम', 'रामशिला' और 'रामलला' हैं। अयोध्या जाने वाला कोई भी श्रद्धालु यहाँ से एक रामशिला दानस्वरूप ले जा सकता है। सबको सख्ती से समझा दिया गया है कि ईंटों की बिक्री से सम्बन्धित कोई हिसाब-किताब, पुर्जी तक भट्ठे पर नहीं मिलनी चाहिए। किसी बाहरी आदमी के सामने यह स्वीकार नहीं किया जाना है कि यहाँ ईंटों की बिक्री होती है।

लेकिन इधर एक नया झमेला पैदा हो गया। छत्तीसगढ़ी लड़कियों की सुन्दरता के क्या कहने ! दुर्गेश एक छत्तीसगढ़ी लड़की को भगा ले गया। सारे मजदूरों ने काम ठप्प कर दिया है। उनकी माँग है कि या तो दुर्गेश उस लड़की से शादी करे या उसे लौटाए और हर्जाना दे।

ऐसे गाढ़े समय में छत्रधारी को महादेव की याद आई। महादेव ने चालीस साल तक छत्रधारी की हलवाही की है। उनके बाप के जमाने से। जब छत्रधारी ने ट्रैक्टर खरीद लिया तब महादेव की हलवाही छूटी।

मालिक का बुलावा आया, महादेव लाठी टेकते हुए पहुँचे।

"बड़ी दिक्कत आ गई, भगत। उधर दुर्गेशवा को वह लड़की फँसाकर भगा ले गई।

इधर मजदूरों ने भट्ठे का काम बन्द कर दिया।"

भहादेव ने सोचा कि उनसे समाधान पूछा जा रहा है। बोले-" गलती तो दुर्गेश बाबू कर ही बैठे। अमीर हो चाहे गरीब, इज्जत सबकी बराबर होती है। दुर्गेश बाबू को बुलवा लीजिए। माफी माँग लें। लड़की के बाप को कुछ दे-दिला दीजिए। इज्जत तो लौटने से रही।"

"महादेव, ताली एक हाथ से नहीं बजती। वह लड़की राजी न होती तो क्या दुर्गेश उसे कन्धे पर लादकर भाग जाता!"

आवाज की तुर्शी से महादेव थोड़ा सहम गए।

"मजदूरों की छोड़ो। उन सालों से मैं निपट लूँगा। तुम्हें इसलिए बुलाया है कि अपने बेटे को चिट्ठी लिखकर सूरत से बुला लो। आकर दुर्गेश की जगह भट्ठे की मैनेजरी सँभाले।"

"वह नहीं आएगा, बाबू।"

"कैसे पता?"

"मैं उसका मन जानता हूँ।"

"जितना पैसा वहाँ पाता है, उतना दूँगा।"

"बात सिर्फ पैसे की नहीं है, मालिक। अपनी पसन्द से खाने-पहनने की है। यहाँ गाँव में साफ कपड़ा पहन लीजिए तो लोगों की आँख फूटती है। हम लोग सह ले गए। आज की पीढ़ी इसे नहीं सह सकती। वहाँ फैक्टरी में सुपरवाइजर लगा है। बाल-बच्चों को पढ़ा-लिखा रहा है। इज्जत की जिन्दगी जी रहा है। यहाँ लौटकर क्यों आएगा?"

छत्रधारी की खोपड़ी गरम हो गई- "यहाँ उस बेटीचो... को किसी ने बेइज्जत किया है क्या?"

"यही तो है! जब चाहा बहन-बेटी को नंगा कर दिया। यह भी नहीं सोचा कि मैंने इसी ड्योढ़ी पर चालीस साल तक अपनी जवानी रांगा किया है।"

"रांगा किए हो तो मुफ्त में किए हो कि नमक खाए हो! और आज मौका पड़ा तो नमकहरामी पर उतारू हो।"

"नमक खाए हैं तो हराम का नहीं खाए हैं। खटकर खाए हैं। पसीना बहाकर खाए हैं। कचेहरी की ड्योढ़ी पर चढ़कर ईमान का सौदा तक कर डाले हैं, जो नहीं करना चाहिए था। उसी का सिला दे रहे हो। बेटी की इज्जत तौल रहे हो।"

ठकुराइन लपककर बाहर आईं। यहाँ तक बात नहीं बढ़नी चाहिए थी। लोग कान पारकर सुन रहे हैं। घेरकर महादेव को आँगन में ले गईं।

"जाने दीजिए, भगत। आप घर के बूढ़-पुरनिया जैसे हैं। भतीजे की करतूत से

इनका दिमाग बावचंची" हो गया है। लीजिए, चाह पीजिए।"

वापस लौटते हुए महादेव सोच रहे हैं कि ठकुराइन के पुण्य-प्रताप से ही छत्रधारी फल-फूल रहे हैं। जैसी बड़े खानदान की हैं, वैसा ही स्वभाव मिला है। छत्रधारी तो शुरू से ही 'बिखधर' हैं। जिस दारोगा बेटे के बल पर बम-बम करते घूमते हैं, उसका ओहदा भी धोखा देकर हासिल किया है।

महादेव तेरह-चौदह साल पुरानी बात याद करते हैं। उनका बेटा दारोगा भर्ती की नाप-जोख में पास हो गया था। एक रात वह घर लौटा और बताया कि दस हजार देने पर भर्ती पक्की हो जाएगी। सीधे आर.आई. से बात हो गई है। दो दिन का समय है।

इतनी मोटी रकम ! घर में तो दस रुपया निकलना मुश्किल। सबेरे बेटे को लेकर पहुँचे छत्रधारी सिंह के पास। छत्रधारी ने सारी जानकारी हासिल की। अफसर का नाम, ओहदा। रकम डूबने का खतरा तो नहीं? फिर कहा- "अभी तो तारीख पर कर कहा-"3 कचहरी जा रहा हूँ। लौटकर इन्तजाम करता

छत्रधारी का बेटा भी फिजिकल पास कर चुका था। सिफारिश का सूत्र खोज रहे थे। घूस का सूत्र तो अचूक होता है। उसी दिन जाकर पन्द्रह हजार दे आए। यह भी कह आए कि सेलेक्शन नहीं हुआ तो भी पैसा वापस माँगने नहीं आएँगे।

लेकिन अगर उनके बेटे के साथ-साथ गाँव के एक चमार का, खास उनके हलवाहे का बेटा भी दारोगा हो गया तो उनकी अहमियत ही क्या रह जाएगी?

वे तीन दिन तक टालते रहे और अन्त में हाथ खड़े कर दिए। फिर सुझाव दिया कि बेटे को आई.टी.आई. करा दो। वजीफा भी मिलेगा और कर्जदार होने से भी बच जाओगे।

- 'बेटा तो इनकी शकल तक नहीं देखना चाहता और ये चाहते हैं कि वह लगी-लगाई नौकरी छोड़कर फिर इनकी गुलामी करने लौट आए !'

विद्रोही बहू पहली बार मायके जा रही हैं। पैंतालीस साल पहले वे विद्रोही जी के साथ भागीं तो उनके दोनों भाई खानदान की नाक कटाने वाली बहन का मूँड़ काटने के लिए महीनों खोजते रहे। नहीं पकड़ पाए तो ऐलान किया कि दिलजानी हमारे

* सनक

अगम बहै दरियाव

लिए घर गई। उसका मुँह देखना पाप है।

एक दिन पन्द्रह-सोलह साल का एक लड़का भरी दोपहरी में दुआर पर आया तो विद्रोही बहू ही बाहर मिलीं।

"कहाँ से आ रहे हो, बच्चा?"

अपने मायके के गाँव का नाम सुनकर चिहुँक गईं। फिर सँभलकर पूछा-

"रामनरेश भइया के बेटे हो?"

"नहीं, उनके पोते हैं।"

"अरे, हाँ।" वे झेंप गईं। गुजरे समय का भान ही नहीं रहा उन्हें।

लड़के का कोमल चेहरा धूप से लाल हो रहा था। होंठ पपड़िया गए थे। चेहरे पर धूप में सात कोस साइकिल चलाकर आने की थकान थी।

वे लड़के को आँगन में ले गईं। हाथ-पैर-मुँह धुलवाया। फिर अपनी कोठरी में ले गईं। खाने के लिए गुड़ दिया। भरपेट मट्ठा पिलाया।

"चारपाई पर थोड़ी देर आराम कर लो तो खाना खाओ।"

लड़का लेटने के लिए तैयार नहीं हुआ। बैठा ही रहा। वे मायके का कुशल समाचार पूछती रहीं- अपनी माँ का, भाइयों का, भाभियों का, बच्चों का। फिर पूछा-"कैसे हम लोगों की याद आ गई, लल्ला?"

"दादी ने न्योता देने भेजा है। मेरी बड़ी बहन का विवाह है।"

दादी माने विद्रोही बहू की बड़ी भाभी।

कहने के साथ लड़के ने विवाह का निमंत्रण पत्र उनके हाथ में पकड़ाया और दादी के मौखिक सन्देश को दुहराया - 'पुरानी बातों को भूल जाओ, बचिया। हम चाहते हैं कि टूटा नाता फिर से जुड़ जाए। विवाह में पूरे परिवार के साथ आओ।'

विद्रोही बहू की आँखें बरसने लगीं।

लड़के ने बताया- "बड़की दादी (परदादी) ने भी कहलाया है कि बुचिया से कहना, एक बार आकर सबको देख-दिखा जाए। जिन्दगी का क्या ठिकाना।"

स्मृतियों का आवेग इतना बढ़ा कि विद्रोही बहू को लगा, उनकी चीख निकल जाएगी।

अब तक अड़ोस-पड़ोस की औरतों से आँगन भर गया था। सब खुश थीं और उनका मत था कि देर से ही सही, मायके से बुलौवा आया है तो उनको जाना चाहिए।

"लेकिन जिनके लेखे हम मर गए और जिनको हमारा मुँह देखने से पाप लगेगा, उनके दरवाजे पर जाना ठीक रहेगा? हमारे बच्चे ननिहाल देखने को तरस गए!"

"अब यह सब मत सोचो। उस माँ के लिए जाओ जिसकी कोख से जनम लिया है।"

261

गृहस्थी का इतना काम फैला है कि सब कैसे जा सकते हैं! बुल्लू की हाईस्कूल की परीक्षा समाप्त हो चुकी थी। गर्मी की छुट्टियाँ चल रही थीं इसलिए उनके साथ विद्रोही बहू मायके के लिए निकलीं।

मायके के सिवान पर पहुँचने के साथ उनकी आँखें फिर भर आईं। वे गाँव के एक-एक पेड़-पौधे को पहचान लेना चाहती थीं। उनके समय का कौन-सा पेड़ बचा रह गया, कौन नहीं है। वे मना रही थीं कि दरवाजे पर दोनों भाइयों में से कोई न मिले। एकदम से

सामने नहीं पड़ना चाहती थीं। संयोग से दरवाजा सूना था। वे घर के अन्दर चली गईं। बारी-बारी दोनों भाभियों को अँकवार में भरकर भेंटती रहीं, रोती रहीं। फिर अन्य औरतों-बच्चों से मिलीं, पहचाना।

अपनी कोठरी में चारपाई पर बैठी माँ दोनों बाँहें फैलाए आवाज लगाती रहीं- बुचिया को मेरे पास लाओ।

विद्रोही बहू ने माँ को अँकवार में भरा और कारन करके रोने लगीं। सारा माख, सारा गिला-शिकवा पद्यबद्ध होकर करुण विलाप के रूप में बहने लगा-

या मोरी माई
हमरी सुधिया भुलाइउ मोरी माई

जो जहाँ था वहीं ठिठक गया और इस करुण विलाप के ताप में मक्खन की तरह पिघलने लगा। एक लड़की दिया जलाकर ले आई। बुल्लू मोहार के पास कोठरी की दीवार की टेक लेकर चित्रलिखित से खड़े रहे। समय जैसे रुक गया।

पता चला कि बड़के भइया लौट आए हैं। दालान में बैठे हैं। विद्रोही बहू भाई से मिलने के लिए चलीं, लेकिन बाहरी ड्योढ़ी के पास आकर ठिठक गईं। पता नहीं भाभी ने भइया की मरजी से उनके पास न्योता भेजा था कि सिर्फ माँ के कहने से? अचानक सामने पड़ने पर पता नहीं भइया का क्या रुख रहे ! क्या पता, वे अभी भी मेरा मुँह देखना पाप समझते हों।

भाभी से समझ-बूझ लेने के बाद ही सामने पड़ना ठीक रहेगा।

वे लौट पड़ीं।

लौटकर देखा, बुल्लू अपनी नानी की गोद में सिर रखकर लेटे हैं। नानी उनके बाल और पीठ सहला रही हैं और पोपले मुँह से उनके गाल चूम रही हैं।

ढिबरी रह-रहकर भुकभुका रही है।

"माँ, तूने गली के कुत्ते से भी सन्देश भेज दिया होता तो मैं दौड़ी चली आती।"

सूरदास को पंचर बनाने का लोन

नए ग्रामसेवक भारती जी बहुत हँसमुख और मजाकिया हैं। रोते आदमी को हँसाने वाले। जब से लोन का लाभार्थी चुनने का अधिकार ग्रामप्रधान को मिला है, भारती जी की विद्रोही जी से काफी पटने लगी है। वे विद्रोही जी को काका कहते हैं।

उस दिन कहने लगे-" आईआरडीपी में लोन की इतनी स्कीमें चल रही हैं, कुछ अपने लिए भी सोचिए।"

"न भाई, न। लोन लेने से बहुत डर लगता है।"

"मैं लोन लेने की नहीं, लोन की स्कीम से फायदा लेने की बात कर रहा हूँ।"

"क्या मतलब?"

"यह तो पता है कि इस स्कीम में अब भैंस पर लोन की राशि बढ़कर नौ हजार रुपये हो गई है। भैंस आपके पास पहले से है। खरीदने की जरूरत ही नहीं है। लेकिन पिछड़े वर्ग को मिलने वाली एक-तिहाई यानी तीन हजार रुपये की सब्सिडी अपनी ही भैंस पर घर बैठे मिल जाएगी। न कुछ बेचना, न खरीदना। नौ हजार लेकर तीन हजार अपनी जेब के हवाले करिए और छह हजार की रकम वापस बैंक के खाते में डाल दीजिए। सरकार के आँकड़े में एक गिनती की बढ़ोतरी हो गई। बैंक को उसकी रकम वापस मिल गई और आपको तीन हजार का शुद्ध लाभ।"

"अब बुढ़ौती में हमें यही छल-छंद सिखाओगे?"

"छल-छंद? इससे साफ-सुथरा सौदा और क्या होगा, काका? छल-छंद तो बाकी दुनिया कर रही है। किसी की मरी हुई भैंस के दोनों कान काटकर जमा कर दे रही है और कह दे रही है कि हमारी भैंस मर गई, बीमे की रकम चाहिए... मुझे मालूम है कि आप ऐसा नहीं कर सकते, लेकिन सही रास्ते से जो मिल सकता है उसे क्यों छोड़ा जाय? मुकदमे में इतना खर्च कर चुके हैं। कुछ तो भरपाई होनी चाहिए।"

दुविधा में पड़ गए विद्रोही जी। न 'हाँ' करते बन रहा है, न 'ना'।

"अपने नाम से न लेना चाहें तो बेटे के नाम से ले लीजिए। दस-पाँच बिस्वा खेत भी उसके नाम से हो तो काम बन जाएगा। उसी की खतौनी लगा दीजिए। फाइल मैं तैयार करके ले आया हूँ। इस पर दस्तखत करवा दीजिए, बस।"

उनकी मलकिन ने दूध की बिक्री से मिला पैसा बचाकर कई साल पहले दोनों बेटों के नाम एक जमीन का बैनामा लिखाया था।

विद्रोही जी दोनों बेटों को बुलाकर दस्तखत करवा देते हैं।

कई दिन बाद एक शाम सौ-सौ के तीस नम्बरी नोट विद्रोही जी के हाथ में देते हुए भारती जी पूछते हैं-" स्कूल के मद में आया पैसा निकालने से क्यों डर रहे हैं?"

"निकालने से नहीं डर रहा हूँ। सोच रहा हूँ कि पहले इस्टिमेट बन जाय तब जितनी जरूरत हो उतनी रकम निकाली जाय। मैं चाहता हूँ कि दो पैसा अपनी जेब का भले खर्च हो जाए पर विद्या माई के नाम से आए पैसे में से एक बीड़ा पान का भी खर्च अपने ऊपर न हो।"

"क्या महराज! इसके लिए तो हमारे ऋषि-मुनि बहुत पहले कह गए हैं- विद्या धनं सर्व धनं प्रधानम्; अर्थात विद्या यानी स्कूल के मद में आया सारा धन परधान का होता है।"

हँसते हुए भारती जी विद्रोही जी के कन्धे पर हाथ मारते हैं-" आदमी परधान बनता है घर भरने के लिए कि घर लुटाने के लिए! छत्रधारी पूरा गाँव बेचकर खा गए और एक आप हैं कि..."

बुल्लू के मामा के घर मामी के भाई की बेटी सोना भी आई है। सोना ने इस वर्ष आठवीं की परीक्षा दी है। बहुत हँसमुख, सुन्दर और चंचल। बातचीत में हाजिरजवाब। अलग-अलग रिश्तेदारियों से आई

चार-पाँच लड़कियों का झुंड बन गया है। ग्यारह-बारह वर्ष से पन्द्रह-सोलह वर्ष तक की लड़कियों का झुंड। वे जहाँ रहती हैं एक साथ रहती हैं, हँसतीं-खिलखिलातीं। समीज-सलवार पहनकर आई सोना को मामी ने जान-बूझकर साड़ी पहना दी। साड़ी में अपनी उम्र से ज्यादा सयानी और आकर्षक लगेगी। हो सकता है, विवाह में आई किसी लड़के की माँ को जँच जाए तो उसका विवाह आसान हो जाए। लड़कों के लिए यह झुंड आकर्षण का केन्द्र बन गया है।

किसी बात पर हँस-हँस कर दोहरी हो रही सोना की नजर अचानक बुल्लू की नजर से टकराई तो उसकी हँसी हठात् रुक गई। अधखुले होंठ स्थिर हो गए। वह बड़ी-बड़ी आँखों से बुल्लू को पीने लगी।

इतना रूप, इतनी सुन्दरता, इतनी चंचलता, ऐसी घुँघराली लटें, उजाला फैलाने वाली ऐसी हँसी देखकर बुल्लू भी सिहर गए। उनके रोयें खड़े हो गए। अगले ही पल सचेत होकर सोना झुंड के साथ भाग गई, लेकिन सोना की हरी साड़ी और सफेद दंतपंक्ति बुल्लू की पूरी चेतना पर छा गई। बाद में लड़कियों का झुंड जिधर-जिधर गया, बुल्लू की मोहित नजरें उधर-उधर घूमती रहीं।

अगम बहै दरियाव

दोपहर में लड़कियों का झुंड नहाने के लिए नदी पर गया तो पीछे-पीछे लड़कों का झुंड भी गया। लड़कियाँ पानी में उतरीं तो लड़के घाट पर हँसी-ठिठोली करते उन्हें नहाते देखते रहे।

सहसा पानी से सोना की आवाज आई- "एऽऽ, हमें कपड़े बदलने हैं। तुम लोग पीछे मुँह करके खड़े हो जाओ और जब तक हम न कहें, सामने मत देखना।"

कोई पीछे मुड़ने को तैयार न था लेकिन जब उसी कंठ ने ललकारा - "बेशरम हो क्या तुम लोग? चलो, पीछे घूमो।" तो कुछ लड़के पीछे घूम गए। एकाध चलते-चलते दूर जाने लगे। बुल्लू को भी इस तरह पीठ दिखाना अच्छा नहीं लग रहा था, लेकिन हुकुम देने वाली आवाज के जादू में बँधे-बँधे पीछे घूम गए।

लड़कियों का झुंड नहाकर चला तो लड़के भी आगे-पीछे घूमते हुए लौटे। बुल्लू की नजरें एक बार फिर सोना से मिलीं। बुल्लू का बहुत मन था कि कुछ बातचीत हो जाए, लेकिन समझ में नहीं आ रहा था कि शुरुआत कैसे करें? इधर नदी से घर तक की आधा किलोमीटर की दरी लगातार कम कम होती जा रही थी।

आखिर बुल्लू ने हिम्मत की -

"आप कहाँ से आई हैं?"

"अपने घर से।"

"कहाँ है आपका घर?"

"जहाँ से आए हैं।"

समूहिक हँसी।

"कभी हमारे गाँव आइए।"

"जरूर आएँगे।"

"पूछ तो लीजिए कि हमारा गाँव कहाँ है।"

"जब आने लगेंगे तो पूछ लेंगे।"

"कब आएँगे?"

"जब आप बुलाएँगे।"

हँसी।

"हम तो कहते हैं, अभी चलिए।"

"आपके यहाँ इसी तरह बुलाते हैं?"

फिर हँसी।

"तो क्या बैंड-बाजे के साथ लेने आएँ?"

"हाँ जी आइए?"

"क्या आपको यकीन है?"

"पक्का जी, पक्का।"

"फिर पीछे तो नहीं हट जाएँगी?"

"ना जी, ना। पीछे हटने वाले लोग नहीं हैं हम।"

अब क्या बोलें? बुल्लू चुप।

सोना ही बोली- "आप घाट तक आकर भी नहाए नहीं!" "इतना डरते हैं! तब तो अभी तक अम्मा जी की गोद में ही सोते होंगे?"

"मुझे नदी से डर लगता है।"

फिर हँसी। बुल्लू झेंप गए।

"भाई-बहन एक ही साथ सोते हैं?

शरमा गए बुल्लू। सिर झुक गया। चाल धीमी हो गई। "मुझे ले चलेंगे तो सुलाएँगे कहाँ? अम्मा जी के पास?"

सब बुल्लू का जवाब सुनने को बेताब हो गए, लेकिन बुल्लू का सिर तो उठा ही नहीं। हँसी की लहर आई और उनके कदम रुक गए।

"अच्छा आइए, अब कुछ नहीं पूछेंगे।"

घर के पास पहुँचकर सोना ने हाथ में पकड़ी गीली साड़ी का एक सिरा बुल्लू की ओर बढ़ाते हुए कहा - "दोनों कोने पकड़कर तानिए और झटका दीजिए तो इसे सूखने के लिए धूप में डाल दें।"

बुल्लू पानी-पानी हो गए।

"साड़ी छूने में भी डर लगता है।" सोना हँसी।

"औरतों की साड़ी-बिलाउज मैं नहीं छूता।"

"कसम खा चुके हैं?"

"हाँ।"

"कब टूटेगी यह कसम?"

"कभी नहीं।"

"अब समझ में आया कि अपने घर बुलाने के बजाय अपने गाँव आने का न्योता क्यों दे रहे हैं।"

लड़कियों का झुंड हँसता-खिलखिलाता आगे बढ़ गया। बुल्लू वहीं खड़े रह गए। लड़के उन्हें चिढ़ाने लगे- "हार गए भाई, हार गए। बुल्लू भइया हार गए!"

दुआर पर गड़े माड़व के नीचे दोपहर से औरतों का झुंड पूड़ी बेल रहा है। कड़ाह चढ़ गया है। शाम को बरात आने वाली है। अँधेरा होते-होते बरात द्वार-पूजा पर लग जाती है। औरतों को सिर पर कलश में दीप सजाकर विवाह-गीतों से बरातियों का स्वागत करना है। बीरा मारना है, भर-नजर दूल्हे को देखना है। उससे पहले खुद सजना है। यह तभी होगा जब कम-से-कम एक घंटा दिन रहते पूड़ी बेलने का काम समाप्त हो जाए। औरतों के समूहगान से वातावरण उत्सवी हो गया है। तनिक ढीली डोरी वाली अकेली बूढ़ी ढोलक उनका साथ दे रही है- धंग धप्प ! धंग धप्प!

कड़ाह ताव पर है। तली जाती पूड़ियों की महक हवा में तैर रही है।

घराती पुरुष नीम के पेड़ के नीचे बैठकर लकड़ी के पटरे पर आटे की लोइयाँ गूँध रहे हैं। बुल्लू जैसे तीन-चार किशोर इन लोइयों को पूड़ी बेलने वालले स्त्रियों के झुंड तक पहुँचा रहे हैं। वहाँ बेली गई पूड़ियों को कड़ाह तक पहुँचा रहे हैं। इसी क्रम में उन्हें बार-बार लड़कियों के पास तक जाने और बात करने का मौका मिल रहा है। आटा जितना ज्यादा गूंधा जाएगा और उसमें जितना कम पानी खपाया जाएगा, उतना ही वह कम घी सोखेगा और उससे बनी पूड़ियाँ उतनी ही मुलायम होंगी। इसलिए लोई को बिना ज्यादा गीला किए गूँधने के बल पर मक्खन की तरह नरम बनाना जरूरी है। लोई ठीक तरह गूँधी गई है या नहीं, इसके फैसले का अधिकार बेलने वाली औरतों का है।

बुल्लू एक तैयार लोई लेकर, झुंड के बीच में बैठकर गाती, हरी साड़ी में दमकती, हरी चूड़ियाँ खनकाती, पीढ़े पर बेलन के नीचे पूड़ी नचाती सोना के सामने पेश हुए। सोना ने आँख उठाकर पहले भर नजर उनको देखा, लोई में उँगली धँसाकर परखा, फिर गोल-गोल आँखें नचाते हुए मुस्कराकर कहा -"पास।"

बुल्लू रीझ गए, गद्गद हुए और सोना के पीढ़े के पास लोई रखकर मुदित मन वापस हुए।

वे अगली लोई लेकर आए। पास। फिर अगली लाए। पास। तब दूसरे लड़के भी अपनी लोइयाँ बुल्लू के मार्फत पास कराने लगे।

अचानक सोना ने अगली लोई परखकर कहा-"फेल।"

बुल्लू को ऐसा झटका लगा जैसे सालाना इम्तहान में फेल कर दिए गए हों। उनका मुँह लटक गया। अगली लोई लाए। फिर फेल।

लड़के ठठाकर हँसे।

एक स्त्री स्वर-"कैसे गूंध रहे हैं। कलाई में जोर नहीं है?"

दूसरा स्वर - "अम्मा का दूध पीने का मौका नहीं मिला क्या?"

पास बैठी बुल्लू की मामी को मजाक का मौका मिल गया। आखिर बुल्लू की माँ उनकी ननद लगेंगी। बोलीं- "कहाँ मिला मौका बेचारू को। खड़ी चूँची तो इनके बड़के भइया पीकर पहलवान बन गए। इनकी बारी तक तो लतरी हो गई।"

"ओ! दुधकट्टू हैं बेचारे।"

हँसी की लहर दौड़ रही है। गीत की कड़ी टूट गई है।

बुल्लू झेंपते हुए सफाई देते रहे- "मैंने थोड़े गूँधा है! मैं तो पहुँचाने आया था।"

लेकिन उनकी सफाई औरतों के हँसी-ठट्ठे में डूब गई। वे झेंपते हुए बाहर जाने लगे।

एक औरत ने सोना की ओर आँखें तरेरकर कहा- " इतने सिधवा लड़के को बार-बार फेल कर रही हो ! उसी से ब्याह दी गईं तो सारी कसर एक ही रात में निकाल लेगा।"

फिर हँसी का फौवारा।

"अरे, यह बड़ी छतीसी है। पहली ही रात में भेड़ा बना लेगी।"

"मैं अभी सुलह कर लेती हूँ, अइया।" सोना हँसते हुए बोली- "क्या पता, आपकी बात सही हो जाय ! ... चल रे गुलबिया, शुरू कर।"

मुझे वो बैल पसंद हैं, जो दौड़कर मैदान में आते हैं।

मेरे मन को वही बुल्लू भा गए हैं जो दौड़-दौड़कर मड़वे में आ रहे हैं।

हा-हा-हा-हा! हा-हा-हा-हा!!

बाहर जाते बुल्लू के कदम रुक गए।

अगले दिन सबेरे लड़कियों का झुंड कुएँ के पास जूठे बरतन माँज रहा है। बुल्लू और एक-दो लड़के आसपास मँडरा रहे हैं। सोना बुल्लू की ओर देखकर कहती है-"माँजने के लिए जरा एक टोकरी भूसी ला दो।"

अगम बहै दरियाव

बुल्लू को एक ही साथ अच्छा और बुरा दोनों लगा। पहले बुरा, फिर अच्छा। पूछा- "कहाँ है भूसी?"

"दालान की कोठरी में।"

बुल्लू वहीं से एक जूठी परात लेकर दौड़ गए। लेकिन यहाँ तो दो कोठरियाँ हैं। एक दाएँ, एक बाएँ। अन्दर नीमअँधेरा भी है। एक कोठरी में झाँककर वे दूसरी कोठरी में घुसे। तब तक पीछे से आती सोना की आवाज आई- "नहीं खोज पाए? अँधेरे से डरते हो क्या?" वह बुल्लू के हाथ से परात लेकर कोने की ओर बढ़ गई। बुल्लू का मन हुलसा कि इस अँधेरे का फायदा उठाकर वे सोना को चूम लें। वे आगे बढ़े। सोना परात में भूसी भरकर मुड़ी-"डरपोक कहीं के!" वह हँसी।

बुल्लू ने आगे बढ़ती सोना के आँचल का टोंक पकड़ लिया। सोना पलटी, मुस्कराई, पूछा- "क्या चाहिए, भूख लगी है?" बुल्लू के मुँह से आवाज नहीं निकली। बस, आँचल थोड़ा और खींच लिया। सीना धड़धड़ाने लगा।

"कल तो कह रहे थे कि किसी की साड़ी-बिलाउज न छूने की कसम खा चुके हो! इतनी जल्दी टूट गई कसम ? बिना पाए के परहेजी हो क्या?"

बदले में बुल्लू और नजदीक चले गए। आसपास की हवा में कितनी महक है! "किसी का आँचल पकड़ने के लिए बड़ी हिम्मत चाहिए। है हिम्मत?"

बुल्लू ने आँख मिलाते हुए कहा - "बहुत हिम्मत है।"

"हिम्मत है तो अपने बप्पा से कहो। डरते हो तो अपनी अम्मा से कहो। छोड़ो।"

न आँचल छूटा, न कोई हिला। एक-दूसरे की मुस्कान पर रीझते रहे।

छोड़ो छोड़ो जदुपति आंचर रे मैं कुवांरी हूं। अगर मेरे पिता ने ठान लिया तो तुम्हारा हो जाएगा।

मैं बारी कुँवारी हूँ, कान्हा। मेरा आँचल छोड़ दो। जब मेरे बप्पा मुझे तुमको संकल्प देंगे तभी तुम्हारी होऊँगी।

शादी सही-सलामत निपट गई। सबेरे सारे रिश्तेदार अपने-अपने रास्ते चले जाएँगे। शाम को एकान्त पाकर बुल्लू शरमाते हुए अपनी मामी से कहते हैं- " मैं सोना से शादी करूँगा मामी।"

मामी सुनकर हँसती हैं।

कहती हैं-" इतनी पसन्द आ गई है मेरी भतीजी? लेकिन बड़ी नखरीली है।

उसका नखरा झेल पाओगे?"

बात तुरन्त फैल जाती है।

सोना की माँ हँसते हुए कहती हैं- " जानें बुल्लू की अम्मा। मुझे क्या?"

विद्रोही बहू भी हँसती हैं-" अच्छा तो है। दीये की तरह उजियार करने वाली बहू मिल जाएगी।"

आज संतोखी फिर खुश हैं। वे जिला और सत्र न्यायालय से भी जीत गए।

फैसले की नकल देते हुए वकील साहब ने कहा- "लो, यहाँ भी दिला दी विजय। अब कब्जा लो और जोतो-बोओ।"

"कब्जा कैसे लेंगे?"

"इजरा कराना होगा। मतलब इस फैसले को एक्जीक्यूट कराने की दरखास्त लगानी होगी। मुकदमा कायम होगा। इजरा नम्बर एलाट होगा। दोनों पार्टियों को नोटिस जाएगी। सुनवाई होगी। तब दोनों पार्टियों की मौजूदगी में मौके पर लिखा-पढ़ी करके कोर्ट कब्जा दिलाएगी। जरूरत हुई तो पुलिस भी मौजूद रहेगी।"

"जीतने के बाद भी एक और मुकदमा?"

"यही प्रोसीजर है।" फिर स्पष्ट किया- " जीते भले जिला न्यायालय से हो लेकिन इजरा की कार्यवाही मुंसिफ कोर्ट से ही होगी।"

"इसमें कितने साल लग जाएँगे?"

"साल नहीं, तीन-चार महीने लग सकते हैं।"

संतोखी ने अपने मन की दुविधा बताई - "अभी तो इस फैसले के खिलाफ वे हाई कोर्ट जा सकते हैं।"

"जा तो सकते हैं, लेकिन पाएँगे क्या? फैसला इतना कम्पैक्ट है कि स्टे तक तो पाएँगे नहीं। मैंने बहस में कोई प्वाइंट छोड़ा है क्या? फीस में रियायत करने का यह मतलब थोड़े कि 'लड़ने' में रियायत कर दूँ।"

संतोखी को दुविधा में पड़ा देखकर कहते हैं- "सुप्रीम कोर्ट की दर्जनों नजीरें हैं कि लोवर कोर्ट की 'कान्करेंट फाइंडिंग' हो तो हाई कोर्ट 'रेयरेस्ट आफ द रेयर केस' में ही 'इंटरफियर' करेगा।" फिर दस मिनट तक समझाने के बाद कहते हैं-"हाई कोर्ट की मजाल है कि सुप्रीम कोर्ट की गाइडलाइन घोलकर पी जाय?"

"इस दाखिले के लिए आपको अलग से फीस तो नहीं देनी होगी?"

"इजरा बिलकुल अलग कार्यवाही है। फीस तो देनी ही होगी।"

"मेरी हालत बहुत खराब है। समझिए, पूरी तरह बर्बाद हो गया हूँ।"

"मालूम है, भाई। यहाँ तक आते-आते सभी बरबाद हो जाते हैं। नीचे के लोग तिल से सारा तेल निकाल लेते हैं। हमारे हिस्से में तो खली में बचा खुचा तेल ही आता है।"

संतोखी मौन हो गए।

"हिरासोगे तो कैसे काम चलेगा?" वकील साहब जुबान से सहलाने लगे-"इजरा ही नहीं होगा, कब्जा ही नहीं लोगे तो जीतने का क्या मतलब?... जाओ, पचास रुपये कम दे देना। जितनी जल्दी आओगे उतनी जल्दी दाखिला होगा।"

संतोखी को पक्का यकीन है कि छत्रधारी हाई कोर्ट गए बिना नहीं मान सकते लेकिन क्या इस डर से वे कब्जे की कार्यवाही छोड़ दें! अब तक लड़ने का फिर मतलब ही क्या हुआ?

छत्रधारी को गजाधर का भूत अभी तक सता रहा है। जिन चार वर्षों के लिए भट्ठे का मालिकाना उन्होंने गजाधर के नाम दर्ज करवाया था उन वर्षों के लिए कई बार टैक्स एक्सपार्टी लगा और मालिकाने के बिन्दु पर जाँच करने के निर्देश के साथ रिमांड हुआ।

अब फिर जाँच आने वाली है।

बरसात शुरू हो जाने के साथ भट्ठा बन्द हो चुका है। मजदूर जा चुके हैं। छत्रधारी को ऐसे आदमी की जरूरत है जो देखने में भोंदू लगे, लेकिन भीतर से खुर्राट हो। जिसे जो सिखा दिया जाए, वही जाँच अधिकारी के सामने ज्यों-का-त्यों बयान कर दे। महादेव होस्टाइल हो गए, वरना उनको तो कुछ सिखाने-पढ़ाने की जरूरत ही नहीं थी।

नया मुंशी अपने गाँव से खोजकर एक बूढ़े को ले आया है। छत्रधारी उसे उसकी ड्यूटी समझा रहे हैं।

"तुम्हारा काम है, भट्ठे के पास खेत में बने माचे पर सुबह से शाम तक मौज करना। दो-चार दिन में कुछ साहब सूबा जैसे लोग जीप से भट्ठे पर आएँगे। तुम टहलते-टहलते उनके पास पहुँचना। बताना कि यहाँ अपने खेत की रखवाली करने आया हूँ।

वे गजाधर और उनके भट्ठे के बारे में पूछेंगे। बता देना कि पहले कई साल यही भट्ठा गजाधर चलाए थे। वे मर गए। उनकी औरत किसी के साथ भाग गई।... यह मत कह देना कि तुम यहाँ मेरी नौकरी बजा रहे हो।"

मुंशी ने छत्रधारी को आश्वस्त किया- "निश्चिन्त रहें, मालिक। मेरा पूरा गाँव दंदी-फंदी है। वहाँ एक से एक पाजी बसते हैं। मेरे एक पड़ोसी पशु मेले में अपना पँड़वा बेचने ले गए। खरीदार को पास खड़ी पँड़िया दिखाकर सौदा कर लिया। रवन्ना लिखवाया पँड़िया का और अँधेरे में पगहा पकड़ा दिया पँड़वा का। खरीदार को धोखे का पता तब चला जब आधे रास्ते जाने के बाद पँड़वा पेशाब करने लगा।... यह बुढ़ऊ भी कम पाजी नहीं हैं। एक बार जंगल से 'कौआ का मामा * तोड़कर लाए और शहर की मंडी में 'कुनुरू' कहकर बेच दिए। इनकी उमर और गले में लटकी कंठी देखकर लोग आसानी से विश्वास कर लेते हैं। ये सब सँभाल लेंगे।

बुढ़ऊ इस तरह प्रतिक्रियाहीन थे, जैसे ये बातें किसी किसी और के बारे में कही जा रही हैं।

इंटरवल में बुल्लू खेल के मैदान के कोने में बनी पानी की टंकी पर पानी पीने जा रहे थे। सामने से चार-पाँच छात्राओं का झुंड पानी पीकर लौट रहा था। बुल्लू की नजर बीच वाली लड़की पर पड़ी। उन्हें लगा कि उस लड़की की आँखों में स्वागत और पहचान का भाव है। वे एक-दूसरे के बगल से गुजरे। अरे, यह तो वही लड़की है जो मामा के घर शादी में मिली थी। बुल्लू ने पीछे मुड़कर देखा। वह भी मुड़कर देख रही थी। समीज-सलवार के यूनिफॉर्म में वह अपनी ही छोटी बहन लग रही थी। मामा के घर साड़ी में देखा था तो कितनी बड़ी लग रही थी। तो यहीं एडमीशन लिया!

मामा के घर तीन दिन कैसे बीते पता ही नहीं चला। बुल्लू को ठगा-सा छोड़कर हँसते-खिलखिलाते वह अपने पिता की साइकिल के कैरियर पर बैठकर लौट गई। बुल्लू की पूरी चेतना पर उसकी हँसी ने कब्जा कर लिया था। नदी की ओर एकान्त में जाकर वे सोना की याद में दोनों हाथों से चेहरा ढाँपकर सिसक-सिसक कर रोये थे। फिर खुद ही अपनी लानत-मलामत की - एक लड़की के लिए इस तरह रो रहे हो। दो दिन का परिचय। क्या लगती है वह तुम्हारी ?

* एक अखाद्य फल

अगम बहै दरियाव

बाद में कई बार मन किया कि सोना के गाँव जाकर उससे एक बार मिल आएँ। फिर खुद ही अपनी इस बेताबी पर लजाए थे।

बुल्लू का सातवाँ पीरियड खाली था। टहलते हुए उन्होंने नाइंथ के सारे सेक्शंस में झाँक-झाँक कर सोना का पता लगाया। फिर छुट्टी के समय थोड़ा पहले आकर गेट के बाहर इन्तजार करने लगे। सोना

साइकिल लेकर निकली तो थोड़ा दूरी बनाकर उसके पीछे-पीछे चले। शहर के बाहरी हिस्से में आने पर अगल-बगल चलने का मौका मिला।

"आखिर ढूँढ़ ही लिया मैंने तुम्हें..."

"ढूँढ़ रहे होते तो कब के पा जाते। चार महीने हो गए एडमीशन को।"

"तुमने बताया नहीं! "

"बिना मिले ही बता देती?"

फिर ढेर सारी बातें। मामी का हाल। घर का हाल। पढ़ाई का हाल।

कोई भी बात हो, बस बात होती रहनी चाहिए, चहक चहक कर। कॉलेज से बड़े चौराहे तक दोनों का रास्ता एक ही था। जिस दिन दोनों की आखिरी क्लास साथ-साथ छूटती, उस दिन बड़े चौराहे तक का रास्ता कितनी जल्दी कट जाता, कुछ पता ही नहीं चलता। बड़े चौराहे से सोना आगे बढ़ जाती, बुल्लू दाहिने मुड़ जाते।

पानी की टंकी के उत्तर करौंदे की झाड़ियाँ थीं। वहीं आसपास लोहे की बेंच पड़ी थी। इंटरवल में बच्चों के बैठने या खेल देखने के लिए। एक दिन बुल्लू पानी की टंकी के पास खड़े थे। लड़कियों का झुंड पानी पीने के लिए टंकी के पास आया तो बुल्लू ने इशारे से सोना को बुलाया और करौंदे की झाड़ियों की तरफ ले गए। बेंच पर बैठने को कहा। फिर बेंच पर बैठी सोना के सामने जमीन पर उकड़ूं बैठकर उसके दाहिने पैर में पायल पहनाने लगे। सोना का चेहरा लाल हो गया- "क्या करते हो? कोई आ जाएगा।"

जीवन में पहली बार पायल पहना रहे थे। पायल का हुक सँकरे मुँह वाले कुंडे में फँस नहीं रहा था। घबराहट में हाथ काँपने लगे। तभी कोकिल कंठी सामूहिक हँसी गूंजी। सोना की तीनों क्लासमेट सामने खड़ी थीं।

बुल्लू के हाथ से सोना का पाँव छूट गया। सोना ने सलवार नीचे करके पायल को छिपाने का प्रयास किया लेकिन एक लड़की ने सलवार फिर ऊपर उठा दिया।

बुल्लू धीरे-से खिसक लिये।

बच्चा-बच्चा राम का। जन्मभूमि के काम का॥
रामलला हम आएँगे। मन्दिर वहीं बनाएँगे ॥

सड़क मार्ग से अयोध्या जा रहे रामभक्तों के नारे दिन-रात सुनाई पड़ते हैं। पैदल, बस से, टेम्पो से भी। पता नहीं, कहाँ-कहाँ के लोग, जाने कौन-कौन सी भाषा बोलने वाले! माथे पर पीला पटका या रामनामी अँगोछा बाँधे हुए। पुरुष अधिक, लेकिन स्त्रियाँ भी कम नहीं। स्त्रियों के माथे पर पीला चंदन या भभूत पुती हुई। किसी-किसी युवा के हाथ में त्रिशूल की अनुकृति। इस बार उन्हें कोई रोकने-टोकने वाला नहीं है। पता नहीं, अयोध्या में तिल रखने की जगह बचेगी या नहीं?

लेकिन इस बार इस गाँव के किसी आदमी में अयोध्या जाने का उत्साह नहीं दिख रहा है। एक तो कार्तिक अगहन के काम की व्यस्तता; दूसरे, पिछली बार फेरई दास का भीड़ द्वारा कुचला जाना। किसी तरह जान बची थी। अलबेला तबलची तो अभी तक लौटकर नहीं आया। दलित टोले से तो किसी के जाने का सवाल ही नहीं है।

तूफानी कहता है-" 6 दिसम्बर को ही बाबा साहब का परिनिर्वाण दिवस है।

हम उनके मिशन को पूरा करने की सामूहिक शपथ लेंगे। उन लोगों ने जान-बूझकर यही तारीख चुनी है।"

फेरई दास का मन तो इस बार भी जाने के लिए ललक रहा था, लेकिन तूफानी ने सख्ती से मना कर दिया।

जब शाम को पाँच बजे के करीब खबर आई कि मसजिद ढहा दी गई तो गाँव के आधे लोग खेतों में ही थे। आसपास कोई मुस्लिम बस्ती नहीं थी लेकिन जहाँ होंगे वहाँ वे लोग क्या सोच रहे होंगे? क्या कह रहे होंगे? सन्नाटा पसर गया। कहीं कोई आवाज नहीं। सबको लगा कि बहुत बुरा हुआ। दिन जल्दी ढल गया। कुहासा तेजी से छा गया।

अँधेरा होने के बाद स्त्रियाँ रोज की तरह निवृत्त होने बाहर निकलीं तो आपस में संवाद हुआ।

अगम बहै दरियाव

"किसी के भगवान का घर गिराना अच्छी बात तो नहीं।"

"इतनी बड़ी दुनिया बनाकर दे दिया भगवान ने और तुम्हें उनका घर बनाने की जगह ही नहीं मिली! दूसरे के भगवान का घर ढहाना पड़ा।"

मठा बाबा चुप रहे.

रात रेडियो में बांग्लादेश, पाकिस्तान और देश के कुछ हिस्सों में दंगा फैलने की खबर आई।

सबेरे लोगों ने देखा, अम्बेडकर की मूर्ति स्तम्भ के पीछे की ओर गिरी थी। मूर्ति के गले में रस्सी का एक टूटा हिस्सा अभी भी कसा था। पास में ट्रैक्टर के टायरों के निशान थे।

दलित टोले में कोहराम मच गया। अफवाह फैलने लगी कि यह मसजिद गिरने की प्रतिक्रिया है।

तूफानी ने प्रतिवाद किया- "टाटी की आड़ से शिकार खेलने वाले हमको इतना बेवकूफ न समझें। मूर्ति फिर लगेगी और यहीं लगेगी।"

आनन-फानन में पुलिस मूर्ति को थाने ले गई। जगग

एक दिन बुल्लू ने सोना के सामने फिल्म देखने का प्रस्ताव रखा - "बहुत अच्छी फिल्म है, 'एक दूजे के लिए'।"

"ना बाबा, ना! देर से घर पहुँचने पर क्या जवाब देंगे?"

"मैटिनी शो देखेंगे। इंटरवल के बाद की क्लास गोल कर देंगे। घर समय से पहुँच जाओगी।"

"किसी ने देख लिया तो?"

"तो क्या? हम लोग तो एक-दूजे के होने ही वाले हैं।"

"धत्!" फिर कुछ रुककर बोली- "जब होंगे तब देखेंगे।"

जब मथुरा सिंह ने मोटरसाइकिल पक्की से गाँव की पगडंडी पर मोड़ी तो अँधेरा छाने लगा था। पगडंडी के दोनों ओर सरपत की झाड़ियाँ थीं। हल्की पुरवाई बह रही थी। आम के बौर की सुगन्ध पुरवाई के साथ बहकर पूरे सिवार को गमका रही थी। आगे पगडंडी बाईं ओर मुड़ती थी।

मुड़ते ही देखा - सामने आम की एक सूखी डाल ने आर-पार रास्ता रोक रखा था। रुकना पड़ा। भय से दिमाग झनझना गया। दोनों पैर जमीन पर टिकाकर उन्होंने कन्धे पर टँगी बन्दूक हाथ में लेनी चाही। तब तक किसी ने पीछे से एक झटके में बन्दूक छीन ली। चार हाथों ने उन्हें खींचकर मुँह के बल गिरा दिया और उनके हाथ पीछे बाँध दिए। उन्होंने चिल्लाना चाहा। लेकिन मुँह से आवाज नहीं निकली। किसी ने गिरी हुई मोटरसाइकिल का इंजन बन्द कर दिया। मुँह में कपड़ा भरकर उन्हें बाग में ले आए। महुए की एक मोटी जड़ जमीन से निकलकर दूर तक गई थी। उनका दाहिना पैर जमीन और जड़ के बीच की खाली जगह में, आगे की ओर मुँह रखते हुए, घुटने तक घुसाया गया फिर मुँह के बल उलट दिया गया। घुटने की हड्डी टूटने के साथ उनका चीत्कार मुँह बँधा होने के कारण गों-गों के रूप में निकला। वे जमीन पर लोटने छटपटाने लगे।

जंगू ने दो महीने के अन्तराल पर दो बार फरमान भेजा था, लेकिन वे नहीं झुके। इलाके में उनका दबदबा था। जंगू की घुड़की से डरने का मतलब मूँछ नीची हो जाना। वे सावधान हो गए। बाहर निकलना कम कर दिया। जहाँ भी रहते अँधेरा होने के पहले घर आ जाते। आज महीनों बाद बाजार

गए थे। उन्हें बकरे की रान और पुढे का मांस पसन्द था। किसी और का खरीदा उन्हें पसन्द नहीं आता था। बाजार में एक परिचित के मिल जाने के कारण लौटते-लौटते अँधेरा हो गया।

"जोखू को फिरी करने की खबर भेजी थी। मिली कि नहीं?"

उन्होंने स्वीकार में सिर हिलाया। गों-गों!

"तो क्या उसका खून चूसकर अभी तक पेट नहीं भरा?"

गों-गों की आवाज के साथ सिर पूछने वाले के पैरों की ओर झुक गया।

"इसी शर्त पर जान बक्स रहे हैं कि पहले घर जाकर जोखू से उऋण बोलिए। उसे उसके घर भेजिए, फिर अस्पताल जाइए।"

"गों-गों।"

"तुम्हारी बन्दूक अभी जमानत के तौर पर हमारे पास रहेगी।"

बहुत देर तक मथुरा सिंह को विश्वास न हुआ कि वे लोग चले गए। जब हुआ तो घुटने में दर्द शुरू हुआ। पीछे बँधा हाथ महुए की कनखी में फँसाकर खोला, फिर मुँह से कपड़ा निकाला।

अगम बहै दरियाव

सबेरे तक पूरे इलाके में खबर फैल गई- मथुरा सिंह का फैसला भी हो गया। "बहुत अच्छा!" पूरे इलाके की आवाज।

मथुरा सिंह के गाँव में जोखू नाम का एक कोल आदिवासी युवक था। बीस-पचीस साल पहले उसने मथुरा सिंह से सौ रुपये कर्ज लिया था। कर्ज क्या लिया था, मथुरा सिंह ने उसकी तरफ से थाने पर नजराना दिया था।

हुआ ऐसा कि जोखू के पड़ोसी नजीर डफाली की दो मुर्गियाँ गायब हो गईं। नजीर को शक हुआ कि जोखू ने ही उसकी मुर्गियाँ चुराई हैं। मथुरा सिंह उसी साल गाँव के नए प्रधान बने थे। नजीर ने उन्हें वोट दिया था। इसलिए वह उनके पास फरियाद लेकर गया। मथुरा सिंह उसे लेकर सीधे थाने गए और जोखू के खिलाफ मुर्गी चोरी की शिकायत दर्ज करा दी।

अगले दिन जोखू को बुलाने थाने से सिपाही आया। जोखू भी मथुरा सिंह का ही आदमी था। उसने भी उनको ही वोट दिया था। इसलिए वह भी अपनी मदद के लिए मथुरा सिंह को साथ ले गया।

जोखू को थाने के फाटक के बाहर बैठाकर मथुरा सिंह अन्दर गए। देर तक बातचीत हुई, फिर उन्होंने लौटकर जोखू को डराया कि जेल जाना पड़ेगा क्योंकि नजीर थाने पर मोटी रकम चढ़ा गया है।

"लेकिन मैंने उसकी मुर्गी नहीं चुराई।"

"जानता हूँ, लेकिन उससे क्या? थाने पर तो उसी की बात मानी जाती है जो रुपये चढ़ाता है।"

जोखू के पास पैसा तो क्या, पैसा रखने की जेब ही नहीं थी। कमर में मैली लुंगी लपेटे हुए वह थाने आया था।

लेकिन मथुरा सिंह के सामने उनका अपना आदमी जेल चला जाए, यह भी तो वे नहीं देख सकते थे। उन्होंने जोखू की ओर से थाने पर सौ रुपये देकर उसे जेल जाने से बचा लिया। रुपये इस शर्त पर दिए कि जब तक जोखू यह कर्ज नहीं चुका देगा, वह उनकी हलवाही-चरवाही करता रहेगा। उसकी इस मेहनत के बदले में वे इस कर्ज पर ब्याज नहीं लेंगे। ब्याज की रकम मजदूरी के रूप में मुजरा होती रहेगी। जिस दिन जोखू मूल धन लौटा देगा, वे उसे उऋण कर देंगे।

जोखू की औरत दूसरों की मजदूरी करके बच्चे पालती रही और जोखू ब्याज की एवज में मथुरा सिंह के घर खटते रहे। दस वर्ष बीते, बीस वर्ष बीते। जोखू की दिनचर्या नहीं बदली। मथुरा के बन्धन से मुक्ति नहीं मिली। एक-दो बार उसने मुक्त करने की याचना की तो उसे उसकी शर्त की याद दिलाई गई। सौ

रुपये की देनदारी तो ज्यों-की-त्यों खड़ी थी, इस बीच दस साल पहले उसे बेटी का गौना देने के लिए फिर साठ रुपये कर्ज लेने पड़े, इस पर भी ब्याज की देनदारी थी। मथुरा सिंह तो बूढ़े नहीं हुए लेकिन जोखू बूढ़ा हो गया। दम पकड़ने लगा। साँस फूलने लगी। एक बार बिना बताए घर चला गया और दो दिन नहीं आया तो मथुरा सिंह का बेटा उसे जूते से पीटते, घसीटते हुए वापस लाया।

पूरे इलाके ने कहा कि यह अन्याय की हद है, लेकिन नंगा खुदा से बड़ा। बोले कौन! तब लोगों ने उसकी औरत को सलाह दी - तू जंगू के पास जाकर रो। वही चाहेगा तो तेरे आदमी का उद्धार होगा।

अब जंगू मिले कहाँ? उसका आतंक चारों तरफ हवा में तो व्याप्त है, लेकिन वह रहता कहाँ है, कोई बताने वाला नहीं। पता चला कि पतीपुर के वीराने में जो अकेला नीम का पेड़ खड़ा है, उसकी डाल से मिट्टी का एक घड़ा लटकता रहता है। जंगू से भेंट नहीं हो रही तो कोई बात नहीं। अपनी विपत्ति लिखकर उस घड़े में डाल दीजिए, वह जंगू को मिल जाएगी।

वही हुआ। घड़े में विपत्ति-गाथा डालने के तीन महीने के अन्दर जंगू ने फैसला सुना दिया। जंगू द्वारा किए जा रहे त्वरित न्याय में एक कड़ी और जुड़ गई। सबने देखा, जोखू अपने घर के पास हैंडपम्प पर रगड़-रगड़कर देह और आत्मा की गुलामी छुड़ा रहा था। पचीस साल की गुलामी !

दिन के दो बज रहे होंगे, जब सूरे की मोटी खरखराती आवाज खेलावन के दुआर पर गूँजी-" भौजी, पायलागी।" प्रत्युत्तर में नीम के पेड़ की छाया में बँधे बैल के गले का घुँघरू घनघनाया और एक नवजात पिल्ला भँकते हुए सूरे की ओर बढ़ा। सूरे ने लाठी ठकठकाई तो रुक गया और भैंकना बन्द करके गुर्राने लगा।

"काहे सूरे की खोज में दूत पर दूत भेज रही थीं भौजी? लीजिए, हाजिर हैं।" इस बार सूरे की आवाज इतनी ऊँची थी कि आसपास के लोगों को साफ सुनाई

पड़ जाए। गीले हाथ आँचल में पोंछती घर से निकलीं खेलावन की अम्मा और हँसते हुए बोलीं-" बुढ़वा हो गए, लेकिन पुरानी आदत नहीं छूटी सूरे? कहाँ इस उमर में गाँव-गाँव सूँघते घूमते रहते हो?"

सूरे ने आवाज के अनुमान से मुँह खेलावन की अम्मा की ओर घुमाया और नाराजगी दिखाते हुए बोले- "बाकी जो गाली चाहिए, दे लीजिए भौजी, लेकिन बुढ़वा मत कहिए। सीधे करेजे पर लगती है।"

"आय हाय..." वे जोर से हँसीं, "जैसे अभी गबरू जवान ही बने हुए हो!" फिर तनिक रुककर बोलीं- "दाहिने हाथ पर चौकी है, बैठ जाओ।"

फिर बहू को आवाज दी - "सूरे के लिए कुछ पानी-दाना ले आ रे बहुरिया।" लाठी से टटोलकर सूरे चौकी पर बैठ गए। फिर लाठी को चौकी की टेक देकर टिकाते हुए ज्योतिहीन आँखों को खेलावन की अम्मा की ओर उठाते हुए बोले-" गबरू जवान न सही, लेकिन साठ पार भी नहीं हूँ। कहो तो किसी दिन खेलावन बेटा से पंजा लड़ाकर दिखा दूँ ।

"इस फिर आवाज को फुसफुसाहट में बदलते हुए बताया- " इस लगन में तुम्हारे लिए देवरानी लाने वाला हूँ। जेठानी नहीं देवरानी।"

कहकर जोर से हँसे सूरे। सात-आठ दिन की बढ़ी हुई दाढ़ी-मूँछ की श्वेत-श्याम खूंटियों के बीच खुले मुँह के अन्दर ऊपर-नीचे मिलाकर पाँच-छह पीले दाँतों की छटा। आँखों के मटमैले ढेंढर जमीन से साठ अंश का कोण बना रहे थे।

ऐसे ही हैं सूरे। साठ के पेटे में पहुँचने को हैं, फिर भी चालीस से सत्तर तक की गृहिणियों को भौजी कहते हैं। इससे नीचे की हैं तो दुलहिन और ऊपर पहुँच गईं तो काकी।

"इतना मत बौराइए सूरे। अब मेरी देवरानी नहीं, अपनी कबर की जमीन खोजिए। गाँव के लड़कों को बिगाड़ने का इन्तजाम मत करिए।"

"हमें सब पता है भौजी। देवरानी से आपको गाँव के लड़कों का नहीं, हमारे खेलावन के बप्पा के बिगड़ने का डर सता रहा होगा। और कबर में जाने के लिए अभी बहुत टैम है। तब तक तो हमारे बेटे पैदा होकर जवान भी हो जाएँगे। कबर में नहीं, सीधे प्रयागराज ले जाएँगे।"

हँसने लगीं खेलावन की अम्मा- "जा सूरे! आँख-दीदा नहीं है तब तो इतना उड़ते हो। होता तो पता नहीं क्या करते।"

बहू एक मौनी में गुड़ की ढेली और लोटे में मट्ठा लेकर आई और चौकी पर सूरे के दाहिने हाथ की ओर रखते हुए बोली- "पैर पड़ती हूँ, बाबा। लेओ, मट्ठा पियो।"

"जियति रहो बच्चा, जियति रहो।"

पायल की दूर जाती रुनझुन से सूरे आश्वस्त हुए तो बोले-" आँख-दीदा होता तो आपको लेकर कबके कलकत्ता, रैमून भाग गए होते भौजी।"

"मुझको लेकर क्यों भागते? तुम्हारी छब्बी कहाँ गई? उसको लेकर क्यों नहीं भागे?"

"छब्बी की याद न दिलाओ भौजी। उसे तो जैसे जमीन निगल गई।"

फिर कुछ देर आसमान की ओर देखकर बोले-" लेकिन जिन्दा होगी तो कभी मिलने जरूर आएगी।"

छब्बी सूरे की जिन्दगी की 'ट्रेजेडी क्वीन' है। उसी ने एक बार सूरे की जान बचाई थी और उसी के कारण सूरे की आँखें सूजा घोंपकर फोड़ी गई थीं।

अब तक आसपास की औरतें और बच्चे सूरे की आवाज सुनकर जुट आए थे। सूरे ने गुड़ खाकर मट्ठा पी लिया तो खेलावन की अम्मा काम की बात पर आईं।

"दूत पर दूत इसलिए भेज रहे थे कि दोनों बाल्टियाँ दो दिन के अन्दर कुएँ के पेट में समा गईं।"

"भइया ने आँगन में हैंडपम्प लगवा दिया है, गवा दिया नहीं कर रही हैं।" तब भी कुएँ में झाँकना बन्द

"हैंडपम्प बार-बार पानी छोड़ रहा रहा १ था। जानवर प्यासे थे तो बहू ने सोचा, जल्दी से कुएँ से भरकर पिला दें। कुएँ से पानी भरने की आदत तो छूट गई है। भरी बाल्टी झटके से खींची तो पुरानी रस्सी टूट गई।"

सूरे ने नकली गुस्सा दिखाते हुए फुसफुसाकर कहा- " जवान पतोहू को गौना करके घर में बैठा दिया और बेटे को रुपया कमाने परदेस भेज दिया। ऐसे में बहू रस्सी नहीं तोड़ेगी तो क्या करेगी?"

"जा सूरे, तोहें तो हमेशा मजाक सूझता है!"

"मजाक नहीं भौजी, उन बाल्टियों में पतोहू की हाय समाई है। इन्हें एक ही शर्त पर निकालूंगा।"

सारा जनसमूह शर्त जानने को उत्सुक हुआ।

"शर्त यह है कि बेटे को तार मारकर होली के पहले परदेस से बुलवा लीजिए। हाँ, अगर चाहती हैं कि आपकी आँखों के सामने भइया पतोहू के साथ होली खेलना शुरू करें तो दूसरी बात है।"

खेलावन की अम्मा ने गुस्सा दिखाना जरूरी समझा- "हमारे घर में आग न लगाओ सूरे। बाल्टी निकालो और अपना रास्ता पकड़ो।"

लेकिन सूरे को, ओसारे के भीतर किवाड़ की आड़ में खड़ी पतोहू की चूड़ियों

अगम बहै दरियाव

की खनक बीच-बीच में सुनाई पड़ रही थी। सूरे उठकर चौकी पर खड़े हो गए। ज्योतिहीन आँखों को जमीन से साठ अंश पर स्थिर किया और दाहिना हाथ कनपटी पर रखकर गाने लगे-

रुपिया पइसवा भउजी
फिर-फिर अइहें
अरे जवनिया जौ गई,
फिर से आए ना लावती के
अरे जवनिया जौ गई...

हे भौजी, क्या कह रहा है बिरहिया, कि रुपिया-पैसा तो जिन्दगी में बार-बार आएगा-जाएगा। लेकिन पतोहू की जवानी जो गई तो फिर लौटकर नहीं आने वाली। शर्त मंजूर हो तो मैं कपड़े उतारूँ।

"वाह सूरे, वाह।" उपस्थित जनसमूह ने एक स्वर में सूरे का समर्थन किया। खेलावन की अम्मा भी हँसने लगीं।

सूरे ने अँगोछा-बंडी उतारकर चौकी पर रखा। धोती को समेटकर लँगोट की तरह कसकर बाँधा और उबहन का सिरा कुएँ की जगत के छूहों में लगे लोहे के एंगिल में बाँधते हुए बोले- "कल दोपहर के खाए हुए हैं भौजी, कीरतपुर के परधान के घर।" फिर उबहन की गाँठ की मजबूती परखते हुए बोले- " आज आलू-गोभी की तरकारी और पूड़ी खाने का मन कर रहा है भौजी।"

यह जानकर कि चौबीस घंटे से सूरे की अन्न से भेंट नहीं हुई है खेलावन की अम्मा द्रवित हो जाती हैं। वे मुड़कर बहू से कहती हैं- "जल्दी से कड़ाही चढ़ा दे।" फिर एक लड़के से कहती हैं- "दौड़कर मेरे खेत से गोभी का एक फूल काट ले आ बाबू।"

अब तो कुएँ से पानी भरने का रिवाज ही खत्म हो चला है। कुएँ की जगह हैंडपम्प ने ले ली है। सात-आठ साल पहले तक सूरे की जीविका कुएँ में गिरे गगरे, बाल्टी निकालने से ही चल रही थी। अब भी आसपास के पाँच-छह गाँवों को मिलाकर इस तरह का चार-छह काम महीने में मिल जाता है। गगरा, बाल्टी निकालने की मजदूरी पहले भी सूरे मुँह खोलकर नहीं माँगते थे, अब भी नहीं माँगते। जिसने जो

दे दिया, ले लिया। हाँ, कुछ खाते-पीते घरों से पैसा या अनाज नहीं लेते थे। कहते थे-जिस दिन चौके में कोई खास व्यंजन बने, दालपूड़ी, फरा, कटहल, महुआ के कोवा या आलू-गोभी की तरकारी, पना, बरा, रिकवँछ या सहिना, उस दिन बुलाकर भरपेट खिला दीजिएगा। ऐसी मजदूरी ज्यादातर उधार रह जाती है, क्योंकि आए-दिन तो किसी के घर ये व्यंजन बनते नहीं और बने तो सूरे को बुलाने की याद न रहे।

सूरे अक्सर हँसकर कहते हैं- 'इलाके के सारे बड़े-बड़े लोग हमारे कर्जदार हैं। हैबतगढ़ के शंकर सिंह कितने बड़े जोतदार हैं। ट्यूबवेल, ट्रैक्टर, फटफटी, क्या नहीं है। लेकिन पाँच साल से हमारी दो खुराक

के कर्जदार हैं। रामगंज के दल्लू सेठ की कितनी बड़ी कोठी है। कितने टरक, ईंट का भट्ठा। वे भी दो साल से एक खुराक के कर्जदार हैं।'

सूरे की खुराकी का कर्ज सीधे घर की मालकिन के नाम चढ़ा माना जाता है। गरीब घर की हों, चाहे अमीर घर की; कोई भी गृहस्थिन नहीं चाहती कि सूरे का कर्ज अदा किए बिना इस दुनिया से जाए।

जिस गृहस्थ के घर सूरे को मनपसन्द भोजन मिल जाता है, उसकी तारीफ सालों करते हैं। रामगंज बाजार की झुमका सेठानी के भोजन का बखान आसपास के आठ-दस गाँव के लोग कई बार सुन चुके हैं। सूरे के मुँह से सुनिए तो आपके मुँह में भी पानी आ जाए- 'कनकजीर के अरवा चावल का भात। देशी घी में जीरा से बघारी अरहर की गाढ़ी पीली दाल। महमह महकती हुई।'

सूरे बताते हैं- 'सेठानी की छोटी-सी बटुली। न वे परसने से पिछड़ीं, न हम खाने से। बटुली भर भात अकेले खा गए। उस महकती दाल-भात का स्वाद अभी तक जीभ पर ज्यों-का-त्यों बना हुआ है।'

सेठानी की चाभियों का गुच्छा कुएँ में गिर गया था। सेठानी चाहती थीं कि सेठ को इसकी जानकारी न होने पाए। सूरे ने जाड़े की रात में चाभी का गुच्छा निकाला था।

सूरे को पता है कि क्यों उन्हें ही दो-तीन दिन से इस काम के लिए खोजा जा रहा है। कोई छोटा-मोटा कुआँ होता तो खेलावन की अम्मा किसी भी राह चलते छोकरे को उतारकर बाल्टियाँ निकलवा लेतीं लेकिन इस कुएँ में उतरना आजकल के लौंडों के वश की बात नहीं है। यह कुआँ खेलावन के बाबा ने बनवाया था। बीस हाथ की तो इसकी मुनरी ** है। गर्मी में भी पानी की गहराई आठ-दस हाथ रहती है।

* चावल के आटे का

** रिंग, परिधि

अगम बहै दरियाव

आजकल के लौंडों के फेफड़े में इतना दम नहीं है कि दस-पन्द्रह हाथ नीचे जाकर बाल्टी खोजने के लिए साँस बाँध सकें। बीस साल से तो इसकी सफाई ही नहीं हुई है। कमर भर गाद भरी होगी पेटे में। क्या

समझते हैं कि काँटा डालकर टटोलवाया च होगा, लेकिन कीचड़-गाद में धँसी बाल्टी काँटे की पकड़ में कैसे आ सकती है?

उबहन पकड़कर कुएँ में लटकने के बाद आँखें बन्द करके कुछ बुदबुदाते हैं सूरे, फिर पानी में कूदते हैं। झम्मऽऽऽऽ... की आवाज के साथ अदृश्य हो जाते हैं। ऊँचाई से कूदने पर तलहटी तक पहुँचने में समय कम लगता है। सारा खेल तो समय का ही है। एक-डेढ़ मिनट में काम करके पानी की सतह पर आ जाना पड़ता है। कुएँ की मुँडेर से बीसों सिर अन्दर झाँक रहे हैं।

पहले बुलबुले ऊपर आए, फिर सूरे। लेकिन खाली हाथ... "नहीं मिली?" नीचे झाँकते छोटे-बड़े कई चेहरों ने एक साथ पूछा। लम्बी साँस छोड़कर और चेहरे का पानी दाहिने हाथ से पोंछकर मुँह ऊपर उठाकर बोले सूरे-"वरुन देवता नीचे धँसने ही नहीं दे रहे हैं। भौजी से कहो, भेली चढ़ानी होगी।"

सब जानते हैं, गुड़ खाने का यह पुराना हथकंडा है सूरे का। भेली आती है। सूरे रस्सी के सहारे ऊपर तक आते हैं और गुड़ की भेली मुँह में दबाकर पानी की सतह पर लौट जाते हैं। भेली फोड़कर थोड़ा गुड़ वरुण देवता को अर्पित करते हैं। बाकी गुड़ इत्मीनान से खाकर फिर डुबकी लगाते हैं। इस बार पानी की सतह पर उतराते हैं तो उनके दाएँ हाथ में बाल्टी दिखती है। पानी में उलट-पुलट कर उसका कीचड़ साफ करते हैं और रस्सी के छोर से बाँधकर कहते हैं- खींचो। रस्सी बाहर खींचकर बाल्टी खोल ली जाती है और रस्सी फिर कुएँ में वापस।

अभी एक बाल्टी और है।

"ऐ, कौन उतरा है कुएँ में? सुरवा है क्या?" एक कड़क आवाज आई। वे तीन थे। धीरे-धीरे चलकर कुएँ के पास आ गए। औरतों ने उत्तर देने के पहले मामला समझना चाहा, लेकिन बच्चों ने सहज ही स्वीकार में सिर हिला दिया। पानी में डूबने को तैयार सूरे के कान खड़े हो गए।

"वही है, साहब।" चपरासीनुमा व्यक्ति ने पैंट-बुशर्ट पहने नौजवान से कहा। सूरे को अपना नाम सुनकर ठंड लगने लगी। पाँच दिनों से वे इधर-उधर से सुन रहे थे कि तहसील का अमला उन्हें खोज रहा है। क्यों भला? वे समझ नहीं पा रहे थे, लेकिन डरते जा रहे थे। सरकारी आदमी उनकी तलाश में हैं, डरने के लिए इतना ही काफी है। इसी डर के चलते तीन दिन से अपने गाँव नहीं लौट रहे थे। आसपास के गाँवों में रात गुजार रहे थे।

पहले कहाँ डरते थे? न डरने के चलते ही उनकी आँखें सूजा भैंसाकर फोड़ी गई थीं। पैंतीस साल पहले। न डरने के चलते ही तो एक झटके में जाल में फैस गए थे, सत्रह साल पहले। वे छटपटाते-चिल्लाते सफाई देते रह गए कि साहब, अभी से हमारी क्यों काट रहे हैं? अभी तो हमारा बियाह भी नहीं हुआ है। फिर हमारे बच्चे कैसे हो सकते हैं?

एक मसखरे चपरासी ने मजाक किया था- "तब तो तुमसे सारे पड़ोस को खतरा है। पता नहीं, कहाँ पैदा कर दो।"

छह महीने बाद ही फिर पकड़ लिये गए। भाग भी तो नहीं सकते थे, आँख-दीदा वालों की तरह। वे चिल्लाते रह गए - साहेब, हमारी कट चुकी है। लेकिन किसी ने नहीं सुना। पहली कटान सूरे के नाम से। दूसरी ललई उर्फ लालचंद के नाम से। दो बार कटने की निशानी- दो कंबल । सूरे ने साँस खींचकर फिर डुबकी लगाई, लेकिन एक मिनट भी नीचे नहीं रह सके। सूरे इन्तजार कर रहे थे कि बाहर की रौ-भौ मिले, लेकिन बाहर एकदम सन्नाटा था।

फिर डूबने की ताकत नहीं रही। कुछ पानी की ठंडक और कुछ आगत का डर। वे काँपने लगे। लगा कि थोड़ी देर और अन्दर रह गए तो बाजुओं में इतनी ताकत और पंजों में इतनी पकड़ नहीं रह जाएगी कि रस्सी के सहारे बाहर निकल सकें।

"अरे, बाहर भी निकलेगा कि कुएँ में ही सो गया।"

सूरे कुछ देर तक दुविधा में रहे, फिर रस्सी के सहारे धीरे-धीरे बाहर आकर कुएँ की जगत पर खड़े हुए। जो पाँच-छह दाँत बचे थे, कटकटा रहे थे। एक लड़के ने पास रखा उनका अँगोछा उन्हें पकड़ाया। वे शरीर का पानी पोंछने लगे।

"दूसरी बाल्टी कहाँ है?"

"दूसरी नहीं मिली। बहुत ठंड है। फिर किसी दिन निकालेंगे।"

"सूरे उर्फ ललई वल्द रामदास तुम्हारा ही नाम है?"

"हाँ भइया, लेकिन हम पहचाने नहीं।"

"हम लोग तहसील के वसूली स्टाफ हैं। तुम्हारे नाम से बकाया है। तहसील चलना होगा।"

"मेरे नाम से बकाया कैसे होगा, साहेब? मेरे पास तो एक धूर जमीन भी नहीं है। और इस गाँव में दो-चार बूढ़ों को छोड़कर ललई के नाम से मुझे कोई जानता भी नहीं है!"

"यही तो तुम्हारी कारस्तानी है। नाम छिपाकर सोचा था कि सरकार की आँख में धूल झोंक दोगे।"

"हम समझे नहीं, सरकार ! "

अगम बहै दरियाव

"चलो, वहीं सब समझ जाओगे।" वह आदमी सूरे की बाँह पकड़कर जगत के नीचे खींचने लगा। सूरे के चेहरे पर बेचारगी फैल गई। एक बार तो मन किया कि बाँह छुड़ाकर फिर कुएँ में कूद जाएँ। लेकिन कुएँ में कितनी देर रहेंगे? अचानक सूरे ने झटके से बाँह छुड़ाई। बोले- "सरकार, हम सब समझ गए। यह तीसरी बार है, जब आप हमारी कटवाने के लिए पकड़ रहे हैं। इससे तो अच्छा है कि समूचा ही काट ले जाइए। बस, हमें बख्श दीजिए।"

तीनों हँसने लगे-" अरे बेवकूफ, कटने-काटने का काम कब का बन्द हो गया!"

"तो हमें किस जुर्म में बाँध रहे हैं, सरकार?"

"कर्ज लेकर खा गए। मूल-सूद सब हजम। लौटाने की नीयत नहीं तो बाँधे नहीं जाओगे? चलो, वहीं हवालात में बैठकर निरगुन गाओ।"

"अरे सरकार, हमने कभी कोई कर्जा नहीं लिया। हमें क्या जरूरत है कर्जा लेने की?"

खेलावन की अम्मा आगे बढ़कर बोलीं- "सूरे के न जगह, न जमीन, न मेहरारू, न लरिका। ये काहे कर्जा लेंगे?"

"यह सब वहीं तहसील में फरियाएगा।"

पतली एक नई दुल्हन घूँघट की आड़ से पतली आवाज में बोली- " आप लोग झूठ बोल रहे हैं। सारा कर्जा तो तीन साल पहले वी.पी. सिंह माफ कर गए। फिर यह नया कर्जा कहाँ से आ गया? कब कर्जा लिया? किस काम से लिया? पहले बताया जाए। बेकसूर आदमी को जब मर्जी टाँग ले जाओगे?"

अमला थोड़ा ठिठका। फिर पतलून वाले ने एक रजिस्टर पलटकर देखा और बोला- "सन् 1981 में ललई वल्द रामदास के नाम से डेढ़ हजार का लोन लिया गया है। पंचर जोड़ने का सामान खरीदने के लिए। एक-तिहाई सब्सिडी माफ हो गई। बाकी मूल और सूद की देनदारी बनती है। बेकसूर को क्यों पकड़ेंगे?"

"सूरे को रस्ता तो सूझता नहीं। ये पंचर कैसे जोड़ लेंगे?"

यह सवाल कई दिशाओं से उभरा।

"इसका मतलब लोन देने वाले खुद अन्धे थे।"

"और फिर सन् 1990 में जब बड़े-बड़े बकाए माफ हो गए, यह क्यों माफ नहीं हुआ?"

"सन् 1990 में कृषि ऋण माफ हुआ था। यह बिजनेस लोन है, धन्धे के लिए।" "धन्धे के लिए कि धाँधली के लिए? यह लोन फर्जी है। हम सूरे को नहीं जाने देंगे।"

कहने के साथ पाँच-छह औरतें जीप के आसपास घिर आईं।

पुलिस प्रशासन की नजर में यह गाँव थोड़ा बवाली माना जाता है। यहाँ का पोलिंग बूथ चुनाव के अभिलेखों में अति संवेदनशील दर्ज है। औरतों के मुँह लगना तो और खतरनाक होगा। युक्ति से काम लेना पड़ेगा। देर हुई तो वे लोग घिर सकते हैं। खेलावन की अम्मा भी सोच में पड़ गई हैं। उन्हीं के काम से आए थे सूरे। उन्हीं के दरवाजे पर पकड़े जा रहे हैं। संयोग ऐसा कि इस समय कोई मर्द टोले में नहीं है।

तीनों ने समझाना शुरू किया, "देखिए, हम भी समझ रहे हैं कि अन्धा आदमी पंचर नहीं जोड़ सकता। जरूर कहीं धाँधली हुई है। उस समय एक नई योजना शुरू हुई थी-आईआरडीपी। इसका मतलब लोगों ने निकाला - आई रकम डकारो प्यारे। सूरे के नाम से रकम निकालकर डकार ली गई होगी। लेकिन सूरे चलकर तहसीलदार साहेब के सामने यही बात कहें। कहें कि यह बकाया फर्जी है। उन्होंने कभी कोई लोन नहीं लिया। दरख्वास्त दें कि इसे माफ किया जाए। बट्टे खाते में डाला जाए। हम भी सूरे की ओर से कहेंगे, लेकिन अपनी बात कहने के लिए चलना तो पड़ेगा।"

इस बीच ड्राइवर धीरे-धीरे जीप सूरे के पास तक ले आया। एक आदमी ने जीप के पीछे का फाटक खोला और सूरे को पकड़कर अन्दर खींच लिया। सूरे पीछे की ओर मुँह करके जीप के फर्श पर उकहूँ बैठ गए। दो लोगों ने सूरे के दाएँ-बाएँ की लम्बी सीटों पर बैठकर उनका एक-एक कन्धा पकड़ लिया। पैंट-शर्ट वाला आदमी आगे बैठने लगा तो खेलावन की अम्मा जीप के ठीक सामने खड़ी हो गईं और बोलीं- "सूरे कल से कुछ खाए नहीं हैं। मैंने उनके लिए पूड़ी-सब्जी बनवाई है। पहले इन्हें खा लेने दीजिए, फिर ले जाइए।"

उन्होंने वहीं से अपनी पतोहू को आवाज दी- "ला रे दखिनाही।"

अचानक सूरे को याद आया- "मेरी लाठी।"

"लाठी क्या करोगे? तहसीलदार साहब से लाठी चलाओगे?"

"अरे सरकार, वही तो मेरी आँख है।"

एक लड़के ने तख्त से टिकी लाठी उठाकर सूरे की ओर बढ़ाई। चपरासी ने उसे जीप के फर्श पर तिरछा करके व्यवस्थित किया। सूरे उसे टटोलकर सन्तुष्ट हुए। फिर बोले- "गीली धोती भी नहीं बदलने दिये, सरकार। दाद हो जाएगी।"

"धोती बदलकर क्या पहनते?"

"यही अँगोछा, सरकार।"

"इसमें तो बहत्तर छेद हैं।"

"बहत्तर छेद तो जिन्दगी में भी हैं सरकार, लेकिन काम तो इसी से चल रहा है।"

अगम बहै दरियाव

खेलावन की दुलहिन एक पुराने पत्तल पर दस-बारह पूड़ियाँ और उसके ऊपर आम के अचार की एक फाँक रखकर ले आई।

घूंघट के अन्दर से पतली आवाज में बताया- "सब्जी पकने में अभी देर है।"

खेलावन की अम्मा ने आगे बढ़कर पत्तल ले लिया और जीप के पीछे आकर बोली-" अँजुरी रोपो, सूरे।"

सूरे ने दोनों हथेलियाँ जोड़कर फैलाई और पत्तल थाम लिया।

"बस, ठीक है। इसी में बैठे-बैठे खाते रहो।" एक सरकारी आदमी बोला। खेलावन की अम्मा के हटने से जीप के आगे का रास्ता साफ हो गया था। जीप चल पड़ी।

पगडंडी से जीप मुख्य सड़क पर दाईं ओर मुड़ी तो सूरे का सन्तुलन गड़बड़ाया। हाथ में पूड़ियाँ थीं, इसलिए टेक भी नहीं ले सके। बाईं करवट उलट गए, लेकिन पूड़ियाँ सुरक्षित थीं। केवल अचार की फाँक नीचे गिर गई, पर सूरे को इसका पता नहीं चला। वे चूतड़ के बल बैठ गए। अँजुरी मुँह के सूँघा और पूड़ी का पहला कौर काट लिया... "स लाए । साँस खींचकर

हम लड़ि लड़ि भाय बिलाइ गए

एक कान से दूसरे कान तक होते-होते बात संतोखी के कान तक पहुँच गई- तो यह है मुझे डसने वाला असली करैत । पुरखे सही कहते थे, पाप खुद चिल्लाता है। उन्होंने तुरन्त महादेव के खिलाफ थाने में तहरीर दी - कूट रचना और 420 के मामले में महादेव का नाम भी शामिल किया जाए।

दो-तीन महीने बाद एक शाम महादेव की बूढ़ी जलते चूल्हे के सामने बैठी आटा गूंध रही थी। चूल्हे पर पकती दाल में पड़ी खटाई की महक घर भर में फैल रही थी। बूढ़ी ने आवाज लगाई- "रोटी सेंक रही हूँ। हाथ-पाँव धोकर आइए। गरम-गरम खा लीजिए।"

बाहर गड़े बिजली के खम्भे पर जल रहे बल्ब की रोशनी का एक चकत्ता अन्दर तक आता है। बुढ़िया उसी चकत्ते में बुढ़ऊ के बैठने के लिए पुआल का बीड़ा रखती है।

अभी पहला कौर तोड़ ही रहे थे कि झुककर अन्दर घुसते सिपाही की टोपी पर नजर गई।

"क्या आप महादेव हैं?"

"हाँ, सरकार।" महादेव अन्दर तक हिल जाते हैं। खड़े होकर हाथ जोड़ते हैं।

"बदमाश! चल थाने।"

"हमने क्या किया, सरकार?"

"तूने बारह साल पहले रमेसर बनकर संतोखी का खेत छत्रधारी की औरत के नाम बैनामा किया था न? संतोखी ने तेरे खिलाफ तहरीर दी है। तेरे नाम वारंट है।"

"अरे सरकार, ऐसा जुलुम मत करिए। किसी तरह बचा लीजिए।"

सिपाही थोड़ी देर तक सोचने का नाटक करता रहा। फिर महादेव को कोने में ले जाकर कुछ फुसफुसाया। फिर सामान्य स्वर में बोला - "देख, जाति-बिरादरी का है इसलिए इतना कर सकता हूँ

कि कुछ दिन की मोहलत दे दूँ, लेकिन थानेदार पूरा कसाई है। उसका पेट बहुत बड़ा है। हजार से कम पर न मानेगा।"

"इतना पैसा गरीब की झोंपड़ी में कहाँ से आएगा, सरकार?"

"तो चल। सिपाही बाँह पकड़कर खींचता है- "बिना हाथ-पाँव तुड़वाए अकल नहीं आएगी।"

"नहीं-नहीं हाकिम।" पीछे खड़ी सारी बात सुन रही बूढ़ी घबराकर कहती है-" इन्हें न पकड़ो। पैसा मैं देती हूँ। कल ही घंटा* बिका है। उसके आठ सौ रखे हैं।

नोट गिनते सिपाही से जानना चाहती है बुढ़िया - "अब तो कोई खतरा नहीं है, साहेब?"

हँसता है सिपाही-" खतरा? खतरा तो तब तक है जब तक बुड्ढा जिन्दा रहेगा।" बाहर आकर मुस्कराता है सिपाही। इसी तरह दौड़-धूपकर आहार खोजना पड़ता है, वरना सिपाही को कौन पूछता है!

चूल्हे की आग बुझ गई है।

बुढ़िया पूछती है- "सिपहिया जो कह रहा था वह सही है?"

महादेव सूनी आँखों से उसे देखते हैं। फिर बुदबुदाते हैं- "क्या बताएँ! गुस्से में आकर खुद ही अपने गले में फाँसी का फंदा डाल लिया।"

"तुम्हारी अकल पर पत्थर पड़ा था क्या?"

बुढ़िया चूल्हे में फूंक मारने लगी।

"तुम खा लो। मुझे भूख नहीं है।" महादेव बाहर जाने के लिए मुड़ते हैं।

"अरे, अन्न से क्या दुश्मनी है! आओ, बैठो।"

टोले में सिपाही क्यों आया, टोले के लोग जानना चाहते हैं। एक-एक करके लोग अन्दर आते हैं।

* सूअर का बच्चा।

अगम बहै दरियाव

महादेव रोटी नहीं कूच पा रहे हैं। वे गरम दाल में रोटी भिगो देते हैं। बोलने से बचने का अच्छा बहाना है- खाते समय बोलना 'दोख' है।

जेल जाने का डर महादेव की पूरी चेतना पर छा गया है। सोते-जागते, उठते-बैठते-जेल। कैसी होती है जेल? मार-मारकर हाथ-पाँव तोड़ देते हैं क्या? संतोखी मिलते तो उनसे माफी माँग लेते। कहते कि मेरे कुछ कहने-करने से तुम्हारा बिगड़ा काम बनता हो तो बना लो। बस, बुढ़ापे में जेल मत भेजवाओ।

आखिर उस दिन बाजार में सुर्ती की दुकान पर संतोखी से सामना हो ही गया। संतोखी की आँखें उन्हें देखकर अंगार हो गईं। लपककर सामने आए और महादेव की बाँह पकड़कर पूछा- "छत्रधारी ने तो लालच में आकर मेरा मूड़ काटा, तुम उनके सथुआ क्यों बने ? कितना रुपया दिया था छत्रधारी ने?"

"हम छत्रधारी का एक पैसा नहीं जानते भैया। कसम खिला लो, अगर मजदूरी के अलावा कभी सेर-भर अनाज भी बेसी दिया हो। उन्होंने फुसलाकर मेरी बुद्धि का नाश किया। मेरी मति फेर दी। मुझे माफ कर दो।"

"माफ? जब से पता चला है कि मेरे महाभारत के सकुनी तुम्हीं हो, तुम्हारी सूरत आँखों के आगे आती है तो सूती-भर खून सूख जाता है।"

संतोखी लपककर महादेव का बायाँ अँगूठा पकड़ते हैं और उसे अपनी आँखों के आगे लाते हुए कहते हैं-" इसी अँगूठे ने मेरी दुनिया में आग लगाया है न? अब यही तुम्हें जेल भी भेजवाएगा।"

संतोखी हाथ झटककर चल देते हैं। काँप गए हैं महादेव। काँपते हाथों के साथ उनके हाथ की लाठी भी काँपने लगी है।

रास्ते-भर संतोखी की आवाज महादेव के कानों में गूँजती रही- अब यही अँगूठा तुम्हें जेल भी भेजवाएगा। अब यही... वे चलते-चलते रुक जाते हैं। अपना बायाँ अँगूठा आँखों के सामने लाकर देखते हैं- " अब यही..."

"सुनो जी, सुनती हो। गँड़ासा कहाँ रखा है?"

"क्या होगा गँड़ासा?" बूढ़ी चूल्हे में फूँक मारते हुए पूछती है।

"बताओ न!" महादेव बेताबी से पूछते हैं।

बुढ़िया गँड़ासा ढूँढ़कर लाई।

"क्या काटना है?"

महादेव काठ के बोटे पर बायाँ अँगूठा रखकर कहते हैं-" इस तरह साधकर मार कि एक ही वार में अँगूठा जड़ से अलग हो जाय।"

"पगला गए हो क्या?"

"मार, मार। बहुत जरूरी है।"

बुढ़िया गँड़ासा लेकर वापस लौटने लगती है तो महादेव लपककर गँड़ासा उसके हाथ से छीन लेते हैं और काठ पर अँगूठा रखकर एक ही झटके में - खचाक!

अँगूठा छिटककर दूर जा गिरा है।

वे गँड़ासा फेंकते हैं। लपककर अँगूठा उठाते हैं और रसोई में जाकर चूल्हे में डाल देते हैं- स्वाहा!

"क्या डाला?"

"सबूत!" वे अकड़कर पत्नी की ओर देखते हैं- "गरह काट डाला।"

कच्चे फर्श पर टप्-टप् टपकता खून देखकर बुढ़िया घबरा जाती है। घाव पर बाँधने के लिए चिथड़ा खोजने लगती है।

सारी बात सुनकर वकील साहब सिर पीट लेते हैं-"तुम गाँव वालों को कब अकल आएगी? अरे, माफी माँग रहा था तो पुचकारकर यहाँ ले आते। कोर्ट में बयान करा देते। अँगूठा निशान दिलाकर मिलान के लिए भेजवा देते। काम फतेह हो जाता। अपनी करनी से अपनी तकदीर गोड़ लिये।"

संतोखी से पछताए नहीं चुक रहा है।

आज संतोखी को अपने खेत पर कब्जा मिलेगा। पूरे इक्कीस साल बाद। वे भाग्यशाली हैं, वरना कितने लोगों की जिन्दगी में यह दिन आता है? बाबा मुकदमा दायर करता है तो पोता जजमेंट सुनता है। मिल तो जाता एक फसल पहले, लेकिन नोटिस की तामीली में ही बहुत समय लग गया। कब्जा दिलाने का आदेश होने के बाद भी पन्द्रह दिन लग गए। डर था, छत्रधारी ऐन मौके पर कोई नया बखेड़ा न खड़ा कर दें। इसलिए पुलिस प्रोटेक्शन लेना जरूरी था।

अगम बहै दरियाव

इस बीच मोहर्रम का त्योहार आ गया। उसके बाद फोर्स मिली। यह भी अच्छा ही हुआ। अषाढ़ लग गया है। एक बारिश हो चुकी है। कब्जा लेने के साथ ही जुतवाकर धान बो देंगे।

संतोखी ने कल शाम को ही बीज पछोरवाकर तौलकर भिगो दिया है। शहर जाने के पहले पत्नी को सहेज दिया था कि दोपहर में जब हम लोगों को खेत पर देखो तो बीज लेकर आ जाना। वे जानते हैं, छत्रधारी से बिगाड़ के डर से गाँव का कोई आदमी उन्हें अपना खेत जोतने के लिए हल-बैल नहीं देगा। इसलिए बगल के गाँव के कल्लू कसाई के पास गए। कल्लू हँसकर बोला- "मैं किसी से डरता हूँ क्या?"

वह अपना ट्रैक्टर भेजने को तैयार हो गया। बात पक्की करने के लिए संतोखी उसे डीजल भराने के नाम पर पचास रुपये बयाना दे आए।

कोर्ट अमीन ने कल ही बता दिया था कि कुल सात आदमी रहेंगे। इसलिए जीप लेकर आना और डीजल भरवाकर ठीक नौ बजे मेरे क्वार्टर पर पहुँच जाना।

संतोखी ठीक समय पर पहुँच गए। चपरासी वहाँ पहले ही पहुँच गया था।

पुलिस प्रोटेक्शन के लिए एक दारोगा और दो सिपाहियों की एक दिन की तनख्वाह कोर्ट में जमा कराने का नियम है। इसे दो दिन पहले जमा करके उन्होंने रसीद ले ली थी। अमीन और चपरासी को कब्जा दिलाने के लिए आने-जाने का खर्च तो सरकारी खजाने से मिलता है। यही कानून है। लेकिन संतोखी जानते हैं कि अगर वे अमीन को इस कानून की याद दिलाएँगे तो वह ऐसा 'कानून' बता देगा कि उनके कब्जे की कार्यवाही हमेशा के लिए लटक जाएगी।

संतोखी सोचते हैं कि जज साहबान के प्रोटेक्शन के लिए उनके बंगले पर रात-दिन जो पुलिस लगी रहती है, क्या उसकी तनख्वाह भी जज साहब को सरकारी खजाने में जमा करानी पड़ती है? ऐसा होता होगा तब तो जज साहबान की पूरी तनख्वाह इसी में खतम हो जाती होगी! कुछ देर ऊभ-चूभ होने के बाद इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि ऐसा नहीं होता होगा। उनके लिए दूसरा कानून होगा, पब्लिक के लिए दूसरा।

अमीन साहब दस बजे अन्दर से निकले। काला चश्मा लगाकर आगे बैठे और सिगरेट सुलगा ली।

थाने से फोर्स लेने में दो घंटे लग गए। दारोगा जी तब तक नहाए ही नहीं थे। बाजार में पहुँचकर चपरासी ने संतोखी के कान में मुँह सटाकर पूछा- " डुग्गी?"

संतोखी ने उसे आश्वस्त किया और बाजार के सिरे पर पहुँचकर ड्राइवर से गाड़ी रुकवाई। चपरासी ने भी अपनी जिम्मेदारी संतोखी को सौंप दी थी, डुग्गी वाले को बुक करने की। डुग्गी बजाकर इलाके के सारे आम-ओ-खास को कब्जा दखल की जानकारी देने के लिए।

सब सामने की चाय की दुकान पर चाय पीने के लिए उतर गए।

राजेश कोठरी के अन्दर बैठा सूप बुन रहा था। संतोखी ने उसे बीस रुपये का नोट पकड़ाते हुए कहा- "चलो भाई।"

"कितना दे रहे हो, चाचा?"

"बीस रुपये। यही तो कल तय हुआ था।"

"यह तो मेरा मेहनताना हुआ। नगड़ची का किराया?"

"नगड़ची का अलग से लेते हो क्या? कल तो नहीं बताया?"

"कल आपने नगड़ची का पूछा ही नहीं था? नगड़ची की आवाज ही तो दूर-दूर तक जाती है। मैं कितना चिल्लाऊँगा?"

"लो, दस और पकड़ो। जल्दी चलो। पहले ही देर हो चुकी है।"

"चाचा, नगड़ची के तीस होते हैं। और बीस रुपये का देसी का एक पौवा लाइए सामने के ठेके से। देख रहे हैं, हैं, धूप कितनी तेज है। सीधे आग बरस रही है। खोपड़ी टनक जाएगी।"

"इतना रखो। बाकी लौटकर दे देंगे।"

"आज तक कोई लौटा है बाकी देने के लिए?"

संतोखी ने दूसरी जेब में हाथ डाला। उसे राजी करके लौटे।

चाय वाले को चाय-समोसे का भुगतान किया। सबके लिए पान लगवाया। अमीन तथा दारोगा के लिए एक-एक पैकेट सिगरेट खरीदा।

राजेश ने जीप के पास खड़े-खड़े देसी का पाउच खाली किया। नगड़ची पर तीन-चार चोप मारकर मारकर उसे कन्धे से टाँगा और जीप के पीछे पायदान पर लटक गया।

जीप से उतरकर सब खेत की ओर चले तो राजेश की नगड़ची टनटनाने लगी। आवाज सुनकर बाग में खेल रहे बच्चे दौड़े। कल्लू कसाई का लाल ट्रैक्टर संतोखी के खेत के पास बबूल की छाँह में खड़ा था। सब लोग बबूल की छाँह में खड़े होकर छत्रधारी के आने का इन्तजार करने लगे।

संतोखी की पत्नी सिर पर धान के बीज की दौरी लेकर घर से निकलीं।

इन्तजार लम्बा खिंच रहा था। लेकिन छत्रधारी को बुलाने कौन जाए? दारोगा चाहता था कि अमीन का चपरासी जाए। अमीन चाहता था कि सिपाही जाए।

कल्लू कसाई का ड्राइवर बेचैन हो रहा था। वह बारह बजे ही आ गया था और अब चार बज रहे थे। उसने ट्रैक्टर स्टार्ट किया और ले जाकर खेत के बीचोबीच खड़ा कर दिया।

आखिर छत्रधारी आते दिखाई दिए। लम्बा कुर्ता लहराते, सिर पर मोटा तौलिया डाले।

अगम बहै दरियाव

टेदुआ कुबरी लपका-लपका कर आगे रखते हुए। उनके पीछे उनके भानजे और भतीजे, कन्धे पर दोनाली बन्दूक टाँगे हुए।

पास आकर छत्रधारी ने हवा को सलाम ठोंका और एक कागज अमीन के हाथ में पकड़ाया, दूसरा दारोगा के।

दिनांक .. के निर्णय एवं डिक्री का प्रभाव एवं प्रवर्तन अगले आदेश तक स्थगित रहेगा।

"हाई कोर्ट का स्टे!"

संतोखी के कान में 'स्टे' शब्द पड़ा और लगा कि दुनिया घूमने लगी है। गिरने से बचने के लिए उन्हें बबूल के पेड़ का सहारा लेना पड़ा।

अमीन ने एक क्षण कागज को देखा। उसके चेहरे पर अप्रसन्नता और खीज का भाव आया।

"स्टे था तो घर में क्या अचार डालने के लिए रखे थे अब तक?"

"परसों ही तो स्टे हुआ। आज सुबह कॉपी लेकर आए। कल आकर आपकी कोर्ट में जमा करेंगे।"

'हाई कोर्ट' और 'स्टे' - इन दो शब्दों में इतना वजन था कि सारा किया-धरा इनके नीचे दब गया।

सब लौट पड़े।

कल्लू कसाई के ड्राइवर ने पीछे से संतोखी का कुर्ता खींचा- "मेरा पेमेंट?"

"जोताई तो हुई नहीं भइया? डीजल का पैसा पहले ही दे दिए हैं।"

"अकाज तो हुआ!"

"कल्लू भाई से कहना, मैं दो-एक दिन में आकर मिलूँगा।"

पीछे-पीछे चलते हुए सोच में पड़े हैं संतोखी। वकील साहब तो कह रहे थे कि सुप्रीम कोर्ट की दर्जनों नजीरें हैं कि लोअर कोर्ट की कान्करेंट फाइंडिंग है तो हाई कोर्ट से 'स्टे' मिल ही नहीं सकता। फिर यह कैसे हुआ?

संतोखी बहू ने नतीजा निकाला कि पुलिस-दारोगा भी छत्रधारी की बन्दूक देखकर भाग खड़े हुए।

वे बीज की दौरी सिर पर रखकर वापस लौटीं।

तीन-चार दिन तक तो संतोखी को जैसे होश ही नहीं था। पस्त होकर पड़े रहे। पत्नी हाथ-पैर दबाती रही। सिर में तेल ठोंकती रही। फिर बुखार आ गया। दस दिन बुखार में तपते रहे। बुखार उतरा तो वे विद्रोही जी के पास गए कि चलकर हाई कोर्ट में उनकी अपील दायर करा दें। विद्रोही जी ने मजबूरी बताई। एक तो परधानी के काम से ही फुरसत नहीं है, दूसरे चुनाव की घोषणा कभी भी हो सकती है। पूर्व विधायक जी उन्हें एक दिन के लिए भी छोड़ने को तैयार नहीं हैं। जनसम्पर्क में उन्हें साथ-साथ रखते हैं। उन्होंने संतोखी को उस वकील का पता दे दिया जिसने परधानी के मुकदमे में उन्हें विजय दिलाई थी। संतोखी ने समझ लिया कि विद्रोही जी के मुँह में परधानी का खून लग गया है।

थोड़ा लाई-चना झोले में बचा था। पत्नी ने थोड़ा सत्तू बाँध दिया। उन्होंने इलाहाबाद की राह पकड़ी।

सुना था कि पियारे हरिजन का बेटा नन्हे सिविल लाइन में चाट का ठेला लगाता है। पता करते-करते उसके पास पहुँचे। वह दारागंज में गंगा के ऐन पेटे में एक कोठरी किराए पर लेकर रहता था। शाम को वह अपनी कोठरी पर लाया। यह जानकर कि दादी ने उसके लिए सत्तू भेजा है, खुश हुआ।

सबेरे संगम नहाने और बन्धे पर तोते से भाग्य बिचरवाने के बाद संतोखी विद्रोही जी के बताए पते को खोजते हुए चले। नहाने और तोते द्वारा बताए भविष्य से शरीर में ताकत महसूस हो रही थी।

लेकिन उन वकील साहब का हाव-भाव संतोखी को पसन्द नहीं आया। जैसे भिखारी समझ लिया हो। पहले ही अपनी गरीबी का रोना रोने लगे, यही गलती हो गई। दिन-भर निरुद्देश्य भटकते रहे। तगड़े-तगड़े साँड़ पूरे शहर में घूम रहे थे। अगर इन्हें खुनाकर हल में जोता जाए तो कितने काम के हैं! क्या खाकर इतना मोटाए हैं, यह नहीं समझ सके। शाम को नन्हे के ठेले के पास आकर बेंच पर बैठ गए। नन्हे ने एक प्लेट दही-बड़ा बनाकर उन्हें पकड़ा दिया। यह जानकर कि विद्रोही बाबा द्वारा बताए गए वकील से काम नहीं बना, उसने सिर हिलाया।

काला कोट पहने एक वकील साहब आए। मीठी चटनी के साथ डबल टिकिया का ऑर्डर दिया। अक्सर आते थे। नन्हे ने उनसे चर्चा की। उन्होंने प्यार भरी नजर संतोखी पर डाली। थोड़ी देर उनकी रामकथा सुनी, फिर अपना कार्ड देते हुए अपने चैम्बर की लोकेशन समझाई। बोले- "आठ बजे आओ।"

नन्हे ने उन्हें 'चैम्बर' के पास छोड़ते हुए सचेत किया-" वकील साहब को मेरी जाति न बताइएगा, बाबा। मैंने अपने ठेले पर 'शर्मा चाट भंडार' लिखवाया है।

असली जाति जान गए तो हो सकता है मेरी बिक्री घट जाय। ठेला भी हटवाया जा सकता है।"

संतोखी ने स्वीकृति में सिर हिलाकर आश्वस्त किया। उन्होंने खुद देखा था, नन्हे पेशाब करने जाने लगता था तो ठेले के पास से ही कान पर जनेऊ चढ़ाने लगता था।

वकील साहब को सारी बात बताने के बाद संतोखी ने यह कहकर बात समाप्त की कि बुढ़ापे में भटकना बदा था।

"आप क्यों भटक रहे हैं? घर में कोई जवान हो तो उसे दौड़ाइए।"

संतोखी ने सावधानी बरती- " और कौन है? हमीं दो परानी हैं। वही एक बीघा खेत था। अब घूम-घूम कर लाई-चना बेचता हूँ। समझिए, भीख ही माँगता हूँ। पत्नी इस उमर में मजदूरी करती है।"

वकील थोड़ा-सा खिन्न हुए, फिर समझाने लगे -"फिरी में तो यहाँ कोई काम करेगा नहीं। मामला पेचीदा हो चुका है। उनको स्टे मिल चुका है। इजरा की कार्यवाही में उलझने के बजाय पहले आपको यहाँ आना चाहिए था। कैवियेट दाखिल हो जाता तो बिना हमें सुने स्टे नहीं मिल सकता था। उसी समय सारा जोर लगाकर स्टे अपोज करते।... अब काम बढ़ गया। स्टे वैकेसन की दरखास्त लगानी होगी। जवाबदेही दाखिल करनी होगी। अर्ली फिक्सेसन कराकर स्टे खारिज कराना होगा। लफड़ा बढ़ गया।"

संतोखी समझ नहीं पा रहे थे कि और क्या पूछें।

वकील साहब ने फिर बताना शुरू किया-"यहाँ की कम-से-कम फीस है ग्यारह हजार रुपये। एकमुश्त । किसी से पूछ लीजिए। अगर कोई कम पर तैयार होता है तो समझिए ठग रहा है। भाग खड़ा होगा।... फीस दीजिए। पेपर दीजिए। वकालतनामा और एफिडेविट पर साइन कीजिए और अपने घर जाइए। आगे की जिम्मेदारी हमारी।"

फीस का बन्दोबस्त करके एक महीने में आने का वादा करके लौट आए संतोखी।

बेटे को चिट्ठी लिखवाई - " अभी तक तुम्हें दिया ही दिया, लिया एक धेला नहीं। पर अब गाड़ी फँस गई है। बारह हजार चाहिए ही चाहिए। लड़ाई हाई कोट पहुँच गई है।"

संतोखी ने पहले खुद बेटे को दूर-दूर रखा। अब नौकरी पा जाने के बाद उसने दूरी बना ली है। बिना राय-सलाह लिये ऊँची जाति की लड़की से शादी कर ली है। संतोखी का मानना है कि अगर पत्नी बेटे से कहें तो वह मदद करने से पीछे नहीं हटेगा, लेकिन पत्नी कहती हैं कि वे कहकर अपनी जबान खाली क्यों करावें? बेटा

तो मान जाए, लेकिन बहू नहीं मानने देगी। बहू से वे इतनी नाराज हैं कि उसका छुआ हुआ खाना खाने को राजी नहीं हैं। कैसी बहू जो पैर छूकर आशीर्वाद तक लेने नहीं आई। आती तो क्या वे भगा देतीं?

संतोखी ने ताकत बटोरी। लाई-चने का झोला उठा लिया। सबेरे सात बजे ही घर छोड़ देते हैं। कचहरी बन्द होने के बाद देर तक बस स्टेशन और टैक्सी स्टैंड पर गा-गाकर बेचते हैं।

हम लड़ि लड़ि भाय बिलाइ गए। दौड़त दौड़त बउराय गए। जौ बीस साल मा जीते तौ फिर झाम फँसायेन, हर गंगा।

"कैसा झाम फँस गया, संतोखी?"

हम कहे खेत अब हम जोतबै इजरा लगवाए कब्जा का, वे लइके कुबरी पहुँच गएन 'इस्टे' देखलाएन, हर गंगा।

"रो-रोकर खूब लूट रहे हो, बुढ़ऊ।" एक वकील साहब व्यंग्य करते हैं-"कहाँ रखते हो इतनी कमाई?"

"लूट-लूटकर आप ही का घर तो भर रहे हैं सरकार। तब भी तो आपको पूरा नहीं पड़ता।"

हा-हा-हा-हा!

इस बार का विधानसभा चुनाव ग्रामीण मानस को झकझोर रहा है।

मसजिद ढहाकर रामवादी पार्टी ने समाज में जो उत्तेजना फैलाई थी, उसे कायम रखने का सतत प्रयास कर रही है। 'मन्दिर वहीं बनाने' और 'बच्चा बच्चा राम का' जैसे नारे जीवित रखे जा रहे हैं। बाजार, चौराहों और मन्दिरों में साम्प्रदायिक तनाव

फैलाने वाले साधु-साध्वियों के कैसेट बजाए जा रहे हैं। धर्मभीरु हिन्दुओं पर राम का जादू सिर चढ़कर बोल रहा है।

इससे पार पाने के लिए चुनाव आते ही पिछड़ों और दलितों की पार्टी ने चुनावी गठबन्धन कर लिया है। उन्होंने जो नारा गढ़ा है, उसका आशय है कि पिछड़ों और दलितों के मिल जाने से अब 'जै श्रीराम' हवा में उड़ जाएँगे।

यह नारा बवंडर की तरह उठा है और मन्दिर-निर्माण से जुड़े नारों को कड़ी टक्कर दे रहा है।

माठा बाबा पुराने कांग्रेसी रहे हैं, लेकिन अब उन्हें कांग्रेस का सूरज अस्त होता नजर आ रहा है। रामवादी पार्टी के ग्रह-नक्षत्र प्रबल लग रहे हैं, लेकिन छत्रधारी ने पहले ही अपने दरवाजे पर रामवादी पार्टी का झंडा गाड़ लिया है; और वे उस धोखेबाज का मुँह तक नहीं देखना चाहते। तब किधर जाएँ?

पिछड़े वर्ग के उम्रदराज लोग इस समय पुराने संस्कार और नई राजनीति के दोहरे पाट में फँसा महसूस कर रहे हैं। राम की सत्ता से कैसे इनकार किया जा सकता है। वे तीनों लोकों के मालिक हैं। दुनिया के पालनहार हैं। उनसे बैर करके तो रावण भी उच्छिन्न हो गया। कुल में कोई रोने वाला नहीं बचा। कोई रोने

एक लख पूत सवा लख नाती।
तेहि रावण घर दिया न बाती ॥

विद्रोही जी मानते हैं कि बूढ़ों को समझाना महामुश्किल, लेकिन नई पीढ़ी मानती है कि राम के नाम पर, धर्म के नाम पर ब्राह्मण समुदाय हजारों साल से बहुसंख्यक समुदाय को ठग रहा है। सत्ता की मलाई खा रहा है। हम धर्म की अफीम चाटकर हजारों साल तक सोते रहे हैं। और कब तक सोएँगे? 'जै श्रीराम' को लेकर चाटना है क्या? दलित तो चेत गए। हम कब चेतेंगे? हमें मन्दिर नहीं; स्कूल, अस्पताल, उद्योग चाहिए। रोजगार चाहिए। इसके लिए हमें सत्ता चाहिए। खजाने की चाभी चाहिए।

उनके पास कल-छल-बल सब है। वे मायावी हैं, धूर्त हैं, ठग हैं, हमेशा से बाँटते और राज करते आए हैं। अब हमें बँटना नहीं है। अकेले-अकेले उनसे पार नहीं पाएँगे, मिलकर पछाड़ेंगे। हाथी, लाठी, सात सौ छियासी - यानी दलित, पिछड़े और मुसलमानों का एका।

"मुसलमानों का विश्वास करना ठीक रहेगा?"

"आप बताइए, ब्राह्मण बात के ज्यादा धनी मिले हैं कि मुसलमान? सीताजी को चुराकर ले जाने वाला रावण ब्राह्मण था कि मुसलमान?"

दलित टोला पूरी तरह जागरूक है। तूफानी पूरी तरह राजनीति में धँस चुका

है। जेल जाने और आए दिन धरना-प्रदर्शन में भाग लेने के लिए सूबे की राजधानी में आते-जाते वह भाषण देना भी सीखा गया है। टोले के लड़के उसकी अगुवाई में सक्रिय हो गए हैं।

जब अपनी पार्टी बन गई है तो कहीं और देखने की क्या जरूरत ! उम्मीदवार का नाम जानने की भी क्या जरूरत ? इस बार अपने क्षेत्र की सीट हाथी के हिस्से में आई है। जहाँ हाथी का निशान दिखे, वहीं मोहर ठोंक देना है।

कोई बूढ़ा शंका करता है- " पिछड़ों के साथ मिलकर खजाने पर कब्जा करना तो ठीक है लेकिन कब्जे के बाद पिछड़े ही पूरा खजाना हड़प गए तो? मोटे हो जाने पर दबंग पिछड़े दलितों के लिए ठाकुर, ब्राह्मण से ज्यादा खतरनाक हो जाते हैं।"

"उन सब पुरानी बातों को अब भुलाना होगा, दादा।"

"हम तो भूल जाएँगे, लेकिन वे भूल जायें तब न! दगा कर गए, हमारा ले लिये, अपना नहीं दिये तब?"

"यह हमें बाँटकर रखने के लिए ऊँची जातियों द्वारा फैलाया गया झूठ है, दादा। अब हमें उनके झाँसे में नहीं आना है।"

इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी.ए. कर रहा रघुनन्दन राय का बेटा राजेश्वर गाँव आया है। गाँव के पढ़ाकू लड़के हर मामले में उसकी ओर ताकते हैं। वह कहता है कि आधे से ज्यादा विधायक और सांसद जनता की नाजायज संतान हैं।

"नाजायज कि नालायक?"

"लायक-नालायक तो बाद की बात है। नाजायज इसलिए कि जनता ने उन्हें पैदा ही नहीं किया। वे बूथ कैप्चरिंग करके, नोट बाँटकर या जातिवाद और साम्प्रदायिकता का नशा पिलाकर वोट लूटते हैं। इन सबके मूल में पूँजी है। पूँजी ही नाना रूप धारण करके हमें ठगती है। वह बड़ी मायाविनी है। कभी जातिवाद का रूप धरती है, कभी साम्प्रदायिकता का। और दोनों को आपस में लड़ा देती है। जातियों का गठबन्धन करके या धार्मिक उन्माद फैलाकर जो भी सत्ता में आएगा वह पूँजी का ही चेला बनेगा। इससे जातिवाद और साम्प्रदायिकता दोनों मजबूत होंगी। पूँजी रेफरी बनकर दोनों के बीच कुश्ती कराती रहेगी।"

श्रोता युवकों की पकड़ में नहीं आ रहा है कि राजेश्वर ठीक-ठीक कहना क्या चाहता है? उन्हें उत्सुक देखकर वह आगे बढ़ता है- "देखिए, लोकतांत्रिक व्यवस्था दुनिया की अब तक खोजी गई सबसे अच्छी व्यवस्था है, लेकिन उसके भविष्य को पूँजी दिनोदिन निगलती जा रही है। जो व्यवस्था अमीरों को अकूत धन इकट्ठा करने की छूट देती हो, वह जनकल्याणकारी कैसे रह पाएगी? जितने समय में गरीब की आमदनी एक रुपया बढ़ती है, उतने ही समय में अमीर की आमदनी एक सौ

अस्सी रुपये बढ़ जाती है। इस देश के ऊपर के आधे लोगों के पास देश की कुल सम्पत्ति का 98 प्रतिशत है और नीचे के आधे लोगों के पास सिर्फ 2 प्रतिशत। इस देश के सबसे अमीर आदमी के पास इतनी दौलत है कि वह प्रतिदिन एक करोड़ रुपये खर्च करे तो भी उसे खत्म करने में चार सौ साल से ज्यादा लग जाएँगे। इस व्यवस्था से जनकल्याण कैसे होगा? रामवादी हों चाहे जातिवादी, जो भी चुनकर आएँगे, उसी पूँजी के जाल में खुशी-खुशी फँस जाएँगे। वह जैसे चाहेगी, नचाएगी। जिसको फँसाने से इनकार करेगी, वह रोने लगेगा।"

लड़कों को लग रहा है कि वे खुद राजेश्वर की बातों में फँसते जा रहे हैं।

"तो रास्ता क्या है?"

"जरूरत है एक ऐसी जनकल्याणकारी लोकतांत्रिक व्यवस्था की, जिसे पूँजी निगल न सके। जिससे समतामूलक समाज बनाने का सपना पूरा हो सके। आदमी के लोभ पर नियंत्रण किया जा सके। धन रखने की सीमा निर्धारित करनी पड़ेगी।" किसी की समझ में ज्यादा नहीं आया, फिर भी सब सहमति में सिर हिलाने यूनिवासटा पहुँचते ही लड़कों का दिमाग लगे। लेकिन इतना सब समझ गए कि उड़ने लगता है।

दलित टोले की महिलाएँ रंग-बिरंगी साड़ी पहनकर झुंड में वोट देने निकली हैं। उन्हें बताया गया है कि पहले वोट देने जाओ। लौटो तो दाना-पानी करो। देर करोगी तो वोट की चोरी हो जाएगी।

चला सखी वोट दइ आई। मोहर हाथी पै लगाई ॥

"ऐ! रुको-रुको।" सामने से आ रहे रामनेवाज मुंशी ने उन्हें रोका-"कहाँ जा रही हो तुम लोग?"

"वोट देने।"

"किसे दोगी?"

"तुम्हें नहीं देंगे।" पीछे से आवाज आई। सब हँस पड़ीं।

"सुनो, इधर देखो।" रामनेवाज ने जेब से एक पर्चा निकालकर, समूह में सबसे

प्रौढ़ दिख रही दहबंगा को दिखाया-" यह कमल निशान है न, इसी पर मोहर लगाना।"

"कमल हमारी पार्टी नहीं है। हमारी पार्टी हाथी है।"

"सुनो तो। कितनी जनी हो तुम लोग? एक, दो, तीन... आठ। यह लो सौ रुपये, सुर्ती-सोपारी खाने के लिए। आपस में बाँट लेना।"

"हमारा वोट बिकाऊ नहीं है।"

"तो वापस लौटो।" वे गुर्राए- "समझो, तुम्हारा वोट पड़ गया।"

"कैसे पड़ गया? बिना हमारे डाले पड़ गया?"

"हम डाल देंगे। जैसे अब तक डालते थे।"

दहबंगा को रामनेवाज की बात में झाँस नजर आई। गाली दे रहा है बुड्ढा! गाली और धमकी दोनों।

"पहले की बात भूल जाओ। अब हम खुद डालना सीख गए हैं। रास्ता छोड़ दो।"

"बहस करती हो? गाँव में रहना है कि नहीं? वापस जाओ?"

"पकड़ रे... पकड़।" दहबंगा ने ललकारा।

सारी औरतों ने घेरकर उन्हें पटक दिया। वे छूटने के लिए छटपटाने-चिल्लाने लगे। सबने उनकी दाहिनी तरफ की आधी मूँछ उखाड़ ली। बड़े-बड़े अधपके बाल। भस्स-भस्स उखड़ गए।

औरतों का झुंड आगे बढ़ गया तो रामनेवाज उठे। खुल गई धोती को फिर से बाँधा। मूँछ छूकर देखा। किसी को दिखाने-बताने लायक नहीं। अँगोछे से नाक-मुँह ढककर अपने घर की ओर भागे।

बुल्लू परेशान थे। सोना कई दिन से कॉलेज नहीं आ रही थी। बुल्लू रोज उसके सेक्शन का चक्कर लगाते। सोच रहे थे कि एक दिन उसके गाँव जाकर पता लगाएँ। तभी एक दिन इंटरवल में दिखी। उदास !

बुल्लू लपककर उसके पास पहुँचे।

"कहाँ थीं इतने दिन?"

सोना ने बताया कि उसकी बड़ी बहन की मृत्यु हो गई। पहिलौठी बेटी पैदा हुई थी। बेटी तो जीवित है, लेकिन बहन प्रसूति में ही मर गई। बहन का पति फौज में है। बहन की सास अन्धी है। और कोई घर में नहीं जो बच्ची को पाल सके।

इसलिए फौजी नवजात बच्ची को हमारे घर डाल गया। उसी को सँभालने में माँ की मदद कर रहे थे।

जंगू का एक कांड फिर चर्चा में है।

राघोपुर के एक दलित मजदूर ने बेटी के ब्याह के लिए पड़ोसी गाँव के एक सूदखोर से पाँच सौ रुपये कर्ज लिया था। ब्याज की दर टकासी थी। एक रुपये का एक महीने का ब्याज दो पैसे। साल भर बाद ब्याज की बकाया रकम मूलधन का हिस्सा बन जाती थी। मजदूर तीसरे और चौथे साल में कुल हजार रुपये लौटा पाया था। एक दिन सूदखोर का बेटा तगादा करने आया तो उसकी नजर मजदूर की जवान बेटी पर पड़ गई। वह मजदूर पर सारा बकाया एकमुश्त वापस करने का दबाव बनाने लगा। उसके हिसाब से मजदूर पर अभी हजार रुपये की देनदारी बाकी थी।

मजदूर के चिरौरी करने और मोहलत के लिए घिघियाने पर बोला - " एक महीने की मोहलत देता हूँ। उसके बाद आऊँगा। या तो उस दिन सारा कर्ज चुका देना या गाँव छोड़कर भाग जाना। अगर गाँव में मिल गया और कर्ज नहीं चुकाया तो तेरी इस बेटी का रेप कर दूँगा और मान लूँगा कि कर्ज पट गया।"

मजदूर घबरा गया। हजार रुपये कहाँ से लाए? उसके लिए हजार रुपये लाख रुपये के बराबर थे। सूदखोर का लड़का जालिम था। कुछ भी कर सकता था। वह भागा-भागा थाने गया। थाने पर कहा गया- " धमकी ही तो दिया है। रेप किया तो नहीं। जब कर दे तो बताना।"

अब क्या हो? लोगों ने सलाह दी कि इसकी दवाई सिर्फ जंगू के पास है। उसी से गुहार लगाओ।

जंगू ने सुना तो सूदखोर के घर चिट्ठी भेजी- "तेरे हजार रुपये तुझे मिल जाएँगे। खबरदार, जो बहन-बेटी पर हाथ डाला। अंजाम बुरा होगा।"

लेकिन एक महीने बाद सूदखोर का बेटा कन्धे पर दुनाली टाँगे अपने दो साथियों के साथ आ गया। कर्जदार घर पर नहीं था। उसने दो हवाई फायर किए और तीनों ने लड़की के साथ बलात्कार किया। बन्दूक के डर से कोई बचाने नहीं आया।

301

लड़की का बाप लड़की को लेकर थाने गया। दारोगा ने उसे हड़काया-"तू तो जंगू को ही थानेदार मानता है। तो उसी के पास जा।"

फिर लड़की से भद्दे-भद्दे सवाल पूछने लगा ! लड़की रोने लगी तो दोनों को डाँटकर भगा दिया।

लड़की ने रात में पेड़ से लटककर फाँसी लगा ली। सबेरे बाप ने उसे लटके हुए देखा तो वह भी फाँसी लगाने लगा। टोले के लोगों ने रोका। समझाया कि फाँसी लगाना कोई इलाज नहीं है। इलाज जंगू के पास है। उसको फिर खबर करो।

जंगू को पहले ही खबर लग चुकी थी। महीने भर बाद वह अपने तीन साथियों को लेकर घंटा-भर दिन रहते साहूकार के घर आ धमका। लड़का उन लोगों को देखकर घर के भीतर भाग गया और दरवाजा बन्द करके आँगन से हवाई फायर करने लगा। जंगू ने ललकारा - "हथियार डालकर सरेंडर कर दे और माफी माँग ले तो नाक, कान काटकर जान बख्स देंगे।"

बदले में लड़का जंगू को, उसकी माँ-बहन और उसकी जाति को लेकर गालियाँ देने लगा।

शुरुआत में जंगू के नाम से डरी-सहमी दू खड़ी भीड़ उसे देखने के लालच में धीरे-धीरे पास आती गई। सूदखोर के बेटे के कृत्य से सभी नाराज थे। हरामजादे ने नालायकी का काम करके गाँव की बदनामी करा दी।

लड़के की माँ गाँव में कहीं गई थी। लौटी तो वह भी रो-रोकर आवाज लगाने लगी-"निकलकर माफी क्यों नहीं माँग लेता रे मुद्दया। नाक तो पहले ही कटवा चुका आजा-पुरखा की!"

अँधेरा हो गया तो जंगू ने गाँव वालों से दरवाजे के सामने अलाव जलाने को कहा और ऐलान किया - "दस मिनट का समय सरेंडर करने के लिए दे रहा हूँ। जिनको-जिनको जान प्यारी हो दोनों हाथ ऊपर उठाकर बाहर निकल आएँ। दस मिनट बाद बाहर से साँकल लगाकर घर में आग लगा दी जाएगी।"

साहूकार, उसकी बहू और दो बच्चे हाथ ऊपर उठाए बाहर निकल आए।

पता चला कि कारतूस खत्म होने के बाद लड़का पिछवाड़े कूद गया। भीड़ ने थोड़ी दूर दौड़ाकर उसे दबोच लिया।

जंगू ने लड़के को अलाव के पास नीम के पेड़ से बँधवाया और उसके एक साथी ने जेब से चाकू निकालकर उसकी नाक काट ली। इतनी चीख-पुकार और खूनम-खून हुआ कि कान काटना भूल ही गया।

अगम बहै दरियाव

गाँव की परधानी दलित महिला के लिए आरक्षित हो गई। गजब हो गया! पहले कभी कोई सोच सकता था कि ठाकुर-बाभन के रहते दलित गाँव की परधानी करेगा। लेकिन कांग्रेस ने वह भी कर दिया। जो थोड़ी-बहुत इज्जत गाँव में सवर्णों की बची रह गई थी, उसे भी मटियामेट कर दिया।

इसका मतलब यह हुआ कि कांग्रेस ने खुद अपनी लुटिया डुबोने का इन्तजाम कर लिया। विनाश काले विपरीत बुद्धि ! लेकिन इसका मतलब यह थोड़े हुआ कि हम हार मानकर बैठ जाएँ। इसकी काट खोजी जाएगी। ऐसा कैंडिडेट खड़ा कराओ जो अपनी मुट्ठी में रहे। दलित टोला एक मत से तूफानी की माँ दहबंगा को खड़ा कर रहा है। वह तेज-तर्रार है। अभी किसी को नहीं सेंटती तो जीतने के बाद किसी के कब्जे में कैसे रह सकती है। उसको हराना बहुत जरूरी है। इसके लिए सबसे अच्छा रहेगा कि नदी पार जंगल में रहने वाले गोसैंया की औरत को जिताया जाए। गोसैंया की बिरादरी ने अपनी पदवी बनमानुस से बदलकर 'बनराज' कर ली है। गोसैंया पूरा वाक्य नहीं बोल पाता। हर बात में 'हाँ बाबू', 'जौन मरजी, राजा' कहता है। उसकी औरत चटक मटक है, गढ़न अच्छी है और तेज भी है। सजा-बजाकर, सिखा-पढ़ाकर मीटिंग में बिठा दो तो जम जाएगी। उमर चालीस से ज्यादा नहीं है। साल-भर में उड़ने लगेगी। पकड़ में भी रहेगी।

बनराज लोगों का पुश्तैनी काम शादी-ब्याह, भोज-भात में दोना-पत्तल पहुँचाना है। जंगल की लकड़ी बेचकर भी कुछ आमदनी कर लेते हैं।

बनराज के पास एक साबुत कमीज तक नहीं थी। बड़े लोगों ने चन्दा करके उसे एक जोड़ी कुर्ता-धोती और हवाई चप्पल खरिदवा दिया है। चप्पल कभी पहना नहीं। दो कदम चलते ही वह पैर से निकलकर आगे भाग जाती है। गोसैंया उसे कुर्ते की दोनों जेबों में डाल लेता है। मौके पर पहुँचता है तो निकालकर पहन लेता है।

दो ही दिन गाँव में घूमने को मिला और उसकी बोली खुल गई। कहता है-"मुझे जिता देंगे तो मैं पूरे पाँच साल गाँव को फिरी में दोना-पत्तल पहुँचाता रहूँगा। राजा की जुबान है, कट नहीं सकती।"

तूफानी लोगों को आगाह कर रहा है कि गोसैंया के लड़ने से एतराज नहीं है, लेकिन उसके जीतने का मतलब होगा, परधानी फिर सवर्णों के हाथ में पहुँच जाएगी। फिर उन्हीं के टोले में नाली-खड़ंजा बनेगा। उन्हीं को शौचालय और इन्दिरा

आवास का पैसा मिलेगा। उन्हीं की सुहागिनों को विधवा पेंशन मिलेगी। परधानी की मुहर और बस्ता ठाकुर टोले में रखा जाएगा।

ठाकुर टोले के लोग हर तरह से अपनी जीत सुनिश्चित कर लेना चाहते हैं। गाँव में तीन जाति के दलित हैं। उन्होंने हर जाति से दो-दो उम्मीदवार खुद पैसा खर्च करके उतरवा दिए हैं। ये आपस में लड़कर बुझ जाएँगे और गोसैंया की औरत को सवर्णों के वोट से जिता लिया जाएगा।

तूफानी पिछड़ों को समझाने निकला है- " एका का नतीजा सामने है। पिछड़ी और दलित पार्टी ने मिलकर चुनाव लड़ा तो 'सिरीराम' हवा में उड़ गए कि नहीं? न मिलते तो पिछड़ी जाति का मुख्यमंत्री गद्दी पर बैठ पाता? इस बार हमारे कोटे में आई है परधानी तो हमें जिताइए। अगली बार आपके कोटे में आएगी तो हम आपको जिताएँगे।"

बहुत लोगों को दहबंगा सही उम्मीदवार लगती है। दबंग है। लम्बी-चौड़ी है। ललकारकर बोलती है। पिछले चुनाव में उसने रामनेवाज मुंशी को पटककर उनकी मूँछ उखाड़ ली थी। इमरजेंसी में कानूनगो को जीप से खींचकर बधिया कर दिया था। उसका पति शेरू पारस सिंह हत्याकांड में आजीवन कारावास की सजा काट रहा है। उससे अच्छा उम्मीदवार कौन हो सकता है?

माठा बाबा को दहबंगा अच्छी लगती है। शुरू से अच्छी लगती है। उसका रूप, गुण, स्वभाव। उसका मुखमंडल उन्हें श्रीलंका की प्रधानमंत्री रही सिरीमाओ भंडारनायके जैसा लगता है। वे तो अपना वोट उसी को देंगे।

लेकिन दलित टोले के बूढ़े-बुजुर्गों के मन से अभी भी ठाकुर टोले का भय गया नहीं है। उनका कहना है कि देवासुर संग्राम में अभी तक तो देवता लोग ही जीतते आए हैं। इनके मुकाबले हमारा कितना जोर चलेगा। ये अकल की ही रोटी खाते हैं। कोई-न-कोई पेंच खोजकर फिर बाजी मार ले जाएँगे।

उनकी आशंका निर्मूल नहीं है। वोटिंग के पहले की रात सारा ठाकुर टोला गाँव में टहल रहा है। भइया, बाबू, दादा, काका, बाबा जो कहने से कोई पिघलता हो, पिघलाइए। बूढ़े-पुराने लोगों का पैर पकड़ने से परहेज मत करिए। अब तक जिस पैर को तोड़ते रहे, गरज पड़ी है तो उसको पूजिये। एक वोट के पीछे पाँच सौ दीजिए और कहिए, आपका सारा काम गोसैंया से कराने की गारंटी हम देते हैं। विधवा पेंशन, बुढ़ापा पेंशन, राशन, खाते में नगदी, सब मिलेगा। घर बैठे मिलेगा। 'हाँ' कह दीजिए, तभी हम जाएँगे।

गाँव के सीधे-सरल लोग। पिंड छुड़ाने के लिए 'हाँ' कह देते हैं। पाँच सौ का नोट भी दिल का बोझ बढ़ा देता है।

उनके जाने के बाद तूफानी का तूफानी दौरा होता है। वह समझाता है-" जो कुछ मिले, लेते जाइए। वोट तो ओट में पड़ता है। आप इतने नासमझ तो हैं नहीं कि अपना हित-अनहित न बूझें।"

रात-भर में बहुत सारे समीकरण बने-बिगड़े। कसम धराई गई और कसम तोड़ी गई। किसी को किसी पर विश्वास नहीं रहा। निरक्षर, भोली बूढ़ियों से भी पता लगा पाना असम्भव हो गया कि उन्होंने किसको वोट दिया।

"दोनों तरफ तो अपनी ही बहुएँ हैं, बाबू। यह भी मीठी, वह भी मीठी। दे दिया, जहाँ समझ में आया।"

...और दहबंगा बाईस वोट से जीत गई।

सोना चारपाई पर औंधी पड़ी है। उसकी माँ उसके बाल सहलाते सहला हुए पुचकार रही है-"तू नहीं पालेगी बहन की औलाद तो क्या सौतेली माँ पालेगी? सौतेली माँ आएगी तो बच्ची की जिन्दगी में अँधेरा भर देगी, बिटिया!"

"तो तू मेरी जिन्दगी में अँधेरा भरेगी?"

"तेरी जिन्दगी में अँधेरा क्यों भरेगा? फौज की नौकरी है। दस बीघे खेत है। उमर भी इतनी ज्यादा नहीं है। राज करेगी।"

"राज नहीं करना मुझे। मुझे उसी लड़के से शादी करनी है जो फूफा के घर ब्याह में मिला था। तू तो उसकी माँ से 'हाँ' भी बोल चुकी है।"

"बोल दिया था, लेकिन क्या करें, जब भगवान ने ही बिगाड़ दिया।"

"मेरा तो न बिगाड़ो माँ।" सिसकती है।

"दिल बड़ा कर, बिटिया ! औरतों को करना पड़ता है।"

पुलिस के आने की खबर सबसे पहले टोले के कुत्तों को लगी। साइरन की आवाज सुनकर वे भौंकते हुए दौड़े।

एक जीप और दो मोटरसाइकिलें आकर जंगू की झोंपड़ी के सामने रुकीं। जीप के पीछे से उतरे दो बन्दूकधारी सिपाहियों ने विपरीत दिशा की ओर मुँह किया और बन्दूक तानकर खड़े हो गए। अपराधी है, खतरा कर सकता है।

एक-एक कर गाँव के लोग, औरतें, बच्चे आते गए और सुरक्षित दूरी पर घेरा बनाकर खड़े होते गए।

सबसे पहले दारोगा जी ने प्रधान को बुलवाया। इस समय दुर्गा सिंह ही गाँव के प्रधान हैं। वे आए तो दारोगा जी ने बताया- "जंगू के खिलाफ नानबेलेबुल वारंट पहले से जारी है। वह कोर्ट में हाजिर नहीं हो रहा है। आज उसकी प्रापर्टी कुर्क होगी। दो गवाह, दो मजदूर मय फावड़े के बुला लीजिए।"

दुर्गा सिंह ने एक आदमी 'लाला' को बुलाने के लिए भेजा। मुख्तार साहब घर में ताला बन्द करके बेटे के पास चले गए हैं, नहीं तो उन्हीं को बुलाया जाता। डकैत की पैदाइश की जड़ में तो उन्हीं का खानदान है।

जंगू की झोंपड़ी की दीवारें मिट्टी की और छाजन-फूस की हैं। किवाड़ की जगह बाँस का टटरा लगा है। टटरे के कुंडे में एक छोटा-सा ताला लटक रहा है। सामने कुछ दूरी पर थूनियों के सहारे खड़ा दूसरा छप्पर है, जिसमें जंगू की माँ अपनी दोनों बकरियाँ बाँधती है। जंगू की माँ थोड़ी देर पहले बकरियाँ चराने ले गई थी। छप्पर सूना है।

प्रधान जी ने दारोगा जी के बैठने के लिए एक चारपाई मँगवा दी।

"पिछली बार कब आया था जंगू गाँव में? गाँव का कौन-कौन आदमी उसके गिरोह में शामिल है? कौन-कौन उसके लिए मुखबिरी करता है? लूट का माल किसके घर रखता है?"

दुर्गा सिंह ने दबी आवाज में उनको समझाया कि इन सवालों का जवाब खुलेआम देने में खतरा है। आप तो उजाले-उजाले में लौटकर थाने में बन्द हो जाएँगे। वह रात के अँधेरे में दनदनाता हुआ आएगा तो कौन बचाएगा?

फिर ऊँची आवाज में बताया- "जंगू गाँव में नहीं आता। गाँव के लोगों ने सालों से जंगू का चेहरा नहीं देखा। उसकी मुखबिरी करने वाला भी गाँव में कोई नहीं है।"

दारोगा ने चारपाई पर बैठते हुए हवा में माँ की गाली दी, तब उसे जंगू की माँ की याद आई।

"उसकी माँ कहाँ गई?"

दुर्गा सिंह ने टोले के लोगों से जानना चाहा। सब चुप थे। दुर्गा सिंह ने बताया- "कहीं मजूरी-धतूरी करने गई होगी।"

अगम बहै दरियाव

दारोगा ने उठकर टटरे में लगे ताले का निरीक्षण किया फिर एक मजदूर से कहा-" इसे तोड़।"

मजदूर ने उलटे फावड़े से ताला तोड़ दिया।

"अन्दर का सामान बाहर निकाल।"

सबसे पहले चारपाई निकाली गई। दीवान उसी पर बैठकर इनवेंटरी बनाने लगा -

1. बाँस की चारपाई
2. जंग लगा लोहे का बक्सा। कुंडा टूटा हुआ। खाली

3. किताब-कॉपी से भरा एक स्कूली बस्ता
4. दो कथरियाँ, एक पुरानी पैंट, दो जनानी धोती, एक ब्लाउज ।
5. एल्यूमीनियम की दो थाली, दो गिलास, एक लोटा, एक कलछुल, एक पतीली, एक तवा, एक चिमटा
6. एक गगरी में दो किलो चावल
7. एक गगरी में एक किलो आटा
8. एक गगरी आधी महुए से भरी
9. एक सूप
10. एक मूसल
11. एक जाँत,दोनों पल्ले
12. एक चकरी, दोनों पल्ले
13. तीन कच्चे टमाटर, एक बैगन
14. एक छोटी शीशी - आधी सरसों तेल से भरी
15. थोड़ा नमक, हल्दी, मिर्च

अन्त में सिपाही बेहद सावधानी और उत्सुकता के साथ एक पुरानी कार बैटरी निकालकर लाया। दारोगा जी भी उसे देखकर उछले - " बम बनाने का सामान तो नहीं? ठीक से खोजो। बारूद भी होना चाहिए।"

एक औरत ने समाधान किया - "साहेब, इसी में बल्ब लगाकर जंगू झोंपड़ी में उजाला करता था। मिट्टी का तेल तो मिलता नहीं।"

उसी औरत ने फिर कहा- "कथरी भी 'जपत' करेंगे क्या, साहेब? बुढ़िया जाड़े में ठिठुरकर मर जाएगी। वह तो चोर-डकैत है नहीं।"

"चोर-डकैत तो नहीं है, लेकिन चोर-डकैत बिआई तो है।"

इससे कौन इनकार कर सकता है!

प्रधान जी के घर से चाय बनकर आ गई। चाय लाने वाले ने ही बताया कि 'लाला' कहीं गए हैं।

"कहीं नहीं गए हैं।" दुर्गा सिंह भुनभुनाए- "छिपकर बैठ गए होंगे। जंगू के मामले में पड़ने से बच रहे हैं।"

चाय पीकर दारोगा जी झोंपड़ी के अन्दर घुसे। दोनों मजदूरों को बुलाया और कहा- "पूरी झोंपड़ी की फर्श कमर भर गहराई तक खोदो। कुछ न कुछ माल गाड़कर जरूर रखा होगा हरामजादे ने।"

फिर होमगार्ड से कहा- "तुम लगातार मजदूरों पर नजर रखो। ऐसा न हो कि माल मिले और ये ससुरे वहीं के वहीं दाब दें। इनको तो अन्दाजा होगा ही कि पुलिस वालों से मजदूरी नहीं मिलनी है।"

जंगू की माँ को खबर लगी तो वह बकरियों को दूसरे के खूँटे पर बाँधकर आई और भीड़ का हिस्सा बनकर कुर्की की कार्यवाही देखने लगी। उसे देखकर दुर्गा सिंह को पसीना आने लगा। जंगू तक यह बात जरूर पहुँचेगी कि पुलिस पार्टी को पीने के लिए उन्हीं के घर से चाय बनकर आई थी। उन्हें वक्त और परिस्थिति की पहचान है। मुख्तार तो बेटे के पास भाग गए। वे भागकर कहाँ जाएँगे? और इस गाँव में तभी रह सकते हैं जब जंगू के कोप से बचे रहें।

वे थोड़ी ऊँची आवाज में कहते हैं- "वैसे एक बात गौर करने लायक है दारोगा जी कि बैटरी और बस्ता छोड़ दें तो यह सारा सामान जंगू की माँ की कमाई का है, और जहाँ तक मुझे पता है, बर्तन-भाँड़े, राशन-पानी, कपड़े-लत्ते को जब्त करने का कानून नहीं है।"

कोई कुछ बोलता नहीं, लेकिन इतने से ही दुर्गा सिंह का मकसद पूरा हो जाएगा। जंगू के पास यह खबर पहुँच जाएगी कि प्रधान जी ने जंगू के पक्ष में दारोगा से जोरदार बहस की थी।

एक होमगार्ड खड़खड़ा लेकर आया।

झोंपड़ी की फर्श खोदते-खोदते दोनों मजदूर पसीने से लथपथ हो गए, लेकिन टूटे खपड़े और ईंट के टुकड़ों के अलावा एक छेदहा पैसा तक नहीं मिला।

दारोगा ने गहदाला लेकर खुद कच्ची दीवार में जगह-जगह खोदकर सन्धान किया। बेनतीजा।

"बड़ा काइयाँ निकला, साला। कहाँ छिपाया होगा सारा माल?"

उन्होंने चिढ़कर हुकुम दिया- "टटरा उखाड़ो।"

उखड़ने के बाद यह भी 'अचल' से 'चल' सम्पत्ति बन जाएगा।

अगम बहै दरियाव

दारोगा थोड़ी देर तक बर्तनों के ढेर और तीनों गगरियों को देखता रहा, फिर हुकुम दिया- "कूच डालो इनको।"

दुबारा कहने पर मजदूरों ने हिचकिचाहट छोड़कर बर्तनों पर फावड़े का उलटा पासा चलाना शुरू किया। ठन-ठन की आवाज के साथ बर्तनों की शक्ल चपटी होने लगी। सूप तो एक ही वार में चिथड़ा हो गया। जाँत और चकरी के पत्थर भी फूट गए। गगरियों से निकलकर आटा, चावल और महुआ धूल में मिल गया।

जंगू की माँ से अनाज की यह बर्बादी बर्दाश्त नहीं हो रही थी। उसका मन कर रहा था कि दौड़कर जाए और धूल में मिल रहे अन्न को आँचल में समेट ले। लेकिन बस आह भरती रह गई। वह आह भी कुर्की दल के कान तक नहीं पहुँची।

दीवान दूसरी इनवेंटरी बनाने लगा -

1. एक बँसखट चारपाई
2. जंग लगा, टूटे कुंडे वाला लोहे का पुराना बक्सा
3. पुरानी किताब-कॉपी से भरा एक स्कूली बस्ता
4. पुरानी निष्प्रयोज्य बैटरी
5. पुराना पैंट
6. बाँस का पुराना टटरा

कुल छह नग। अनुमानित कीमत नब्बे रुपये मात्र।

दुर्गा सिंह ने पहले खुद गवाह के रूप में अपना हस्ताक्षर किया फिर भीड़ से जंगू के मामा को बुलाकर उसका अँगूठा लगवा दिया। कुर्क सामान लादकर खड़खड़ा थाने रवाना हुआ। दुर्गा सिंह को शर्म आ

रही थी कि जिस डाकू के चलते दुनिया-भर में उनके गाँव का नाम मशहूर हुआ उसके घर से कुर्की जब्ती में सौ रुपये का माल भी बरामद नहीं हुआ।

फूटी गगरियों से निकला चावल, आटा और महुआ, गगरी के लाल टुकड़ों के साथ मिलकर दारुण दृश्य प्रस्तुत कर रहा था।

जंगू की माँ धूल से चावल और महुआ अलग करती और पिचके बर्तनों को ठोंक-पीट कर उन्हें उनके मूल रूप में लाने का प्रयास करते हुए खुश थीं कि उन्होंने अपनी चतुराई से बकरियों को कुर्क होने से बचा लिया।

309

पहला भाग समाप्त

sjeet